Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्मरणगाथा

गो. नी. दांडेकर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

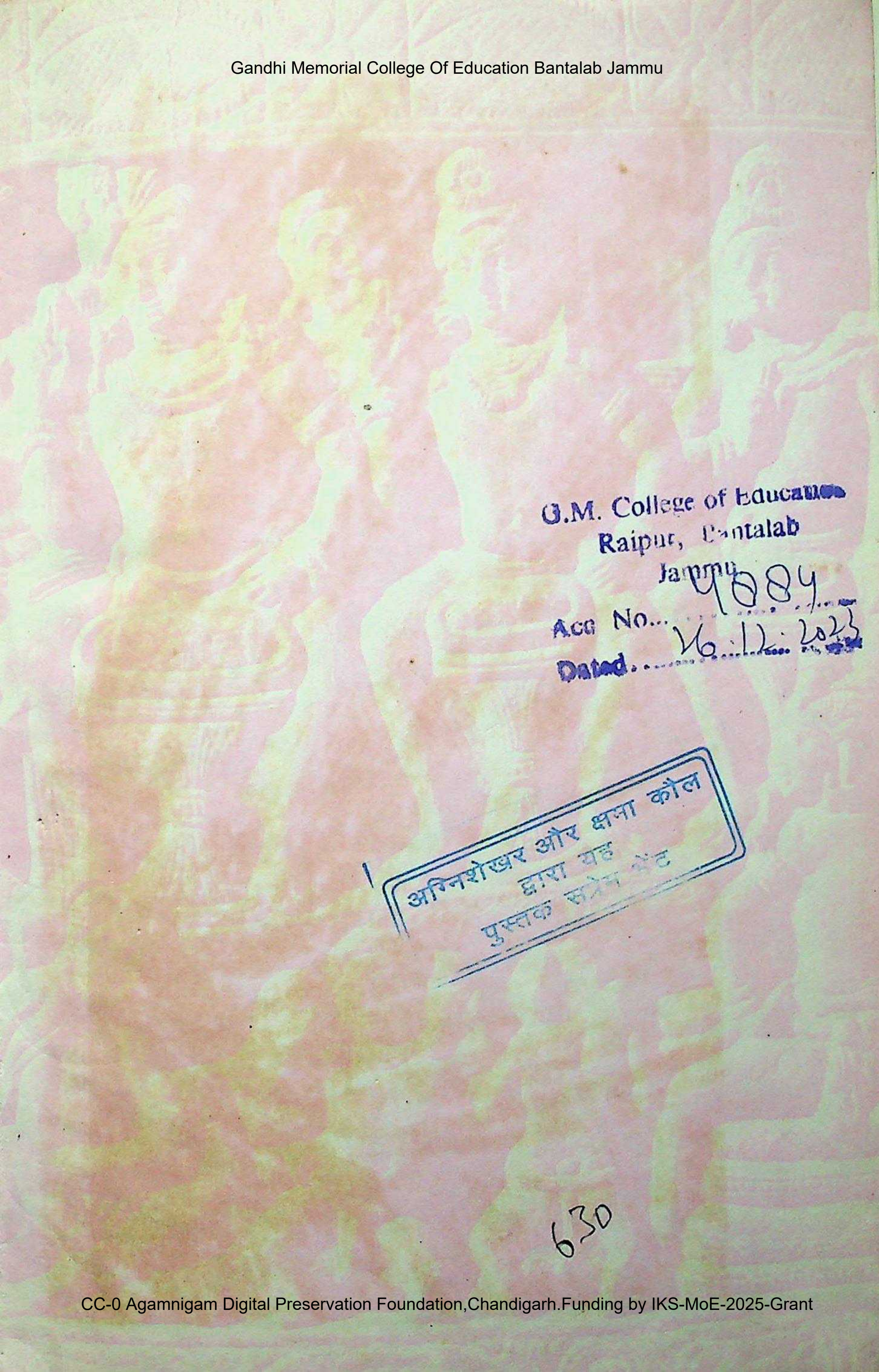

G.M. College of Education
Raipur, Bantalab
Jammu
Acc No. 9884
Dated 26.12.2023

अग्निशेखर और क्षमा कौल
द्वारा यह
पुस्तक सप्रेम भेंट

630

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्मरणगाथा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अस्तर पर छपे मूर्तिकला के प्रतिरूप में राजा शुद्धोधन के दरबार का वह दृश्य है, जिसमें तीन भविष्यवक्ता भगवान बुद्ध की माँ-रानी माया के स्वप्न की व्याख्या कर रहे हैं। उनके नीचे बैठा है मुंशी जो व्याख्या का दस्तावेज लिख रहा है। भारत में लेखन-कला का यह संभवतः सबसे प्राचीन और चित्रलिखित अभिलेख है।

नागार्जुनकोण्डा, दूसरी सदी ई.

सौजन्य : राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्मरणगाथा

लेखक

गो. नी. दांडेकर

अनुवादक

काशीनाथ जोशी

अग्निशेखर और क्षमा कौल
द्वारा

साहित्य अकादेमी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

Smarangatha (स्मरणगाथा):
Hindi translation by Kashinath Joshi of G. N. Dandekar's Akademi Award winning Marathi Autobiographical novel,
Sahitya Akademi, New Delhi (1991)

SAHITYA AKADEMI
REVISED PRICE Rs. 120-00

© Sahitya Akademi

First Edition: 1991

Published by:
Sahitya Akademi

Head Office:
Rabindra Bhavan, 35, Ferozeshah Road,
New Delhi 110 001

Sales Department:
Basement in 'Swati', Mandir Marg, New Delhi 110 001

Regional Offices:
172, M. M. G. S. Marg, Dadar (East), Bombay-400 014
Jeevan Tara, 23A/44X, Diamond Harbour Road, Calcutta 700 053
29, Eldams Road, Teynampet, Madras-600 018

ISBN 81-7201-0 94-X

Printed by:
Rachana Mudran
41, Kant Mansion,
Madhav Das Pasta Road,
Dadar, Bombay-400 014

SAHITYA AKADEMI
REVISED PRICE Rs. 120-00

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"गो पा ल" यह मेरा मूल नाम नहीं। "मूल" माने पिताजी ने रखा हुआ। यह तो मेरा राशि नाम भी नहीं। पिताजी ने ढेर सारे पत्रे-पंचाग देखकर मेरा नाम निश्चित किया था "आत्माराम"। पर यह नाम तो बहुत जल्द ही छूट गया। इस नाम से फिर मेरा साबका पड़ा नर्मदा परिक्कमा के समय पर अल्प काल के लिये ही।

बचपन में कोई मेहमान घर आता तो पिताजी के आदेश से उसे अपना नाम सुनाना पड़ता। मेरे पिताजी ने दुर्वासा ऋषि का व्रत चलाया हुआ इसलिये एक आँख से पिताजी की ओर देखते हुए टणटनाती आवाज में हर मेहमान को सुनाना पड़ता "मेरा नाम आत्माराम नीलकंठ दाण्डेकर, वृत्ति खोती (पटवारी), मुकाम गुडघे, तहसील दापोली, जिला रत्नागिरी किलेदार गोपालगढ़ तर्फ अंजनवेल, हाल मुकाम परतवाडा, तहसील अचलपुर जिला अमरावती प्रांत वऱ्हाड।"

इसमें से सारे शब्दों का उच्चार व्याकरण शुद्ध ही करना पड़ता। एक बार जैसे स्थानीय बोली में कहते हैं वैसे अमरावती को उंबरावती कह गया। मेहमान जाते ही वह गलती मेरे गाल पर चटाक बजी। दोनों कान पकड़ एक पैर पर खड़ा होकर सौ बार 'अमरावती अमरावती' कहना पड़ा।

दंड देने का पिताजी का तर्क लेकिन सुसंगत था। वे कहते मराठी के व्याकरणकार मोरो केशव मेरे फूफा थे। व्याकरणकार का भानजा ही व्याकरण की गलती करे यह क्षमा नहीं किया जा सकता।

फिर "गो पा ल?"

घर से भाग निकलने पर समझ में आया पितृदत्त आत्माराम नाम किसी भी क्षण चक्कर में ड़ाल देगा। कोई कान पकड़ घर में पहुँचा देगा। अतः उसमें बदल करना चाहिये।

भागम भाग काल में कोई पूछता तो जो मुँह में आता वही कह देता। फिर लगा झूठ भी सुसंगत होना चाहिये।

संयोग से नगर जिले के अकोला गाँव में दो तीन साल रहा। काम? गोरक्षा समिति के गौओं की सेवा। सेवा टहल करते-करते गोपाल यह नाम भा गया।

जिनके आश्रय में था उनका कुल नाम था 'जोशी' इसलिए फिर अपने कुलनाम में भी बदल कर दिया-दाण्डेकर से जोशी हो गया। नाम और कुलनाम के बीच के पिताजी के नाम पर भी विचार किया। सोचा मैं अनाथ मेरा पालक तो परमेश्वर पर परमेश्वर कहने सुनने में भाता न था इसलिये परमेश्वर का दूसरा नाम अनंत अपने नाम में जोड़ लिया।

गाड़गे बाबा से मिला तो उन्होंने पूछा,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"साधु बोवा- तुमाले म्हंतत् काय?"

कह दिया - "गोपाल अनंत जोशी।"

नाम में ऐसे परिवर्तन यहीं रुके नहीं। प्रसंगवशात फिर नाम बदला और वह रखा 'मूर्खानंद'। अपने नाम में ऐसे अर्थवाही परिवर्तन करते रहने की आदत मेरी पुरानी ही हैं।

बचपन में मैं जरत्कारु था। हाथ पैर सींकिया थे। सीने की पसलियाँ दूर से भी गिनी जा सकती थीं। मिट्टी पर बचपन से बेहद प्रेम। मिट्टी मजे से खाता था। वह मेरा मानो व्रत था। अनेक उपाय करने के बाद भी मैं जब व्रतच्युत न होता दिखा तब माँ ने एक अजब उपाय किया। वह मेरे दोनों पंजों पर छोटी-छोटी थैलियाँ चढ़ा देती और उसके बंद कलाई पर बांध देती।

मैं रोअंटा तो था ही। उसमें इस तरह सुबह-सुबह तोबरा बंद होते ही मैं जो सुर पकड़ता वह रात होने तक अखंड। माँ जब भात खिलाती होती तब भी कौर निगलते ही मैं सा sss शुरु करता। दिनभर ऐसा व्यायाम करने के कारण रात में मैं डटकर सोता। मैंने रोकर माँ को रात जगाया नहीं कभी।

पर माँ इस सबसे परेशान रहती। सुबह होते ही वह मुझे आंगन के आम के नीचे इसलिये ला पटक देती एक चीथडे पर और आदेश देती "अब रोओ चाहे जितना"। वहाँ आकाश की ओर मुँह किये पड़े रहने पर व्रत भंग करने का कोई कारण नहीं था। तिसपर माँ का आदेश भी होता।

परतवाडा के हमारे उस घर से कोई आठ दस मील दूर से सतपुडा पर्वत शृखंला की एक कतार आडी यहाँ से वहाँ दौड़ती चली गई हैं। दूरस्थ होने से वह नीलाभ रम्य दिखती।

एक दिन माँ मुझे हगोतरे के सिंहासन पर स्थापित कर गई। कुछ देर बीत गई और माँ के ध्यान में आया कुछ अनहोनी घटित हुई हैं। उसे अति परिचित स्वर-साधना कुछ ठहर गई हैं। आश्चर्य से उसने बाहर झांका। बड़ी बहन भी हाथ के काज पटक दौड़ती मेरे पास आई, देखती हैं दोनों मैं स्वर साधना छोड़ नीलिमा मंडित पर्वत शृखंला देखते चुप पड़ा हुआ हूँ।

जीवन का पहला स्पष्ट स्मरण भी मुझे उसी पर्वतमाला का है। बचपन के अनेक स्मरण धुंधले हो गये, उनके रंग फीके पड़ गये पर घुटरुन चलत के उस वय में जीवन की उस प्रातः में उस पर्वत माला को देखते ही जो मैं उससे बंधा - मेरा रोना रुका वह स्मरण दीपस्तंभ की तरह अविचल हैं।

पर्वतों से यह ऐसा मेरा जी जुड़ा बचपन से। बल्कि मेरा बचपन जो शुरु हुआ वही अनेकाद्भुत पर्वत दर्शन से। आगे फिर हिमालय, विन्ध्याचल, अरावली, नीलगिरी, सह्याद्री सबके दर्शन हुए पर उस प्रथम दर्शन का स्मरण मेरे मन पर अमिट हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मेरा जन्म जिस घर में हुआ वह एक बड़े बंगले का आउट-हाऊस था। इस बंगले का चबुतरा ही सीने तक ऊँचाई का था। बंगले का मालिक भी वैसा ही उँचा-पूरा था। उसे सब लोग महाराज कहते। बंगले के चौतरफा संतरे की बाग थी। उसमें आम, शहतूत और न जाने कितने ही तरह के और पेड़ भी थे।

बंगले के मालिक के शौक भी बडे ही अनोखे थे। सतपुडा के आदिवासियों से वन पशु खरीदना और पालना उसका खास शौक था। बंदर, मोर, खरगोश, हिरन, बारहसिंघे आदि का एक चिडिया घर उसने बनाया था। बड़ी लगन से वह वनपशुओं का खानपान, हारी-बीमारी सब कुछ करता रहता। फिर भी कहीं न कहीं चूक हो ही जाती और तब वह पशु उसके गोद में सिर दे आँखें मूँद लेता। सारा बंगला उस दिन सूतक में रहता।

कोई एक गोंड़ एक दिन वनमेवा लिये हुए आया। वनमेवा माने बाघ के बच्चे। पट्टेदार बाघ के। हमारे मालिक ने झपट्टासा मार उन्हें ले लिया। ग्यारह कलदार गोंड़ को भेंट किये। मांस भी लाया जाने लगा। बच्चे नन्हें थे, पूरे बंगले में मस्त घूमते। हमारे लिये एक खेल और जुट गया। उनको खोजना, उठाना, पटकना, खिलाना, पिलाना सब दिन चलता रहता। पर वे बच्चे थे बाघ के। मनके विरुद्ध बात जाते ही गुर्राते, दांत दिखाते। उनसे किसी को कोई धोखा होने के पहिले ही फिर उनके लिये लोहे के पिंजडे बने। जंजीरों से जकड़ उन्हें बाहर निकालना, घुमाना, खिलाना, पिलाना और फिर बंद कर देना।

यह कैद दो बच्चों को जल्दी ही मौत के पास ले गई। मेरा परिचय हुआ वह बचे हुए तीसरे पिल्ले से। मेरी माँ ने मुझे बताया था कि जब मैं नन्हा मुन्ना था तब मरियल था। तब माँ अधिकतर खिला-पिला एक आम के पेड़ के नीचे मुझे गुदडी पर सजाकर चली जाती। परंपरागत खिलौने भी वही रख देती। मैं बैठा खिलौने से खिलवाड करता। ऐसे में बंगले के मालिक का बड़ा बेटा जंजीर में बंधा बाघ का बच्चा लिये मेरे पास आता। उस बच्चे के लिये नंग-धडंग मैं एक खिलौना ही लगता होऊँ। वह पीछे से अपने दोनों पंजे मेरे कंधे पर रख खड़ा रहता। नाखून छिपाकर पंजे का प्रयोग करने की कला शेर बच्चों को जन्मतः ही होती हैं। उसके नाखून मुझे गड़ते नहीं थे परन्तु मतभेद तब शुरु होता जब वह मेरा मुँह चाटने की कोशिश करता। उसकी मूछें मेरे गाल पर गुदगदी करती और मैं फिर चिल्लाता। मेरा बाजा बजते ही मालिक का बेटा हँसता। शेर बच्चा भी मूछों में मुस्कराता।

मैं तीन एक साल का हुआ हूँगा। हमने वह चिडियाघर वाला बंगला छोड़ा। दूसरे बंगले के आउट हाऊस में आ गये हम लोग। यह एक गोवानीज ईसाई का बंगला था। उसका नाम फान्सेका था। यह बंगला बड़ा था। कोकणी बंगले जैसा। खूब जगह थी चारों ओर। एक बहुत बड़ा बड का पेड़ था। खूब भरापूरा। शाखाएँ दूर-दूर तक फैली हुई। इस बड पर अनगिनत पंछी आते। कितने रंग, कितनी चहचहाट, देखे-सुने तो

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

देखत-सुनते ही रहे। फान्सेका के पास दुनाली थी। गोली छूटते ही पंछी फड़फडाता और नीचे आकर गिरता। फान्सेका पंछी का रंग देखकर कहता "खैसा ब्युटिफुल कलर है।"

फान्सेका के बंगले पर से सिविल लाईन की ओर जानेवाली सड़क पर दोनों ओर पेड़ थे। यह सड़क सुनसान ही रहती। कभी छकड़ा या बंगलों में पली गायें, भैंसे ही उस पर दिखती। घोडे की टापें जब सुनाई देती तब हम जरुर बंगले के फाटक तक दौड़ पडते। उसमें भी विशेष कुछ टापें हम बच्चों के पीछे बड़ों को भी फाटक तक खींचती थी। वे हमें ड़ाटते हुए फाटक तक आते। हमें 'चलो घर' कहते और खुद उन टापों के गुजर जाने तक वहीं रुकते।

ऐसी टापों में 'चीझम' नाम के गोरे कमिश्नर और उसके आगे पीछे दौड़ते सिपाहियों की आवाज खास थी। वह सर्कीट हाऊस से प्रार्थना के लिये हमारे घर के सामने से होते हुए चर्च जाया करता था।

उसका घोडा बहुत सुंदर था। उससे भी सुंदर होती उस पर कसी जीन। गोरा फक्क चीझम साहब बड़ा बांका लगता था। वह घोडे पर मूठ में छडी पकड़े और मूठ कमर पर रख बड़ी अकड से सारी दुनिया को तुच्छ समझ बैठता था। उस समय उसके चेहरे पर सारे ब्रिटिश् साम्राज्य का घमंड झलकता था। हर रविवार उस सजीले चीझम को देखने हम फाटक पर खड़े रहते। उसके निकल जाने के बाद वह अंग्रेज है यह बात हमें सताने लगती। फिर 'लाल मुँह का दुम-कटा, खसोटा बंदर' के मंत्र का जाप हम करने लगते। जोर से कहने की हिम्मत नहीं होती थी। घर का ड़र लगता था। पर गोवानीज घर मालिक का था। उससे भी ज्यादा 'चि झ म' का ही ड़र लगता था। उसका सारा ठाट ड़रावना ही अधिक था। मन-ही-मन वह मंत्र पढ़ हम अपने देशभक्ति की नींव पक्की करते।

इससे भी अधिक आकर्षक बड़ी भारी आवाज माह में निश्चित चार या छह दिन होती थी। सौ-पचास अरबी घोडे टापों में नाले ठुके और उन पर अकड कर बैठे जवान। किसी की मूँछे उपर की तरफ ऐंठी हुई तो किसी की दाढी। ऐसे ये घोडे और जवान जब अपने मस्ती में कदम-ताल करते हुए सड़क पर से गुजरते तब हम सब अंदर से काँप-काँप जाते थे। इस सड़क से कुछ ही दूर एक रिसाला था, ठिगनी बैरकों का। सब सवार वहीं रहते थे। उनके पीछे घोडों के तबेले थे। घोडों के लिये चारे की बड़ी-बड़ी गंजियाँ थीं।

मेरे पिता को सब पहचानते थे। फान्सेका के बंगले पर विलायती दारु की की दुकान थी। वहाँ जो लोग आते वे भी हमें पहचानते। मेरे पिताजी कई भले घरों में लड़कों को पढ़ाने जाते थे। इसलिये उस सारे परिसर में हमारा मुक्त संचार था। इसीलिए हम जब-तब घोडों के तबेलों के पास जाते थे। क्या ठाट रहते थे उनके। खरारा करने के बाद टाट के टुकडे से रगड़ कर मालिश होती उनकी। पुठ्ठे ऐसे कसे, ऐसे चमकीले . . . . माँ जब रोटी पर कभी घी चुपडती तब हमें उन घोडों के पुठ्ठे याद आते थे।

परन्तु कभी एकाध बार कोई घोडा बीमार हो जाता। दवा दारु के बाद भी वह ठीक न हुआ तो एक बड़ी दवाई अंतिम बार उसे दी जाती। उस ऊँचे पूरे कद्दावर घोडे को बीच मैदान में खड़ा किया जाता और कोई सैनिक उस पर गोली दागता। पहाड़ सा घोडा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एकाएक गिर जाता। कुछ देर तक पैरों की हलचल-हिचकी और सब ठंडा हो जाता।

घोडे को गोली से मारेंगे यह खबर हमें मिल जाती। हम बड़ी उत्सुकता से मैदान पर पहुँच जाते। ड़र भी खूब लगता। अपना मुँह दोनों हाथों से ढांप लेते या कानों में अंगुली डाल लेते। गोली की आवाज फिर भी कान फाड़ती ही। घोडा गिरता तो हम सब रोने लगते।

बंदूक वाला सिपाही फिर हमारे पास आता। "अरे! मास्टर साहब का बाबू रोता है क्या? हमको भी बुरा लगता हैं। लेकिन यहाँ का कानून ही ऐसा हैं। दूसरे इलाज नाकाम होने पर घोडे को जिंदा रखने के बजाय फूँक ड़ालना ही अच्छा हैं। जाव अब घर जाव।"

"यहाँ का यही कानून है" सैनिकों का उत्तर कितना सही होता था। ये सारे सैनिक उत्तर से आये हुए। अधिकतर मिर्जापुर के थे। हिन्दू और मुसलमान। हिन्दूओं में ब्राह्मण और ठाकुर ब्राह्मण होते उनका छूआछूत का मामला बड़ा कठोर होता। चार हाथ लम्बी चौड़ी जगह गोबर से लीप कर वे चौका बनाते। इस चौके में उनकी रसोई बनती। गाढ़ी दाल और घी चुपडी रोटियाँ वे बनाते। फिर बढ़िया सुर लगाकर मानस की दस बीस चौपाइयाँ पढ़े बिना वे भोजन नहीं करते थे। दोपहर भांग घोटते, जगह तयशुदा, सिल-लोढे सजे हुए। घुटी हजामत और लंबी चोटी उनकी पहचान। मुसलमान भी उतने ही कट्टर। सब नमाजी। इस रिसाले का प्रमुख रिसालदार मुसलमान था। उसकी आँखें बड़ी क्रूर थी। दूसरे मुसलमान छंटी हुई दाढ़ी रखते। इसने कल्ले रखे हुए थे।

एक दिन फान्सेका की गोवानीज कामवाली भागते, हाँफते, आयी और बोली "आपूरे, रिसालदारकू बंदूक से मारा रे। सोब व्हांच भाग रह्या है।" माने सारे लोग रिसाले की तरफ भाग रहे हैं। घर में क्या और कितनी पिटाई होगी यह बिना सोचे मैं रिसाले की तरफ भागा। नमाज पढ़ने की जगह पर ही रिसालदार ढ़ेर हो गया था। नीचे खून ही खून फैला था।

उसपर गोली चलाने वाला ठाकुर एक पेड़ के नीचे बैठा था। दो संगीनधारी सिपाही उसके दोनो ओर खड़े थे। बाजार से लौटते समय कई बार वह ठाकुर हमारे घर पानी पीने आता था। मेरे पीछे मेरी दीदी "माई" और माँ दोनों संगीनधारियों के बीच बैठे ठाकुर के पास आ पहुँची थीं। माँ को देखते ही वह ठाकुर उठा, मुस्कराकर कहन लगाः

"हाँ माई की माँ। मैंने साले को गोली से फूँक दिया हैं। तीन महीने हो गये, देस जाने को छुट्टी माँग रहा था। साला देता नहीं था। आज नमाज पढ़ने बैठा, तब पीछे से गोली चला दी। एक ही गोली मे बेडा पार। झूठ थोड़े ही बोलूँगा। मैंने गोली मारी साले को।"

सिविल लाईन में दो चर्च थे। एक था साहब लोगों का। गोरों के सिवाय उस चर्च में कोई जाता नहीं था। दूसरा चर्च था धर्मान्तरित गोंड कोरकू आदिवासियों का। सफेद कपड़ों में लिपटी नन्स की निगरानी में स्याह काले गोंड और लाल रंग के कोरकू लाइन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

में हर रविवार अपने मिशन में जाते थे। गंभीर चेहरे की काली नन्स अपने पालितों पर कड़ी नजर रखे, रास्ते पर चलती थी। ऐसा लगता था जैसे सफेद कपड़ों में लिपटी लाशें ही कब्र में से उठकर चल रही हैं। गोंड कोरकू आदिवासियों के चेहरे खोय-खोये से लगते। उन्हें देखते ही लगता कि जैस ये लुटे हुए हैं - इनका कुछ खो गया हैं। ना इधर, ना उधर ऐसा उनका हुआ दिखता। फल-सब्जी, लकडी जंगल से बीन कर बाजार में बेचने आते गोंड कोरकू, उनके कपड़े अवश्य फटे, मैले रहते परन्तु हँसना बोलना उनका कितना उन्मुक्त होता, हमें भी उसका अचरज होता।

परतवाडा से तीन एक मील दूर खुदावंदपुर नाम का एक गांव था। वहाँ मिशनरी लोगों के बंगले थे। विदशों से आये पाद्री और नन्स का पहला मुकाम खुदावंदपुर ही रहता था। उन्हें वहाँ इस देश के वातावरण और रीतिरिवाज का परिचय कराया जाता होगा।

खुदावंदपुर के इन नवागतों को हिन्दी-मराठी सिखाने का काम मेरे पिता किया करते थे। कभी-कभी मैं भी उनके साथ हो लेता। वे विलायती लोग मेरे पिता से मराठी सीखने के बाद उसका पहला प्रयोग अक्सर मेरे उपर ही करते। पहले मेरे होनहारी की तारीफ वे करते और बाद में मजाक में पूछते, "माष्टर डण्डेकार, आशा कशा टुमजा देब ? लोणी चोरुन खाटो ? (मास्टर दण्डेकर, ऐसा कैसा तुम्हारा भगवान, माखन चुरा कर खाता हैं)

मैं भी उलटी-सुलटी बातें उन्हें कह ड़ालता। वे सब हँसते। उनके पीले सडीयल दांत मुझे दिखते। फिर मुझे उनकी बड़ी घिन लगती। एक बार फिर मैंने कहा "तुम योरोपियन लोग कितने गंदे हो। सुबह पानी की जगह कागज इस्तेमाल करते हो। और तुम्हारे दाँत तो देखो अरे रे।"

मैंने उन्हें अपने दाँत दिखाये। कुछ देर बाद एक पादरी ने मुझ से पूछा "यह फोटो किसका हैं ?"

"क्या इतनी सी बात भी मुझे नहीं मालूम ? यह फोटो हिन्दुस्तान के बादशाह का हैं।"

शायद उस पादरी को कहना था कि साफ दाँतों के तैंतीस करोड लोग इस बादशाह के नजर से भी ड़रते हैं।

उस दिन घर लौटते समय पिताजी ने मुझे बहुत डांट पिलाई। उसके बाद मैं खुदावंदपुर कभी गया नहीं लेकिन वे पादरी मेरे पीछे लगे रहे एक दिन उसमें से एक ने मुझे बायबल भेंट की। उसके जाने के बाद मैं उसे फेंकने लगा। देखा तो पिताजी दरवाजे में खड़े थे। दूसरे दिन उन्होंने मुझे से ऐतरेयोपनिषद की ऐ पंक्ति पढ़वाई। अर्थ था - प्रारंभ में आत्मा से अलग कुछ भी नहीं था। उसे विश्वापत्ति की इच्छा हुई। फिर उसने विश्व निर्माण किया। उसके बाद न्यू टेस्टामेंट का सेण्ट जान का अध्याय खोल कर पढ़ने को कहा। उसकी प्रारंभ की पंक्तियाँ ऐसी थीं :

"In the beginning there was word. The word was with God and the word was God. The same was in the beginning with God. All things were made by him."

उन पंक्तियों का अर्थ मुझे समझाकर पिताजी ने कहा "सभी धर्मग्रंथों का तत्त्वज्ञान

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एकसा हैं इसलिए धर्मग्रंथों का द्वेष नहीं करना चाहिये।"

हमारा घराना भी नामवर था। बड़े-बड़ों के घर में हमारी कन्यायें ब्याही थीं। मेरे पिताजी की बड़ी फूफी तिलक के यहाँ ब्याही थी। लोकमान्य तिलक उसके भतीजे थे।

तिलक के साथ रहे इस सम्बन्ध के कारण ही कदाचित सारा दांडेकर परिवार स्वतंत्रता संग्राम में कूदा था। मेरे फूफा शंकर महाजन को अंग्रेज सरकार ने पकड़ा और खूब पीटा था। उनकी रीढ़ के हड्डी का एक मनका इस मारपीट में टूटा। तब इंग्लैण्ड से डाक्टर बुलाया गया और उसने वह मनका जोड़ा।

ये शंकर महाजन, मेरे पिता और यशवंत दांडेकर ये तीनों अभिन्न मित्र थे। कुछ काल पश्चात यशवंत दांडेकर फकीर हो गये और उन्होंने अपना नाम रखा "सदगुरु स्वयंप्रकाश आत्मा"।

चमकती कंजी आँखे, घनी लंबी जटा और दाढी-मूँछ, नींबू रंग की तेजस्वी कांति, दोनों बरोनियों के बीच एक गुदना, एक लंगोटी और एक कफनी। लोकविलक्षण सदगुरु।

उनके विचित्र वेष और विचित्र बर्ताव के कारण उनके चारों ओर एक रहस्य जाल हमेशा रहता रहा। कहाँ से आये? नहीं मालूम। कहाँ जायेंगे? नहीं मालूम। चलने में पिशाच्च। साठ सत्तर मील पैदल चलना उनके बाँये हाथ का खेल था। कभी साल छमाही हमारे यहाँ आते। आते ही चिल्लाकर माँ को कहते :

"भाभी-सदगुरु की पुडी (भोजन) आज तुम्हारे घर हैं।"

हम सब बच्चे वह अगम्य पुडी देखने बैठ जाते। कितना ही आटा लो सब सदगुरु की जठराग्नी में स्वाहा हो जाता। माँ फिर कहती:

"देवर जी अब बहुत हो गया।"

सदगुरु कहते "तू थक गई? ठीक हैं। लो अब सदगुरु रुक गया।"

हाथ धोकर कफनी से पोंछे। जटा में अंगुली ड़ालकर सँवारी। हो गया। फिर मेरे पिता और वे एक कोने में बैठ चुप-चुप बातें करते। भोर उठकर देखते तो सदगुरु चले गये हैं।

कभी फुरसत में सदगुरु हमारे यहाँ रुकते। उनका बर्ताव लेकिन मति कुंठित कर देता। शीर्षासन लगाकर वे घंटों खड़े रहते। मैंने भी आसन किये हैं परन्तु सदगुरु का शीर्षासन एक विस्मय था। ऐसा लगता जैसे मोम की बनी तेजमय मूर्ति हो। पेट, सीना, सब बड़ा शांत, गतिमान रहता। सदगुरु स्नान करते परंतु न तो जटा पोंछते न शरीर।

हमारे घर के पिछवाडे एक बहुत बड़ा बेर का पेड़ था। बेर भी मीठे और बड़े थे। फान्सेका का नियम था पहली तोड़ वह पूरी की पूरी हमारे घर भिजवाता था। उस दिन नौकर पहली तुडाई कर रहा था। हम भाई-बहन भूखी आँखों से उसे देख रहे थें। उसने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पूरी टोकरी भरी। सिरपर रखी और माँ के पास ले आया। हम भी उसके आगे पीछे। माँ को हमारा यह कंगलापन अखरा। गुस्सा होकर बोली "चलो हटो, पहले पढ़ाई करो, बेर कहीं भागे नहीं जा रहे हैं।" बेरों की आस लगाये हम पढ़ते रहे। क्या पढ़े होंगे?

बेर मिलने का समय हो ही रहा था कि अचानक सदगुरु पधारे। उन्होंने बेर देखे और भाभी से पूछा :

"भाभी बेर मोल लिये क्या?"

हमारे पेट में गड्डा पड़ गया। विचित्रमूर्ति सदगुरु के सामने बेर थे। हमें कुशंकायें घेर रहीं थीं।

"नहीं जी, घर के ही हैं, खाओगे क्या?"

"सब दे रही हो तो खाऊँगा।"

माँ भी चेत गई - बोली, "डण्ठल गुठली सहित खाना पडेंगे पूरे।"

सदगुरु टोकरी सामने रख बैठे और देखते ही देखते सारे बेर निगल गये।

मैंने पूछा तो बोले "लोमडी - सियार बेर खाते हैं तो कौन गुठली निकालते हैं-सब मटक जाते हैं दूसरे दिन गुठली अपने आप गिर जाती हैं।

मैं चाहता था पूछूँ - आपके पेट में गुठलियों का क्या होगा? परन्तु तभी पिताजी आ गये। उन्हें वाहियात बातें पसंद नहीं थीं।

सदगुरु चाचा ने अपने दो किस्से बताये थे। झूठ ओर बनावटी कहने की उनकी आदत नहीं थी। ऐसा कर सकते तो ब्रिटिश सरकार की हड्डी-तोड़ मार न खाते। सावरकरजी ने इग्लैंड से बड़ी-बड़ी पुस्तकों के पन्नों में छिपाकर पिस्तुलें इधर भेजी थीं। उस मामले में सरकार ने उन्हें पकड़ा। पकड़ा वह ठीक ही था। पिस्तौल, बम इन सबसे सदगुरु का घनिष्ठ सम्बन्ध था।

सरकार उन्हें पकड़ सकी, दमतोड मार भी सकी, पर अपने हित में कोई बात उनसे उगलवा न सकी। हमारे यहाँ आनेपर वे मेरी बाँह अकसर पकडते - दबाते और बड़ी चिंता से कहते - "तेरा क्या होगा रे पिद्दी?"

शरीर लोहे का होना चाहिये। ले देख, दबा मेरी बाँह। ऐसा शरीर था इसलिये मैं दमतोड मार भी सहन कर सका। वे मारने लगते तो मैं प्राणायम कर शरीर कड़ा बना लेता।"

पीट-पीट कर थकने के बाद सरकार ने उन्हें छोड़ दिया था। पर सी. आइ. डी. उनके पीछे लंबे समय तक रही। कल-कल तक उनका नाम पुलिस दफ्तर में मौजूद था।

सफर में टिकट लेना उन्हें मंजूर नहीं था। टिकट पूछते ही वे घन गर्जना सी करते "सदगुरु स्वयंप्रकाश आत्मा जो सब जगह भरी हुई हैं" और दोनों हाथ उपर उठाकर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आर्शीवाद मुद्रा वे बनाते।

एक बार वे ऐसे ही कहीं मोटर लांच में बैठे। टिकट बाबू ने टिकट पूछते ही उन्होंने आर्शीवाद दिया। पर टिकट बाबू नया था बोला - "सदगुरु बिदगुरु कुछ नहीं - टिकट दिखाओ नहीं तो नीचे उतरो।"

"उन्होंने पूछा - "उ त रुँ?"

"हाँ, हाँ उतरो।"

और वे सचमुच उतर पड़े। कफनी उतार उन्होंने साफेसी बांधी और लंगोट पहने वे खाड़ी में कूद पड़े। लोगों ने टिकट बाबू को समझाया "अरे भाई उनको उपर बुलाओ" लेकिन वह अड गया। लांच चल पड़ी और सदगुरु उसके साथ तैरते हुए निकले। रास्ते में जिस बंदर पर लांच रुकती वे धीमे-धीमे तैरते अपनी घोषणा करते रहते और लांच चल पड़ते ही उसके साथ तैरते जाते।

लांच की जिस ओर वे तैरते उन्हें देखने लोग उसी बाजू हो जाते। लांच एक तरफ झुकने लगती। टिकट बाबू की हालत खराब हो गई। एक तरफ सारे मुसाफिर हो जाने से दो चार बार लांच पलटने को हो गई। टिकट बाबू मुसाफिरों पर चिल्लाने लगा। वे सदगुरु को उतार देने से पहले से ही नाराज थे। मारपीट पर बात आ गई। कुछ लोगों ने टिकट बाबू को ही पानी में फेंक देने की धमकी दी।

परन्तु जिनके लिये यह युद्धकांउ लांच पर मचा था वे बड़े मजे से तैरते हुए आगे बए रहे थे। लांचपर से उतरे मुसाफिरों ने बंदरगाह पर यह विचित्र लीला कही तो किनारे पर भी भीड़ उमड पड़ी।

बीस मील तक लांच के साथ वे तैरते रहे। बीस मील बाद तो लांच को भी लौटना था। टिकट बाबू से बोले - "बोलो फिर चलूँ वापस ऐसे ही।" वह बेचारा गिडगिडा कर माफी माँगता रहा।

डेढ़ दो मील चौडी खाड़ी पार करने के एक बार सदगुरु एक छोटी नाव पर चढ़े। यह समुद्री नाव बहुत छोटी होती हैं। मुसाफिर तो कोई इसमें कभी कभार ही जाता हैं। सदगुरु के लिये वह नाविक तैयार हो गया। नाव छूटते-छूटते एक और आदमी नाव में फिर भी घुस ही पड़ा। "पार उतार देना यार जल्दी" ऐसा कहते। सदगुरु ने उसे पहचान लिया। वह उन्हीं का पीछा कर रहा था गुप्तचर था।

अब उस छोटी नाव में बीच में सदगुरु एक किनारे नाविक और दूसरे किनारे वह नया मुसाफिर, ऐसे बैठे। इस नाव में दोनों किनारे पकड़ कर बैठना पड़ता हैं क्योंकि नाव बराबर हिलती रहती हैं। नाव जब गहरे पानी में दोनों किनारों के बीचो बीच आ गई तब सदगुरु उठे। नाव के दोनों किनारों पर पाँव रखकर खड़े हो गये और लगे उसे हिलाने।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बेहद सहमकर वह गुप्तचर बोला "ये आप क्या कर रहे हैं?"

शांत स्वर में सदगुरु बोले - "भय्ये! नाव डुबो रहा हूँ।"

"लेकिन क्यों।"

"वैसे ही - मजा - मुझे तैरना आता हैं। नाविक भी अच्छा तिरैय्या हैं। यहाँ पानी गहरा हैं। बड़े-बड़े मत्स्य हैं। मुरदे का एक ही कौर करते हैं वे मस्त्य। ऐसा मजा आयेगा कि पूछो नहीं।"

"अरे लेकिन मेरा क्या होगा?"

"होगा क्या? मछली का पेट भरेगा। वह दुआ देगी। परलोक सुधर जायेगा।"

जोर-जोर से वह आदमी रोने लगा। सदगुरु के पैर पकड़ने के लिए भी वह आतुर था पर किनारों को पकडे हाथ हटा नहीं सकता था। आखिर सदगुरु ने झूला बंद किया, बोले "बोल अब तो मेरा पीछा नहीं करेगा?"

"नहीं, बिलकुल नहीं।"

"खा अपनी कसम!"

"जिसकी आप कहें उसकी कसम।"

नाव वापस लाकर जहाँ से वह चढ़ा था वहाँ उसे उतार फिर अपनी यात्रा पर सदगुरु निकल पड़े।

बचपन से मुझ मोहिनी मंत्र ड़ालता रहा वह कठोर कर्मठ व्यक्तित्व। धूमकेतू की तरह वे आते और धूमकेतू से चले जाते। जब वे आते मेरा आनंद पर्व होता।

धुंदलीसी याद हैं। एक बार भरी बरसात की रात सदगुरु हमारे यहाँ पधारे। मैं जग गया तो पिताजी ने जबरन मुझे सुला दिया। वे दोनों हलकी आवाज में देर तक बतियाते रहे। मैं सुनने की कोशिश में बहुत देर पड़ा-पड़ा जागता रहा। लेकिन नींद आ ही गई। बड़े भोर उठा देखा तो वे चले गये थे। धीरे से माँ से पूछा। वह कुछ बोली नहीं। मैं यूँ ही कंपकंपा गया।

उस विशाल व्यक्तित्व का मुझपर अप्रत्यक्ष बड़ा परिणाम हुआ। हम आकाश से गिरे हुए नहीं हैं। अपनी भी एक भूमि है उसमें रहता एक समाज है यह अनुभूति मुझे उन्हीं से मिली। एक बार वे ऐसे आये थे। मुझे उन्होंने छाती से लगाया। अपनी कफनी उठा अपने ही आँसू पोंछे। मुझे धीरे-धीरे थपथपाया। शायद मेरे सम्बन्ध में जो कुछ वे सोचते थे उसीकी यह निष्कृति थी।

सदगुरु ने सारे भारत की यात्रा की थी। गंगोत्री-जमुनोत्री ही नहीं कैलाश-मानसरोवर भी। लोकमान्य तिलक के निधन के बाद उनकी राजनीति प्रवृत्ति घट गई। शस्त्राचार से

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लगाव भी घट गया। फिर भी मरते दम तक वे कुछ-न-कुछ करते ही रहे। वैद्यक में उनकी रुचि इधर बढ़ी थी। कुझे कह गये थे - अबकी बार बताऊँगा तुझे कुछ नुस्खे। पर एक दिन सुना - सदगुरु स्वयंप्रकाश आत्मा - परमात्मा के घर चला गया है। उनके लिये शायद ही कोई रोया हो। जिस किसी ने उन्हें अग्नि दी उसे भी कदाचित ही ज्ञात हो - कितनी बड़ी योग्यता का वह व्यक्ति था। मेरे उस आदर्श पुरुष का यह वाङ्मय श्राद्ध मैंने किया हैं। मेरा विश्वास हैं कि जिस किसी लोक में वह जीव होगा वहाँ की यात्रा दिन में पचास साठ मील चलकर वह पूरी करता होगा।

मेरे पिताजी जिन्हें हम सब दादा कहते थे पूरी बस्ती में लोकप्रिय थे। उनकी लोकप्रियता का वास्तविक कारण उनकी निर्भयता थी।

मेरे बालमित्र "चन्द्रया" (बाघ का बच्चा) के लिये लोहे का पिंजडा हमारे पहले बंगला मालिक 'महारा' ने बनवाया था। वे ही उसे जब कभी पिंजडे से बाहर निकालते। पर उनकी अनुपस्थिति में उसे पिंजडे से बाहर निकालने की हिम्मत किसी की नहीं थी। एक दिन जब महाराज नहीं थे तब पिंजडा धो रहे नौकर की गफलत से चन्द्रया बाहर हो गया और उसने पूरे बंगले में तहलका मचा दिया। जिस किसी पर वह गुर्राता। वह एक पालतू बंदर को भी मार चट कर गया। बाघ का उत्पात होने पर महाराज के यहाँ का आदमी हमारे घर दौड़ा आया। दादा के हाथ पैर पड़ उसने बताया "महाराज घर में नहीं हैं - चन्द्रया छूटा हैं आप चलो। आपही उसे पिंजडे में बंद कर सकते हो।"

माँ "नहीं-नहीं" कह रही थी। आँसू आ गये बेचारी के। पर दादा उठे, उस आदमी के साथ गये और घंटेभर बाद लौटे।

"क्या हुआ?"

"क्या होना था? पिंजडे में बंद कर दिया।"

नाखूनों से जहाँ-तहाँ हुए घावों को आठ पंधरह दिन तक मरहम पट्टी करते उन्हें मैंने देखा था।

पर इससे भी अधिक दादा याद किये जाते घर में सांप निकलने पर। सिविल लाईन्स का यह भाग बहुत खुला; फिर पेड़-पौधे, बगीचे, फुलवारियाँ। इसलिये सांप आदि भी अधिक। परतवाडा में सांप निकलते ही लोगों को दो व्यक्तियों की याद आती थी। एक हमारे दादा दूसरा स्कूल का भंगी, मदारी मेहतर।

दादा दो 'वार' में सांप मारते थे। पहला वार वे गरदन के पास करते। सांप इससे ढीला पड़ जाता हिल नहीं पाता। दूसरा उसके सिर पर। मदारी मेहतर सांपको मारता नहीं था। कीड़े को बीच में लाठी ड़ाल उपर उठाता और पटक देता। मनके ढीले पड़ जाने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

से सांप सुस्त हो जाता। फिर वह उसके गरदन पर लाठी रख उसका सिर पकड़ता। बिना जहरवाले सांप को वह दूर जंगल जाकर छोड़ देता। नाग हो तो वह उसे पालता। सुई से उसके जहरीले दांत निकालकर। ऐसा नाग उसे नागपंचमी के दिन दो-तीन रुपये की चिल्लर, अनाज, कपड़ा दिलवाता था।

सांप के ऐसे लाड दादा को मंजूर नहीं थे। मारने के पहले यह देखो कि वह जहरीला हैं या बिना जहर का। ये सब पंडिताई आप करो और तब तक वह काट ही ले। सांप हैं। मारो मुक्त करो उसे। यह सीधा सूत्र था उनका।

एक बार एक बड़े भारी नाग से मुठभेड हमारे ही घर में माँ से हुई। भोर ही उसने हमें पढ़ाई के लिये जगाया। चूल्हा चेताने वह कनस्तर में रखे कंडे उठाने लगी तो उसके हाथ को अजी ठंडा सा लगा। भयभीत हो उसने यह बात पिताजी से कही - "कनस्तर में कुछ ठंडा सा हैं।"

पिताजी समझ गये। फोटो फिल्म धोने की एक बड़ी सी ट्रे उन्होंने चट कनस्तर पर ढांप दी और फिर वह कनस्तर वे बाहर खुले में ले आये। ट्रे पर पत्थर रख दिया। माँ से कहा "रहने दे इसे साफ सुबह होने पर देखेंगे" अपनी पढ़ाई छोड़ हम उस कनस्तर के पास तब तक जमा हो ही गये थे। हमें डपटकर बोले "क्यों? कोई नाटक हैं क्या? चलो पढ़ो। खबरदार कोई इधर झांका तो।" हम बेचारे दूर से कनस्तर पर चित्त लगाये पढ़ते रहे।

कुएँ से पानी भरने का काम पिताजी ही करते थे। बीच में लकड़ी के हत्ते लगे दो कनस्तरां से वे पानी भरते। आंगन में तोरई की एक बेल थी। चार छह दिन बाद तोरई तोड़ने का काम भी वे ही करते। आज उन्होंने वह भी किया। ऐसा सारा आराम से करने के बाद वे कनस्तर के मेहमान की ओर बढ़े।

दादा की सांप मारने की एक खास लठिया थी। एक सिरे से झुकी हुई। शायद वह सफेद थी। उसे लेकर वे कनस्तर के पास गये। कनस्तर पर ढंकी डिश पर रखा पत्थर और फिर डिश हटाकर उन्होंने कनस्तर को ढूँसा लठिया से। हम सब दरवाजे में इकट्ठा होकर देख रहे थे। कनस्तर में बैठा वह सर्प बाहर निकला। कितनी देर तक वह बाहर ही आ रहा था। खतम ही न हो उसका निकलते जाना। साताठ फूट लंबाई होगी। लाल पीला रंग, जवान असली नाग।

पिताजी को कोई जल्दी नहीं थी जैसे। पूरा बाहर उसे आने दिया। बाहर आने के बाद वह फिर घर की तरफ ही मुड़ा। हम सब पर एक भय छाया छा गई। एक क्षण बाद ही हम देखते हैं पिताजी का पूरा हाथ उसके गरदन पर पड़ गया हैं। उसके बाद का उसका तांडव देखने ही लायक था। चोट खाई जगह के पिछले भाग को उसने खूब घुमाया। फन को खड़ा करने का प्रयास वह करता रहा। फिर वह सिर घुमा-घुमा कर दादाकी ओर देखने लगा। दादा उसका निरीक्षण कर रहे थें। उन्हें पक्का मालूम था वह इंच भी वह आगे बढ़ नहीं सकता। उस करुण तांडव की माँ को दया आ गयी। वह बोली :

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"खत्म करो - क्यों अब बेचारे को कष्ट दे रहे हो।" लठिया का एक वार और चला और उस सुंदर सर्प का अंत हो गया।

मेरे बचपन के अधिकतर मित्र गोवानीज किरिस्ताव थे। मैं कोई तीन चार बरस का था, जब हम फॉन्सेका के बंगले के आउट-हाऊस में रहने लगे थे।

बाब बालों वाली, सांवरी, दुबली, गोल चेहरे की फ्लोरा मेरे वय की थी। संतरे की बाग में उधम करने, तितलियाँ पकड़ने, बंगले के पोर्च में बैंच पर बैठ पैरों को हिलाते अद्‌भुत बाते कहने सुनने हम दोनों साथ रहते। एक लाल चीटी ने मुझे चड्डी के अंदर काटा, फ्लोरा को मैंने सारा-सारा बताया, कैसी जलन हुई, कैसी सूजन आई। सुन लेने के बाद जीभ निकाल दोनों हाथों को कंधो, सीने से छुआते वह बोली "आपूरे, कैसा पागल है बोलना नई। गाड सिन देता हाय।" बचपन से ही सिन से ड़री फ्लोरा जोगिन बनी अविवाहित रही।

मुझ से सात आठ साल बड़ी थी फॉन्सेका के घर की मोलकरनी इझाबेल। मेरी दूसरी दोस्त। फॉन्सेका की भैंस इझाबेल चराती थी। भैंस लेकर वह आउट हाऊस की तरफ आगे बढ़ती तो आवाज देती :

"माईकी माँ - आपू क्या करता हाय?"

मैं बचपन में शाला गया ही नहीं। क्योंकि प्राथमिक शाला घर से बहुत दूर थी। घर में ही पढ़ाई कर अंग्रेजी पहिली (कक्षा छह) में भर्ती हुआ। इस कारण मैं दिनभर घर ही रहता। माँ के ड़र से कुछ पढ़ता पर जल्द ही अलसा ज़ाता। हाथ पैर लंबे करना - मुँह बाना बही में चित्र चिपकाना ऐसे धंदे मेरे चलते। छोटे भाई बहनों को संभालने का घिना काम भी कभी-कभी मेरे जिम्मे आ जाता। वैसे मेरे से छोटे को संभालने का काम कभी करना नही पड़ा। उसके सामने खिलौनों की टोकरी उलटा देने पर वह टांग टूटा एक बैल लेकर नाक बहाता इधर उधर घूता रहता। पर बहन मुझे बार-बार परेशान करती। मैं कागज की नाव बनाने के महत्त्वपूर्ण काम में लगा होता तब ही उसके गुडिया के विवाह का मुहूरत होता। मुझे सारे महत्त्वपूर्ण काम एक तरफ रख फिर पुरोहिती करनी पड़ती। पिता की वह विशेष चहेती थी। उसकी बात न सुनना माने अपने अपराध दादा के कानों पहुँचाने का रास्ता खोलना था।

इझाबेल की वह आवाज आती और फिर मैं माँ के अनुमति की परवाह न करता इझाबेल की ओर दौड़ पड़ता। उस अनाथ कन्या के लिये माँ के मन में सहानुभूति थी इसलिये मेरा उसके साथ जाना धकता था।

सृष्टी का पहला परिचय मुझे इझाबेल ने कराया। सृष्टि संपन्न प्रदेश गोवा की वह कन्या थी। वृक्ष वनस्पति की जानकारी उसे बहुत अच्छी थी। कृमि कीटकों से भी उसका अच्छा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

परिचय था।

पूँछ से मक्खियाँ मारते हुए आगे बढ़ती भैंस और उसके पीछे हम दोनों। चपटे नाक की, बंधे जूडे की, फ्राक लपेटे इझाबेल और हाथ में डंडा उसके साथ ढिली-ढाली चड्डी और सूती बटनों की सदरी पहने मैं, मरीयल। मेरे हाथों में फूल, पत्तियाँ, तितली के पंख, शंख, सींप आदि खजाना।

हमारा आंगन भला लंबाचौडा था। दाहिनी और उसमें एक प्रचंड वटवृक्ष था उसके नीचे से होकर पानी की नाली, संतरे की बाग को जाती थी, उस बाग के परली ओर अमरुद, कलमी आम, कटहल आदि नाना जाति के पेड़ लगी दूसरी बाग थी।

हमारे इस आंगन में पानी की नाली के किनारे बरसात में अनगिनत केचूएँ लपलपाते बाहर आते। बचपन में मुझे इस दोनो ओर से रेंगते, गंदे, लिजलिजे कीड़े से बड़ा ड़र लगता था। मेरा भाई तिनके से उन्हें उठाकर मेरे सामने ला पटक देता, मैं चिल्लाकर भागता। पर उसकी शिकायत नहीं की जा सकती थी घर में उसके भाव थे।

बरसात सामने आते ही नाली के दीवारों से अनगिनत चीटियाँ और चींटे बाहर आने लगते। एक स्यानी आगे चलती बाकी सारी उसके पीछे एक कतार में। चीटियों को इस तरह दौड़ते देख मैं बड़े विस्मय से उनको निहारता रहता। मेरे लिये घर में तूफान मच जाता फिर-परन्तु उसका मुझे होश न रहता।

इस सारे जीव सृष्टी के सम्बन्ध में मुझ में बड़ा कौतुहल था। सभी बच्चों में वह होता है फिर भी मेरी समझ में मुझ में कुछ अधिक था। परन्तु मुझे गुरु मिला हुआ था। भैंस के पीछे संतरे की बाग में घूमते-घामते इझाबेल ने मुझे जीवसृष्टी के न जाने कितनेही रहस्यों से परिचय कराया।

भूमि के अंदर चीटियों के गाँव रहते हैं यह जब उसने मुझे बताया तो मैं दिगःमूढ हो गया। अपने तलवे पर दस बीस केचुएँ लेकर उसने सिद्ध कर दिया कि वह कितना सीधा सादा जीव हैं। फिर मैंने भी तलवे पर दस बारह केचुएँ लेकर घर में प्रवेश किया। मेरी बहनें पुस्तकें फैलाये पढ़ रही थी। चार छह केचुदूं उन पुस्तकों पर गिर गये मेरे तलुवे से सरककर। मेरे बहनों मेरे बहादुरी की कोई कदर नहीं थी। उन्होंने जाकर माँ से शिकायत की और मुझे धौल धप्पे खाने पड़े।

हमारे घर में जूठे-सकरे के नियम कडे नहीं थे। फिर भी कुछ तो थे ही। पर वे नियम भी फ्लोरा-आल्फ्रेड के कारण माँ टूटने देती। वे दोनो घर से निकलते तो सीधे हमारे घर की रसोई में आ माँ की गोद में घुसना चाहते। उनकी माँ बचपन में ही गुजर गई थी। इसलिये हमारा उनके आउट हाऊस में रहने आना उनके लिए सुयोग साबित हुआ। जूठे-सकरे का विधि निषेध उन्हें नहीं था। तवे पर से उतरी रोटी वैसी ही उठाकर दोनों हाथ से खाते-खाते वे निकल जाते। इसका बदला मैं चाहते हुए भी ले नहीं पाता था। हम कट्टर शाकाहारी थे। उनके यहाँ अंडे, मछली, मांस सामान्य बात थी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पीटर नाम का एक जवान फान्सेका के शराब दुकान की व्यवस्था देखता था, कभी-कभी वह मछली की अंतडियाँ मेरे मुँह में ठूँसने की धमकी मुझे देता था। ऐसे संकट के समय मैं उसे मामला हाइकोर्ट में ले जाने की धौंस देता था। हाइकोर्ट का फान्सेका। उस दुबले पतले बुड्ढे से सब डरते थे। उसका मुझपर बड़ा स्नेह था। मुझे वह गीता, हनुमान स्तोत्र आदि सुनाने को कहता। मैं बड़े उत्साह से, ऐठ से, टणटणाती आवाज में सब सुनाता। मेरी पीठ थपथपाते वह कहता - "खैसा ब्राइट लड़का हाय।"

हमारे घर मांसाहार नहीं चलता इसलिए फान्सेका तरह-तरह की मिठाई तीज-त्यौहार पर भेजता था। बडा दिन उनका बड़ा त्यौहार होता था, उस दिन के लिए बिना अंडे का केक अपनी निगरानी में वह बनाता था। लेकिन अंडा खाने में कोई पाप नहीं हैं यह भी समझाता था।

दो पडोसी परिवार, एक दूसरे के सुख-दुखके साथी एक दूसरे को अपने तीज त्यौहार पर बुलाते, दूसरे के यहाँ बुलावे पर जाते। एक दूसरे के आचार विचार का मजाक भी करते और आदर भी। एक गोवानीज क्रिश्चियन तो दूसरा कोकणस्थ (चित्तपावन) ब्राह्मण।

कहने को तो हम कोकणस्थ पर कोंकण क्या? कैसा? यह तबतक देखा नहीं था। पिताजी माताजी का बचपन कोकण में गुजरा इसलिये उनके मुँह से कोंकण सुना था केवल।

मेरी माँ बचपन से भरे पूरे शरीर की पठाण थी। वह अपने बचपन के किस्से सुनाती। "अरे, माड (नारियल) और पोपली (सुपारी) के ये ऊँचे-ऊँचे पेड़ थे हमारे बगीचे में। ऐसे घने कि एक दूसरे के गले मिलते जैसे। पोपली से माड दुगुना ऊँचा, वैसा ही मोटा भी। ऐसे लंबे-लुंबे पेडों पर से नारियल की तुडाई होती तो बार-बार पेड़ पर चढ़ता और उतरता कौन? बस एक पेउ से दूसरे पेड़ के पत्ते पकड झूलकर आदमी दूसरे पेड पर जाते। मैं भी उन दिनों पेडों पर चढ़ जाती थी और फिर सीधे उपर ही उपर पत्तों के झूलने पर झुलती बाग के एक कोने से दूसरे कोने तक चली जाती।

इस तरह के आपबीते परबीते किस्से, किंवदंतियों से परिचय पाये कोंकण को देखने की इच्छा बलवती हो रही थी और दादा ने एक दिन घोषणा की "अनू का विवाह है हम सब कोंकण चलेंगे।"

अनू मेरी चचेरी बहन।

उस दिन उदार होकर मैंने बहुत दान पुण्य किया। मेरे पास कॉपिंग पेन्सिल का अंगुली इतना बड़ा टुकडा था। कलाई पर थूक कलना और फिर उसे गीले पर पेन्सिल से नाम लिखना। मेरी बहन 'बायडी' की उसपर आँख थी। इस पेन्सिल को मैं उसे दिखाता तक नहीं था पर उस दिन मैंने वह उसे हमेशा के लिय दे दी।

घर से हम कब निकले बम्बई में कहाँ ठहरे यह कुछ स्मरण नहीं है। स्मरण है तो सीधे भाऊ के धक्के पर जहाज में बैठना और समुद्र का दिखना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

हम तीसरे दर्जे के यात्री थे। इन यात्रियों को अपने लिए स्थान स्वयं घेरना पड़ता हैं। दादा आई पहले से ही इस काम में जुट गये थे उन्होंने दरिया बिछा ली थी। माई उन्हें सहायता कर रही थी। बायडी सामान के पास खड़ी थीं। मेरे पास भी संभालने के लिए कुछ था ही। मैंने वह बायडी को सौंपा और दादा के गुस्से की परवाह किये बिना में कठडे के पास चला गया।

ओ! हो! हो! आज भी वह दृश्य मेरे मन पटल पर जैसे खुदा हुआ हैं। बच्चा पहिली बार समुद्र देखे और उस धुंघलके मे खो जाये यह अनुभव विरलतम हैं। बच्चा बने बिना यह जाना नहीं जा सकता। कितने ही जहाज इधर-उधर खड़े थे छोटे जहाज और नावें इधर-उधर जा आ रही थी। खलासी चिल्ला रहे थे। समुद्र का पानी यूँ ही मथ रहा था। पंछियों के झुंड के झुंड उस मथते पानी पर उतर रहे थे। दूर समुद्र में एक खंबा बहुत ऊँचा खड़ा था। किसी ने बताया कि उसे कुलाबा की डांडी कहते हैं। बीच समुद्र में ऐसा खंबा कैसे खड़ा किया? विस्मय से मेरा मन भर आया और माई की आवाज मेरे कान पर पड़ी।

"आप्पा! दादा बुला रहे हैं।"

सहम कर देखा। आँखों से अंगार बरसाती दो आँखें मेरी ओर देख रही थी। फिर दिनभर जगह से उठ नहीं पाया सारे समय छोटे भाई को संभालता रहा। कनिष्ठिका दिखा मैंने माई से बात की। माई ने कहा : "दादा से पूछो।"

असंभव! यह साहस कौन कर सकता था। दिनभर वैसा ही बैठा रहा। आखिर शाम को बिलकुल भर गया तब माँ की ओर देखकर रोने लगा। उसने पूछा "क्या हुआ?"

मालूम होने पर उसने दादा को कहा तब वे मुझे संडास की ओर ले गय।

पास पड़ोस में चारों ओर दरियाँ कंबल बिछा-बिछा परिवार बैठे थे, लेटे थे। उसमें से बहुतों को समुद्री बीमारी ने घेरा था। यह समुद्री बीमारी क्या होती हैं यह उस समय मैं समझ न पाया। इतना अवश्य देखा कि वे सब उलटियाँ कर रहे हैं। एक महिला सिर में कपड़ा बांधे पड़ी थी। वह बार-बार नींबू चूस रही थी। एकाएक उठी और भड़भड़ाकर उसने उलटी कर दी हमारी दरी पर। माँ चिल्ला पडेगी मैंने सोचा। पर उसने कहा ' "रहने दो गाँव जाकर धो लेंगे।"

बंदर छोड़ जहांज खुले समुद्र में आ जाता तो वह खूप हिलने लगता। किसी बडे तालाब में कोई तिनका बह रहा हो और उस पर बहुत सारी चिटियाँ हो वैसा लगता आदमी से भरा जहाज उस विशाल जलराशि में।

कोंकणी मुसलमान लेकिन बड़े पक्के। उन्हें समुद्री बीमारी होती ही नहीं। दिनभर बीडी फूँकते जोर-जोर से बतिया रहे थे वे। बंदर आते ही बहुत सारे आदमी उतर जाते और थोड़े चढते। जहाज हलका हो चला था इस तरह। शाम को हवा चली तो वह हलका जहाज बुरी तरह हिलने लगा। पर तभी एक अपूर्व दृश्य ने मेरा मन खींच लिया। सूर्य समुद्र के अथाह जलराशि में डूबता हुआ, मैं जीवन में पहिली बार देख रहा था।

कितना पानी? ना आर ना पार। सूर्य डूब रहा था वहाँ से पानी पर से होती एक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

किरण हम तक दौड़ रही थी। मानो लाख दो लाख नन्हें-नन्हें दर्पण एक दूसरे से सटे किसी ने जड़ दिये हैं और वे हिल रहे हैं। दिन में आँखें चुंधियानेवाला सूर्य मंडल अब निस्तेज हो गया था। देखते-देखते वह पानी पर टिक गया और वहाँ अपने आप में जैसे वह घुलता जा रहा था। कुछ क्षणों में वह चपटा हो गया और फिर ऐसा लगा जैसे तप्त सुवर्ण की शलाका रह गई हो और फिर सब गुप्त हो गया।

मैं सांस रोके सब देख रहा था। माई ने आकर कंधे पर थपकी दी "चला बंदर आ गया सामान समेटना हैं।"

उसका हाथ पकड़ मैंने कहा :

"कितना सुंदर था न!"

उसने मेरा हाथ धीरे से दबाया।

हम जहाज से कैसे उतरे यह कुछ स्मरण नहीं। हमारा गाँव दाभोल बंदर से साढ़े चार पांच मील दूर था। स्मरण इतना ही है कि सारा सामान एक छोटी सी नाव में भरकर हम सब उसमें बैठे।

यह अनुभव अधिक रोमांचक था। जहाज बड़ा था, बहुत बड़ा। यह नाव छोटी थी इतनी कि मैं पानी में हाथ भी डुबा सकता था। दादा नहीं देख रहे यह देख मैंने हाथ पानी में डुबोया भी लेकिन तभी मछली ने मेरे हाथ के पास ही टुप्प से छलांग लगाई। इतना ड़र गया मैं कि फिर हाथ सीनेपर बांध लिये पक्के।

खाड़ी किनारे लुकलुकती कुछ बत्तियाँ छोड़ गहरा अंधियारा था चारों ओर। मेरा चित्त पानी की ओर था गहरे काले पानी की ओर जिसमें से एक विचित्र गंध फैल रही थी। बहुत सुखद नहीं ऐसी गंध। फिर भी मैंने जोर-जोर से श्वास लेकर अपने हृदय में वह भर ली।

कीचड़ में पैर धंसाते हम सब फिर उस छोटी नौका से भी उतरे। मैं सोच रहा था अपना घर यहीं कहीं पास में होगा परन्तु वह तो डेढ़ मील दूर था। सामान ले जाने को कोई नहीं था। दादा ने कहा "क्या करना है कोई यह पास में तो घर हैं। सामान उठा ले जायेंगे।"

न जाने कहाँ से दादा एक लालटेन ले आये। माँ ने आबा को गाद लिया। मैं, माई और बायडी तीनो ने तीन गठडियाँ सिरपर ले लीं। बिस्तर और कुछ सामान था वह दादा ने एक में बांधा और हाथ में लालटेन और सिरपर वह बोझा लिये वे सबसे आगे हो लिये। रात के अंधियारे में लालटेन के झूलते प्रकाश में हमारी पलटन गड्ढे, नाले, बंधियाँ पार करती आगे बढ़ने लगी। रास्ते में कुछ घर लगे। उसमें के लोग बाग झांकते। कौन जा रहा हैं यह उत्सुकता से देखते। उनके शब्द सुनाई देते :

"निलूदादा आया है शायद।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"घरवाली बच्चे भी हैं।"

"दाभोली उतरे होंगे जहास से।"

पर एक भी दरवाजा छोड़ आगे न आया। न किसी ने यह कहा कि लाओ हम ले चलते हैं आपका बोझा। ऐसा रास्ता चलना हमारे लिये नया था उनके लिय हमेशा का था। हम लड़के दिलखुले वर्‌हाडी थे यहाँ रुक्ष विरक्तता गहरी जमी थी।

घर आते ही मैं गुडीमुडी सो गया। सुबह उठा चिड़ियों के चहचहाट के शोर से। कितने पक्षी। वे कैसे-कैसे बोल रहे थे पर पेड़ों के भीड़ में दिख नहीं रहे थे इसलिए ऐसा लग रहा था कि पेडों से ही स्वर फूट रहे हैं।

नौका से उतरते चड्डी भींग गई थी। इसलिये रात मैं नंगा ही सो गया था। सुबह उठते ही वैसा नंगा ही बाग में दौड़ता गया। बाग माने नारियल सुपारी की।

नहीं! नहीं! कोंकण मेरी कल्पना से कितना ही अधिक रम्य था। ऐसे ऊँचे-ऊँचे पेड, पक्षी, फूलों के पौधे और जाने क्या-क्या? नंदनवन यही तो नहीं है? स्वर्ग अगर हो तो वह भी इतना बहारदार न होगा निश्चित ही।

मैं ऐसे ही घूमता रहा हर नारियल सुपारी के पेड को छूते। पानी के नाली में और कीचड़ में पैर धंसाते। हमारी बाग के बीच से बहता झरना उसमें बड़े-बड़े काले ढोक पत्थर हाथी जैसे। उन ढोकों से खिलवाड़ करता बहता शंख जैसा साफ पानी। वह पानी देखकर मैं मुग्ध हो गया।

झरने के बाद भी ऐसे ही बाग। नारियल सुपारी के सिरे एक दूसरे में फंसे असंख्य पेड। यह सब देखता आस्वाद लेता न जाने कितनी देर तक मैं खड़ा था। इतने में कानपर जनेऊ लटकाये, पंचा लपेटे, उघाडे, गोरे, ठिंगने, कंजी आँखों वाले मेरे दादा जैसे एक सज्जन झरने के पार से आये, लोटा मांजते मुझसे बोले -

"निलूदादा का तू लड़का क्या?"

"हाँ।"

"फिर ऐसे पगलाये, नंगे, यहाँ झरने पर क्या रहे हो?"

"अरे, तुम्हें नाश्ता विश्ता नही करना क्या? तुम्हारे वर्‌हाड में सुबह नाश्ता करते नहीं क्यां?"

ध्यान में आया वे मेरे चाचा हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इधर यह ऐसा ही। अधिकतर सारे पुरुष उघाडे, मैले अंगोछे लपेटे, गले में मोटे, मैले, जनेऊ, अधिकतर कंजी आँखें, किसी-किसी के तो बिल्ली जैसी, नाक ढंगदार, रंग गोरा। हप्ते-हप्ते हजामत का नाम नहीं। आदर शून्य भाषा। बच्चों के ही नहीं बड़ों के भी नाम बिगाड़े हुए। राम्या, शाम्या, रंग्या ऐसे। तीन-तीन चार-चार बच्चों के बाप भी राम्या, शाम्या।

चेहेरे पर हमेशा कठोर भाव और मुँह में प्रचंड गाली। 'भांचोद तेरी ये' तो मानो अचार चटनी। कुछ गालियाँ तो मैं लिख नहीं सकता ऐसी।

दादा वर्हाड में गाली नहीं देते थे पर अपने गाँव आनेपर जैसे गंगा नहा लेते। माई, मैं - हमें बड़ा मनहूस लगता। ये इतने श्रेष्ठ वरिष्ठ ऐसी-ऐसी गंदी गाली सहज कैसे दे लेते हैं? हमारी अकल काम न करती थी।

सात आठ साल तक के लड़के नंगे ही घूमते। अपने छोटे भाई बहन को कमर पर लादे। बार-बार लटक कर आती नाक भरकते वे किसी भी घर के झूले पर लाकर लद जाते।

कन्याओं की कमर मैले घांघरे से बंधी। उपर पोलका या चोली। नाक में लौंग। बालों की वेणी या चोटी की जगह आड़े तिरछे गठियाये जूडे। सभी दो चार दिन बाद ही सिरपर से नहाती।

लड़के-लड़कियाँ दिनभर हाथ में फावड़ा लिए नारियल, सुपारी को पानी पिलाते रहते। आम-नारियल आदि पेड़ से गिरने पर सब उसपर झपटते, लड़ते-झगड़ते। फिर किसी के झूले पर ठिया देकर बैठ जाते।

हमारे परिवार में विवाह था इस कारण चाचा, मामा, मौसा, फूफा और चाचीयाँ, मामीयाँ, फूफीयाँ, मौसियाँ ऐसी कौन-कौन और किसके-किसके रिश्ते में जमा हो गये थे पता नहीं। उस जमाने में अष्टपुत्रा सौभाग्यवती का आशीर्वाद फलता भी था। मेरे ही पिता सात भाई, चार बहने थीं। इसी आदर्श के अनुसार सब वंशवृद्धि में लगे रहते फिर विवाह में ढेर छोरे-छोरी इकट्ठे न होते तो कब होते?

महिलायें सारी कसा जूडा बांधे, घुटने तक उँची साड़ी पहिरे हुए। माँ कहती "आप्पा यह तुम्हारी फूफी, हाँ दूर की जरुर है पर चल नमस्कार कर। यह चाची इसे भी कर।"

करना ही पड़ता। फिर माँ मेरी तारीफ करती इस-उस चाचा फूफी से "इसे सारे कवित्त चौपाई दोहे याद हैं।" और फिर बिना उन्हें कुछ सुनाये छुट्टी न होती।

सुनकर वे कहतीं "है तो सुदामजी पर बुद्धि से तेज हैं।"

विवाह की बातें मेरे स्मरण से निकल गयीं। पर विवाह के बाद हुआ समरप्रसंग पूरा का पूरा स्मरण हैं।

,ऐसे ही हम चबूतरे पर सो रहे थे। और एकदम सहमकर जग पड़े। बड़ी ऊँची आवाज में झगडा शुरु था। सारा पड़ोस अपने-अपने दरवाजे पर खड़ा देख सुन रहा था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एक तरफ दादा और आई और दूसरी और बड़े काका। बाकी सब भी उनकी तरफ ही। बड़े काका की आवाज लेकिन फिर भी दबी हुई।

मेरे दादा ऊँचे पूरे मजबूत थे। स्वास्थ उत्तम। रोज रात सोने से पूर्व वे ये हाथ भर बड़े गिलास में दूध उसमें सोंठ, घी, शक्कर ड़ालकर पीते थे। वे बहुत गरम हो गये थे।

झगड़ा हिस्से बटवारे पर है इतना मालूम हो गया। मेरा एक चाचा लकवा ग्रस्त था। बीमारी के कारण वह कांपता रहता था हमेशा। झगड़े में वह कुछ बोल गया। दादा उसपर चिल्लाये "भांचोद अच्चा! देख हंसिये से छील ड़ालूँगा। बापरे! मैं तो सीधे दौड़ते-दौड़ते खुड्डी पर जाकर शौच के लिये बैठ गया। वहाँ से सारा झगड़ा सुन देख सकता था मैं।

अच्चा चाचा ने छप्पर में खोंसकर रक्खा हंसिया निकाला वह नीचे रखा। खुद भाग गया अंदर पर जाते-जाते कहता गयाः

"मुझे छीलना है ना ले छील ड़ाल। कर ले अपनी मुराद पूरी।" ओर मेरी माँ ने लपक कर हंसिया उठाया। ऊँचा उठाकर बोली "वे काहे को मैं ही छीलकर बताती हूँ मरदुवे बाहर तो आ।"

माँ का चंडीरुप देख सब सन्नाटे में आ गये। दरवाजों के आड में औरतें खड़ी थी, सब चुप। आखिर एक काका सामने आया माँ से बोला "भाभी तुम्हारे पैरों पड़ता हूँ- वह हंसिया रख दे। दादा चबुतरे पर बैठे थे नीचे कूदकर बोले :

"बस! अब इस घर में रहना नहीं। यहाँ का पानी भी नही पीना। आबा को उस दिन बुखार था। माई उसे लिये डरती-डराती झगड़ा देख रही थी। माँ ने उसी स्थिति में सबको खींच खाच बाहर निकाला और बोली :

"आप्पा कहाँ हैं?"

मैं कमीज उपर किये खड़ा था। रोते हुए बोला। "ये मैं यहाँ हूँ।" माई पानी ले आई। माँ ने खुले आसमान के नीचे एक टाट बिछाया उसपर बुखार में जलते आबा को लिए वह रातभर वैसी ही बैठी रही। उसको घेरे हम भाई बहन लेटे रहे।

कुछ देर बाद चाचा आये, बोले

"भाभी लड़का जल रहा हैं। खुले में ठंड से उसे कुछ हो हवा गया तो निलूदादा गाँव जला ड़ालेगा। तुम घर चलो।"

पर माँ ऐसी जिद्दन कि वहीं बैठी रही रातभर। दूसरे दिन सब भाई दापोली गये और बंटवारा कर आये।

कोंकण आये थे तो कितना उत्साह था और लौटते कितनी कड़वाहट।

दादा बहुत बुद्धिमान थे। एक बार किसी स्पेलिंग पर से झगड़ा बढ़ा। दूसरे दिन वे वेबस्टर की डिक्शनरी ले आये और ए से जेड तक सारे शब्द उन्होंने छह माह में कंठस्थ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कर लिये।

ऐसी तरल बुद्धि पर उतना ही गुस्सैल स्वभाव। इस कारण उनके सामने खड़े होकर बोलने की हिम्मत बिरले की ही होती थी।

वे निर्व्यसनी थे। अपूर्व रुपवान थे। परन्तु नजर उठाकर किसी की ओर उन्होंने देखा नहीं। नाक की सीध में जाना-आना। भोर ही उठते और तबसे जो दिन चक्र चलता वह काफी रात तक। कभी भी खाली बैठे मैंने उन्हें देखा नहीं। पुस्तकें पढ़ने का शौक उनका तगड़ा था। वे उत्तम फोटोग्राफर थे। रत्नपारखी थे, रंगकर्मी थे। अच्छा गा भी लेते थे। वे गीता, बाइबल ही नहीं कुरान भी पढ़ लेते थे।

ऐसा गुणवान आदमी पारिवारिक कलह के कारण बदल गया। गले में, हाथ में मणिमालाएँ और फूलों के गजरे पहनने लगा। मुसलमानों की बैठकों में बैठने लगा। कुरान की आयतें उन्हें सुनाने लगा। हाथ में हुक्का लिये सड़क पर घूमने लगा। चौक-चौक में खड़े होकर अंग्रेजी में धाराप्रवाह भाषण देने लगा। और उनकी देखभाल के लिये उनके पीछे-पीछे मैं छाया की तरह रहने लगा।

दादा का स्वर जवारीदार खर्च का था। गाना सीखने का प्रयास उन्होंने कभी किया या नहीं ज्ञात नहीं हो सका। पर गाना उन्हें समझता था और वे अच्छा गा भी लेते थे। हर शनिवार रात आठ साढ़े आठ बजे हमारे घर भजन होता था। उसमें सबका रहना जरुरी था। दादा तानूपरा लिये और हम सब के हाथों में झांझर। मुझे जल्दी सोने की आदत थी। पर शनिवार के दिन ऊँघना भी कठिन था। मैं उनका बड़ा लड़का इसलिये उनके सामने बैठना ही पड़ता था। भजनों के अर्थ समझ सकने का वह वय नहीं था। शब्दों की चमत्कृति के कारण ही वे याद रहते थे। कई-कई जगह में समझता कि कवि ने भारी गलती की हैं।

जैसे गाने बजाने का वैसा ही नाटक का शौक दादा को था। कोई नाटक मंडली आने की खबर लगते ही दादा के लिये नया काम मिल जाता। कई-कई बार तो आसपास आयी हुई नाटक मंडलियों के लोग हमारे घर में ही पड़े रहते। आठ-आठ दिन। नींद का वरदान होते हुए भी मैंने इन्हीं सब कारणों से कई एक नाटक पूरे के पूरे देखे। केवल मंचपर चलता नाटक ही नहीं; मंच के परदे के पीछे होते नाटक का भी मैं करीबी दर्शक था। द्रौपदी, सुदेष्णा, सैरंध्री जैसे पात्रों को परदे के पीछे बीड़ी पीते हुए देखकर जो आश्चर्य होता वह बखान के बाहर हैं।

मेरे दादा सामान्यतः जैसे वे आवेश में आ जाने के बाद उससे कहीं उलटे वे हो जाते। पारिवारिक कलह के बाद यह आवेश जब उन्हें आता तब तीन माह के करीब रहता। आवेश आने के पूर्व ही वे समझ जाते और फिर अपने दीवानगिरी का वेश खोजने लगते। यह वेश संभालकर ही रखा जाता क्योंकि हर दो वर्ष बाद उसकी आवश्यकता पड़ती ही थी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इस आवेश में वे कफनी पहनते। सिर पर बड़ा सा साफा। कान बराबर ऊँचा तेल पिया बेत का डंडा। फकीरों की तरह मोटे मणियों की मालाएँ गले में रहती।

दादा के तीन चार गुरु थे। एक थे उज्जैन के शैलनाथ महाराज। दूसरे नागपूर के ताजुद्दीन बाबा। ये मलंग थे। नागपूर के सक्करदरा भाग में रहते थे। यह शहर से बाहर था। उनके बैठने के लिये मील का एक बड़ा पत्थर कहीं दूर से उखाड़कर अपने कंधे पर दादा ले आये थे। बहुत खुश होकर बाबा ने उनसे कहा था "जा बेटा मेरा नाम रख।"

दादा के मलंग स्थिति में रहते घटित एक कथा ऐसी भी :

एक दिन उन्हें पता लगा अचलपूर में नाटक मंडली आयी हुई हैं। अचलपूर हमारे परतवाडा से तीन साढ़े तीन मील दूर। शाम के समय एक पर्चा लिये दादा घर आये और मुझसे बोले :

"किलेदार, चलो। नाटक देखने जाना हैं।"

'ना' कहने का प्रश्न ही नहीं था। मैं कोई आठ नौ साल का था। चुपचाप दादा के साथ चलने लगा। थियेटर पर जबतक पहुँचे नाटक चालू हो गया था। टिकट निकालने की दादा को कभी आदत नहीं। नाटक कंपनियों के लिए काम करते रहने के कारण टिकट का प्रश्न उठता भी नहीं था। डोअरकीपर ने हमें अंदर जाने दिया। नाटक कौनसा था मुझे याद नहीं। करीब घंटे भर बाद मेनेजर आया वह गुस्से में था। आते ही उसने दादा का गिरहबान पकड़ा, बोला "टि क ट।"

आश्चर्य से दादा उसकी तरफ देखने लगे। क़ईयों बार वह आदमी हमारे यहाँ से चटपटा खाकर गया था। दादा खड़े हो गये बोले :

"टिकट! आप टिकट मांग रहे मुझसे?"

मैनेजर और ही भड़क गया। धक्का देते बोला "बदमाश कहीं के - बिना टिकट होकर आँखें दिखाता हैं चल निकल बाहर। नहीं तो डोअर कीपर से कह कर धक्के मारकर बाहर निकाल दूँगा।"

मैं अंदर से रोने लगा। बाहर से मैंने उसे रोक रखा था। बाहर आते ही मैंने दादा से कहा "घर चलिए ना पिताजी।"

वे कुछ बोले नहीं। बीच रस्ते वे खड़े थे। वहीं उन्होंने साफा, माला, कफनी उतारकर मुझे दी और वहाँ वे शीर्षासन लगा खड़े हो गये। रात बहुत हो गयी थी। उनके इस उल्टे प्रयोग से कुछ लोग वहाँ इकट्ठा हो गये। कोई-कोई कुछ बकने-झकने, हंसने लगे। कुछ दर्शक मेरे पिताजी को जानते थे उन्होंने बक-झक वालों को डांटा। मुझसे पूछा क्या हुआ?

सहानुभूति के शब्दों से मेरा रोना जोर से फूटा। मैं फूट-फूट रोने लगा। मेरे रोने का स्वर पिताजी ने जैसे ही सुना ड़ाटकर बोले - "चुप रहो एकदम।"

आवेश में वे मुझसे हिन्दी में बातें किया करते थे। उनकी डपट सुन मैंने अंदर से

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आते रोने के उबाल रोके। अंदर वे आते ही रहे फिर भी। उनका शीर्षासन कोई घंटे भर चला। कफनी साफा पहन वे चल पड़े। पीछे उनकी कफनी का छोर पकड़े ड़र के मारे मरा जा रहा मैं। आधी रात, तीन साढ़े तीन मील दूर हम जा रहे थे। आज वे दूने आवेश में थे। बिना कुछ बोले तेज-तेज वे चले जा रहे थे और उनसे चिपका रहने की कोशिश करता दौड़ता, गिरता मैं। आधा रास्ता कट गया था और एक विचित्र सी घूमती आवाजें और आवाज के बाद पत्थर पर कुछ पटकने की बार बार आती आवाज से मेरा सारा साहस मर गया। दादा की कफनी से लटका हुआ, बोलती बंद बेहोश सा मैं शायद कुछ देर खिंचता रहा हूँगा। फिर दादा की मराठी में कही बात मेरे कानपर पड़ी। "अरे ऐसा क्या कर रहा हैं? वह तो नदी में कपड़े धो रहे धोबियों की आवाजें हैं उसमें ड़र काहे का?"

मेरी बंद जबान खुली। मैं हुमस-हुमस कर रोने लगा। मेरे दीवाने पिताजी ने मुझे उठा अपने सीने से लगा लिया और मुझे वैसा ही चिपकाये घर की ओर बढ़ चले।

हर दो वर्ष बाद तीनेक माह के लिये पिताजी का अलग ही आवेश में रहना केवल हम घरवालों के लिए ही नहीं बस्ती के लिए भी एक विचित्र सिरदर्द था। अच्छी अवस्था में वे एक आदर्श शिक्षक थे। ए. व्ही. स्कूल परतवाडा के। वहाँ वे मेहनत से और वरिष्ठों का उचित सम्मान रख पढ़ाते थे। पर मलंग हो जाते ही वे किसी के नहीं रहते। ए.व्ही.स्कूल नगरपालिका का था। पालिका अध्यक्ष उसके सर्वेसर्वा रहते थे। उनके संकेतानुसार ही शाला चलती थी। मलंग हो जाने के बाद पिताजी उस अध्यक्ष के दरवाजे खड़े रह उसे और लोगों को वह खरी-खरी सुनाते कि यही वह सीधा आदर्श शिक्षक है इस बात पर कोई विश्वास नहीं कर सकता था। जैसे पालिका अध्यक्ष के दरवाजे पर वैसा ही समबुद्धि से बस्ती के हर बड़े के दरवाजे पर होता। कोई भी उनके इस हमले से छूट नहीं पाता था। आज यह तो कल वह। अरे छोड़ो पागल की बातों में क्या? ऐसा वे सब अवश्य कह सकते थे पर ड़रते थे कब उनके नाम के ताशे उनके दरवजो पर ही बजने लगे। इसीलिये पागलपन उतर जाने के बाद उसी नौकरी में उन्हें लेना कुनैन की गोली से भी कडुवा था। पर पिताजी की 'जमा' बाजू में भी बहुत कुछ रहता ही था।

पहली थी बुद्धिमानी और पढ़ाने में लगन। 'छड़ी' तब राजमान्य, लोकमान्य थी। उसका उपयोग करने में भेदाभेद या कंजूसी कभी करते नहीं थे, वे। पढ़ाने के लिये लिया हुआ हर पाठ - करतल पर रखा आंवला जैसा उनके लिये होता था। पाठ की हर बाजू उनकी देखी परखी होती थी। कितनी ही बार दुहरा-दुहरा कहने में वे कभी आलस नहीं करते थे और फिर छड़ी थी ही।

उनसे पढ़े कितने ही उच्च पदस्थ आज तहेदिल कहते हैं - "दाण्डेकर माष्टर की छड़ियाँ न खाई होती तो यहाँ नहीं दिखते जहाँ हैं। उत्तम शिक्षक के रुप में भी वे पालक वर्ग में लोकप्रिय थे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

परतवाडा रोमन कैथालिक और प्रोटेस्टण्ट दोनों तरह के मिशनरियों का प्रचार केन्द्र था। विलायत से पहले पहल आये गोरों की पार्सलें संस्कारित होने, पहले यही भेजी जाती थी। मेरे पिताजी उन्हें मराठी सिखाते थे। उनके धर्म प्रचार से वे कभी सहमत नहीं हुए। बहुत बार उनसे तगड़ी बहस भी वे करते ही थे परन्तु शिक्षक वे सच्चे थे। इसलिये वे पाद्री भी उन्हें मानते थे।

इसलिए पागल से आदमी बन जाने पर नौकरी में फिर से लिये जाने के लिये लिखे आवेदन पर पहले इन्हीं पादरियों के हस्ताक्षर होते थे। राजकर्ताओं के वे भाईबंद होने के कारण सरकारी अधिकारी भी अपने हस्ताक्षर करते थे। हस्ताक्षर अभियान का यह काम मेरी माँ ही अधिकतर करती थी। यह बहादुर महिला तीन माह तक पागल पति को संभालती, हम आठ दस बच्चों कच्चों का सब कुछ देखती और पति आदमी बन जाते ही उन्हें नौकरी पर फिर से लिये जाने हेतु आवेदन पर हस्ताक्षर भी बटोरकर ले आती।

कक्षा पांच से तब अंग्रेजी पढ़ाई जाती थी। चौथी कक्षा तक घर पर ही मैंने पढ़ा। परीक्षा दी और पांचवी में स्कूल में दाखिला लिया। कद का मैं ठिंगना ही था। पहली बार परीक्षा देते समय डेस्क तक हाथ ही नहीं पहुँचता था। तब किसी ने दो मोटी किताबें मुझे बैठने के लिये दी थी।

मुझसे दो वर्ष बड़ी थी 'माई' मेरी बहन। उसकी मेरी दांत काटी रोटी थी। मेरा सब रहस्य उसे मालूम था, उसका मुझे। एक कंगले शिक्षक की दो उपेक्षित संतानें। हमारे क्या रहस्य हो सकते थे? पर जो कुछ थे वे हमारे लिये लाख मोल के थे। कृतज्ञता से मैं यह लिख रखना चाहता हूँ "मुझमें जो कुछ अणुमात्र भलाई हैं वह सब माई के कारण। मुझे माई ने ही बनाया - यह अतिशयोक्ति नहीं हैं।"

हमारे इस प्रियतम देश की जो खराबी राज्यकर्ताओं ने की उसके लिये मेरे दुर्बल, अस्थिर मन में गुस्सा माई ने निर्माण किया। प्रकृति पर प्रेम करना उसने मुझे सिखाया। संध्या समय गहरे नीले 'गूढ' आकाश से घर लौटते पंछी समूह को कोई आदमी पगलाई बेहोशी से देख सकता है यह मैं माई के कारण समझ सका।

कितने ही देशभक्ति पर गीत उसे याद थे। कई उसमें से उसके खास थे। उन गीतों ने मुझे बांधे रखा वह माई के कारण। आज भी कुछ गीतों का स्मरण होते ही मेरी आँखों से आँसू फूट पड़ते हैं। वह जो कुछ करे, कहे मैं उसे करने, कहने में भूषण मानने लगा। मराठी के प्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यास लेखक नाथ माधव मेरे लिये गीता, भागवत हो गये वह माई के कारण। शिवाजी का दाहिना हाथ, नामक उपन्यास के बाल नेताजी को मैं आदर्श मानने लगा वह भी माई के कारण।

मुझसे केवल दो बरस वह बड़ी थी। लेकिन उसकी समझ मुझसे कई गुना बड़ी थी। इस कारण 'दादा-आई' की तुलना में अधिक 'मा ई' ही मेरी तब उपास्य देवता थी। हम दोनों की एक ऐसी बात जिसके कारण हमें निर्वासित होना पड़ा स्मरण हो आयी हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पिताजी स्कूल की सबसे बड़ी कक्षा को गणित सिखाया करते थे। सालाना परीक्षा दरवाजे खड़ी थी। पिताजी ने गणित का पर्चा बनाया और उसे कोट की जब में रख दिया यह मैंने एक दिन देखा। दूसरे दिन खाना खाया और चले दिये स्कूल। अपनी मस्ती में, शायद अंताक्षरी लगाते। उन दिनों का यह हमारा खास छंद था। इतने में दादा की कक्षा का एक लड़का हमारे सामने आकर रोने लगा। माई ने पूछा "अरे इतना रोने को क्या हुआ - बता।"

आँसू पोंछते वह बोला "तुम्हें तो मेरे घर की स्थिति मालूम ही है। सब कुछ मेरे पास होने पर टिका हुआ है। लेकिन मुझे आत्महत्या ही करनी चाहिये दूसरा कोई रास्ता नहीं हैं।"

हम उससे कहने लगे - "सच्ची बात तो बता?"

तो उसने बताया "इस साल तो मैं पास हो ही नहीं सकता। मेरा गणित बहुत ही कच्चा हैं।" माई ने कहा "कल परीक्षा है और आज तू रोना रो रहा है - पहले आता तो पिताजी तुझे कुछ समय देकर पढ़ा भी देते - अब क्या हो सकता हैं?"

उसकी आँखो में चमक आ गई - "अभी भी एक उपाय हैं।"

माई ने आश्चर्य से कहा "वे कैसे हमें दिखायेंगे पर्चा?"

मुंडी नीचे कर रोनी शक्ल बना वह बोला - "रहने दो अब फांसी ही मेरा रास्ता हैं। कभी गलती से कुछ गलत-सलत बात कही हो तो माफ कर देना।"

मैं बहुत बेचैन हो गया। एक लड़का मर रहा है और उसे बचाने के लिये केवल चार प्रश्न उसे बताना हैं। आगे बढ़कर मैंने उससे कहा "मरा नहीं, मैं मेरा काम कर दूँगा। कल यहीं, इसी समय।"

वह चला गया। माई ने मुझे ड़पटा "क्यों क्या करने का इरादा है? मैं हवा मे था, परोपकार, मेरे सिर चढ़ गया था। उससे कहा "परोपकारार्थमिंद शरीरम्"

दूसरे दिन पर्चा स्कूल पहुँचाने पिताजी को जल्दी स्कूल जाना था। इसलिये वे जल्दी खाना खाने बैठ गये। मौका देखते ही मैंने झपट्टा मार उनके कोट के जेब से पर्चा निकाला, जल्दी प्रश्न उतारे और उसे जैसा था वैसा रख दिया।

माई मुझपर नजर रखे हुए थी। अपनी बड़ी-बड़ी आँखें तरेरकर वह मुझे देखती रही। किसी के गले में पड़ा फांसी का फंदा मैंन हटाया हैं - इस मस्ती में मैं था। हम दोनों स्कूल चले। कुछ मजेदार बात आज की है ऐसा लग रहा था। वह लड़का उसी स्थान पर मिला। मैंने उसे वह कागज दिया।

वह प्रसन्न हो गया। उसने दो रंगीन कलमें निकाली। मैंने पूछा "यह क्या?"

"तुम्हारी कलमें खराब हो गई है ना। उन्हें फेंक दो अब तुम्हारे लिये लाया हूँ ये कलमें। तुमने मेरा इतना बड़ा काम किया मुझे भी तो कुछ करना चाहिये।"

सारी बाते बड़ी समझदारी से सोच समझकर पूरी की थी। तीसरे दिन स्कूल पहुँचे। हमारे भी इम्तिहान थे। पर्चा बड़ा सरल था। मैं बड़ा खुश था। इतने में चपरासी आया

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

- "दाण्डेकर माष्टर के लड़के को हेड़मास्टर साब बुला रहे हैं।" उसने कहा।

वह सुना और पेर के नीचे की जमीन ही जैसे खिसक गई। सांस लेना भी कठिन हो गया। हेड़मास्टर साब के कमरे तक जाते-जाते कई बार सोचा भूकंप हो जाये और यह स्कूल जमीन में समा जाये। लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। दफ्तर में माई खड़ी थी। मेरा ही इंतजार था। उसकी आँखे मुझे ही खोज रही थी जैसे। सामने वह लड़का भी हाथ बांधे खड़ा था।

अंदर घुसने के पहले पूछा - अंग्रेजी में - "में आई कम इन सर?"

हेड़मास्टर शायद सोच रहे हों अब इस दुनिया का क्या होगा?

उन्होंने कहा 'इयेस'

और अंदर जाते ही उन्होंने जैसे गोली दागी - "कहो दाण्डेकर इसे गणित तुमने बताए पिताजी के बनाए पर्चे से?"

मेरे मुँह से निकल गया - 'नहीं।'

दोनों हथेलियों को पीछे से एक दूसरे पर रख उसपर अपने सिर को तौलते हुए उस लड़के को उन्होंने पूछा - "क्यों जी?"

हमारी तरफ न देखते हुए उसने कहा : "सर! कागज तो गुम गया पर कहा इन्होंने ही।"

फिर मेरी तरफ देखते हुए हेड़सर बोले - "क्यों क्या कह रहा हैं यह?" मैंने माई की तरफ देखा। उसकी आँखों में डांट थी। मैंने फिर से कहा "न हीं।"

"ऐसा! ठीक हैं - कहो बहिन जी?"

माई ने नीचे देखा। मुडी हिलाकर 'नाही' कहा।

हेड़मास्टर ने सांस छोड़ते हुए कहा :

"अच्छा अब तुम जाओ - कक्षा में नहीं अपने घर।" मैंने खींचकर कहा "मेरा पर्चा है।"

"रहने दो अब घर ही जाओ।"

हम दोनों ही बिना एक दूसरे से बोले दफ्तर से सीधे घर की ओर चल दिये। पैर घसीटते हुए पुल पार कर सिविल लाईन में जैसे ही घुसे माई ने भरे गले आवाज दी 'आप्पा।'

रोना ऐसा फूटा कि क्या कहूँ? फफक-फफक रोने लगा। मुझे अपने से चिपका पीठ पर हाथ फेरते हुए माई ने कहा "देख अब शब्द बदलना नहीं। एक बार नहीं तो सौ बार नहीं। समझे। चाहे कुछ भी हो जाये।"

नाक साफ करते मुंडी हिलाकर मैंने कहा - 'हाँ।'

घर गये। माँ को कहना जरुरी था। वह दोनों हाथ छाती पर बांधे बैठी रही। गुमसुम। वह पिताजी को हमसे भी ज्यादा जानती थी। शाम को पिताजी आये लपकती छड़ियों का एक गट्ठा लिये। उसे कोने में रख दिया। नियमानुसार शौच गये। छड़ियाँ देखकर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ही हमें भविष्य ज्ञात हो गया।

पिताजी बहुत गुस्सैल थे पर चाहे जब पीटा-पाटी नहीं करते थे। उनके पीटने में भी एक अनुशासन था। दस बीस अपराध हो जाने पर फिर वे अपनी बैठक के कमरे में बुलाते थे। कई बार उनकी आवाज आते ही मैं खुड्डी की ओर भागता था। वहाँ पर कितनी देर बैठा जा सकता था। फिर सामने जाना ही पड़ता।

आदेश होता 'अंगूठे पकडो।' चुपचाप अंगूठे पकड़ने झुकना पड़ता। फिर अपराध मात्रा के अनुसार छड़ियाँ पीठ पर पड़ती। टूँ-टाँ करना उनको बुरा लगता था। छड़ियों की संख्या बढ़ती थी। इसलिये चुप रहना सीख लिया था। मन भर जाने पर छड़ी कोने में उसकी जगह पर रख देते और कहते "चलो हटो।"

शाम काली हो रही थी। माँ ने लालटेन जलाकर जहाँ तहाँ रख दिये। भय सूचक बिगुल बजा। हमें दोनों को बुलाया गया। अंदर जाते-जाते माई ने मेरा पंजा दबाया। दोनों ही कोने में खड़े हो गये। इस समय एक अलग बात पिताजी ने की। दरवाजा अन्दर से बंद कर दिया।

फिर हमेशा की तरह सब - मुझे प्रश्न - "पर्चा बताया?" माई ने मेरे पैर पर पैर दबा संकेत दिया - मेरा उत्तर निकला - "नहीं।"

"सच सच कह।"

"नहीं।"

"माई तू।"

"ऊ हूँ।"

नीचे झुको। दांतों से ओठों को भींच हम दोनों ही झुके और एक के बाद दूसरी छड़ी की बरसात होने लगी।

मार खाते-खाते माई ने फिर जतलाया - "हाँ नहीं कहना।"

मैंने भी उसे जता दिया ' "नहीं कहूँगा।"

एक छड़ी खराब होते ही दूसरी - फिर बीच में "हाँ कहो-कहो।"

हाँ कैसे कहते? क्या लढ़वैय्यों के कुल को बट्टा लगाते?

सप्प। सप्प। सप्प का दौर चलता रहा।

पिताजी की छाया सामने दिखते ही लगता बेंत पड़ेगा। उससे क्षण के लिये शरीर कड़ा कर लेते। दस बीस बेंतो के बाद वह "संज्ञा" भी चली गई। बजते गिरते की अनुभूति होती बस। ओटों पर दांत और भांच जाते तब भी मुँह से सांस निकल जाती।

छड़ियों का गट्ठर खतम होने को आ गया। माँ और छोटे भाई बहन शायद दरवाजे पर इकट्ठा थे। करीब आधे घंटे चला वह सिलसिला। फिर माँ की करुण आवाज - "सुनो! क्या मार ड़ालोगे बच्चों को?"

"तो फिर मान क्यों नहीं जाते।"

फिर नये जोश से पिटाई शुरु। ऐसा हुआ कि माई को लगा जैसे मैं गिर पड़ूंगा। मेरे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऊपर वह झुक गई करुण स्वर में बोली "अब मुझे ही मारिये केवल, आप्पा अब नहीं सह पायेगा।"

दो एक छड़ी उसे और पड़ी। पर फिर छड़ी फेंक दी उन्होंने। ढोरों से भी ज्यादा मार खाकर हम जीते थे।

उसके बाद के दस बारह दिन हमारी मौज ही मौज थी। औंधे ही पड़े थे, सीधे हो ही नहीं सकते थे। सब कुछ बिस्तर पर हो रहा था। खाल उधड गई थी। खून जम गया था। घाव हो गये थे। उन सबकी सिकाई करना, दवाई लगाना, मलम-पट्टी करना ये सब काम पिताजी खुद ही कर रहे थे। खाने के लिये संतरा, साबूदाने की खीर जैसे लाड़ हो रहे थे।

फान्सेका पिताजी को डांट गया "ये कैसा गुस्सा? और इतना घुस्सा आया था तो एकदम रायफल लेकर शूट क्यों नही कर दिया।" हम बड़े खुश थे। परीक्षा डूब गई थी। पर अगली कक्षा में बैठने को मिलेगा ही इसका विश्वास था। पर जैसे बिजली गिरी। समाचार था, हम परतवाडा छोड़ेंगे। पिताजी के विरुद्ध दांव रचा गया था। ठीक होकर चलने फिरने लगने के बाद एक दिन पिताजी ने कहा - "स्कूल चलना है आज।"

वे मुझे सीधे टीचर्स रुम ले गये। सभी शिक्षक वहाँ थे। उनके सामने मुझे पिताजी ने खड़ा किया। आदेश हुआ। "इनकी ओर पीठ करो - कमीज उपर, चड्डी नीचे . . .।"

पिताजी खुद कह रहे थे चड्डी नीचे करने को की।

सभी शिक्षक सहम गये। सभी एक साथ ही बोले - बापरे इतना मारा, ऐसा मारा जाता है। राक्षस, ब्रूटल।

मुझे भी कोई खुशी नहीं हुई इन्हें मारते। परन्तु इतना मारने पर भी वे कबूल नहीं हुए हैं। इसलिए इन्होंने पर्चा बताया इसपर मैं विश्वास कैसे कर लूँ।"

वे इस्तीफा लिखकर लाये थे। वह उन्होंने हेड़मास्टर को दिया।

इसाबेल भैंस लेकर आई थी उसने आवाज लगाई।

"आप्पूरे अब परतवाडा छोड़कर जायगा क्या?"

मैंने मुंडी हिलाई।

"फिर कब्बी नई आयेगा क्या रे?" मैं उसके साथ भैंस के पीछे दूर तक चला गया। कुछ देर बाद इधर-उधर देख मैंने इसाबेल से कहा

"इसाबेल।"

"तेरेकू एक बात बताऊँ क्या?"

"क्या?"

"मैंने पेपर बताया था।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मुँह पर हाथ रखकर आश्चर्य से वह बोली "माय गॉड।"

मुझे विश्वास था वह किसी को नहीं बतायेगी।

पूरा परिवार नागपूर आ गया। गड्ढे के पानी में सोई मछली बड़े ताल में आकर जागी हो जैसे। नागपूर आना मेरे लिये वैसा ही था। चार आठ दिन बाद बड़े भोर,ही किसी गर्जना से मैं जागा। फटाक उठा और बिना कुल्ला किये भागा जहाँ से वह गर्जना आ रही थी उस ओर। छोटी धनतोली के मंदिर तक गया। वहाँ भीड़ जमा थी। गर्जना वही से उठ रही थी। कैसी थी वह गर्जना? मानों सप्त पाताल से आ रही थी। भूतही, पगलायी, बेहोशी लानेवाली, बेचैन करनेवाली। उस भीड़ में दो के बीच में मुंडी ड़ाल क्या चल रहा है यह देखना मेरे लिये सहज ही था। मैंने वह बिना संकोच किया।

बीस एक आदमी जोर-जोर से बड़े अद्‌भूत रीति से एक साथ ऊँचे स्वर से लहरिया-लहरिया गा रहे थे।

सोम्या डोम्या नांव यांचे
तेहतीस कोटि नाग यांचे
सूपा एवढे कान यांचे

(सोम्या डोम्या नाम इनका। तैंतीस करोड़ नाग इनके। सूप बराबर कान इनके)

हनुमान मंदिर के सामने उतने भोर भी बहुत भीड़ थी। जमा हुए लोग जो कुछ हो रहा है वह गंभीरता से देख रहे थे। बड़ी भयोत्सुक नजर से। एक औरत को दो चार लोगों ने पकड़ खड़ा किया हुआ था। उसके सामने खड़ा एक आदमी उसके मुँह पर बार-बार पानी के छींटे मार रहा था। उसको होश में रखने के लिये शायद।

उसके सामने झुंड बनाकर खड़े थे वे मंत्र गायक। वे गंभीरता से मंत्र गर्जना कर रहे थे। झूम रहे थे। हाथ में ली हुई खड़ी, उड़द या राई जाने क्या उसके उपर फेंक रहे थे। मैंने उन्हें पहचाना। थोड़ी ही देर में। वे सब महार थे। हमारे घर के परली तरफ रेल लाईन से लगा महारवाड़ा था। वहीं वे रहते थे। उनमें से कुछ को मैंने सड़क साफ करते हुए देखा था। कुछ लोग रेलवे में थे शायद। सामान्यतः वे सीधे सादे, खींचे हुए, कंगले अशोभनीय लगते थे। माह-माह वे दाढ़ी नहीं बनाते। कुतूहलवश एक बार मैं महारवाडा गया था। वे आपस में एक दूसरे की हजामत बना रहे थे। नाई से हजामत बनवाना उन्हें पुसाता नहीं था शायद। नाई भी इधर ढूँकता नहीं था।

पर इस समय वे 'वे' नहीं थे और ही कोई सिद्ध या विद्याधर थे वे सब। एक साथ आवाज में आवाज मिलाकर वे मंत्र पढ़ रहे थे।

"तैंतीस करोड़ नाग इनके"

उस गिरी पड़ती महिला को सांप ने काटा था और उसपर वे महार मांत्रिक उपचार कर रहे थे। वह महिला किसी उच्च वर्णी घर की थी। और वे मांत्रिक थे अस्पृश्य। अन्य

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

किसी समय वे उसे छू भी नहीं सकते थे पर इस समय जीवन मरण का प्रश्न आ पड़ा था।

उन मांत्रिकों को भी उनके गुरु की कसम होगी जो कोई सर्प दंश पीडित तुम्हारे पास आये उसके जातपात का विचार किये बिना उसका उपचार करो। गुरु की कसम निभा रहे थे वे। बड़ी उत्कटता से मंत्र पाठ कर रहे थे। वह सारा मंत्र मुझे अब स्मरण नहीं रहा केवल तीन पंक्तियाँ ही याद हैं अब। पर उसका वह सामूहिक गायन इतना खिंचावकारी था कि बदन पर एक रुआँसा खड़ा हो जाता था।

उस महिला में जैसे कुछ संचार हो गया था। वह झूमने लगी थी। हाथ नाग की तरह उठा-उठा वह घुमाने लगी थी। यह देखते ही मैं इतना डर गया कि तीर सा घर की ओर दौड़ा। बिस्तरे में घुसा और मुँहपर चादर ओढ़ घुड़ी-मुड़ी पड़ रहा।

उस महिला का आगे क्या हुआ मालूम नहीं। पर नागपुर से जब पहचान हो ही रही थी तब वहाँ का यह अनहोना देखने को मिला। बाद में भी मैंने उन महारों को वैसे ही मंत्रपाठ करते कई बार देखा पर पहली बार जैसा अद्भूत रुप फिर न दिखा। उसके बाद जब कभी उनमें से कोई महार मुझे दिख जाता तो कोई देख तो नहीं रहा यह देखकर मैं उसे नमस्कार कर तेजी से घर भाग जाता।

बहुत करके वह सन छब्बीस सत्ताईस का साल था। वर्ष दो वर्ष पूर्व ही नागपूर में डाक्टर हेड़गेवार ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना की थी। शायद अन्य जगहों पर भी शाखाएँ चालू हो गयी हों। उसमें से एक धनतोली में थी। मैदान में भगवा झंड़ा लगाकर खेलते लड़कों को मैं देखा करता।

डाक्टर को मैंने दो-चार बार देखा। उनकी भरी हुई मूँछें, ऊँची टोपी, गंभीर चेहरेपर माता के दाग, यह सब न भूलनेवाला था। हम बच्चों को बहुत प्रिय ऐसे कितने ही नेता उस नागपूर का नाम रोशन किये थे। विशेष आकर्षित करनेवाले थे डा. मुंजे। छह, सवा छह फूट ऊँचे। सिर पर गोल टोपी, घुटने तक लंबा कोट, और चेहरे पर दाढ़ी मूँछें घनी। उन्हें भूलाही नहीं जा सकता था। उनकी आवाज भी वैसी ही घन गंभीर थी। बादल की गड़गडाहट जैसी। उनके और हमारे बीच एक समान सूत्र था रोम-रोम में अंग्रेजों के लिये भरा हुआ तिरस्कार।

पर इन नेताओं से भी अधिक हमें पास के लगते आत्मीय से रघूजीराव भोसले और लक्ष्मणराव भोसले। ऐसी राम लक्ष्मण की जोड़ी शायद ही कहीं और हो।

नागपूर के मुसलमानों की बस्ती अधिक थी। उसमें सब थे, नबाब से लेकर तांगेवाले तक। इकट्ठा रहने की प्रवृत्ति और अशिक्षा ये दो खास बातें थी उनकी। उनके नेता, मुल्ला-मौलवी बड़े कट्टर पंथी थे। किसी जमाने में हम बादशाह थे यह दिमाग में घुसा हुआ। उसपर भी मुसलमान हमारी लाड़ो बिब्बी हैं यह कहनेवाली अंग्रेजी सरकार दिल्ली में। इन सब कारणों से मुसलमानों का सिर कब फिर जाये इसका भरोसा नहीं था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नागपूर में बड़े भोर भजन दिंडी (टोली) निकलती थी। इन दिडिंयों को लेकर मुसलमान घोषणा करते। अमुक इस रास्ते से दिंडी नहीं निकलने देंगे। फिर एखाद दिन सिर फुटव्वल भी होती। पहले तो हिन्दू सुस्त, दूसरे इनके घाव भी जल्दी भरते हैं। मुझे क्या करना है? मेरा क्या जाता हैं? यह प्रवृत्ति अधिक। नागपूर की एक विशेषता और, कोई भी काम नियत समय पर नहीं करना। यह नियम पक्का।

सिर फुटव्वल के बाद सभाएँ होती, प्रतिज्ञाएँ होती, दिंडी सत्याग्रह होते। पर ऐसे ले-दे के दिनों में मोहर्रम आ जाये तो सारे झगड़े मिट जाते। रंगरेज के यहाँ फिर दो ही रंग रहते-पीला और काला।

नागपूर में तब मोहर्रम पर बाघ निकलते थे। मुखौटे और पूँछ लगाए सारे शरीर पर काले पीले पट्टे बनाये हुए ये नकली बाघ जगह-जगह नाच किया करते थे और उन्हें देखने तमासबीन झुंड के झुंड यहाँ वहाँ जमा हो जाते।

रोजनदारी जमात के वे ही लड़के जो मोहर्रम के पहले तक आटे दाल के लिए झूझते रहते, ताजिया बनने लगते ही जैसे बदल जाते। मूँगफली भिगोकर खाने लगते। अखाड़े जाने लगते। और मोहर्रम शुरु होते ही रंगे बाघ बनने लगते। वही पीला रंग, पर उनके शरीर पर पुतते ही न जाने कैसे बिलकुल अलग लगता। उसपर काले रंग की पट्टियाँ कमर में जांघियाँ, उसमें पूँछ खुंसी हुई या कमर में बंधी हुई। कोई-कोई की इतनी बड़ी पूँछ रहती कि दूसरा साथी बाघ के मुखौटे पहने वे एकदम "द रायल बंगाल टायगर" लगते। मोहर्रम के सारे दिनों और ताजिये सिराये जाने के बाद भी चार छह दिन न रंग उतरता और न जोश।

इतने दिन तक बाघ और उसके साथी डफलीवाले मुहल्लें में जहाँ कहीं खुली जगह मिलती जम जाते, डफ़ली शुरु हो जाती। बाघ फलांगे लगाने लग जाता, भीड़ जमा हो जाती। यही बाघ कभी चाय पीते हुए बीड़ी पीते हुए जब दिखता तब बड़ी दया सी आती। उतरते रंग का बाघ तो बहुत घिना लगता।

नागपूर की विविधता में मेरा रास्ता लेकिन "चरखा चला-चला के" की ओर वाला था। "मलमल जो हैं विदेशी आने को गज मिलेगी फिर भी उसे छोड़ खादी जो है स्वदेशी कितनी ही महेंगी होगी उसकू नहीं तजेंगे। लेंगे, स्वराज्य लेंगे।" ये हमारी भीष्म प्रतिज्ञा थी।

उस जमाने में नागपूर में अखाड़ेबाजी का बड़ा शौक था। करीबन हर मुहल्ले में एक अखाडा होता था। शादी ब्याह में बारातों में बैंड के साथ ये अखाडे भी चलते। व्यायाम पटु तलवारें, बर्छिया फरी-गदगा आदि शस्त्रों के प्रदर्शन करते चलते। इन अखाडों के बीच झगड़े भी होते थे। लठ्म लठ्ठ होता। लेकिन सब काम मर्दानी। अंधेरे में चाकू चलाना नागपूरी संस्कृति से मेल नहीं खाता था। आमने-सामने एक-दूसरे को आहवान देकर दिन दहाड़े लठैत भिड़ जाते, सिर फूटते। शत्रु पक्ष द्वारा मारे गये अच्छे घाव की भी मुक्त

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

तारीफ की जाती-"लेकिन क्या घाव मारा हैं? मानते हैं" कहा जाता। भरी पूरी मूँछें ऐठें कान तक ऊँचाई के लट्ठ लिये कान में इत्र का फावा खोंसे पहिलवान नागपूर के किसी भी रास्ते पर चलता दिखना तब सामान्य था।

यह बातें अशिक्षितों की पर शिक्षितों में भी व्यायाम की प्रवृत्ति थी।

हम रहते थे उसके पीछे एक गली छोड़ धनतोली की प्रसिद्ध 'काहाते गोखले व्यायामशाला' थी। धनतोली के अधिकांश तरुण या तो इस व्यायाम शाला में नियम से जाते रहे या येन केन प्रकारेण उससे सम्बन्धित थे। मैं भी इस उस बहाने उस व्यायामशाला में हो आया था।

शाम को व्यायामशाला का चक्कर लगाने पर दिखता कि बड़े-बड़े आइनों के सामने दंड बैठक लगाते कितने ही पुष्ट लड़के वहाँ हैं। मलखांब को अंडी का तेल चुपडा जाता और लड़के लंगोट बंद होकर उसपर करतब करते। उन लड़कों की पुष्ट जांघे उसपर से सरकते चर्र-चर्र की आवाज या फिर फरी गदगा के चलने की घूम-घूम आवाज व्यायाम शाला के बाहर भी सुनाई देती।

स्वयं की शक्ति से चलती मोटर रोकने वाला मल्ल मैंने सबसे पहिले उस व्यायामशाला के प्रांगण में ही देखा था। एक शेवरोलेट गाड़ी शुरु होने की तैयारी में मैदान में खड़ी थी। उसके पिछले भाग में रस्से बंधे थे। फिर उन रस्सों को दोनो हाथों में अंटे देकर मजबूती से पकड़े एक पहलवान एक खूँटे के पास दोनो पैर अड़ाकर बैठा था। इशारा होते ही चालक ने मोटर शुरु की। क्लच दबाना, स्टार्टर दबाना, गाड़ी गियर में ड़ालना, एक दो तीन चारो गीयर में उसने गाड़ी ड़ाली पर गाड़ी एक सूत भी आगे नहीं बढ़ी।

नागपूर के तब रास्ते कच्चे थे। कुओं पर निर्भरता थी। छोटी धनतोली के हनुमान मंदिर के पास एक कुवाँ था उसपर पानी के लिये हर आयु के लोगों की भीड़ बड़ी भोर से ही हो जाती थी। ड़ोल बालटियों की आवाज से सारा परिसर गुंजीत रहता।

धनतोली खुली बस्ती थी। अधिकतर सफेद पोश वहाँ रहते थे। उसमें कितने-कितने नामी गिरामी लोग थे। साहित्य क्षेत्र में धाक जमाये लेखक वहीं रहते थे। "आनंदकंद ऐसा हा हिंद देश माझा" के रचयिता टेकाड़े अधिकतर वहीं मिलते थे। वह मराठी गीत लोकप्रिय हुआ तो उसका हिन्दी अनुवाद मेरे दादा ने ही कर ड़ाला।

"जिससे न कोई प्यारा यह हिन्द देश मेरा" ऐसा उसका मुखड़ा था।

कवि अनिल, पु. ल. देशपांडे ऐसे नव लेखक पान के दुकान के सामने खड़े होकर पान खाते और पीक थूकते मुझे मेरे यार दोस्तों ने दिखाये थे। परन्तु हमारे व्यास-वाल्मीकि हरिनारायण आपटे, नाथ माधव होने के कारण इन साहित्यकारों की ओर ध्यान देने के लिये हमें फुरसत नहीं थी। यहाँ तक की उस जमाने में मराठी साहित्य के चन्द्र-सूर्य कहे जानेवाले फडके, खांडेकर भी हमने पढ़े नहीं थे। हमारा सारा झुकाव तो बस

"चरखा चला चलाके" की ओर था।

मलमल जो है विदेशी। आने को गज मिलेगी तब भी उसे धिक्कारते

खादी जो हैं स्वदेशी। कितनी भि महेंगी होगी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उसकू नहीं तजेंगे। लेंगे स्वराज्य लेंगे।

ऐसी हमारी भीषम प्रतिज्ञा थी। ये कविताएँ कौन लिखता था। तब समझ में नहीं आता था। इससे हमारा कोई सरोकार नहीं था। हिन्दी के साथ क्या भयंकर तोड़-फोड़ की जाती रही इसके लिये हिन्दी ने कभी माफ न किया हो पर हमें उससे क्या लेनादेना था। किसी भी तरह अपना गुस्सा प्रगट करना होता था। वह गुस्सा कविता जैसी पंक्तियों में प्रगट हो जाता था बस।

नागपूर में तराठी की तुलना में हिन्दी का जोर ज्यादा था। वैसे नागपूर की हिन्दी कभी भी अच्छी हिन्दी नहीं रही। उसको बोलते हुए विदर्भ का एक खास लहजा उसमें रहता। दूसरे उसमें उर्दू की बहुतायत। पर यह सब माफ था क्योंकि सारे प्रवाह देशभक्ति की गंगा में मिलते थे। हम याद करते थे -सर फरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल्में हैं।

धनतोली पर पूर्व की ओर बंग देश दूर न होने से बंगालियों की अच्छी खासी बस्ती थी। बंगाली सारे मत्स्यहारी। जलतोरई उनका प्रिय भोजन। किसी दिन वह न मिला तो वे बैचेन हो जाते। उनके लिए मैंने एक महाकाव्य की रचना का संकल्प किया था। प्रथम श्लोकार्ध भी रचा था। शेष काम फिर बाद में करने का विचार था।

बोंगाली बाबू मच्छीखाबू

बाबूकी बच्ची खाती मच्छी

पर बंगदेशीय बम वाले क्रांतिकारियों के कारण बंगालियों के प्रति मेरे मन में विलक्षण आदर भावना थी। एक बंगाली परिवार से मैंने जान पहचान भी कर ली थी। बंगाली चाहे दिनभर पैंट कोट में जकड़े रहे शाम को साफ धोती, लंबा कुर्ता, धोती का आगे का सोगा कुर्ते की जेब में ड़ाले दोस्त मंडली के यहाँ जाते और जोर-जोर से बहस करते।

शोतोंत्रोता, पोरादश्यो, ब्यूरोक्रोशी, ओभीमान ऐसे ओकारयुक्त शब्द चर्चा में बार-बार फूट पड़ते। उन शब्दों से मेरे रोमांच खड़े हो जाते।

ऐसा लगता कि इस चर्चा के बाद ये बंगाली मोशाय अपने उस जेब में हाथ ड़ालकर जिसमें उन्होंने धोती का एक पल्लू खोंस रखा है बम निकालेंगे और फिर वह बम अपना काम करेगा।

ऐसा कभी हुआ नहीं पर हर शाम के धुंधलके में धोती का एक छोर कुर्ते की जेब में खोसें चलता हर बंगाली मुझे यतीन्द्रनाथ दास या रासबिहारी वसु ही दिखता और फिर मैं उसे बड़े आदर से चुपके से नमस्कार कर डालता।

भारत में कहीं भी जाओ। वहाँ के सचिवालय में मद्र देशीय दिखते ही हैं। वैसे ही वे उस जमाने में अर्थात १९७२-२८ में नागपूर में भी थे। धनतोली में इसीलिये उनका

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

अपना बनाया हुआ “माटुंगम” था।

इन मद्रदेशीय लोगो जैसी व्यवस्थित जमात मैंने देखी नहीं। बंगाली की तरह हर मद्रासी भी शाम को घर आते ही पहले दो लोटे पानी सिर पर लेकर नहायेगा। भस्म लगायेगा और फिर नंगे पैर देव दर्शन को जायेगा। पर इस सायं दर्शन की तुलना में मद्रदेशीय मेरे मन छाये वह उनके प्रातः कालीन भजनों के कारण।

हमारे हनुमान मंदिर में शाम को भजन होता खूब हल्ले गुल्ले के साथ। वहीं के लोगों द्वारा किया गया यह भजन मेरे कान में पड़ता नहीं क्योंकि मैं बहुत जल्दी निद्राधीन होनेवालों में से था। पर कार्तिक माह में इन्हीं लोगों द्वारा निकाली जाती दिंडी के कारण मैं जाग ही जाता। दिंडी के अभंग का मुखडा “स्न्यान करो गंगा में, स्न्यान करो गोहदे में” ही केवल सुनाई देता बाकी तालियों की गडगडाहट में खो जाता।

अब ये बात जरुर कि हमारा शिवराम नाई ही उस दिंडी का नेता होता था। इतनी बात जान लेने पर शुद्ध अशुद्ध की बात मन में आती नहीं।

लेकिन मद्रदेशीय दिंडी का स्वरुप सौम्य और सुखकर होता था। एक तो वे अपने साथ बड़े-बड़े तेलदीप ले कर चलते थे। चमचमाते मंजे हुए। उसके साथ केवल स्वर पकडनेवाली हार्मोनियम, भजन में तालियों की जगह छोटी मृदु स्वरवाली झांझ रहती। स्वर भी ऊँचा नहीं सहज सधे ऐसा होता। और कहते भी क्या त्यागराज के भजन, जयदेव की अष्टपदी। सभी स्वर पुरुषों के न होकर उसमें महिला स्वर भी मिले होते। दिन में यही स्त्रियाँ उनके श्याम वर्ण के कारण भूमि कन्या दिखती थी। लेकिन भोर दिंडी के साथ चलते हुए उनकी नाक के लौंगे बेहद नखरे से चमकती थीं।

उनके यहाँ भी हमारे मराठी - “पुंडलिक वरदा हारी विठ्ठल” जैसा एक गजर है। यह ध्यान में आया।

“रमारमण गोविंदा - गोविंदा।”

और एक गीत के बोल भी अभीतक स्मरण में हैं।

वाही कल्याणकृष्णा गोविन्दामा - यदुकुल तिलका गोविन्दामा। ऐसा था रंग-बिरंगा नागपूर।

हमारा परिवार नागपुर पहुँचा। पिंजड़े में बंद पंछी को जैसे खुला आकाश मिले वैसा मेरा हुआ। इसका मुख्य कारण पिताजी की कड़ी निगरानी में ढिलाई भी थी। नागपूर आने के बाद वे कुछ उदास हो गये। पीटना-पाटना बंद हो गया। परन्तु उनका पागलपन बंद नहीं हुआ। ऐसे पागलपन में वे नागपूर साताठ बार आ चुके थे। मेरे छोटे चाचा नागपूर में ही थे। वे दो सिनेमागृहों के मालिक थे। और भी कई रिश्तेदार वहाँ थे। वैसे सामान्य अवस्था में पिताजी कभी किसी रिश्तेदार के यहाँ नहीं जाते थे पर दिमाग फिर जाने पर वे जानबूझकर उन सबके यहाँ जाते थे। चार छह बालटी गरम पानी से नहाना। अंजुली भर तेल सिर पर डालकर आधा-आधा घंटा मालिश करता। कभी शवासन कर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दो-दो घंटे निश्चल पड़े रहना। जहाँ उनका मुकाम होता वहाँ सब लोग घबरा जाते। ये मर तो नहीं गये इस शंका से वे कांप-कांप जाते।

कभी मलंग वेश में घूमने निकलते। हाथ में सूप होता। किसी होटल वाले से सूपभर भजियों की फरमाइश वे किया करते। मलंग को देखकर बिचारा थाली भर भजिया उनके सूप में ड़ाल देता। फिर वे इसके उसके हाथ पर दो-दो भजिया रखते पूरे गांव भटकते।

मलंग वेश में घुटने से भी नीची कफनी। सिर पर साफा। कंधे पर लटकी झोली। उसमें गीता, बायबल, कुरान, सेव चिवडा, गुडाखू, इत्र की सीसी, गोंद के लड्डू कुछ भी होता। और मैं अकसर साथ। एक हाथ में पंखा और दूसरे में पीकदान लिये। वैसे पान को वे छूते भी नहीं थे। पर मलंग पन में त्रयोदशगुणी पान जिसमें जायपत्री, कंकोल, कपूर केशर आदि-आदि न जाने क्या-क्या रहता दिन भर खाते ही रहते। इसलिये पीकदान मैं लिये रहता। सिवाए नागपूर की हवा गरम इसलिये पंखा चाहिये ही। पिताजी किसी से बातें करते खड़े हुए हो तो वो बड़ी अदब से उनको पंखा झलते मैं वही घंटो खड़ा रहता।

पिता तो थे ही वे मेरे। गुरु भी थे। शाला शिक्षा ही नहीं उन्होंने मुझे बड़े जतन से प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष कितना ही पढ़ाया था। इसलिये उनकी उस मलंग अवस्था में उनके पीछे पीकदान और पंखा लिये चलने में मुझे कोई संकोच नही होता था। परंतु कोई सयाना मिल जाता तो पिताजी को रोककर अवश्य कहता,

"दांडेकरजी, आपके सम्बन्ध में तो खैर कुछ कहनेका कारण ही नहीं परन्तु बच्चे को स्कूल जाने दिया करो। उसे भी कंध्ने पर झोली टांग भीख मांगना न सिखाओ।"

पिताजी गुस्से में लाल पीले होकर कहते - "मेरे साथ घूमना भी शिक्षा प्राप्त करना ही है। किसी स्कूल में यह सिखलाया नहीं जायेगा जो वह सीख रहा है मेरे साथ।"

नागपूर के सिविल लाइन क्षेत्र में एक खानदानी नवाब रहा करते थे। शिकार का उन्हें बड़ा शौक था। उनके दीवानखाने में जगह-जगह जंगली पशुओं के मसाला भरे सिर टंगे थे। मलंग अवस्था में मेरे पिताजी उन नवाब साहब के यहाँ बार-बार जाया करते थे। मैं साथ रहता ही था। नवाब बड़ा दिलदार मेजबान था। मेरे पिताजी का स्वागत तहे दिल करता था। पिताजी का उर्दु भाषा का ज्ञान और कुरान का पठन ये दो बातें दोनों के बीच स्नेह सूत्र थी। दोनों ही बड़ी आराम कुर्सियों पर बैठ जाते। कभी-कभी कोई मुल्ला मौलवी भी उनकी चर्चा में सम्मिलित हो जाते। बाहर खस की टट्टियाँ लगी रहतीं। उन पर बार-बार पानी का छिड़काव होता रहता था। छत में लटके बड़े पंखे की डोरी खीचतें रहने के लिये एक बुढऊ दरवाजे में बैठा रहता।

नवाब साहब पिताजी की खिदमत में कटलेट, बिर्यानी, पुलाव और भी क्या-क्या पेश करते। पिताजी की धौस में मुझे भी उस सबका सेवन करना पड़ता। उसमें क्या होता है इसकी पूछ-परख करने की हिम्मत मुझ में नहीं थी। पर घर वापस आने पर मेरी बहन, 'माई' मुझे अपने पास भी फटकने नहीं देती थी। कहती तू उस म्लेंच्छ के यहाँ से जाने क्या-क्या मिट्टी गोबर खाकर आता है।

यह उसका कहना मुझे बहुत चुभता। "अबकी बार मैं वहाँ कुछ भी नहीं चखूँगा।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऐसी प्रतिज्ञा करता। पर पिताजी की धौंस के आगे मेरा निश्चय गल जाता। और जो कुछ सामने है वह परब्रह्म है यह मान मैं अपने में समा लेता।

दादा की आवाज बहुत अच्छी थी यह तो कहा ही मैंने पर आवाजी के पीछे वे कहाँ कहाँ तक गये इसकी कल्पना मुझे नागपूर आने के पहिले नहीं थी।

परतवाडा में थे तब एक बार हीराबाई बडोतकर एलिचपुर के बाबनएक्का थियेटर में संगीत कार्यक्रम के लिए आयीं थी। दादा वहाँ उस कार्यक्रम के कार्यकर्ता थे। मैं भी उनके साथ इधर-उधर डोलता फिर रहा था।

"रा धे कृ ष्ण बो ल" यह भजन हीराबाई ने जिस तन्मयता से वहाँ गाया वह आज भी स्मरण है। क्या बिजली जैसी कडकती आवाजी थी। वे अपने साथ कोई बड़े घर का लड़का लेकर आई थी और वह लड़का बीमार हो गया आते ही। हीराबाई ने दादा से कहा-

"देखिये मास्टरजी, यह बड़े घरक का लड़का साथ ले आई और ये अब देखिये बीमार हो गया। इसके दवादारु का जरा देख लेंगे तो मेहरबानी होगी।"

और दादा उसकी सेवा में जुटे रहे।

दूसरी संगीत की ही स्मृति ऐसी ही। परतवाडा के किसी मारवाडी के यहाँ विवाह में एक कोई मलकाजान का गाना था। ये मलकाजान खड़े-खड़े गाती थी। उनका तबलिया भी कमर में तबला बांध बजाता था और सारंगिया भी खड़ा ही रहता था। घंटे दो घंटे गाने बजाने के बाद मलकाजान पसीना पोछते बैठ गयीं तो दादा ने मुझे उसको हवा करने को कहा। मैं पंखा लेकर हवा करने लगा। उस तवाइफ की एक ठुमरी जैसे मेरे कान में अटक के रह गई।

"सो यही कही नयना लगे मेरे बान"

पर नागपूर में आने के बाद मालूम हुआ कि दादा उस तवाइफ के मुर्शद थे।

धवले कोचिंग क्लास नामक एक विद्यालय में पिताजी शिक्षक हो गये थे। हम दूसरे विद्यालय में पढ़ते थे। एक दिन शाम पिताजी घर आये और आते-आते ही अपनी कफनी खोजने लगे। हम सब समझ गये आ गई हवा।

दूसरे दिन मुझे आदेश हुआ - किलेदार चलो हमारे साथ। माँ ने डरते-डरते पूछा- "उसका स्कूल?"

"गया जहन्नुम में।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नागपूर आने के बाद मलंग वेशमें एक खोपड़ी और मिला ली गई थी। आदमी की खोपड़ी, एकदम सच्ची। उसपर सिंदूर चढ़ाया हुआ। कभी झोली में से निकाल हाथ में ले लेते। पूरा यूनिफार्म चढा गले में रंग बिरंगे मणियों की मालाएँ डाले हाथ में खोपडी लिये पिताजी आगे बढ़ लिये और उनके पीछे पंखा और पीकदान लिये मैं। डरते-डरते पूछा - "कहाँ चलना है?"

"गांजा खेत, गंगा जमुना।"

सुना था वह बस्ती खराब है। वहाँ बुरी-बुरी औरतें रहती हैं। सब धंदे चलते हैं वहाँ। नागपूर के बदमाश, लफंगे उन औरतों के घरों में दिनभर सोये पड़े रहते हैं और रात को धंदे के लिये निकल पड़ते हैं। गांजा, भांग, चरस, दारु का वहाँ जैसे मुक्त द्वार है।

रास्ते में हम बाप-बेटे को देखने भीड़ जमा हो जाती थी। पहचानवाले अपना मुँह और रास्ता मोड़ लेते थे। कोई-कोई पिताजी के गले में माला पहनाता उनके पैरों पडता। कोई माई मेरी तरफ देखकर कहती :

"आप घूमो तो घूमो उस बच्चे को काहे को लतियात हो?"

गांजा खेत गये। वहाँ उन औरतों ने मलंग का जो स्वागत किया उससे मैं हक्का-बक्का रह गया। खूब काजल डाले, गूँदना गुदाये हुए एक घरवाली आगे बढ़कर दादा को अपने कमरे में ले गई। रंगे पलंगपर बैठाया। उनकी कफनी उतारकर खूँटी पर टांग दी और पंखा लिये झलने लगी। देखते-देखते वहाँ कई एक सीता सावित्रियाँ इकट्ठा हो गई। बदन पर केवल चोलियाँ अटकी हुई। झीनी साड़ी लपेटी। पान चबाती। किसी गाँव को महिना भर चले इतना सूरमा और काजल आँखों में डाले हुए। फसर-फसर हंसती हुई कोई ऐसीवाली को डाटकर दादा के पैर पड़वाती। कोई उनके पैर दबा रही, कोई उनके हाथ। दादा सिद्धासन लगाये आँखें मूँदे बैठे थे। और मैं? आश्चर्य पोखर में डूबता उतराता एक कोने में सिकुड़ा खड़ा।

एक घरवाली का ध्यान मेरी ओर गया। जल्दी से उठकर उसने कहा "देखो तो मुर्शदसाबका बच्चा है- आ तो बेटे। और फिर मेरा नहीं-नहीं कहना मुँह के मुँह में ही रह गया। दुर्बल शरीर प्रतिकार भी क्या करता - उसने खींचकर मुझे अपनी छाती से चिपकाया-जकड़ ही लिया। उसके पसीने की दुर्गन्ध से मेरे नाक के सारे कीडे मर गये। मिठाई लाई गई दौड़कर और वह मेरे मुँह में ठूँस कर भरने की स्पर्धा उन सब में शुरु हुई।

दादा के मुर्शद होने का एक विकृत चित्र भी देखना पड़ा था। कष्टकारी। एक कोठे पर दादा कोठेवाली का गाना सुनने बड़े आराम से बैठे थे। वहाँ उस समय एक बड़ा ग्राहक भी अपने यारों के संग आया। उसे उनका यह मसनद से बैठना रास न आया। उसने अपने यारों को आँख मारी। वे सब दादा को चारों ओर से घेरकर बैठ गये। 'मुर्शद' वह कपड़े पहने तो और न पहिने तो भी 'मुर्शद' ऐसी बातें वे करने लगे और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

धीरे-धीरे दादा के कपड़े उतारने लगे। कोठेवाली को जब उनका इरादा मालूम हुआ तब उसने बीच में बोलना चहा। रईस ने उसे डांट दिया। वह चुप हो गई। उसका ठीक ही था। मुर्शद को तो बाद में भी समझा-बुझा लिया जायेगा पर रईस चला गया तो?

अंतमें लंगोट छोड़ सारे कपड़े उन्होंने उतार लिये। फिर उन्हें उठाकर खड़ा किया। रईस बोला - " जा बे स्साले, फिर आया तो देख" कोठेवाली ने बीच-बचाव कर झोली और कपड़े दिलवा दिये। हम नीचे आ गये। मुझे मुहल्ला पार कर जाने की जल्दी थी। ड़र था कहीं बीच रास्तें में ही पीक और पिचकारियों की बरसात में पिताजी शीर्षासन न लगा लें।

दादा की शागीर्दगी मुझे बहुत कुछ सिखा गई। बचपन में हुए संगीत के संस्कार मेरी जिंदगी का अनमोल खजाना बन गये। वह इष्क, दर्द, तनहाई, सूरमा मंडित आँखों के मदभरे इशारे और क्या-क्या इन सब में से उस दस ग्यारह वर्ष की आयु में समझना क्या था? पर जो कुछ सामने से गुजरा वह काम आया। अगले जीवन में बैरागी अवस्था में विरक्ति का तिलक लगाये घूमते वक्त तुकाराम, ज्ञानेश्वर के बोल यद करते-करते एकाएक अन्तर्मन से बाहर आता -

नयना तुम सबसे बुरे
तुमसे बुरा न कोय
आपही प्रीत लगाये
आपही बैठे रोय-

"हाँ मैं अपराधी हूँ। देशभक्ति अगर अपराध है तो वह मैंने किया है जज्ज साहब। इसके लिये जो भी सजा आप देंगे वह मुझे मंजूर होगी।"

"अपराधी! तुम्हारा हेतु कितना भी उच्च हो पर तुमने सरकार का अपराध किया है और इसकी सजा है फांसी।"

शेम-शेम की आवाजें। फिर वह बारह वर्ष का अपराधी फांसी देने के लिये कडे पहरे में ले जाया गया।

इस तरह फांसी जाने के बाद "माई" ने दरवाजे में ही खड़ाकर मेरी नजर उतारी थी। हनुमान मंदिर पर खेले गये "सच्चा देशभक्त" नाटक का वह अंतिम प्रवेश था।

सक्करदरा -नागपूर का एक मोहाल। शहर के बाहर का। शहर से दो तीन मील दूर। वहाँ रघूजी भोसले का बाडा था। बाडा कोई बहुत बड़ा नहीं था। पर उसके चारों ओर की बाग काफी बड़ी थी। उन दिनों उस बगीचे में कुछ गिनती के बूढे पेड़ थे। एक बूढा माली था। बगीचे के बीचों बीच एक अच्छासा फव्वारा था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पर मुझे सक्करदरा का आकर्षण एक दूसरे कारण से था। और वह कारण था रघुजी भोसले का प्राणी संग्रहालय।

वैसे महाराज बाग में भी वन्य प्राणी थे। बाघ थे, शेर थे, भालू थे, मगर थे, बंदर तो बहुत थे, बहुत तरह के थे और बड़े वाहियात भी थे। दिनभर मादाओं के साथ चिपके रहते और उनकी छेड़खानी करते रहते। आदमियों की ये बड़ी भीड़ सीटी बजाती और फली, चना पिंजडे में फेंकती उन पिंजडों के पास खड़ी रहती। महाराज बाग जाते हम तो हम भी वहाँ जाने से चूकते नहीं पर झूठी शान बघारते हम तुरंत वहाँ से निकल बाघ, शेर के पिंजडों के पास आ जाते।

बाघ से पहचान तो बचपन से ही थी। बाघ का जमुहाई लेना। पिंजडे के पिंजडे में झूमते हुए चक्कर काटना। किसी एक तरफ टकटकी लगा देखते रहना। दर्शकों के कौतुहल की परवाह किये बिना। यह सब मुझे अपूर्व लगता इसलिये मैं पैर पिराने लगने तक बाघ सिंह के पिंजडे से हिलता नहीं था।

मेरे साथ अकसर जाता मेरा छोटा भाई आबा। परन्तु वह बहुत जल्द ही उकता जाता। उसके पैर भी बहुत जल्द पिराने लगते। फिर वह कभी इस पैरपर तो कभी उस पैर पर खड़ा रहता। मुझे लौट चलने के लिये कहता रहता। या कभी मेरी हस्ताक्षर मुहर लगी अनुमति लेकर पंछियों के पिंजडे के पास चला जाता। वहाँ सारस, मोर, तोते, हंस, कोयल, ऐसे कई पक्षियों के पिंजडे थे। वह सब पिंजडों में परशादी बाट आ जाता तब भी मैं एक खंबे की तरह जहाँ का तहाँ खड़ा उसे दिखता। फिर वह अंतिम शस्त्र निकालता कहता "देखो मैं दादा से कह दूँगा।" तब फिर में उसपर झल्लाता और वहाँ से हिलता।

सकरदरा में बाघ और अधिक पास से मैं देख पाता था। एक तो वहाँ महाराज बाग जैसी भीड़ नहीं होती थी दूसरे वहाँ मेरी चलती थी। मैं राजा के गुरुबंधु का लड़का जो था। इसलिए पिंजडे के काफी पास तक जा सकता था।

कितना भव्य पुरुप था रघुजी राजे। मैने उसे आठ-दस बार देखा। एक दो बार देखा दशहरे की सवारी में। तब वे लाव-लश्कर के साथ शाही ठाठ में रहते। आगे पीछे ढोल ताशे। हाथी घोडे पर भीड़ में राजा कुछ ढंग से दिखता नहीं।

उसके बाद एक बार मैं और दादा महाल के मेनरोड से शुक्रवार तालाब की ओर आ रहे थे। रघुजी राजा की बग्घी सामने से आ रही थी लोग तुरत-फुरु रास्ता दे रहे थे। नीचे झुक रहे थे मुजरा कर रहे थे।

वस्तुतः अब मुजरे की कोई जरुरत ही नहीं थी। खुल्क खुदा का और मुल्क बादशाहका यह तो स्थापित हो ही चुका था। रघूजी राजा की जो कुछ सत्ता थी वह उसके राजमहल और उसके परिसर की कुछ सम्पत्ति तक सीमित थी। रघूजी राजा तो केवल नाम का राजा था।

परन्तु वह वास्तविकता थी अंग्रेजी अधिकारियों के लिये। आम लोगों की दृष्टि में वह अभी भी राजा ही था। वे उसे वैसा ही सम्मान देते थे। उसकी बग्घी आते ही उसे रास्ता देते उसे झुक कर मुजरा करते।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

इसका कारण था। रघुजी राजा बड़े दिलवाला राजा था। वह मुजरा लिया तो करता पर उसके चेहरे पर एक सूक्ष्म खिन्नता दिखती, एक अलिप्तता का भाव रहता। लोगों से वह स्नेह का बर्ताव करता, सबको अपनी प्रजा मानता।

हम दोनो राजा की बग्घी आते ही रास्ता छोड़ बाजू में खड़े हो गये। राजा की बग्घी में चार बड़े घोडे जुते थे। आगे पीछे दरबान थे। बग्घी में दूसरा कौन था यह देखा नहीं। देखा तो केवल पहाड़ जैसा रघुराजा।

बहुत बड़ा शरीर। सांवला रंग। बड़ी भारी मूँछे। वैसे ही बड़े कल्ले। मुद्रा भव्य। नाक तो एक प्रदेश ही था मानो। मुद्रापर रुबाब और सौजन्य का अजब मिश्रण। राजा हाथ उपर उठाकर मुजरा स्वीकार कर रहा था। थोड़ा स्मित, थोड़ी गंभीरता उसके चेहरे पर थी।

एकाएक उन्होंने दादा को देखा। बग्घी रोकने को कहा गया। संकेत कर दादा को बुलाया। दादा आगे बढ़े। मैं दूर ही खड़ा रहा। दादा बड़ी नम्रता से बोल रहे थे। फिर वे नमस्कार कर पीछे हो गये और बग्घी आगे बढ़ ली।

रघुजी राजे क्या कह रहे थे यह पूछने का साहस मैं नहीं कर पाया पर रघुराजा की मुद्रा मेरे मन पटल पर पक्की अंकित हो गई।

उस रघु राजा को मैंने बिलकुल पास से देखा सकरदरा में। उस समय सकरदरा के बाडे के रघुराजा की एक उपपत्नी रहा करती थी। बाकाबाई नाम था उसका। मैंने उसे देखा उस समय भी वह उतरते वय की पर भरे शरीर की थी। तरुणाई में वह निश्चित रुपवती रही होगी।

मुँह में हमेशा पान और आँखों में काजल। पान खाना रईस था। एक पीतल का नक्कासीदार पानदान और उसमें बड़े जतन से सजे रखे मूल्यवान पान और उसके भाई-बंधु-लौंग, सुपाड़ी, जायफल, जायपत्री आदि। बाकाबाई की सेवा टहल में दो चार आदमी थे। उसमें एक रोज दियाबत्ती किया करता। पीतल की बड़ी आरगिनी रोज रगडना, फिर उसकी काँच चमकाना, उसमें बत्ती लगाना और फिर उसे बरामदे में सजाना उसका काम था। वही एक कांसे का घंटा टंगा था उसपर हर घंटे टोले पड़ते।

उस बाड़े के दीवानखाने में रघुजी राजे बैठ थे। मुझे याद है उस समय भी उनके सिर पर पगडी थी। पर बाकी वेश सादा था। ऊपर आंगी और नीचे उमरेडी धोती, चार अंगुल चौडे लाल किनार की।

दादा उस समय मलंग वेश में थे। मैं अर्थात ही पीछे झोली लिये। दादा सीधे ताजुद्दीन बाबा की समाधी पर गये थे। वहीं संदेसा आया की राजा ने याद किया है।

मैं वहीं रुक गया। दादा अकेले ही राजा की बंगली की ओर गये। मौका अच्छा है यह जान मैं दौड़कर बाघ के पिंजडे की ओर गया। बाघ देखने लगा। पूरी बेहोशी के साथ। बाघ के सामने बड़े-बड़े मांस खंड डाले गये थे उनमें से एक पर अपना पाँव रख वह अचर-बचर उसे खा रहा था।

इतने में नौकर ने आकर कहा -

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"बाबू तुमाले बलवतेत।"

पेट में गोला सा उठा। अब रघुजी राजे के सामने गीता का एक आध अध्याय या अंग्रेजी का कोई पेसेज साभिनय कहना पड़ेगा। गलती हो गई तो इस समय तो दादा कुछ बोलेंगे नहीं पर घर जाते ही उस बाघ की तरह मुझे कच्चा ही चबा जायेंगे।

गया। चौकीपर राजा बैठा था। सामने एक कुर्सीपर दादा बैठे थे। पीछे एक छोटी चौकी पर बाकाबाई पान लगाते हुए। मैंने भी चतुराई की। जाते ही राजा को काफी नीचे झुककर नमस्कार किया फिर थोड़ा कम झुककर बाकाबाई को किया और लगे हाथ दादा को भी नमस्कार कर दिया।

मेरी तरफ देखकर राजा बोला -

"बाबू चतुर दिखता है।"

दादा ने कहा-

"कुछ थोड़ा कंठस्थ है आदेश हो तो सुनायेगा।"

राजा ने अनुमति दी।

"सुनाने दो।"

मैंने साफ आवाज में कहना शुरु किया।

"अर्जुन उवाच-ज्यायसी चेत्कर्मणस्ते मता बुद्धिर्जनार्दन।"

गीता पाठ करते समय मगर मेरी निगाह राजा के चेहरे की ओर थी और एक बड़ा प्रश्न सुलझ गया।

इतने दिन तक मैं सोचता था कि राजा के बाल इतने काले कैसे हैं? आज इतने पास से देखने पर ज्ञात हुआ कि कलप लगा है बालों में। बाकाबाई ने चांदी का वर्क लगी बरफी मुझे खाने को दी। उसे खाते हुए राजा के काले बालों का रहस्य मेरे मन में खुल जाने का आनंद मेरे मन में समा नहीं रहा था।

सन १९२९ गांधीजी की "एक वर्ष में स्वराज्य" यह घोषणा गूँज प्रतिगूँज रही थी। आग लगी थी जैसे सबके मन में। इस घोषणा, इस नारे के पीछे का अर्थ हमारे ध्यान में नहीं आता था न आ सकता था।

संध्या को दीपदर्शन के बाद स्तोत्र पाठ करने की प्रथा हम में हैं। बच्चों को विशेष रुप से ऐसा नित्य पाठ करना जरुरी था। इन स्तोत्रों में से एक गणपति स्तोत्र के अन्त में निम्न पंक्तियाँ हैं .....

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

पुत्रार्थी लभते पुत्रं धनार्थी लभते धनम्।
विद्यार्थी लभते विद्यां मोक्षार्थी लभते गतिम्।
जपते गणपतिस्तोत्रं षड्भिर्मासै : फलं लभेत॥

बात जो समझ में आई वह एकदम साफ थी। इस स्तोत्र का छह माह तक नियम से पाठ करने पर विद्यार्थी को विद्या प्राप्त होती है। बस लाटरी खुल गई। क्या करना है पुस्तकों का कापियों का? बीजगणित के समीकरण और शब्दों के स्पेलिंग और अर्थ घोटने की भी क्या जरुरत?

यह जो महाविद्या मिली उसपर प्रत्यक्ष प्रयोग करने पर क्या हुआ यह बताने की जरुरत नहीं। अर्थवाद समझता नहीं था इतनी बात खरी। महात्मा गांधी की घोषणा एक साल में स्वराज्य का भी अर्थवाद बालबुद्धि में न आया और इससे मेरे जीवन को जो भयानक मोड आया वह आगे बताऊँगा। पर एक दिन उसी वय में महात्मा गांधी के दर्शन हुए। एक बार मलंग अवस्था में ही पिताजी ने कहा "किलेदार चलो वर्धा, गांधी को देखेंगे।"

मेरे माता पिता दोनों तिलक पक्ष के थे। लोकमान्य के रिश्तेदार होने से यह सहज भी था। मैंने लोकमान्य को देखा नहीं था पर वे हमारे पितृत्व हैं यह अभिमान था ही। लेकिन गांधीजी का कर्तृत्व प्रत्यक्ष सामने होने के कारण उनके लिए आदरभाव मेरे मन में था।

पिता गांधीजी को केवल "गांधी" कहते। तब वह मुझे चुभता था। उनकी दृष्टि में चाहे कुछ भी हो मेरे लिये गांधी के पीछे जुडे "जी" का अत्यधिक महत्त्व था। यह आदर सूचक "जी" गांधी नाम से इतना एकाकार था कि उसके सिवाय वह नाम लेना, लिया हुआ सुनना बहुत ही कष्टकर था। पर मैं अपने पिता को क्या कह सकता था?

उन गांधीजी को प्रत्यक्ष देखने जाना है यह सुनना बड़ा सुखकर था। वर्धा स्टेशन पर उतरने के बाद एक बात बहुत जल्दी समझ में आ गई। मेरे पिता और मैं यह जोडी यहाँ किसी के लिए आकर्षण की वस्तु नहीं है। कारण खोजा तब ज्ञात हुआ कि यहाँ वर्धा में लोगों को महात्मा गांधी के दर्शन के लिये पूरे देश से नित्य आते विचित्र वेशधारी पुरुष विशेष देखने की इतनी आदत हो गई है कि हमारी तरफ किसी का खास ध्यान जाने की बात ही नहीं थी।

जगह कौन सी थी याद नहीं। इतना याद है कि बहुत बड़े-बड़े लोग आ जा रहे हैं। वे बड़े हैं इसका अनुमान मैंने उनके खादी वेश और देश चिंता से बढी हुई, बिखरी हुई दाढ़ियों से किया था। हम दोनों एक बड़े से कमरे में गये। वहाँ एक चौकीपर गांधीजी पालथी मारे बैठे थे। समय शाम का था दरवाजे में से ढलते सूर्य की एक किरण सीधे उनपर पड़ रही थी।

मैं बावरा सा उनको देखता ही रहा। तांबे का मंजा हुआ कोई ढला हुआ पुतला हो जैसे। किरण के कारण उनका शरीर चमक दमक रहा था। चष्मा उन्होंने हाथ में पकड़ा था और वे किसी अज्ञात की तरफ देखते चिंतन मग्न थे। मानो समूर्त स्वातंत्र्यचिंतन ही आसन लगाये बैठा हुआ हो।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उस व्यक्तित्व दर्शन से मैं दीवाना हो गया। एकदम निश्चय कर बैठा इस व्यक्ति के शब्द के लिये चाहे कुछ भी किया जा सकता हैं।

हमारे देश भक्ति की तीन अलग-अलग प्रेरणाएँ थी। सबसे मौलिक और प्रबल थी ह. ना. आपटे और नाथ द्वारा शिवछत्रपति पर रचित उपन्यासों के वाचन से निर्मित। दूसरी थी लोकमान्य के रक्त संप्रदायी होने के कारण और तीसरी थी गांधीजी के स्वातंत्र्य उद्घोषणा से निर्मित।

उस समय तक यद्यपि काँग्रेस ने अपना तिरंगा झंडा पक्का न किया था। फिर भी भगवा श्री शिवछत्रपति के समय से स्वतंत्रता का झंडा होनें से उसके लिये तत्कालीन देशभक्तों के मन में आत्मीयता थी।

सही बात यह थी कि तिरंगे झंडे के लिये तब आज जैसा एकांतिक अभिनिवेश नहीं था। भगवा ध्वज ही स्वतंत्रता का ध्वज माना जाये ऐसा माहौल अधिक था।

मैं छत्रपति शिवराय के नाम से रोमांचित होनेवाला। नागपूर भोसले का राज। वहाँ का राजा मैंने बिलकुल पास से देखा हुआ। सीताबर्डी के किले पर से भगवा ध्वज उतारकर वहाँ युनियन जैक शान से फहराता देख मेरे मन में एक कांटा सा चुभता था।

मैं एक बार आबा को लेकर सीताबर्डी के किले का निरीक्षण करने निकला।

वास्तव में मन में सोचा हुआ काम अकेले ही किया जाने योग्य था पर उतना ही गंभीर होने के कारण एक सहकारी और होना भी आवश्यक था। इसलिये मैंने आबा को साथ लिया था।

काम क्या है इसके सम्बन्ध में मैने उससे कुछ भी बात नहीं की थी। वह सारी राह टुरटुराता रहा। उसे अपने दोस्तों के साथ जेलरोड पर लगी जंगल जलेबी खाने जाना था।

काम ऐसा था कि किले के तलहटी से एक सुरंग खोदना। खोदते-खोदते जहाँ झंडा लगा है वहाँ तक जाना। ऐसा वह चोर रास्ता तैयार हो जाने पर एक रात को मुँह पर कपड़ा बांध और कमर में भगवा झंडा बांध उस यूनियन जैक के डंडे तक पहुँचना। रात को यूनियन जैक उतारकर रखते ही हैं। बस उस डंडे पर भगवा झंडा फहराना-छत्रपति शिवाजी महाराज की जय बोलना और सुरंग के रास्ते वापस चले आना।

किला और रेल पटरी के बीच एक मंदिर है। वह जगह ठीक लगी इसलिए उस रास्ते गया। सीना धडधडाने लगा। शायद एक महान कार्य की योजना सीने में ही बनी थी। इसलिये वह धडधडा रहा हो। पैर भी लटपटाने लगे- लेकिन वह तो आभास मात्र था।

देखा तो कंटीले तार के पीछे किले पर एक संत्री हाथ में बंदूक लिये खड़ा था। हमको देखते ही वह चिल्लाया। शायद वह पूछ रहा हो "कहिये इरादे तो नेक हैं?" फिर उसने बंदूक हमारी ओर घुमायी। ऐसा उसने क्यों किया कुछ समझ में न आया।

लेकिन आबा मेरी बाँह पकड़ किसी दौड़ में शामिल हो इतने तेजी से पीछे दौड़ पड़ा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उसके साथ दौड़ते-दौड़ते मैं उसे देशभक्ति की बात समझाता रहा। पर उस दुष्ट ने मेरी एक भी न सुनी उलटा वह धौंस देता जा रहा था - "दादा को कह दूँगा।"

किसी ने ठीक ही कहा है कि जिसे महान कार्यों का मूल्य ज्ञात नहीं उसे साथ लेने से महान कार्यों का ऐसा ही नाश होता है।

विद्यालय में मेरा भाव जरा ज्यादा ही रहता था। क्योंकि मेरा अभ्यास अच्छा था। उस समय के वे स्कूली दोस्त अब जाने कहाँ के कहाँ गये। उस समय का एक दोस्त मेजर केशव गोगटे एक बार मिला। आकाशवाणी में अधिकारी था। शेष सारे - यथा काष्ठं च काष्ठं च।

विशेषतः भाषा विषय मेरे एकदम तैयार थे। बाप दुर्वासा होने के कारण अंग्रेजी शब्दों की स्पेलिंग एकदम रटी हुई। याद आता है कि कक्षा की पढ़ाई समाप्त हो जाने के बाद मेरे शिक्षक मुझे अपने पास खड़ा करते और लड़कों से कहते कोई भी छात्र कोई भी शब्द पूछे। उधर से शब्द सुनते ही इधर से मैं उसके स्पेलिंग की गोली सी दाग देता।

अंग्रेजी में साइलेन्ट शब्द बहुत इसलिए कहीं-कहीं अटक भी जाता मैं पर फिर भी वह स्पेलिंग युद्ध बहुत देर तक जारी रहता। टोपी में इस तरह मोरपंख लगते रहने से मेरा नाम होशियार छात्रों में ही गिना जाता।

जिसके राज्यपर सूरज डूबता नहीं था ऐसे अंग्रेजी सरकार के स्तवनगीत उस समय स्कूली बच्चों से उनकी इच्छा या अनिच्छा से स्कूलों में गवाये जाते ही थे। मुझे भी परतवाडा स्कूल में अच्छी आवाज के कारण ऐसा एक गीत समूह के साथ गाना पडा था-

गॉड् सेव् दी किंग्
सेंड् हिम् विक्टोरिअ
हँप्पी ॲण्ड् ग्लोरिअ
लॉंग्ट् रेन ओव्हरास्

मायबोली मराठी का भी एक गीत मेरी स्मृति में है। वह मैंने कहीं गाया नहीं था। मेरी छोटी बहन बायडी स्कूल से वह याद करके आयी थी। उसे चिढ़ाने के लिए कई बार उसके पारायण हुवे और वह याद भी रह गया-

वित्तुरिया धन्य सती
अवतरली या जगती
भरतखंडी जन म्हणती
शिता देवी ती
दयावन्त भाग्यशाली

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पृथ्वीपती राणी झाली
आर्यजना सनद दिली
सुखि करी प्रजा॥

पृथ्वीपति और रानी इन दोनो का संकर करनेवाले उस महान कवि की हम बार-बार वंदन करते और इतने जोर-जोर से हँसते थे कि माँ को हमपर चिल्लाना पड़ता।

अभिनय में मुझे अधिकतर प्रथम पुरस्कार मिलता। मराठी की जगह वर्ग शिक्षक मुझ से कोई अंग्रेजी संवाद कंठस्थ कराते। याद है कि पीटर नाम के रशियन राजपुत्र का अभिनय कर मैंने उत्तम अभिनय पुरस्कार जीता था।

एक विशेष और। मेरा हस्ताक्षर बचपन में एकदम खराब था। दादा ने जितनी बार मेरी पिटाई की उसमें आधे से अधिक बार मेरी पिटाई खराब हस्ताक्षर के लिये ही हुई।

जिससे डर रहा था वह एक दिन सहसा उपस्थित हो गया। माई की शादी तय हो गई। वह तो होनी ही थी। एक दिन वह नाम बदलकर घर का मायका बना यह घर छोड़कर जानेवाली थी ही। लेकिन मुझे वह कल्पना भी असह्य लगती थी। सभी दूसरी बातें मैं समझता था। नहीं समझना चाहिये वह भी समझता था पर इस एक ही बात से मैं आँखें मूँदे था। माई का इस घर में न रहना मैं सहन कर ही नहीं सकता था। वह केवल मेरी बड़ी बहन नहीं थी। वह मेरी गुरु भी थी। दूसरे जिसको सुनकर हँसाते ऐसी बातें भी मैं माई से पूछ लेता था। उसे भी मन की बात बतियाने के लिये दूसरा कोई नहीं था। और मैं ऐसा पक्का आश्रय स्थान यूँ ही गँवाने के लिये तैयार नहीं था।

उसके प्रथम वयस काल की कितनी ही गूढ बातें उसने केवल मुझे बताई थी। एक शिक्षक, दरिद्री शिक्षक की हम दोनों संतान थे इससे क्या होता है? जिस मन से हर्षामर्ष ग्रहण किया जाता है वह मन तो अति तरल थे हमारे। अन्यों से अधिक तीव्र भी थे। केवल उसकी प्रतिक्रिया ही स्पष्ट व्यक्त कर नहीं सकते थे हम। परिस्थिति हमें मना करती थी।

माई का नियोजित वर उसी रुप की तुलना में हेटा था। विधुर भी था। लेकिन बड़े मुश्किल से दिन कट रहे हों जिस घर के वह घर लड़की के विवाह के लिये धन कहाँ से जुटाये? सब स्वांग किये जा सकते हैं पर पैसे का? वह कैसे किया जाये?

माई और मैं कई बार इसपर बात करते थे। माई कहती मैं विवाह ही नहीं करुँगी। मैं खुश होकर कहता हाँ "तू ऐसा ही कर।" वह मुझे अंधेरे में रख रही थी। उसका शरीर कह रहा था कि विवाह होना चाहिये पर पैसा अनुपस्थित था। तब उसने एक झूठा पर्याय निकाला वह कहती "मैं नोकरी करुँगी, मुझे पढ़ाऊँगी। एक काम अवश्य करना जो मैं स्त्री होने के कारण कर नहीं सकती और तू कर सकता है इस अंग्रेज को कभी क्षमा नहीं करना।"

हम दोनो ऐसे हवा में भवन बना रहे थे। कभी लगता कि ये झूठ है माई का विवाह

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नहीं होगा। पर फिर भी मैं उसे पकड़ रखना चाहता था पूछता "विवाह न करने का तेरा इरादा पक्का है ना?

वह 'हाँ' कहती। पर जब वह दरवाजे में ही खड़ा हो गया तो मैं अचकचाकर गिर पड़ा।

एक दिन शाम को थके हुए लौटे पिताजी धीरे-धीरे माँ को कह रहे थे "विवाह के खर्च में ही वे अप्पा का जनेऊ भी कर देनेवाले हैं।" सुनते ही मैं सुन्न हो गया।

दूसरे दिन माई रसोईघर की दीवारसे दोनों हाथ पीछे बांधी खड़ी थी। माँ अपना सिर पकड़े बहुत ही चिंताग्रस्त बैठी थी। तभी माई ने कहा : "माँ तू चिंता न कर। दादा जो कुछ मेरे लिये लाये है, मैं उसका अपमान नहीं करुँगी।"

जिस तिनके का सहारा था वह भी डूब गया। उस रात मैंने खाया ही नहीं, वैसे ही रुठासा सो गया। छोटासा घर। उसमें दो या तीन कमरे। एक कमरे में हम सब बच्चे सोया करते थे। उसमें मेरा बिछौना अलग था। मैंने बचपन से घर में अपनी स्वतंत्रता बनाये रखी थी। कोई आधी रात के बाद मैं हड़बड़ाकर जागा। कोई मुझे खींच रहा था। कौन है? यह मैंने तत्काल पहचान लिया। हम दोनों फिर एक दूसरे को गोद लिये सोये। वह रातभर रोती रही। कुछ भी न बतियाते वह मुझसे बतियाती रही। मैं सारा समझता रहा।

अब मुझे खुद ही अपना रास्ता तय करना है। सब प्रश्न मुझे ही अपने हल करने हैं। अब पग-पग पर रास्ता दिखलाने वाला कोई नहीं रहेगा। जीता तो मैं, हारा तो मैं। उस एक ही रात माई के, मेरे गुरु के गोद में मेरा बचपन समाप्त हो गया। मैं बड़ा हो गया। बड़ा और अकेला।

विवाह हुआ।

भाऊ सुपेकर- मेरा जीजाजी भला आदमी निकला। स्वभाव से अच्छा था। मुझे हमेशा यह लगता रहा कि विवाह का दोनों तरफ का खर्च और मेरे जनेऊ का खर्च भी देकर मेरे जीजा ने कुछ अधिक मूल्यवान वस्तु अपने कब्जे में कर ली। यह मैं अभी भी भूला नहीं हूँ।

पर यह मेरे जीजा को भी शायद मालूम था। उसने मेरी माई को फूल की तरह जतन से रखा। कितनी अच्छाई उनमें भरी थी यह कह ड़ालना चाहिये, नहीं तो अन्याय होगा। एक नहीं दो मृतात्माओं पर।

विवाह हो जाने के बाद भी माई थी तो तिलकपंथी ही। धनतोली में प्रभात फेरियाँ निकलती। माई बड़े भोर उठ नहाती-घर के कुछ काम काज कर प्रभात फेरी में सम्मिलित

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हो पूरी धनतोली जगताी। वन्देमातरम् हो जाने के बाद वह घर लौटती। सुपेकर सेक्रेटेरीयेट में थे। उनकी पत्नी द्वारा इस तरह शासन के विरुद्ध जागरण करना गैर कानूनी था। जीजाजी ने माई को समझाने का प्रयास किया। परन्तु उसने साफ-साफ कहा :

"देखिये आप सरकार के नौकर। आपको तो मैं प्रभात फेरी में चलने के लिये कहती नहीं।"

"प र न्तु।"

"आपकी बात मैं समझ गई हूँ। किसी ने पूछा तो बता दीजिएगा कि मेरी पत्नी मेरी बात सुनती नहीं।"

"यह कहना उन्हें जंचना तो चाहिये।"

"उन्हें न जंचे तो आप नौकरी छोड़ दीजिये। कहीं और बाजार में निजी कर लीजिये। इतना वेतन नहीं मिले तो भी चिंता नहीं। जो मिलेगा उसी में घर चला लूँगी। नहीं तो मैं भी नौकरी कर लूँगी।

जीजाजी ने फिर माई को कभी मना नहीं किया। स्वतंत्रता के उस आंदोलन के लिए उसके मन मर्जी का करने दिया।

पिताजी अब बहुत ठंडे से हो गये थे। दूसरे शब्दों में वे हारे से हो गये थे। पहले हम झगड़ते तो भी पिताजी के पीठ पीछे। अब उनके सामने भी झगड़े लेते थे। वे केवल कहते : "मत चिल्लाओ।"

नमक सत्याग्रह हम मुहल्ले के कुछ लड़के करना चाहते थे। परन्तु नागपुर के भाग खोटे। वहाँ पास में समुन्दर नहीं। फिर क्या? पानी में नमक मिलाकर हमने समुन्दर बनाया। खुले में एक चूल्हा बना उसपर वह खारापानी चढ़ाया नमक बनाने, नमक कानून तोड़ने।

हमारे मकान मालिक को यह सब बिलकुल पसंद नहीं था। सब "लड़कियाँ" आजकल दीवाने हो गये हैं यह कहते हुए वे घर के अन्दर ही बने रहे। भाषा में लिंग भेद उन्हें कभी समझ में ही नहीं आया। दूसरे सारे दरवाजे भी चटपट बंद हो गये। पुलिस आने की पक्की खबर दो लड़के लाये थे। मैंने बड़े जोश में उन्हें कहा-आने दो पुलिस को चलाने दो गोली-ये मेरा सीना खुला है उसके लिये। पुलिस का एक सिपाही दूसरे किसी काम से आया था। हमारी गली में आया ही नहीं, यह बात अलग। वरना मेरा सीना खुला था क्योंकि कमीज में बटन थे ही नहीं।

फंदा अधिक कसा जाने लगा। खूप पकड़ाधकडी होने लगी। हर दिन काँग्रेस का जिला प्रमुख बन एक व्यक्ति सत्याग्रह करता। उसे देखने, नारे लगाने भीड़ जमा होती। लाठीमार होता-भागम भाग होती, सिर फूटते।

लेकिन खेद की बात थी; सामने जाने के बाद भी पुलिस मुझे पकड़ती नहीं थी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एक बार मैं पुलिस गाड़ी के सामने लेट गया। चालक ने ब्रेक पैर से दबाकर गाड़ी रोकी। मैं विजयी मुद्रा में-मुझे पकडेंगे कल मेरा नाम फोटो. . . .

परन्तु उसने मेरी बाजू पकड़ी और खींचते हुए एक दुकान की पटिया पर ला मुझे पटका ओर जबतक मैं कुछ कहता गाड़ी में बैठ उसने गाड़ी चला दी और उपदेश दिया - "छोरे घर जा माँ के पास बैठ दूध पी। बिल्लासभर का लड़का चला सत्यागिरा करने।" अब मैं बिल्लासभर था उसमें मेरा क्या कसूर?

और ऐसे ही समय में सन तीस का आंदोलन चेत गया। इस आंदोलनमें बड़ी-बड़ी सभाएँ होती। धनतोली परिसर में उसके लायक दो मैदान थे। नाग नदी के उस पार सीताबर्डी का मैदान था। जहाँ बाजार लगता था। दूसरा धनतोली पार्क था। महाल भाग में होनेवाली सभाएँ चिटनीस पार्क और टाउन हाल के मैदान में होती थीं।

उस समय नागपूर में खौलते रक्त के पक्ष भी बहुत थे। काँग्रेस की ताकत बहुत बड़ी थी। एम्प्रेस और मॉडेल ऐसी दो कपड़ा मीलें नागपूर में होने से कम्युनिस्ट पार्टी का भी अच्छा खासा जोर था। स्वतंत्रता के बाद के फारवर्ड ब्लाक के एक नेता रुईकर उस समय मजदूरों के बड़े नेता थे। डॉ. मुंजे का ऐसा ही कोई पक्ष और था। हिन्दू महासभा थी। इन सभी पक्षों के तरुण समर्थक उस समय नागपूर भर में फैले थे।

धनतोली तो आंदोलनकारियों से जैसे भरी पड़ी थी। हर हमेशा घरों पर छापे पड़ते थे। कागज आदि खोजे जाते। कोई न कोई हथकडी ड़ालकर ले जाया जाता। उसमें से बहुत सारे पहचान के होते थे।

सायक्लोस्टाइल के श्यामपट के अक्षर पोछना। टाइप मशीन के कागज पानी गरम करने के बंब में डाल जला देना। कोई अत्यंत महत्व का कागज निगल जाना। खोजे जा रहे आदमी को कोयले के ड्रम में छिपा देना। यह सब धनतोली वासियों की आदत में आ गया था।

कितनी ही सभाएँ सरकार पुलिस दौड़कर भंग करवा देती थी। पुलिस की भरी गाड़ियाँ अपनी शक्ति का प्रदर्शन करती यहाँ से वहाँ दौड़ती रहती थी। तुर्रेदार पगडी और कान तक ऊँची लाठियाँ लिये उत्तर हिन्दुस्थानी पुलिस ही नागपूर में अधिक थी। साढ़े पांच फूट ऊँचाई के इन पुलिसवालों द्वारा बेरहम लाठी चलाना कतई सहन न होता था।

ऐसे उबलते वातावरण में चुप बैठना मेरे लिये संभव न था। और कुछ करते बने या न बने पर कोई नेता पकड़ लिये जाने पर स्कूल में हड़ताल करवाना तो हमारे हाथ में था ही। याद है इस कार्यक्रम में जो अगुवा थे उसमें एक मैं भी था।

शिक्षक हमें अंदर से मिले थे। एक कांगो नामक शिक्षक ने जो हमें मराठी पढ़ाते थे मराठी के ख्यातनाम कवि रेवरंड तिलक की कविता "सामर्थ्य नामी तुझ्या आर्यभूमी" (हे आर्यभूमि तेरे नाम की शक्ति) तीन चार दिन तक लगातार पढ़ाई-रटाई। सब जानते थे कि ये कविता देशभक्ति का बुलावा है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मुझे याद है स्कूल में रोज की प्रार्थना के बाद तिरंगा झंडा गीत गाने के लिये हमें सत्याग्रह करना पड़ा था। बहुत विरोध नहीं हुआ। "करो चाहे जो" ऐसा कहकर हेड़मास्टर कमरे में घुस गये। और हमने जोर-शोर से ध्वज गीत गाया।

बात क्या है? मुझे पकड़ते क्यों नहीं? यह प्रश्न मुझे सताने लगा और उत्तर मिला। तब नागपूर के सिटी सुपरिन्टेन्डेट परमेश्वर दयाल थे। पिताजी के बहुत पुराने मित्र। उनके लड़कों को पिताजी ने पढ़ाया भी था। पढ़ाते समय नियमानुसार उन बच्चों की ठुकाई भी की थी। उस सबका यह बदला था। मुझे पकड़ा भी होता तो परमेश्वर दयाल मेरे पीठ पर धोल जमाते हुए एक सिपाही साथ देकर घर भेज देने वाले थे।

फिर सोचा दयालजी के क्षेत्र के बाहर चला जाऊँ तो। लेकिन कहाँ जाऊँ? यह सोच ही रहा था कि समाचार पढ़ा। बंबई में बहुत बड़ा नमक सत्याग्रह हो रहा हैं। फिर क्यों न बंबई ही जाया जाये। किससे पूछूँ? किसकी राय लूँ? अरे छोड़ो मैं ही मेरा गुरु। मैं ही मेरा शिष्य।

बस अब 'बं ब ई' तुरन्त।

दिमाग का चक्र जोर से घूमने लगा। क्या किया जाये? क्या लिया जाये? कोई मुझे उचक्का न समझे इसलिये मिले थे उतने सब स्कूली प्रमाणपत्र साथ लेने चाहिये, मैंने सोच लिया। माँ बाप का छत्र छोड़ जाना, घर, छोटे भाई-बहन छोड़ जाना? जाना ही होगा। देश के लिये जाना ही होगा। मन का निश्चय पक्का होता गया।

भोर ही उठा। नहाया। अपनी चड्डी के साथ माँ की साड़ी भी धो ड़ाली। निकलते-निकलते माँ की आखिरी सेवा की। माँ ने देखा, आश्चर्य से पूछा "आज ये क्या?"

भरभरा कर आँसू गिरे इसके पहले ही उन्हें रोका। और कहा "कभी धोई तो क्या।"

जो बना था वह खाने बैठा तो खाया ही न जाये। कौर मुँह के मुँह में रह जाये। नीचे न उतरे। फिर भी थोड़ा खाया। स्कूल के थैले में आज पुस्तकों की जगह प्रमाणपत्र और एक पुस्तक थी। निगाह बचा कर यह किया फिर भी प्रमाणपत्रों की बात छोटी बहन ने देख ही ली। "मास्टर साहब ने देखने के लिये मँगवाये है" उसे कहा। फिर बिलकुल निकलते-निकलते उस थैले में मेरे दो चार कपड़े ठूँस लिये। देर हो गई थी फिर भी एक काम अभी और करना था। जीजाजी से बंबई तक का किराया माँग लेना था। दिल कड़ा किया और बिना किसी की तरफ देखे थैला कंधे से लटकाये घर के बाहर पैर रखा। अब इस घर में मेरा आगमन कभी होना नहीं था।

सुपेकर खाना खाकर दफ्तर के लिये निकले थे। जल्दी से दरवाजे के अंदर घुस उनसे कहा "पिताजी ने दस रुपये मंगवाये हैं।" आश्चर्य से उन्होंने पूछा "दादा ने?" आजतक दादाने दामाद से कभी पैसे मांगे नहीं थे। मैंने जोर देकर कहा "हाँ।"

उन्होंने जेब से नोट निकालकर दिया। अंदर जाकर माई को एक बार देख लेने की इच्छा प्रबल हुई। पर उसे दबा मैं भागा स्टेशन की ओर। चक्रवात में इकलौता एक पत्ता

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

जैसे। असमय आई बरसात से आई बाढ़ में एक टहनी जैसे एकाएक ड़रा। कहीं परमेश्वर दयाल मिल गये तो? ढवले क्लास में गये पिताजी रास्ते में मिल गये तो? हे भगवान, हे प्रभू।

नहीं। कुछ भी नहीं हुआ। और मैं स्टेशन पर आ गया। बंबई का आधा टिकट लिया। टिकट बाबू टिकट देते समय साशंक मुझे देख रहा था। इतने दूर को आधा टिकट लेने वाला यह छोरा किसका? यह प्रश्न उसके दिमाग में उठे इसके पहिले ही मैं भीड़ में घुस गया।

गाड़ी खोजी। उसपर लिखा मैंने पढ़ा। नागपूर बंबई। एक डिब्बे में घुसा। कोना पकड़ जाकर बैठ गया। टोपी आगे खींच ली। किसे फुरसत थी मेरी ओर देखने की। पर मेरा चोर मन गाड़ी छूटने तक अपने को बचाता रहा। गाड़ी चली। धीरे-धीरे नागपूर पीछे जाता रहा। मैंने मन ही मन कहा।

नमस्कार सूले इंग्लिश हाईस्कूल। नमस्कार नीलकंठ विठ्ठल दांडेकर। नमस्कार माई सुपेकर। और मैं रो पड़ा। बारह वर्ष का एक मरियल छोकरा देश आजाद कराने वनवासी हो रहा था।

चक्कर माई चक्कर माई करते नीचे गिरने के बाद चारों तरफ का जैसे एक दूसरे में मिला दिखता है वैसा उस वर्ष का हुआ। सब कुछ गड्डुम गड्डु हो गया। कहाँ का क्या और कब? इसका स्मरण नहीं हो पाता। बचपन का साफ-साफ याद हो और यही एक साल छह माह की याद ऐसी उलझ जाये यह एक आश्चर्य ही हैं।

बेहोशी नहीं थी। लेकिन एक तरह का नशा सच ही था। धुएं का बादल छोड़ते गाड़ी नागपूर से बंबई की ओर दौड़ रही थी। कपास खेतों में से चुन लिया गया था। ज्वार कट चुकी थी। सौ पचास बगुलों का एक झुंड उत्तर से दक्षिण की ओर जाता हुआ। इतना ही याद आ रहा हैं। वास्तव में इस सारी प्रकृति छबि पर मेरा कितना प्रेम। कोयले की आँखों में जाती कनी की परवाह किये बिना डिब्बे की खिड़की में से बाहर झांकता मैं बैठा रहा। आजतक जितनी रेल यात्राएँ की, मैंने यही किया। माँ के आँखों की डांट पिताजी की छड़ी का ड़र, माई का स्नेहसिक्त अनुरोध किसी-किसी को मैंने माना नहीं।

परन्तु आज पतंग डोर से कट गई थी। अभी तक डिब्बे के सहप्रवासियों का ध्यान मेरी ओर नहीं गया था। मैं इतने ओछे कदकाठी का था कि किसी की आँख में भर ही नहीं सकता था।

डिब्बे में कितने-कितने परिवार थे। क्या-क्या बतिया रहे थे। खा पी रहे थे। हर स्टेशन पर क्या-क्या ले रहे थे। चर रहे थे। मेरा मन कही नहीं था। ताश के ढहे महल की तरह था मैं। डोर अपने हाथ से काटी थी। कितनी बार लगा स्टेशन आते ही उतरकर नागपूर की ओर दौड़ पड़ू लेकिन स्टेशन आता और निकल जाता। अदृश्य रह अदृष्ट मुझसे क्रिया करवा रहा था और मैं असहाय, अंगतिक हुआ वैसा-वैसा कर रहा था। रात

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हुई तो कब कैसे नींद लग गई उसका भी पता नहीं।

भोर जागा। इंजिन की कर्कश सीटियों से। उठा। सारी खिड़कियों के कांच बंद थे। एक खिड़की खोली। बाहर झांका। गाड़ी किसी सुरंग के पास खड़ी सिगनल के लिये चिल्ला रही थी। नवंबर का महिना था। बढ़िया ठंड थी। बाहर झांकते ही सिरहन हुई। पर बाहर जो रुप सागर फैला हुआ था उसके दर्शन से तबीयत मस्त हो गई। अपने हाथ पैर इधर-उधर ढ़ीले ढाले ड़ाले सह्याद्री (पर्वत) मस्त बैठा था। कुहरे का झीना वस्त्र उसने ओढ लिया था। कितनी कैसी घाटियाँ, कैसे कैसे दरख्त, ऊँचे पूरे, छोटे, मझले और सीधे भरे। सह्याद्री पहले भी देखा था। देखते ही उससे प्रीत भी हो गई थी। पर यह कुहरे की रजई ओढे उसका दर्शन एकदम जानलेवा था।

छोटी सीटी हुई और गाड़ी चल दी। सुरंग में धुप्प अंधेरा था। उस अंधेरे को देखते बाहर मुँह किये वैसे ही बैठा रहा। बोगदे में से गाड़ी बाहर आई तो पहले देखा था उससे एकदम अलग रुप सामने फैला हुआ था। उस अनेकाद्‌भुत दर्शन से हरक गया। कौन, क्या कहाँ का, किसलिये किसी का भी होश नहीं रहा। मन प्रसन्न, ताजा हो उठा।

कसारा स्टेशन पर गाड़ी रुकी तब आकाश ललाई लिए था। एकदम होश में आया। नीचे उतरा। कुल्ला किया। उस समय कसारा स्टेशन पर छोले अच्छे मिलते थे। दो पैसे के लिए, खाये। किसी ने पूछा तो क्या जबाब देना यह याद कर लिया। सीटी हुई तब भी नीचे ही खड़ा रहा। हरी झंडी हुई। गाड़ी चलने लगी तब उछलकर गाड़ी में सवार हो गया।

दादर स्टेशन पर डिब्बा बहुत कुछ खाली हुआ। लोग कहने लगे बंबई आ गई। पर मैंने याद कर रखा था बंबई माने बोरीबंदर। किसी ने पूछा भी "अरे तू किस का छोरा-किधर कू उतरेगा।" याद किया हुआ कह डाला : "बोरीबंदर पर मुझे उतरवाने आने वाले हैं।"

आखिर बोरीबंदर आ गया। कितना प्रचंड। नीचे उतरते ही चूहे के बच्चे की तरह घबरा गया। क्या करुँ?-कुछ न सूझे-प्लेटफार्म लेकिन जल्दी ही सूना हो गया फिर समझ में आया यहाँ से बाहर जाना ही होगा।

एकदम उस समय भी उसे मोहमयी बंबई कहा जाता था। वास्तविक उसका रुप बहुत ही दिलचस्प था। झोपडपट्टी की आज की समस्या तब नहीं के बराबर थी। इतने सिंधी नहीं थे। दक्षिणात्य मजदूर भी इतने नहीं थे। छुपी दारु भट्टी का प्रश्न भी सताता नहीं था। इतने ऊँचे-ऊँचे भवन न होते हुए भी जो थे वे शाही थे। दम घुटने जैसी भीड़ भी तब नहीं थी। उस समय भी बंबई में नाना जाति जमात रहती थीं। पारसी थे। कच्छी थे। गुजराती थे। मोमिन थे। पाठारे प्रभु थे। बोहरा थे। ईसाई थे। शाम को घुमते एंग्लो इंडियन थे। मछली बेचू कोली थे। लाल धोती पहनते घाटी थे। काले ईसाई थे। गोयंकार थे। मराठी भटजी थे। लाल टोपी पहन कंधेपर दूध की बैंगी लेकर उसे झटके देते हुए तिरछे कदम रख चलनेवाले वसईवाले थे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कितनी तरह के लोग बंबई में कितनी ही तरह के धंधे कर पेट भर रहे थे। सुख संतोष से। फालतू तो कोई रहता ही नहीं था। मालिशवाले थे। कलोई बटाटिये थे। गरम बासुंदी दोनो में बेचने वाले थे। दयालू भाजीवालियाँ थी। पानी नारियेल थे। भोर उठते ही घर-घर पाव बटर पहुँचाने वाले थे। गरम खबर चिल्ला कर अखबार बेचते छोर थे।

फिर भी सन तीस कोई अठारह नौ सत्तावन तो था नहीं। यह अभी-अभी गुजरा जमाना है। माने उस समय भी बंबई में फोरास रोड था। चोरियाँ थीं, खून थे, डाके थे। फिर भी लगता है तब बंबई बहुत अच्छी थी।

तब बंबई कलाई की घड़ी सी दौड़ लगाती हाँफती नहीं थी। काफी आराम से थी। शाम को बनठन घूमने निकलती थी। चार-चार घोडों की बगियाँ थी। उसमें से घूमने निकलते पौरजन थे। हर एक का पहनावा अलग था। पारसियों की पगड़ी अलग थी। भाटियों की अलग। प्रभु अलग शिरोभूषण पहनते थे। गुजराती अलग ढंग की धोती बांधते भाटी अलग। कुछ लोगों की पगडियाँ जाकर वहाँ गांधी टोपी आ गई थी। पर नंगे सिर घूमना उन दिनों की सभ्यता नहीं थी।

ये उस बंबई का समग्र चित्र नहीं हैं। बोरीबंदर से बाहर आकर उस महाप्रवाह में मैंने जो गोता लगाया उसकी धुंदली यादें हैं।

उन दिनों सब ओर नमक सत्याग्रह की धूम थी। दांडीयात्रा का अभूतपूर्व पर्व बीत चुका था। पंचा पहने वह फकीर दांडी के सागर किनारे नमक इकट्ठा करता घूमा था। पकड़ा गया था। उस चिनगारी ने जैसे जंगल में आग लगा दी थी। सारा देश भड़क गया था। आसमान में तिरंगा ऊँचा फहराना, फिर लाठी गोली चलना, खुले सीने पर उनको लेना ऐसा होली हुड़दंग देशभर चल रहा था।

बंबई में इस सारे का संचालन होता काँग्रेस हाऊस में। आजकल उस मार्ग को व्ही. पी. रोड कहते हैं। उस मार्ग की वह विशाल कोठी स्फूर्तिकेन्द्र थी। पीली पगड़ी के सिपाहियों की टोली लिए गोरे सार्जट उस काँग्रेस हाऊस पर छापा ड़ालते थे। उनके कमर में लटके रहते पिस्तूल ओर चेहरे पर रहती भयावहता। किसी को पकड़ ले जाते समय इकट्ठी भीड़ की तरफ देखकर वे थूकते।

काँग्रेस-हाऊस में बड़े जोर-शोर से काम होते रहते। उसमें कुछ भाग गोपनीय किस्म का था। पर फिर भी प्रगट ही होने जैसा काम बहुत था। सूत कताई पर उन दिनों बड़ा जोर था। लोगों को इसके सिवाय गांधी टोपी, तिरंगी बैजेस, तिरंगी झंडे आदि भी यहीं से दिये जाते थे। तरह-तरह के पत्रक छपकर आते थे। कुछ छापाखाने से कुछ सायक्लोस्टाइल होकर। उनका सही बटवारा करना, चाहिये वहाँ ले जाना, सड़क के दोनों तरफ दीवालों पर उन्हें चिपकाना ऐसे हजार उद्योग वहाँ थे।

मैं उन उद्योगों में खो गया। कौन, कहाँ का, किसीने पूछा नहीं। मैंने बताया नहीं। उन दिनों बंबई में भोजन बहुत सस्ता था। काँग्रेस के स्वयंसेवकों से पैसे कोई लेता ही

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नहीं था। रात थक कर आना। कहीं अपनी गठड़ी ड़ाल देना। भोर उठ शौचादि से निवृत्त होना ताजादम हो जाते ही दिनभर उस प्रचंड उद्योग धारा में डुबकी लगा लेना। छातीपर लगे बैज की शान में पत्रकों का बोझ लिये जो जहाँ ले जाये उसके साथ जाना। बोझ पटकना। थक कर लौटना।

कैसे हम भिड़े हुए थे। कितने लोग थे? कहाँ-कहाँ के? अब समझ पड़ रही है कि हम नशे में धुत थे। लोगों के लिए हमारे सिर सीढ़ियाँ बनी। कौन चढ़े ऊपर कुछ मालूम नहीं। कितने नमूने देखने को मिले उन दिनों। अब उकेरते बैठने से कोई लाभ नहीं। नाई के घूरे पर बाल और नाखूनों के सिवाय मिलना भी क्या? ईमानदार थे वे अपने को झोंके रहे। सीने से फूटते रहे। बोझ ढोते-ढोते गिर गये। जेल में सड़ गये। बड़े भाग वाले वही मर गये। जो बाहर आये उनका न कोई इधर न उधर। पर वह कोई साधुओं का अखाड़ा नहीं था वह था राजनीतिकों का आंदोलन।

इस प्रवाह में सभी सिद्धसाधक नहीं थे। कुछ ऐसे भी जिद्दी मिले की दांतों तले अंगुली चली गई। मैं तो पहले झपट्टे को देखते ही भाग खड़ा हुआ। जान लिये भागते हुए भी उनके गुन गिनता रहा। प्रभात फेरियों का वह जमाना था। एक दिन प्रभात फेरी निकली काँग्रेस हाउस से। कहाँ कहाँ के और कौन कौन थे उसमे? कंठ कोई सुरीले नहीं थे। किसी किसी के तो डरावने थे। पर जोश बेहद। गाते निकले :

सारे जहाँसे अच्छा हिन्दोस्तां हमारा
आबरुदे गंगा वह दिन है याद तुझको
उतरा तेरे किनारे जब कारवाँ हमारा॥

प्रभातफेरी मेजिस्टिक सिनेमा के सामने से निकली तो घुड़सवार सिपाहियों की टोली उसके पीछे-पीछे चल दी। मुखिया था कोई गोरा। उन्मत्त, उद्धत, क्रूरू ये विशेषण वास्तव में फीके से हैं। रोज प्रभात फेरियाँ निकलती ही थीं। पर आज कुछ अलग ही बात थी। झूठ न कहूँ मैं पसीने नहाया। पैर भी लटपटाये। एक गुजराती स्वयंसेवक था। मगनलाल उसका नाम। आदर्श सत्याग्रही था। अनुशासन का पक्का। किसी का झगड़ा हो, किसी कारण हो यह बीच बचाव करता कहता "अरे सांती रखो। बापू की आग्यां मानो। सांती रखो।"

वह घोषणा करता आगे बढ़ रहा था। मेरी पतली हालत वह जान गया। मुझे पास लेकर बोला। "गभराओ मत बच्चा। अमारे साथ रहो। जोर से बोलो तिरंगा ऊँचा उठायेंगे।"

घेरकर भीड़ बढ़ती गयी। घेरकर माने सटकर नहीं। घुड़सवार पीछा करने लगते ही गली में से भागा जा सके इस अंदाज से। प्रभात फेरी के साथ ऐरे गैरे थे। होमकुंड का अंदाज लगते ही सटक लिये। मुझमें उस समय अनुनुभूत हवा भर गई थी। एक तरफ तो अत्याधिक ड़र लग रहा था। दूसरी तरफ एक रोमांचक अनुभव का प्रत्यक्ष दर्शन होगा इसलिये तीव्र उत्सुकता भी थी। मैं कुछ होश में था तो कुछ बेहोश। स्थिति बिकट दिखते ही प्रभात फेरी के अगुवा सरक लिये। दूसरा एक जवान लेकिन आगे आया उसने झंडा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दोनों हाथो में मजबूती से पकड़ा और सीधे भाषण करने लगा : "प्यारे भाईयों. . . . "

उसी क्षण चारों ओर के घुड़सवार प्रभातफेरी पर टूट पडे। घम्-घम् लाठियाँ घूमने लगी। इतना बड़ा मैदान लेकिन जैसे सिमटता छोटा होता गया। मगनलाल चट लेट गया मेरी बाजू पकड़ मुझे भी खींचने लगा। उतने में एक घुड़सवार घोड़ा उड़ाता मेरे पास से गुजरा। उसकी घूमती लाठी मेरे पीठ पर पडी। उसी झटके में मैंने झटका देकर हाथ छुड़ा लिया और पीठ सहलाते मैं भागा। मैदान छोड़कर। किनारे पहुँचने पर, सुरक्षित होने का अहसास होने पर रुक मैंने पीछे देखा।

प्रभात फेरी फूटकर चारो दिशाओं में भाग रही थी। लेकिन वह झंडावाला जवान और उसके समान ही वीर चार पांच जवान तिरंगा घेरे जान दांव पर लगाये खड़े थे। घुड़सवार उनपर लाठियाँ बरसा रहे थे लेकिन वे टिके थे। लेकिन कितनी देर टिकते। अंत में सब गिर गये। पुलिस की गाड़ी आई और उसमें उन्हें ड़ाल चलती बनी।

मगनलाल कराहता, लंगडाता, पीठ के घाव सहलाता कठिनाई से काँग्रेस हाऊस पहुँचा था। मैं दिनभर देशकार्य कर शाम उसके पास बैठ जाता। उससे बात करते यह बात ध्यान में आ गई कि हम जैसों का एक उद्देश्य से उपयोग किया जा रहा हैं। यह उसे भी मालूम था। पर वह ईमानदार था। पकड़े हुए रास्ते पर उसकी श्रद्धा थी। अपनी ताकत भी वह अच्छी तरह जानता था। जो था वह देश काम में लगाने के निश्चय से वह आजादी की लड़ाई में कूदा था। बात करते परिचय गाढ़ा हो गया और यहीं पैर कीचड़ में जैसे फंसने लगा।

मुझे लगता है नायगांव था भाईन्दर वह जगह थी। इन दोनों जगह और वहाँ से आगे ठेट बसई की खाड़ी तक नमकसार थे। आज भी हैं। मन में बड़ा कुतूहल था। सो चल दिया नमकसार देखने और वहाँ होता नमक सत्याग्रह भी देखने। सत्याग्रही टोली बांदरा शिविर से वहाँ आनेवाली थी।

नमकसार का वैभव, चमचमाता सफेद नमक देख आँखें चौंधिया गई। खाड़ी के किनारे-किनारे चौरस बंधियाँ। उसमें इकट्ठा किया समुद्र जल से पका नमक। लकड़ी के फावड़े से बनाये गये चमकते ढेर। कितने? अरे बाप! अनगिनत। जिधर देखो उधर एक सांचे में ढले जैसे। ईश्वर दत्त! आदमी ने क्या किया? कुछ नहीं। केवल बंधिया बांध पानी रोका। कुछ बोया नहीं। कुछ सींचा नहीं। कुछ राखा नहीं।

और यही ईश्वरदत्त फसल बीनने सत्याग्रह करने चले भूमिपुत्रों को बिराने देश के बिराने शासक पीटे-मारे। पकड़े, जेल में ठूँसे। वहाँ दंडाबेडी। छड़ियों से पीठ, चूतड फोडे। क्यों, किसलिये? तब कुछ ठीक ठाक समझ न पड़ता था।

पुलिस की गाड़ियाँ जल्दी ही आकर नमकसारों के पास खड़ी हो गई थी। बांबी फूटने पर जैसे चीटियाँ चल पड़ती हैं चारों ओर वैसे ही लाठियाँ उठाये पीली पगड़ी के पुलिस चले इधर-उधर। आधे पौन घंटे बाद झंडा उठाये सत्याग्रही भी आ गये। एक जगह खड़े रहे। नारे लगाये। सीने पर हाथ मारे, मुट्ठियाँ उपर हवा में फेंकी। फिर फैलकर लगे नमक बीनने। पुलिस टूटी। औंधा-सीधा मारा। उस सफेद झक्क नमक पर लाल रक्त की धर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बही। फिर वह गठडियाँ उठा-उठा पुलिस गाड़ी में पटकी गई। गाड़ियाँ चल दी। इस नाटक का अर्थ लेकिन मुझे समझा नहीं। इन्हें नमक बीनना था, बीनते। इस समय, इस जगह इस सबकी घोषणा करने की क्या जरुरत थी। कौड़ी कीमत का नमक उसके लिए इतने विज्ञापन पत्रक? और जाने क्या क्या? और वे (शासक) भी कैसे? बीनने देते नमक। उनको रोकने की क्या जरुरत थी। टके की मुर्गी के लिए पांच रुपये का मसाला किसलिये?

उसी शाम चौपाटी पर एक आम सभा हुई। वहाँ भी पुलिस का इन्तजाम। कोई एक गोमाजी मंचपर आया। सीने पर हाथ मार-मार कहने लगा। ये सीने, ये सीने इनसे नापेंगे हम उनके लाठियों की लंबाई। गोलियों की गोलाई। देखें कबतक अंग्रेज चलाता हैं लाठी गोली। भीड़ ने उसे माला पहनायी। पुलिस की गाड़ी आयी। वह उसमें हंसते हुए जाकर बैठा। लोगों को हाथ दिखाता चला गया। हरसिंगार का पेड़ एक के घर, फूल दूसरे के घर।

वह दिल जलानेवाला प्रश्न एक दिन मगनलाल ने पूछा

"क्यों भाई। घर से कह, पूछ कर यहाँ आये थे ना?"

"यहाँ?"

"इस आन्दोलन में।"

चुप रहा। इतने दिन हो गये बंबई में। आंदोलन में। लेकिन किसी ने पूछा नहीं। कौन हो? घर कहाँ है? पिताजी......? आंदोलन के लिए नेताओं को आदमी चाहिये थे। एक गिलहरी घर से भागी सेतु बंधन के प्रचंड उद्योग में अपनी शक्तिभर रेत के कण डालने लगी। उसे किसी ने मना नहीं किया। किसी पर भी इस अस्थिपंजर जीव की जिम्मेदारी नहीं थी। वह खाता कहाँ हैं? सोता कहाँ हैं??? ऐसे प्रश्न पूछने की किसी को गरज नहीं थी। अपना काम हुआ। बस। इस सम्बन्ध में शिकायत करने की गुंजाइश भी कहाँ थी।

और ऐसा विचार, हथियार प्रयोग कर्ता को कभी करना ही नहीं होता। हो सके तो "हथियार" स्वयं करें। पर वह तो बहोश हुए होते हैं। अपना चुटकी भर व्यक्तित्व किसी दीवानेपन में आगी में झोंक चुके होते हैं। अगला पिछला सोच करने का क्षण भुला चुके होते हैं। पर जब कभीं वैसा क्षण आता हैं ......।

संग्राम के नेता सैनिकों की लाशों से बनी सीढ़ियों से चढ़ जयमाला पहने बड़े भरे गले से इन सैनिकों का स्मरण करने का नाटक करते हैं। उनके बलिदान के लिए दुःख प्रगट करते हैं। आँख से पानी की एकाध बूँद नीचे ढुलकती है तब आम जनता जय जयकार करती हैं। परन्तु जो पैरों तले कुचले हाते हैं वे जानते हैं उस बूँद की कीमत। फिर भी उन्हें शिकायत नहीं होती। उनके बलिदान इस अश्रुजल से तर्पण पाने की लालच में किये नहीं होते। ऐसे एकान्तिक निष्ठा से इस आंगन में पैर रखा था मगनलाल ने। उसने सारी बातें सोची हुइ थीं। मैं तो केवल उपरी चिनगारियों से आकर्षित हो इस अग्नि में घुसना चाह रहा था। और ऐसे में मगनलाल का वह प्रश्न-घर से पूछ कर आये थे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ना?"

मेरे सामने भी अपने आप यह प्रश्न कई बार आया। राक्षस जैसा। और मैं कांप-कांप गया था तब-तब।

क्या हुआ होगा घर में?

वहाँ तो कल्पान्त हुआ होगा। बच्चा कहाँ गया? क्या गिद्ध ले गया? या पानी में डूब गया। या उसे लकड़ी सूँघा कोई अपने पीछे ले गया। नहीं ऐसा होने का कारण ही नहीं था। जीजाजी ने अवश्य कहा होगा मुझसे दस रुपये मांगकर ले गया। खोज करने पर मेरे कपड़े पुरस्कार प्रमाणपत्र न मिले होंगे। और लड़का भाग गया, भगोड़ा है यह सबने जान लिया होगा।

घरवाले से दस रुपया लेकर गया यह मालूम होने पर माई के मन में खलबली अलग मची होगी। अब मैं कुछ भी कहूँ वह क्षमा न करेगी। कहेगी मुझसे सीधे क्यों नहीं मांगे। पिताजी का नाम लेकर क्यों मांगे। तुझे आन्दोलन में जाना था। मुझसे कहते। मैं स्टेशनपर आयी होती। टिकट निकालकर दिया होता। आरती उतारी होती। गर्वित हुई होती। मेरा सगा आन्दोलन में गया यह कहा होता सबसे। पर तूने तो झूठ बोला - कपट किया। अरे! अरे! तू मेरा भाई है यह कहने में भी सिर शरम से झुक जाता हैं। तो अब मैं किसके लिये लौटूँ किसके पास जाऊँ? लौटने पर खुल सकते दरवाजे तो मैंने अपने हाथों बंद किये।

पिताजी मुझे खोजते फिरे और मैं मिल जाऊँ उन्हें तो पीटेंगे तो नहीं पर अब उनके सामने जाने से तो मर जाना ही अच्छा। मगनलाल को मैंने पूछा "क्यों जी, यह आन्दोलन समाप्त होते ही स्वराज्य तो मिल जायेगा ना?"

भाई ने हंसते हुए कहा : "एक वर्ष मां स्वराज्य आ तो अर्थवाद छे।"

मैं तो सहपाठियों में कसमें खाकर आया था अब स्वराज्य मिलेगा तभी लौटूँगा। और अब बिना स्वराज्य लिये लौटा उनके बीच तो जिस नजर से वे मुझे देखेंगे उंगली दिखा-दिखा एक दूसरे को कहेंगे। वह पिस्तुल की गोली से अधिक जानलेवा होगा।

मगनलाल ने एक दिन कहा : "आंदोलनना अंत दिखाई पड़ रहया छे।" फिर उसने पूछा "तुम घर लौटोगे ना?"

मैंने अपना कालिमा मंडित चेहरा नीचे झुका लिया।

"ऐसा नहीं करते। चल। मैं ही तुझे तेरे घर छोड़ आता हूँ।"

नहीं-नहीं मगनभाई यह संभव नहीं हैं। क्यों? यह मैं समझा नहीं सकता। तुम मुझे मूरख मानोगे। कहोगे। अरे ऐसे कितने ही भाग कर आते हैं। घर से भागने की सुरसुरी इस उमर में कितनों को ही होती है। और तुम्हारा तो भागकर आना देशकार्य के लिए था। घर में कोई तुम पर गुस्सा न होगा। और फिर मैं जो हूँ- उन्हें समझाऊँगा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

नहीं भाई अब मेरा लौटना नहीं। आंदोलन खतम होने को है तो ठीक हैं। मेरा रास्ता मैं खोज लूँगा।

बचपन में चित्रपट देखा था "बजरबट्टू"। मेरी ही आयु के एक लड़के ने उसमें काम किया था। फुरसत के समय उस लड़के का अभिनय मेरे सामने अकसर घूम जाता। ऐसा ही वह फिर घूमा और लगा अपना रास्ता खोजना है तो सिनेमा में जाकर बजरबट्टू जैसा काम करना अच्छा रास्ता हैं।

दीवारों पर पत्रक लगाने सुबह निकलते समय कोहिनूरू रणजीत, जैसी फिल्म कंपनियों के कार्यालय देखे थे। दादर उस समय सिनेमा जगत का केन्द्र था।

मगनलाल ने छेड़ा उसके दूसरे दिन भोर ही उठा। सामान उठाया। चड्डी और कमीज। अभिनय के लिये मिले प्रमाणपत्र और बिल्ले। ट्राम में बैठा। उस समय एक आने के टिकट में गिरगांव से दादर जाया जा सकता था। खड़खड.करती ट्राम चली। वे दीवारें जिनपर पत्रक लगाने में लेई की बालटी लिए घूमा था। आँखों के सामने से गुजरने लगी।

दादर आया। उतरा। भूख लगी थी। एक होटल में जाकर पाव मिसल खाई और कोहिनूर फिल्म कंपनी के दरवाजे पर जाकर खड़ा हो गया। गुरखा था दरवाजे पर। भला। काम पूछा अंदर जाने दिया।

सीधे दफ्तर में गया। कंपनी के मालिक मेज के पीछे कुर्सी पर बैठे थे। और एक सज्जन पास बैठे थे। बाद में मालूम हुआ वे केमरामेन पाटणकर थे। मालिक सहृदय लगे-पूछा? सूँ छे?

दन्न से मराठी में कह दिया। मैंने नाटकों में अच्छे काम किय हैं। पांच दस अभिनय मुझे याद हैं। मुझे फिल्म में काम करना है आप यदि अवसर देंगे तो आपका अहसान न भूलूँगा। मालिक हंसकर बोले "एमँ जुओ तो पाटणकर?"

पाटणकर ने जो पूछा मैंने बताया। फिर पूछा कोई अभिनय याद है?

हाँ। कह मैं सुरवात करने ही वाला था उतने में एक सज्जन और अंदर आये। गोरे। सौम्य मुद्रा। मुँह में पान रचा। मामूली शरीर। खादी का कुर्ता धोती पहने। सिर पर चुटिया उसमें बड़ी सी गठान। मालिक उनका स्वागत करते हुए बोले

"आओ मालवियजी, जुओ, नवो आक्टर आक्टिंग करी रह्या हैं।" "ऐसा! तब तो बड़ी आनंद की बात है। लगता है ठीक मोके पर आया।" मालवीय तीसरी कुर्सी पर बैठे, बोले "चलने दीजिये।"

पीटर का भाषण याद था वह मैंने साभिनय सुनाया। मालिक हंसकर बोले "ऍम इंग्लिश आक्टर छे।"

मैंने कहा "मैंने मराठी नाटक . . . . .।" पाटणकर बोले 'सुनाओ'- और फिर पांच मिनट तक खरा देशभक्त नाटक के संवाद दूसरे पात्रों के सूचक संवाद करते हुए सुनाये

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

और अंतिम वाक्य बोला - "होय अपराध मीच केला आहे। देशभक्ति हा जर गुन्हा असेल तर तो मी केला आहे। जज्ज महाराज, आपण मला हवी ती शिक्षा देऊ शकता।" यहाँ सीनेपर हाथ भी मारा। अभिनय में कोई कोर कसर मैंने नहीं रखी। सब प्रेक्षक खिलखलाकर हंस पड़े। फिर पाटणकर ने पूछा

"कहाँ के हो?"

"नागपूर के"

"पिता क्या करते हैं?"

आँखों के सामने तारे आ गये। झूठ ही कहा "पिताजी नहीं हैं।"

"बंबई कैसे आये?"

"आन्दोलन में भाग लेने"

मालवीय जी आगे बढ़े-पूछा "अच्छा आन्दोलन में?"

"जी हाँ।"

मालिक ने मालवीय जी से पूछा "आपने यहाँ ले जाओगे क्या?"

"जैसी आपकी इच्छा।"

फिर पाटणकर ने कहा "ऐसा है, अभी हमारी कंपनी में तुम्हारे लायक काम नहीं हैं। ये मालवीय जी कंपनी में मुंशी हैं। मैं समझ नही पाया इसलिये पूछा "मुंशी?"

"हाँ मुंशी, माने लेखक। इनके घर अभी रहो। काम निकलते ही तुम्हें बुला लेंगे ऐसा मालिक कह रहे हैं।

कंपनी के ही बाहरी भाग में सड़क किनारे चाल थी। उसके दूसरे या तीसरे माले पर मालवीयजी की खोली थी। अगला, बैठने का हिस्सा, पीछे की ओर रसोई और नहानी।

मालवीय भला आदमी था। एकदम सज्जन। रसोई हाथ से बनाते थे। बढ़िया फुलका। घी। बढ़िया सब्जी। अचार। दिन दो दिन बाद मिठाई। ऐसा ठाठ था। कंपनी के वे वेतनदार मुंशी थे। वह मूक चित्रपटों का जमाना था। संवाद ध्वनिमुद्रित नहीं होते थे। वे पड़देपर लिखकर दिखाये जाते थे। उन्हें टाइटल कहते थे। उसके लिए अच्छी काव्यमय भापा लगती थी। मालवीय कवि हृदय थे। उनका लिखा एक भी चित्रपट मैंने नहीं देखा पर उनकी होती चर्चाएँ भरपेट सुनी। चर्चा मुझसे होने का प्रश्न ही नहीं था। वय भी नहीं था और "अकल" वह भी नहीं थी।

मालवीयजी के साथ ही एक सुप्रसिद्ध शैलीकारी हिन्दी लेखक रहा करते थे। उनकी पीकदानी धोकर राष्ट्रभापा हिन्दी की कुछ थोड़ी सेवा करने का मौका मझे मिला। उनका नाथा पांडे य बेचन शर्मा "उग्र"। हिन्दी साहित्य क्षेत्र में बेचन शर्मा अपने 'उग्र' नाम से ही विशेप जाने गये।

उग्रजी लुंगी पहनते थे। सिर पर लंबे बाल थे। दाढी मूँछ साफ थी। विद्वान आदमी। खूप पढ़ा करते थे। मेरे सम्बन्ध में शुरु से ही उनका मन मैला हो गया था।

मालवीयजी मुझे लेकर कमरे पर आये। उग्रजी से मेरा परिचय करवा दिया। कहा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"अच्छा अभिनेता है।"

तुच्छता से उग्रजी बोले "ये अभिनेता। अरे मुखश्रीपर बैठी माखी तक नहीं उड़ा सकता।"

"अजी नहीं, मैंने आपको सुना है। मालिक ने भेजा हैं।"

उदासीनता से उग्रजी बोले "तब रख लो। हमें कोई आपत्ति नहीं।"

उग्रजी मालवीयजी के देश के पूर्व परिचित। चित्रपट क्षेत्र में लेखनी का करतब दिखाने, पैसा कमाने और नाम करने उनका आगमन बंबई हुआ था। मालवीयजी उनका बड़ा आदर करते थे। उन्होंने उग्रजी को रख लिया। उनकी अच्छी व्यवस्था रखने के लिए वे खटपट किया करते थे। कभी उग्रजी अपनी कथाएँ लेकर बाहर जाते और शाम को लौट आते। काम न होने पर कहते "सभी साले भडूए हैं।"

मालवीयजी के यहाँ मुझे कोई खास काम नहीं था। भोर उठकर खोली झाड़ना। फिर जाकर दूध लाना। मालवीयजी दूध की लस्सी बनाते थे। वे दोनो यही लस्सी पिया करते थे। मुझे भी अवशिष्ट मिल ही जाता।

नहाने बाद नीचे जाकर मालवीयजी के कहे अनुसार सब्जी ले आना। दाल बीनकर देना ऐसे सटर-फअर काम होते थे। इसके बीच दोनों की होती तूफानी चर्चा को सुनने का भाग्य मिलता ही था।

मालवीयजी की आवाज मधुर थी। वे उसे कभी चढ़ाते नहीं थे। आवाज चढ़ाने का कार्य उग्रजी की तरफ था। मालवीय प्राचीन परंपरा के अभिमानी। कबीर, तुलसी, मीरा का काव्य उन्हें कंठस्थ था। कुल मिलाकर प्राचीन साहित्यिकों का साहित्य ही श्रेष्ठ साहित्य है और नवीन साहित्यकों में दम नहीं है ऐसा पक्ष मालवीयजी अपने सौम्य शब्दों में दृढ़ता से रखते थे।

उग्रजी उमर से बड़े थे अन्यथा स्वभाव में लड़कही चिरंजीवी थी। नव साहित्याकारों के वे कट्टर समर्थक थे। स्वभाव के चिड़चिड़े थे। छोटी-छोटी बात पर भी रुँठ जाते। फिर कभी-कभी जल्दी मान जाते तो कभी मालवीयजी उनके सामने मिठाई रखकर मनाते। कहते : "लो भाई मिठाई खा लो। है तो प्राचीन परंपरा को लेकर बनाई हुई लेकिन बड़ी अच्छी है। प्राचीन की बुराइयाँ अन्यत्र तो आप कर सकते हैं लेकिन इस विषय में नहीं।"

उग्रजी मिठाई खाते हुए कहते "हमने प्राचीन की निंदा की? कब की बताओ?"

"हाँ निंदा तो नहीं की पर जो कुछ कहा उसे स्तुति भी नहीं कहा जा सकता।"

फिर उग्रजी भड़क उठते। उनमें चलती सारी चर्चा एक तो मुझे समझती नहीं थी। दूसरे वे खड़ी बोली छोड़ आंचलिक बोलियों में बतियाते। इस तरह दुर्बोध विषय और अपरिचित भाषा के कारण मैं बावलासा उनकी केवल मुखमुद्रा ही देखता रहता। जो कुछ फिर भी समझता, उससे यह ज्ञात हो पाता कि हिन्दी के भाषा प्रवाह में जो उथल-पुथल हो रही है उसी को लेकर यह चर्चा है।

चर्चा तो खैर पल्ले पड़ी या न पड़ी पर एक नये विषय का आद्योपान्त ज्ञान अवश्य

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हो गया। वे दोनो ही भांग छाना करते थे। रोज शाम को भांग होती ही थी। उग्रजी का यह शौक रईसी था। मालवीय भी उसे बड़े हौसले से पूरा करते। बढ़िया भांग। गुलाब कली। काली मिर्च। खरबूज के बीज और बादाम। यह सब चीजे घर में भरी रहती। उग्रजी बाहर से आते तब इनमें कम पड़ी कोई न कोई चीज अवश्य ले आते। एक बार भोजन न मिले तो कोई बात नहीं थी पर भांग जरुर छानी जाती थी।

सारा खर्च मालवीय करते। उग्रजी के लिए उनके मन में बड़ा आदर था। एक बार उन्होंने मुझसे कहा: "उनके बाह्य दर्शन से उनके विषय में गलत धारणा कर लेना बड़ी त्रुटि होगी। हिन्दी के इतिहास में उग्रजी को लेकर दो चार पृष्ठ लिखने होंगे। भाई, इनका आदर किया करो।

भांग कभी नहीं ली। परन्तु घोटा-घाटी करनी पड़ती। उसमें कभी गलती हो जाती। मालवीयजी शांति से समझा देते। उग्रजी भड़क जाते थे। एक दिन मालवीयजी को घर आने में देर हुई। रात में भींगने ड़ाले बादाम पीसने का काम उग्रजी ने मुझे करने को कहा। अब बादाम घोटने के पहले छीले जाते हैं यह मुझे क्या मालूम? मैंने जल्दी में वैसे ही घोट ड़ाले। घोटे खूप महीन। बड़े उमंग से उग्रजी को दिखाने ले गया। वे बहुत ही भड़क उठे। कटोरी मेरे हाथ से लेकर मोरी में फेंक दी। इतने में मालवीयजी आ गये। उग्रजी की उग्रता देख उनसे पूछा "क्या भया?"

"केसर के खेत में गधा घुस गया।"

केमरामैन पाटणकर के यहाँ विवाह तय हुआ। घर काम के लिये उन्हें कोई छोकरा चाहिये था। मेरे जैसा छोकरा होते दूसरा खोजने की जरुरत नहीं थी। मालवीयजी भी अपने देस जाना चाहते थे। उन्होंने मुझसे कहा?

"देखो, केमरामैन के यहाँ ब्याह है। उन्हे तुम्हारे जैसे की आवश्यकता है। मैं माह भर बाद लौटूँगा, उसके बाद तुम्हें ले आऊँगा।"

पाटणकर के यहाँ काम ही काम थे। एक मोलकरनी कोंकणी और थी। उसके साथ मैं इतना ही मेरा मूल्य था। चुपचाप जुट गया। एक ही आस थी। कल परसों कभी तो फिल्म में काम मिलेगा ही। और पाटणकर खुश रहेंगे तो यह काम अवश्य होगा।

ब्याह दो दिन पर आ गया। मेहमानों से घर भर गया। मेहमानों के बच्चों के ढेर सारे काम मुझे सौंप गये। एक बच्चा बहुत ही रोता था उसे गोद में लिये चुप करने का काम था। पाटणकर ने एक काम और बतलाया थोड़ी देर बाद करने का।

बच्चे को गोद लिये था। कुछ बच्चे अंताक्षरी लड़ा रहे थे। अंताक्षरी मेरी कमजोरी। मैं वहीं जाकर खड़ा हो गया। अंताक्षरी सुनता रहा अंतिम शब्द आया "हे" इसपर दोनो पक्षों को कवित्व न आता था इसलिये शब्द दिया गया "ए" पर उसपर भी छन्द किसी को याद नहीं आ रहा था।

मेरे लिये यह स्वर्ण अवसर था। गोदी में बच्चा लिए खड़ा मैं बोला - मैं कहूँ 'ए'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पर छंद। दोनों टोलियों ने ऐसे देखा मेरी तरफ जैसे कोई मूरख उनका खेल बिगाड़ने आ गया। अविश्वास भी उनकी नजर में था। फिर भी उन्होंने कहा 'कहो, देखें' और मैंने गोली सा एक छंद दाग दिया।

फिर तो मैं हीरो था। अंताक्षरी में रम गया। फिर 'ए' पर गाड़ी रुकी। बच्चे उत्सुक मेरी तरफ देखने लगे और मैंने फिर गोली सी दागी :

एतान्नहन्तु मिच्छामिघ्नतोऽ पि मधुसूदन

अपि त्रैलोक्य राजस्य हेतोः किं नु महीकृते।

पाटणकर लाल आँखें किये मुझे खोजते हुए इतने में वहाँ आये। कान पकड़ उन्होंने मुझे उठाया-वह तो गोद का बच्चा एक तरफ मैंने बिठा रखा था नहीं तो वह गिर जाता। मेरे कनपटीपर एक झापड़ लगाते हुए वे चिल्लाए "तुझे बताया हुआ काम कौन तेरा बाप करेगा बे? नालायक।"

सारी दुनिया घूम गई मेरी आँखों के सामने से। झापड़ से भी ज्यादा मेरे बाप को दी गाली मुझे बिंध गई। कान छूटते ही मैंने तय किया अब यहाँ नहीं रहना। मेरे बाप को गाली मिले वह घर मेरे लिये त्याज्य। साढ़ियाँ उतरकर सीधे सड़क पर आ गया। पाटणकर पुकारते रहे पर मैं मुड़ा नहीं। खुले आकाश के नीचे फिर आ गया।

दूसरा एक रास्ता था। घर से भागे बहुत से लड़के उसी रास्ते जाया करते थे। वह चोर रास्ता भी नहीं था राजमार्ग था। उस रास्ते पर चलते कई नामवर हुए लड़के मालूम थे। वह रास्ता था नाटक कंपनी का।

रंगमंच का आकर्षण विलक्षण था। दीपों से उजली रातें। वे चेहरों पर लगाये जाते रंग। वे भिन्न-भिन्न पोशाकें। वह अद्‌भुत पौराणिक ऐतिहासिक वातावरण। आवाज चढ़ा या उतारकर कहे जाते संवाद। वह पांत में बैठकर भोजन। शाम को शहर या गांव में ठाठ से घूमना। लोगों द्वारा अंगुली से दिखा-दिखा एक दूसरे को बतलाना ऐसी हर बात बाल मन के लिए मोहमयी थी। पर मेरे साथ एक कठिनाई थी। इस क्षेत्र में पिताजी बहुत परिचित थे। किसी के द्वारा पहचाना जाने का और कान पकड़ घर तक छोड़ आने का ड़र था।

डर होते हुए भी उस आकर्षण से मैं खिंचता जा रहा था। उस समय बालमोहन और ललितकला नामक दो कंपनियाँ बंबई में डेरा डाले हुए थीं यह मुझे ज्ञात था।

नाटक कंपनी मानों एक संस्थान हुआ करती थी। मुख्य पात्र, अन्य पात्र, उनके सम्बन्धी, मित्र ऐरे-गैरे ऐसे कोई सत्तर अस्सी आदमियों का मेला होता था। रास्ताभूला कोई फकीर चार-दो दिन इसके बीच खप जाता था। पूछताछ होती थी पर इसका उसका सम्बन्ध बताने पर धक जाता था।

गिरगांव में किसी स्थानपर ललितकला नाटक कंपनी का मुकाम था ऐसा सुना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

खोजते-खाजते वहाँ जा पहुँचा। बड़ा, खुला सा बंगला था। दीवानखाने में बिछायत बिछी थी। सफेद चद्दर से ढंकी गद्दियाँ लोड, पानदान, धूम्रपान का साहित्य सब कुछ था।

बापूराव पेंढारकर, मामा वरेरकर ऐसे-ऐसे पांच सात नामवर व्यक्तित्व लोडों से टिके बेठे थे। किसी नाट्यप्रसंग या नाट्य विपय पर चर्चा हो रही थी। जोर-जोर से बहस चल रही थी। स्वर ऊँचे नीचे हो रहे थे। बीच में ही किसी बात पर जोर का ठहाका भी लग जाता। दीवानखाना गूँज जाता।

धीरे से दरवाजे तक पहुँचा। इतना मरियल था कि किसी की नजर भी न पड़ी। धीरे-धीरे काफी अंदर तक चला गया। दीवार से सट कर हाथपैर की गठरी बना बैठा रहा। चर्चा बड़ी सुरस चल रही थी। बीच-बीच में होता मजाक। किसी ने टोका नहीं और वहाँसे उठने की इच्छा भी नहीं हुई।

बैठक समाप्त हो गई। सब लोग उठ-उठ चले गये। कोई एक आदमी आया पानदान आदि समेटते हुए बोला

"कौन हो तुम-यहाँ क्यों बैठे हो?"

चर्चा में विदर्भ का जिक्र होता सुना था। उसी समय कांप गया था। नाटक कंपनी सारे देश में घूमने वाली। मैंने नागपूर का नाम बताया और कुछ पहचान निकल आई तो?

"यहीं का हूँ सहज ही बैठा था।" ऐसा कहा और सड़क पर आकर खड़ा हो गया। ये भी समझ में आ गया कि ये तो बड़ा कठिन काम हैं।

मैं लोकमान्य तिलक का भतीजा और भी ऐसे ही अन्य बड़े रिश्तेदार मेरे थे। कहीं बदरी तरु, बदरीचक्र सम्बन्ध निकल आये तो मुश्किल।

बालमोहन की मंडली इससे अधिक अच्छी लगी। ललित कला में सब वयस्क कलाकार थे। वह मंडली पौराणिक नाटक नहीं करती थी। सामाजिक नाटक ही करती थी जिसमें बच्चों के लायक काम होते ही नहीं थे। इसलिये भी मेरे सरीखे बच्चे का मुँह में रंग लगा मंच पर पहुँच पाना कठिन था।

बाल मोहन नाटक कंपनी अभी भी पौराणिक नाटक कर रही थी। उसमें मेरे ही वय के लड़के थे। उन्हीं के भरोसे वह कंपनी चल रही थी। बापू माने, कोरडे, सौदागर, धुमाल आदि लड़के नाम कमाने लगे थे। यहाँ मैं सहज खप सकता था।

दामू अण्णा जोशी उसके मालिक थे। वे उन लड़कों पर बड़ी निगाह रखते थे। रात को अपने पास लेकर ही सोते थे। हारी बीमारी में स्वयं ही उन लड़कों को देखते। एक तरह से यहाँ भी मामला कठिन ही था पर कोशिश करनी ही ऐसा तय किया।

कंपनी के मुकाम पर पहुँचा। दामूअण्णा को मिला। नागपूर का रहनेवाला हूँ। माँ-बाप नहीं हैं। नाटक में काम किया है। आदि सारी बातें बतलायी। यह घर से भागकर आया

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

है यह शायद वे भी जान गये। परन्तु भड़भड़ाकर कुछ कहा सुना नहीं। कहा-"एक दो दिन रह लो फिर बातें करेंगे।"

रह गया।

नाटक कंपनी में नाम कमाने रुप, संगीत, शरीर, अभिनय और अंत में ललाट रेषा सब का साथ चाहिये। मेरे पास इसमें से अधिकतर नहीं था। थी केवल स्मरणशक्ति। परन्तु उसकी जांच करने जोशीजी को फुरसत नहीं थी। वे किसी और चिंता में थे।

रुप मामूली था। शरीर से कृश था। फिर घर से भाग आने के बाद से समय पर भोजन भी दुर्लभ था। संगीत मुझे मामूली आता था। रियाज करता तो शायद कुछ अच्छा सीख लेता पर वह 'शायद' वाला मामला था। देखते ही नजर में भर जाये ऐसा मेरे व्यक्तित्व में कुछ नहीं था।

फिर भी बालमोहन में दो दिन बड़े मजे से कटे। इधर-उधर के उपक्रम देखे एक रात नाटक भी देखा। वह शुक्ल का लिखा "स्वर्ग पर सवारी" था शायद। नाटक के बाद उसके पात्र प्रल्हाद, कयाधू, हिरण्यकश्यपू सबको एक साथ खाना खाते हुए देख बड़ा मजा आया।

उन लड़कों में अपने कुछ होने का अहसास था। वे मुझसे बोले नहीं। बुरा तो लगा पर स्वाभाविक ही था। वे बहुत कुछ थे। मैं कुछ भी नहीं था।

सुबह वे सब देर से उठते। संगीत के रियाज के लिये साज लेकर बैठते। शाम को घूमने जाते। पहरे में। ठीक ही था लड़के भगाये जाने का ड़र जो रहता था।

तीसरे दिन दामूअण्णा ने मुझे बुलाया। पूछा।

"क्यों घर से भाग कर आये हो ना?"

उत्तर में गिरे मेरे आँसू आँखों से।

"अच्छा सच बता कहाँ के हो?"

"नागपूर के"

"पिताजी क्या करते हैं?"

कुछ नहीं बोला। वे बार-बार पूछते रहे। फिर उन्होंने समझाने का प्रयास भी किया। थोड़ा डांटा, डपटा, ड़र भी दिखाया। पर मैंने मुँह खोला ही नहीं। इतने में कोई बुलाने आया। उठते बोले "अच्छा यहीं बैठना। जाना नहीं। मैं अभी आता हूँ।"

आधे घंटे तक बैठा रहा। फिर कुछ सोचा, कोई देख नहीं रहा है। यह देखकर धीरे से खिसक लिया। फिर सड़क पर आ गया।

खटाववाडी में घुसते ही शायद बायीं तरफ दैनिक लोकमान्य छपता था। उसके संपादक थे सावरकर। फिर वे विलायत चले गये और वहीं रहने लगे।

भोर तीन बजे तक शहर संस्करण छप जाता। बाहर गट्ठे के गट्ठे लाकर पटके जो।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गिने जाते। फिर नवाकाळ दैनिक भी इसी तरह आ जाता। भोर चार बजे तक लड़के इकट्ठा होने लगते। कोई अखबार गिनकर लेता और पैसा तुरंत एजेंट के हाथ पर रख चल देता। कोई लड़के एजेंट के अपने रखे हुए होते। अखबार गिनकर बेचने ले जाते। सात बजे तक अनबिके अखबार और पैसे लाकर एजेंट को देते, अपना हिस्सा लेते और चले जाते।

गिरगांव में ये ऐसे होता था। दादर, भायखळा के लिये गट्ठे ट्राम से जाते।

गिरगांव में इसकी उसकी गलियाँ तय थी। ये वो गलियाँ अमुक लड़के की हैं यह तय। उस प्रदेश में कोई दूसरा लड़का न जाये। कभी-कभी कोई नियम भंग भी कर देता। फिर झगडे, मारपीट होती। दादागिरी में जो जितना तैयार वह जीतता।

केवल मराठी अखबार ही नहीं टॅम्साफिंडिया, बॉम्बे क्रानिकल जैसे अंग्रेजी और बंबई समाचार जैसे गुजराती समाचार पत्र भी थे। कुछ लड़के सारे समाचार पत्रे लेकर चलते तो कुछ केवल मातृभाषा की ही सेवा करते।

उस जमाने में समाचार पत्र चुपचाप नहीं बिकते थे। या तो मुख्य समाचार पढ़ने पडते या फिर एजेंट से पूछ लेने पड़ते। विशेष या सन्नाटे की खबर जोर-जोर से सुनाते जाना पडता।

एजेंअ कहता "जा, जा फूट। पढरपूर में हैजे से पांच सौ आदमी मरे।" वही पकड़ कर रखना और वही चिल्ला-चिल्लाकर घूमना जैसे

"लोक मान्य -नवाकाल - एक आना

बोरिवली में भंयकर डकैती, दोन लाख लूटे - एक आना।"

सनसनाटी खबर जो जितनी बढ़िया ढंग से चिल्लाकर कहता उतने अधिक उसके अखबार बिकते। उसी के पास ग्राहक खींचता आता। बड़ा चौकस रहना पड़ता। सारा दो घंटे का तो खेल ही होता। उसी में फुर्ती से दौड़ना जोर-जोर से समाचार सुनाना। ग्राहक पैसे ठीक से देता है या नहीं यह देखना। रास्ते में गायें बैठी रहती, उनको फलांग कर जाना। आदमी तीन-तीन चार-चार मंजिला ऊँचे से बुलाता - "एँ नवाकाल।"

"आ रहा हूँ!" कहकर अंधेरी सीढ़ियों को चढ़कर जाना, फिर उतरना कभी छूटे पैसे नहीं रहते माने एक आना नहीं रहता ग्राहक चार पैसे देता वह खुदरा जेब में बजता। उसे संभालना। और लाल टोपी पहने दूधवाले सड़क पर दिखने लगते-लगते हिसाब मन ही मन लगाते लौटना। एजेंट को पकड़ हिसाब देना। बचे अखबार सौंपना। अपना हिस्सा लेना और फिर दिनभर मटरगश्ती के लिये फुर्सत पा लेना।

इसी लैंन में लग गया। जम गया। खटाववाडी के ही प्रेस में एक खोके पर रात को सोता। भोजर एजेंट की सहायता करता। गट्ठे बाहर लाने में। वह खुश हो जाता। फिर दो घंटे डटकर दौड़ भाग करना। लौटना। अपना हिस्सा लेना। किसी होटल में जाकर गरमा गरम कांदा बटाटा की रसेदार भाजी और पाव चापना। आत्माराम ठंडा हो जाने पर फिर कभी रानी का बाग, कभी चौपाटी, कभी मलबार हिल।

सारा दिन भी घूमते रहने में कोई कठिनाई नहीं होती। पहले तो पैदल घूमने का शौक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दूसरे बंबई में ट्राम वाहन सबसे सस्ता। उसमें भी पैसे न हो तो भी चिंता नहीं। पैसे न हो तो कंडक्टर जिस तरफ टिकट बांअ रहा हो उसके उलटी तरफ से ट्राम मे चढना और वह पास आते ही उतर जाना। फिर दूसरी ट्राम मिलनी ही थी।

याद आता है रानी के बाग के सारे पिंजडे याद हो गये थे। कितने बाघ, कितने शेर, कितने बंदर। मगर के दांत भी मैंने गिन लिये थे। दोपहर किसी पेड़ के नीचे तान देनी। उन पेड़ों पर उनके नाम की पट्टियाँ लगी हुई थी। सारे लेटिन नाम और उसी लिपि में लिखे हुए। इस देश की भाषा लिपि से उन्हें सरोकार ही क्या था?

दोपहर भूक लगती तो सड़क पार के किसी होटल में जाकर मिसळ पाव खाता। दो आने में दिनभर की चैन हो जाती।

कभी-कभी लेकिन मन बेचैन हो उठता। कौन कहाँ का तू। कहाँ जा रहा तू। अनेक बातें मन में उठती। ऐसे में मैं सीधे समुद्रपर चला जाता। ऊँची उठती समुद्र की लहरें और उसके साथ उपर नीचे होते जहाज देख-देख मेरा भटकता मन शांत हो जाता।

और एक दिन एजेंट ने कहा

"ए तुझे मालिक बुला रहे हैं।"

आश्चर्य से पूछा - 'मालिक।'

"हाँ वे छापखाने के संपाद।"

दोपहर दफ्तर में गया। सिपाही ने पूछा - 'कौन चाहिये?'

'संपादकजी ने बुलवाया है।'

'अच्छा। नाम क्या है?' नाम बताया - वह अंदर गया। बाहर आया। बोला 'जाओ अंदर।'

गया, गोरे से, साधारण मोटे से सावरकर मेज के पीछे बैठे थे। मेज पर कागज ही कागज थे। वे कलम से लिखते ही जा रहे थे। मेरे अंदर जाते ही ठहर गये। आँख गडाये मुझे देखते हुए बोले :

"प्रेस में ही रहते हो रात सोने के लिये।"

"हाँ।"

"भोर पत्र बेचते हो।"

"हाँ।"

"कहाँ के हो?"

"नागपूर का हूँ।"

"पिता क्या करते हैं।"

"मुझे माँ-बाप नहीं हैं।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"नाम क्या हैं?"

"आत्माराम।"

फिर आँखे गड़ाये पूछा - 'पिताजी कब नहीं रहे?'

हकलाकर बोला - 'हो गये। दो एक साल।'

एकाएक कठोर होकर बोले - "इधर आ।"

मेरी हालत खराब हो गई। मुझे काठसा मार गया। कठिनाई से उन तक पहुँचा। जाते ही बाँह भींचकर उन्होंने कहा-

"निलूदादा का लड़का है ना तू, भागकर आये हो ना। झूठे। बेशरम। तेरा बाप मरा है अबे गधे। अंबा भाभी के कानपर यह बात गई तो वह तुझे कच्चा चबा जायेगी। सूअर कहीं का।"

उन्होंने सिपाही को बुलाया और कहा "देखो, इसे अच्छी तरह पकड़कर हमारे घर छोड़ आओ। घर में जता देना इसे बाहर नहीं जाने देना। शाम को मैं घर जल्दी पहुँचूगा।"

सिपाही ने कसकर पकड़ रखा था मुझे। वह ढेर सारे सवाल भी पूछ रहा था। उत्तर देने की स्थिती में मैं लेकिन कतई नहीं था।

सावरकर मेरे पिताजी को पहचानते थे। ये मुझे क्या मालूम? अनजाने में शेर की गुफा में जाकर सोया था। अब वह शेर मूँछें फैलाकर मेरे सामने खड़ा था। अब मुझे पक्के बंदोबस्त से घर पहुँचा दिया जायेगा। पिताजी शायद पीटेंगे। शायद न भी पीटे जाना पड़ेगा। जिन सहपाठियों के सामने सीना ठोक स्वराज्य ले आने की बातें की थी वे सब मजाक करेंगे। वह मजाक कैसे सहन होगा।

सावरकर के घर पहुँच गये। उनके यहाँ कोई मेहमान ठहरे हुए थे। उन्हें सौंप और जता कर सिपाही चला गया। शाम सावरकर आये। घर के होने के बाद उन्होंने मुझे बड़े प्यार से प्रश्न पूछे। इसलिये मैंने भी उन्हें सारी बातें साफ-साफ बता दीं।

स्वराज्य के लिये कुछ करना चाहिये यह तेरी बात ठीक है। मैं उसका विरोध कर ही नहीं सकता। लेकिन यदि देख मैंने ही आंदोलन में भाग लिया तो मेरा अखबार बंद हो जायेगा। वैसे ही विद्यार्थी का है। पहिले पढ़ना, कुछ विद्या प्राप्त करने के बाद फिर चाहे जो करना।

"तो फिर महात्मा गांधी ने स्कूल छोड़ने के लिये क्यों कहा?" हंसकर सावरकर बोले "तू मुझे यह बता कि महात्मा गांधी स्वयं बैरिस्टर है या नहीं।"

"हाँ हैं।"

"बैरिस्टर न होकर तुझ समान स्कूल छोड़ राजनीति में वे कूदे होते तो क्या होता? मेरी बात मान, अच्छी तरह पढ सको इसलिये घर लौट जा।" अपने साथ बैठा कर खाना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

खिलाया। रात सारी कथा अपने रिश्तेदार को भी बताई। रात में मैं और वह रिश्तेदार हाल में बाहर सोये। रिश्तेदार ने सावरकर को जता दिया।

"आप चिंता न करो मैं पक्की निगाह रक्खूँगा।"

रिश्तेदार जल्दी सो गये। मुझे नींद कहाँ? फिर भी रात में एक बार वे उठे। उन्होंने मुझे आवाज दी। बत्ती बड़ी कर देखा। मैंने गहरी नींद में होने का अच्छा नाटक किया। वे फिर गहरी नींद में सो गये।

कुछ देर बाद मैं उठा। बिल्ली के पैर से दरवाजे की तरफ गया। अगर वे जग जाते तो कहता - पेशाब के लिये जा रहा हूँ। पर वे भर खर्राटे सोते रहे। दरवाजा खोला, बाहर आया। दरवाजा खींच लिया। गैलरी में सोये अन्य लोगों को फलांगता हुआ मैं सड़क पर आ गया। दूसरी बार मैं घर से भागा था।

मैंने सोचा गिरगांव कोई पूरी बंबई नहीं हैं। उस अपार बंबई में मेरे लिये खास एक जगह अवश्य है। गिरगांव नहीं आना बस्स।

कोंकण खाली हो रहा था। बंबई भर रही थी। जहाज भर-भर के आदमी ला रहे थे। रेलगाडियाँ भी आदमी उंडेल रही थी बंबई में। ये सारी भीड़ बंबई समा रही थी अपने में। इन सब को दाना-पानी और टिकने को जगह बंबई माई दे रही थी।

कीमत चुकानी पड़ती थी। बंबई दाम माँगती थी। वह देने को जो तैयार है उसका बंबई में कुछ कमी नहीं थी। यह महानगर कोई गया प्रयाग नहीं है।

यहाँ अन्नछत्र नहीं थे। सदावर्त नहीं थे। इसलिये मोल देना जरुरी था। कभी-कभी वह शरीर देकर भी देना पड़ता था। केवल औरतों को नहीं पुरुषों को भी।

सब कुछ किया। टिका कहीं नहीं रहा। पूछताछ हुई कि भागा - आगे। पूछताछ जैसे फंदा था जिससे दूर भागना, भागते रहना जरुरी था। हमाली की। औषधि कारखाने में काम किया। मंदिर या पीर की मजार पर बटता अन्न-पैसा लिया। सोने के लिए पूरी बंबई में फूटपाथ हैं। दूकानों के आगे के पटरे हैं। उनके उपर नीचे जैसे मिले सोया पर पुलिस की पकड़ से छूटता रहा। कभी-कभी ग्लानी उभरती। रेल की पटरी पर सोने की इच्छा हो जाती। पर कभी सोया नहीं। बंबई में रहने के सारे तरीके मालूम थे फिर भी बंबई छोड़ी-छोड़नी पड़ी।

कहीं पाव खाते हुए बैठा था। होटल से पकौडी आदि की गंध आ रही थी। जीभ पनियल हो रही थी। सूखे पाव के साथ कुछ और होता. . . सोच रहा था। एक टैक्सी ड्राइवर बड़ी देर से फूटपाथ पर खड़ा था। उसे मुझमें क्या तेज दिखा भगवान जाने उसने आवाज दी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'ऐ छोरे।'

पर मुझे कुछ और ही लगा - मैं बैठा रहा।

फिर उसने आवाज दी। "ऐ लड़के यहाँ आओ।"

स्वर डरावना नहीं था। फिर भी सावधान रहा। उसके पास जाकर भी उसकी पहुँच से दूर ही खड़ा रहा। पारसी था वह आधी उमर का। बाल सफेद होने लगे थे। आँखों पर चष्मा था पूछा -

"क्या खाता हैं?"

"पाव!"

"खाली पाव।"

मैं देखता रहा बस।

"काम करेगा।"

मैंने गरदन हिलाई।

"हर रोज रातको। समझ्या। हमारी गाड़ी धोना। हम तुमकू खाना देगा।"

आगे उसीने पूछा - "सोता कहाँ हैं?"

कोई उत्तर था ही नहीं वैसा ही खड़ा रहा।

"अच्छा रातकू हमारी गाड़ी में सोना - समझ्या।"

दूसरे दिन से शुरु हो गया। करीब आठ बजे रात वह नाके पर आया। तुरंत कूदकर गाड़ी में बैठा। टीन की एक छपरी के पास उसने गाड़ी रोकी। नल दिखाया। बालटी, टिनपाट, कपड़ा लिया। टिनपाट से पहियों पर पानी मारा। उन्हें साफ किया। मडगार्ड धोये। अंदर बाहर गाड़ी चकाचक साफ कर दी। पास में खड़ा वह जो-जो कह रहा था किया। वह खुश। बोला अब क्या करेगा? जा, खा के आ। उस दिन होटल में जाकर भरपेट खाया। बहुत दिनों बाद।

रात गाड़ी की पिछली सीट पर मजे से सोता। सुबह उठकर गाड़ी पर कपड़ा मारा कि दिनभर छुट्टी। चार दिन मजे रहे। आगे क्या? यह पुर्जा मनसे ही निकाल दिया था।

पांचवी रात गाड़ी धोने के बाद वह मेरे साथ होटलपर आया। बड़े आग्रह से खिलाया। भक्ष्य अभक्ष्य सब। कभी जीभ पर रखा नहीं था। पर उसके जोर देने पर खाया। हंसकर उसने पूछा, "शराब पीता है रे?"

मैंने नहीं कहा। अच्छा मत पियो। फिर वह मेरे साथ गाड़ी के पास आया। बोला अब क्या करेगा रे? सोयेगा? इतनी जल्दी। मुझे नींद आने लग गई थी। जमुहाई देते हुए बोला - 'हाँ।'

गाड़ी का पिछला दरवाजा खोल मैं अंदर गया। वह भी आया। मेरे पास ही बैठा। पीठपर हाथ फेरते हुए बोला - "तुम्हें क्या चाहिये? सिनेमा देखा है कभी? मैं तुझे कपड़े लेकर दूँगा।" ऐसा बहुत। अब मुझे नींद सताने लगी तो मैं लेट गया। उसने थोड़ी जगह और कर दी और मैं सो गया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दचक कर उठा। शरीर पहले से ही प्रतिकार कर रहा था। उसने मेरी चड्डी में हाथ ड़ाला था। अनियमित सांस लेता वह बोला - "कुछ नहीं, कुछ नहीं, कल सिनेमा देखने जायेगे।" मैंने जोर से विरोध किया लातें झाड़ी कब्जे में नही आ रहा मैं यह देखकर वह बोला "चोरी करता है रे - पुलिस को सोंप दूँगा।"

बड़े संघर्ष से दरवाजा खोला। बाहर आया। चड्डी के बटन लगाता हुआ भागा बेदम। ऐसा ही सब कुछ। बंबई मुझ से छूटी--मैं उससे।

पुणें। बहुत सुन्दर पुणें। गुलजार पुणें। गृहस्थों के लिये, घरवालों के लिये। मेरे लिये। नहीं। शनिवार वाडा देखा। बाहर से। पर्वती देखी। और भी सब देखा। ये सब देखते पेट की आग शरीर जलाये ही जा रही थी। उसकी तरफ ध्यान नहीं दिया और पहुँचा नये पुल के पास। वहाँ सुन्दर महिला रहती थी। नाम था गंगूबाई। युनाइटेड पिक्चर्स के मालिक वहीं रहते थे। कठिनाई से उनके पास पहुँचा। उन्होंने पूछा :

"क्या हैं?"

"सिनेमा में काम करना हैं।"

थोड़ा मुस्कराकर वे बोले - "कहाँ रहते हो? क्या करते हो? ये कपड़े इतने फटे क्यों हैं?"

कमीज का फटा हिस्सा मुट्ठी में पकड़ नाटक में किये हुए काम बताये। बंबई में कोहिनूर में था यह बढ़ाचढ़ा कर बताया। बड़ी आशा से उनकी तरफ देखा। वे सदय थे, बोले

"सब काम करोगे ना?"

"हाँ, मैंने तत्काल ही कहा।"

"चिट्ठी देता हूँ, वह ले जाओ।"

कांबळे नाम के सज्जन कंपनी में केमरामैने थे उनके नाम से उन्होंने चिट्ठी दी। "एक लड़का भेज रहा हूँ। उसके योग्य काम उसे दें।"

पैसे दिये। कहा : "कपड़े तुम्हारे बिलकुल फट गये हैं। नये खरीद लो और वे पहनकर कंपनी में जाना।"

लहरों पर बैठा जैसा बाजार में गया। कपड़े खरीदे। फिर कंपनी में पहुँचा। कांबळे खोजे उन्हें चिट्ठी दी। मुझे देखते हुए उन्होंने पूछा -

"इसके पहले कहाँ थे?"

ठोक दिया। "कोहिनूर फिल्म कंपनी में।"

"क्या करते थे वहाँ?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

फिर ठोका- "ॲक्टिंग में था।"

"यहाँ किसी भी खाते में काम करना पड़ेगा।"

"करुँगा।"

यूनाइटेड में रहा। कितनी ही बातें सीखी। भली और बुरी। युनाइटेड एक बड़े बंगले में थी। बड़े-बड़े कमरे, चारों ओर दालान सामने बड़ासा गीचा, एक प्रचंड वटवृक्ष। उसके पीछे कमरे-कमरे का एक आऊट हाऊस में। कांबले कुछ मोटे और शांत गृहस्थ थे। उनका एक भाई भी था। दुबला पतला काला वह भी केमरा डिपार्टमेन्ट में था। बड़ा व्रती और नियमशील ऐसा यह आदमी था। नीम की पत्ती रोज चबा-चबा कर खाता था।

उसके सिवाय बबनराव नामक एक पहलवान भी था। तमाश का बड़ा शौकीन। रंगपट के आदमी थे। पोपाक पट के आदमी थे। ऐसे भोजन गृह के करीब पच्चीस सदस्य थे।

हम सब के अन्नदाता थे राजाराम देशपांडे। कंपनी में अधिकतर लोक कोल्हापुर के थे। उसके कारण रसोइया राजाराम रसोई तेज बनाता था। मिर्च, मसाला, तेल सभी कुछ अधिक ही। लाल मिर्च और तेल दाल साग पर तैरता रहता। हर दो चार दिन बाद मांस बनता। उसको बरबट कहते।

मुझे उससे नफरत थी। राजाराम ने लेकिन मुझे वशिष्ठ विश्वामित्र के उदाहरण दे देकर मांस खाना सिखला दिया। धीरे-धीरे मैं उसे स्वाद से खाने लगा। नली भी चूसने लगा।

आदमी अधः पतित होने लगे तो उसके पतन की सीमा, मर्यादा नहीं रहती।

कंपनी में इस समय कोई भी चित्रपट तैयार नहीं हो रहा था। काम ऐसा कुछ भी नहीं था। हमारे उस्ताद बबनराव मेरे गुरु बने। उन्होंने मुझे मछली पकड़ने की कला सिखाई। मछली पकड़ने के प्रारंभ में केंचुवा पकड़ना सीखन पड़ता। जिस जमीन में तरी हो, पानी रहता हो, वहाँ हम कुदाली लेकर जाते। उस्ताद दिखलाते वहाँ कीचड में से ढूँढ खोज दस बीस केचूएँ जमा करते। वह थैली में भरकर हाथ में कांटा लिये दोनो नदीपर जाते। वहाँ एक पेड़ के नीचे बबनराव और दूसरे के नीचे मैं बैठ जाता।

केचूएँ में कांटा छेदना। छेदते वह फडफडाता। केचूवाँ छिद जाने पर कांआ पानी में फेंकना। बेंत पकड़ बैठना। कांटे की डोरी में डेढ़ दो हाथपर मोरपंख का टुकडा बंधा हुआ रहता। जबतक मछली कांटे के पास नहीं आती वह मोरपंखी टुकडा पानी पर तैरता रहता। झटके लगने लगते ही समझ पड़ता कि मछली केंचुएँ को खींच रही हैं। मोरपंखी टुकडा पानी में डूबते ही समझना कि मछली फंस गई। तुरंत बेंत को झटके से उपर करना कांटा जमीन पर लेना। कांटे में मछली फडफडाती रहती उसे कांटे में से निकालना। अधिकतर मुँह फाडकर ही उसे निकालना पडता। ऐसी मछली फिर टोकरी में डाल दूसरी के लिये तैयारी करना।

इस तरह सारी पढ़ाई पूरी हुई। गलती पर गुरु ने माँ-बहन पर से गालियाँ भी दी। बबनराव वैसे भी बड़ा मुँह फट था। अपने पिता का उल्लेख भी वह गाली अंलकार लगाकर ही करता। पर फिर भी आदमी दोस्ती के लिए भला था। उसने मछली पकडने के शास्त्र में मेरा प्रवेश करा दिया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एक बार मेरे कांटे में डेढ़ [illegible] बालिश्त की मछली लगी। उसे पकड़कर मैं बड़ी खुशी बबनराव के पास दिखाने दौड़ते हुए गया-

"देखो कितनी बड़ी मछली"

देखते ही मुँह बनाते हुए बबनराव बोले

"धत् तेरे की।"

मैंने आश्चर्य से पूछा

"क्यों?"

"अरे गंदा है वह। बोहनी पर ही वह हाथ लगे तो फिर एक भी मछली नहीं मिलती गधे।"

हमारी बस्ती नदी के किनारे थी। वहाँ बडे-बडे सांप निकलते। अधिकतर मटीले। लोगों को कोई खास उद्योग नहीं था। सांप निकलने की आवाजी उठते ही सारे के सारे उसके पीछे दौड़ पडते। बिल में घुस जाये तो बिल ही खोद ड़ालते। उसे मार ड़ाले बिना उन्हें चैन न पड़ता।

सांप मारने के बारे में सारे ही ऐसे असुर थे। पर सबसे सिरमोर थे हमारे रसोइया महाराज। दूसरों को लाठी, पत्थर आदि कुछ शस्त्र लगते थे। राजाराम जबरा सर्पशत्रू था बिना शस्त्र ही सांप मारता।

एकबार सांप निकलने की आवाजी उठी। हल्ला सुनते ही राजारामजी दौड़ पडे। वे रोटियाँ बनाने के लिए आटा मांड रहे थे। वैसे ही हाथ लिये दौड़े। सांप नदी की ओर गया। वे उसके पीछे। वह नदी किनारे-किनारे दौड़ने लगा ये उसके पीछे। ऐसा उसका पीछा करते रहे। अंत में उसकी पूँछ पकड़ में आ गई। वह पीछे मुड हमला करे इसके पहले ही उन्होंने उसे हवा में उछाल चक्कर देना शुरु कर दिया और पटक कर मार ड़ाला।

वह सांप पूँछ से पकड़ मैं बहुत देर तक मजदूर आई-माईयों को डराता घूमता रहा।

कंपनी का राजा शिवाजी के बचपनपर एक कथा चित्र था। वामनराव कुलकर्णी नाम के ऊँचे पूरे सुंदर सज्जन कंपनी में मुख्य अभिनेता थे। उन्होंने उसमें शहाजी की भूमिका की थी।

इस कथाचित्र में एक दृश्य और जोड़ा जाना था। स्वयं कंपनी के मालिक पांडुरंग राव तलगिरी कंपनी में उस दिन आनेवाले थे। फिर क्या पूछना? सारे विभागों में बड़ी खलबली मची थी। रंगपट, पोशाखपट दोनों विभागों के ताले उस दिन सुबह ही खुले। मैं कहीं एक विभाग में नहीं था। कुछ काम नहीं था इसलिये इधर उधर तक झांक कर रहा था।

पोषाकपट में मूल्यवान पोषाकें आलमारियों में संभालकर टांग रखी थी। पौराणिक और ऐतिहासिक दोनों। जरीदार। शायद वह असल जरी न हो पर भपका बिलकुल वैसा ही

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

थ। कलाबतू सज्जित मखमल के कोट, टोप, अंगरखे, मुकुट, और फिर पीतल की गदा, वर्ख लगे धनुष बाण, तलवारे, ढालें, पादत्राण और क्या-क्या से पोषाकपट भरा था।

नाटक कंपनी से बचपन से ही परिचय होने से यहाँ मेरे लिये नया ऐसा कुछ नहीं था। पर जो था वह अधिक भव्य था। पास में एक विभाग था आभूषणों का। मोतियों की मालाएँ, कंठे, बाहुबंधन, अंगूठियाँ, सिरपेच और क्या-क्या की भीड़ वहाँ थी।

वामनराव कुलकर्णी शहाजी बने थे। एक छोटा लड़का शिवाजी बना था। हम जैसे चार दो उसके साथी मावले बने थे। शिवाजी के बचपन के साथी के रुप में मुझे भी रंग लगाया जायेगा ऐसी बड़ी आस पैदा हुई पर कैमरामैन कांबले बोले, "ए! क्या कर रहा हैं वहाँ? चल इधर आ। वह पन्नी लगा तख्ता उठा। बताता हूँ वहाँ खड़ा रह और शहाजी के मुँह पर लाईट मार।"

इतना सा मुँह रह गया मेरा। तख्ता उठाया। बाग का दृश्य लिया जाने वाला था। जहाँ-जहाँ शहाजीराजे जाते, घूमते वहाँ-वहाँ उनके चेहरे पर प्रकाश पडे ऐसे कोण से तख्ता नचाता घूमता रहा। चार छह बार प्रैक्टीस हुई फिर टेक हुआ।

फिर बाल शिवाजी का क्लोजअप लिया जाना था। मेरा भाग्य इतना ही कि उस कथाचित्र का वह बाल शिवाजी मेरे द्वारा उसके मुँह पर प्रकाश ड़ालने से चमका। अब यह बात अलग कि इसके लिये भी मुझे केमरामेन की गालियाँ खानी पड़ी। पर इतनी बड़ी सफलता के लिये ऐसा थोड़ा मूल्य तो देना ही पड़ता हैं।

इस दिन मेरी पदोन्नति हुई। लेबोरेटरी इनचार्ज कंजी आँखें वाले के अधीन मुझे किया गया। निगेटिव से उतारी हुई पाजिटिव प्रिंट रसायनों में धोने के बाद उसे सुखाया जाता है। इसके लिए बड़े ड्रूम होते थे। जो लकड़ी के बने घोडों पर जड़े रहते। उसमें लगा हत्ता पकड़कर ड्रूम घूमाया जाता। घंटो यही फिल्म सुखाने का काम करना पड़ता। कंजी आँखों वाला रसायनों के सम्बन्ध में मुझे बताता रहता, एक दिन बोला। असली मजा तो डार्करुम में है। और एक दिन उत्सुकतावश मैं उसके साथ डार्करुम में गया। उसने दरवाजा बंद किया। मेरे कंधेपर हाथ रखकर एक-एक चीज मुझे दिखाने लगा। एक जगह डिश में रखे किसी रसायन की खूशबू सूँघने के लिये मुझे कहा। मैंने उसे सूँघा उसने बत्ती बुझा दी। एक छोटी लाल बत्ती थी उसी के प्रकाश में उसने मुझे अपनी ओर खींचा-भींचा और अपनी भूख मिटा लेने के बाद ही छोड़ा। बंबई का वह पारसी ड्राइवर जो कर नहीं पाया था वह इसने किया। दरवाजा धड़ाम से खोलता बाहर भागा। दिनभर रोता रहा। मर जाने की बहुत इच्छा होती रही, पर मरा नहीं।

उस कंजी आँखों वाले से मेरा बैर हो गया। वह मुझ जैसे दुर्बल अनाथ का बैर।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

उससे उसको हानि कोई नहीं। इतना ही हुआ कि लेबोरेटरी से मैं अलग हो गया। कंपनी में नये से आये एक अभिनेता का काम मुझे मिला। कमरा झाड़ना, कपड़े संवारना ऐसे सारे काम उसके करने होते। वह अभिनेता भी बड़ा नियमशील था। आसन आदि करता था। फिर भी उसमें एक दोप था अपने पैसे वह यूँ ही खुले छोड़ देता था।

बाहर एक रेवडीवाले की दुकान थी। गुड की अच्छी रेवडियाँ वह बनाता था। रेवड़ी मुझे बहुत प्रिय थी। अभिनेता के ढ़ीलेपन से रेवड़ीवाले को रोज दो पैसे का ग्राहक मिल गया।

अभिनेता के ध्यान में यह बात आ ही गई। रोज दो पेसे कम होना उसने भांप लिया। एक दिन उसने मुझ पर नजर रखी और चोर पकड़ा गया। मुझ पर कालिख पुत गई। उसने पीटा नहीं, भला बुरा नहीं कहा। केवल पूछा- "रोज लेते हो पैसे?"

नीचे मुंडी कर "हाँ" कहा।

"क्यों लेते हो?"

कोई उत्तर नहीं।

"केवल दो पैसे ही क्यों लेते हो?"

कोई जबाब नहीं।

"तब ठीक अबसे मेरे कमरे में आने की जरुरत नहीं। समझे? जाओ।" उसने कहा।

कालिमा मंडित चेहरा लिये मैं बाहर आ गया। एकदम यूनाइटेड सिंडीकेट के बाहर। कभी न लौटने के लिये।

दूसरी सिनेमा कंपनी थी आर्यन। उसके दरवाजे पहुँचा। दरवाजे पर कडा पहरा। बहुत सा झूठ बोला, बहुतसी बिनति की। अंदर बड़ी सी जगह में सेट खड़ा किया हुआ था। कोई दीवानखाने का। लाइट ब्याय हाथ में पत्री लगे तख्ते लिये खड़े थे। पात्रों के चेहरे पर प्रकाश ड़ाल रहे थे। उन्हींमे मिल गया। इसको लगा उसका यार है उसको लगा उसका दोस्त है। एक थका हुआ लगा। उसके हाथ से तख्ता जैसे छीन ही लिया। वह तम्बाकू खाने चला गया। जमाना पुराना था। पात्र पात्री के नखरे नहीं होते थे। दिग्दर्शक मानों रिंग मास्टर हो ऐसी स्थिती थी। एक-एक दृश्य दस बीस बार दोहरा लिये जाते। पात्रों के लिये दिग्दर्शक की मुँह से धुनाई जैसे चालू। फिर लाइट ब्याय किस झाड़ की पत्ती। उस एक दिन में केमरामैन और मुकादम की भरपेट गालियाँ खाई।

दिग्दर्शक सरपोतदार नाम के थे। ठिगने फैले हुए। दृश्य लेने के पहले विस्तार से समझाते थे। समझ में न आने पर डांअ कर समझाते। बीच में चाय आई। मैं तो लेता हीं नहीं था। कसम थी मेरी। लगा मेरे चाय न लेने के कारण मेरी तरफ किसी का विशेष ध्यान जायेगा पर बेकार। दिन भर चित्रण होता रहा। शाम को दिग्दर्शक महोदय के सामने जा खड़ा हुआ। उन्होंने जैसे किसी दूसरे को पूछा -

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"क्यों क्या कह रहा हैं?"

शायद उन्हें लगा हो कंपनी का कोई लाइट ब्याय कोई शिकायत लेकर आया है। लेकिन जब उन्होंने सब सुना, बीच-बीच में पूछते-पूछते, तब बोले

"वाह तेरा तो एक उपन्यास है। अच्छा तेरा घर कहाँ हैं?"

अनचाहा प्रश्न। मैं चुप। वे पूछते रहे। इधर-उधर से घुमा कर। डांट डपट कर भी। फिर भी होठों की पकड़ न छूटी। आखिर उन्होंने कहा - "भाग आया हुआ दिखता है।" और फिर वे दरबानपर चिल्लाये

"क्यों इसे अंदर कैसे छोड़ा गया? किसने छोड़ा?"

मुंडी नीचे कर मैं बाहर आ गया गेट के। पैर खींचते हुए चल दिया।

किसी ने कहा सिनेमा में काम करती एक महिला है - विठाबाइ पवार। बड़ी दयालू। कहीं काम दिलवा देंगी। उनकी पहचान से कहीं बात बन जायेगी। घर खोजते-खोजते दरवाजे पर पहुँचा। दूसरी मंजिल पर वे रहती थी। एक कमरा बंद था। दूसरा रसोई घर था। कौन बुढ़िया खड़बड़ कर रही थी वहाँ। उसने मुझे देखा और पूछा

"कौन चाहिये, क्या है?"

"बाईसाहेब से काम है।"

"अरे भाग उनके पास समय नहीं है।"

"मैं ठहरता हूँ।"

"कह रही हूँ वह कर। भाग। चल जा यहाँ से।"

नहीं हटा। उतना बेशरम तो हो ही गया था। बुढ़िया चिल्लाने लगी। बंद कमरे से आवाज आने लगी।

"कौन है रे?"

"अरे कोई छोरा है जाता नहीं है यहाँ से।"

दरवाजा थोड़ा खुला। एक रुपसी उसमें से दिखी। सीधी नाक। छोटे पर तेज युक्त नेत्र। बोली -

"क्या काम है?"

मैं देखता ही रहा। बात सूझी ही नहीं। बुढ़िया बरस पड़ी। "काम है। कहता है।"

रुपसी ने पूछा "क्या काम है?"

हिम्मत बांध कहा - "मुझे कुछ भी काम चाहिये?"

"कपड़े धो लेते हो?"

"हाँ।"

बुढ़िया की ओर मुड़ते हुए वह बोली - "इससे साड़ी धुलवा लो और भोजन करा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दो।" अधखुला द्वार बंद हो गया। बड़े उत्साह से मोरी में गया। साबन में भिगोयी साड़ी थी बाल्टी में। निकाली फटकी। बालटी में दो तीन पानी में खंगारी-निचोड़ी। बुढ़िया से पूछा - 'सूखाने कहाँ ड़ालूँ?'

उसने जगह बताई। चारों कोने मिलाकर झटकार कर सुखाने फैला दी। रसोई के पास जाकर खड़ा हो गया। बुढ़िया ने एक परोसी थाली हाथमें दी। नीचे रखे उसे भरपेट खाया। हाथ धोये वहीं खड़ा हो गया। बुढ़िया ने पूछा -

"अब क्यों खड़ा है रे?"

"बाई!"

"बाई फाई कुछ नहीं। तू जा निकल यहाँ से। बुढ़िया ने मुझे धकेल बाहर किया। दरवाजा बंद कर लिया।

आसमान चिंदी-चिंदी फट गया था।

पहला सवाल था रोटी का छप्पर का। वह जहाँ मिला वहीं रहना था। एक मोटर ड्राइवर मिला। उसने रख लिया। उसके कुत्ते के लिए रोज कसाई खाने से बकरे की आतें लानी थी।

ड्राइवर जिस बस्ती में रहता था वह सारी बैणवों की बस्ती नहीं थी। चार दो आदमियों के पास रहकर आई एक महिला बगल में ही थी। उसका जिया जिसपर आजकल जड़ा था वह अखाड़े बाज उस्ताद था। लाठी, तलवार, पट्टा, फरीदगदा, सब चलाने में उस्ताद। काला स्याह। आधी उमर का। चार छह दिन बाद आता था। दो एक दिन रहता था।

बगलवाली दो को संभाले थी। प्रेसवाला रातपाली में जाता था तो ऊदबत्ती वाला दिन ढले थका आता था। ऐसी वे सारी सीता सावित्री रसोई बहुत बढ़िया बनाती थी। इसका उसका छोटा बड़ा काम करता ही था। मेरे लिये खास थोड़ा कटोरे में रख देना वे भूलती नहीं थी।

उस बस्ती में ऐसा सारा आनंद था। ड्राइवर की घरवाली भी ब्याहता नहीं थी। कभी-कभी लेकिन कोई ऐसा काम पड़ जाता कि छठी का दूध याद आ जाता।

उस जमाने में शदी ब्याह चार-चार छह-छह दिन चलते थे। बारातें बड़े ही ठाट से निकलती थी। किरासिन की गॅस बत्ती लेकर मजदूर दोनों बाजू चलते।

ऐसी बारातों के मौसम में अखाड़ेबाज उस्ताद को फुरसत नहीं रहती थी। कलाकार होने के कारण उसे बुलावे बहुत आते थे। बारात के सामने गैसबत्ती के प्रकाश में वह तलवार, लाठी, पट्टे के वे हाथ दिखाता था कि लोग विस्मित हो जाते थे।

एक बड़ी आसामी के यहाँ शादी में उस्ताद को बुलावा आया। अच्छी कमाई होनी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

थी। वादा था ऐसी कलाकारी दिखलाऊँगा जो हजारों बारातों में भी नहीं होती। ऐन बारात के समय उस्ताद के आदमी आये ही नहीं। उसने बस्ती के लोगों को तैयार किया। उन लोगों को तो केवल हथियार लेकर आड़े-तिरछे घुमाते हुए साथ चलना था। आखिर में मुझे भी उसने चलने कहा-

"सुना रे, हमारे साथ चलने का। च्यलेगा की?"

बारात के साथ जाना मना करने का काम ही क्या?

"झ्याक कपड़े पहनकू बाराती के साथ च्यलने का। हात में लाठी बोथटी लेकू। कपड़े मैं देता हूँ रे।"

कपड़े मिलेंगे यह सुनकर खुशी हुई। तैयार हो गया। परंतु आगे जो धर्म संकट सामने आया उसे सुनकर ही पसीने में नहा गया। उस्ताद ने पास लेकर कहा -

"हाउर देखरे। निस्ता लाठी बोथाटी लेकू चालना हुवा नई? कि फिर मुजे जब-जब जो-जो चीज लगेग्यी सो देने की, हाँ का?"

"हाँ।"

"शाबास मरद का लड़का है रे। निसता शेर है। फिर क्या करने का कि रास्ते में बीचोबीच बैठन्ये का। डोस्केपर येक चुंबल, उसपर नारल, हाउर फिर मैं लाठी घुमाता हुआ आऊँगा हाउर तेरे सरपर नारल फोडूँगा।"

सुनते ही गश आ गया। माने मैं बची रास्ते सिर पर इंडुरी रख उपर नारियल रख बैठूँगा ओर उस्ताद आकर उस नारियल को लाठी मारकर फोड़ेंगे। नारियल फांक-फांक हो जायेगा। परन्तु कहीं मेरे ही सिर पर लाठी लगी और वह खिल गया तो?

मैं बोला "नहीं बाबा, नहीं, मैं नहीं बैठूँगा।"

फिर चालू हुई समझाइश। कितनी ही बार कितने ही लोगोंसे। खिलाने पिलाने वाली सबसे आगे। सब कहने लगे तुम्हें कुछ नहीं करना है। तुम्हीं तो केवल बैठना है। उस्तादी यही तो है कि एक चोट में उस्ताद नारियल फोड़ देते हैं। तुम्हें तो मालूम भी नहीं होगा। चुपचाप बैठे रहना फिर नारियल खाना।

मैं लेकिन अड़ गया। ड्राइव्हर मेरा मालिक आया, बोला "सुनता है कि नहीं।" मैंने मुंडी ना में हिलायी ही थी कि उसकी झांपड़ पड़ी।

"उल्लूके पट्ठे। ठैर तेरे को अभी पुलिस के हवाले करता हूँ, इसने मेरे घर चोरी की।" उसे मालूम था पुलिस मेरा दुर्बल पक्ष है। पुलिस को सौंपने की धौंस देकर ही उसने मुझे अपने यहाँ रखा था।

राजी हुआ। उस्ताद के साथ बस्ती वाले। सबके हाथ में कुछ-न-कुछ शस्त्र। मैं जैसे सबके बीच - बकरा कटनेवाला। नई चड्डी कमीज पहने हुए। मेरे हाथ में एक थैला। उसमें इंडूरी और नारियल। हम सब के आगे हमारे उस्ताद। नंगे बदन - नीचे जरीदार तंग पजामा पहने।

दोनों ओर से प्रेट्रोमैक्स। आगे चलता शानदार बैंड। उस जमाने में बैन्डवाले सब

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

मुसलमान ही होत थे। बैन्ड मास्टर क्लिआरोनेट पर बहुत नजाकत से रागदारी बजा रहा था। उसे सुनते को तोबा भीड़।

बैन्ड के पीछे हमारा अखाड़ा। नये रंगरुट, आड़े-तिरछे हथियार चलाते हुए। भैंस पूँद से मक्खी उड़ाये जैसा। उस्ताद लेकिन उस्ताद। कलाकार। हथियार उसके शरीर से सटकर घमघमाता। पास के लोग घुमकार सुन दूर हटते। वाह! वाह! करते। बारात आगे बढ़ी उस्ताद मेरे पास आया। कंधे पर हाथ रखता बोला - "डरना नहीं बेटे। अरे तू तो भौत अच्छा दिखता है रे। कपड़ो में। अब चौक आयेगा न व्हाँ नारियल का खेल खेलेंगे।"

बार-बार सोचता बारात की भीड़ में से निकल भागूँ। चारो ओर दिखता। अंदाज लेता। पर वो ड्रायव्हर, मेरा मालिक मुझपर आँख गड़ाये ही दिखता। चौक आया। खूप जोर से रोने को जी चाहा। हाथ पाँव में कंपकंपी होने लगी। दिल में धड़कन बढ़ी। आँखों के सामने अंधियारा हो गया। फिर समझाया। हजारो की भीड़ के सामने मरना क्या बुरा? कहीं भी भूखा, प्यासा, नंगा मरने से लाख गुना अच्छा। क्यों डरता हैं। मरना बदा है लाठी से तो होगा और नहीं तो......।

उस्ताद आया। चौक के बीचों बीच मुझे उसने बिठाया प्यार किया। फिर थैले में से इंडूरी निकाल उसपर नारियल जमकर बैठाया। फिर धीरज दिया। "कुछ नहीं होगा बेटे बिलकुल कुछ नहीं।" दूर जाकर अपनी भारी लाठी घमघमाके घुमाने लगा। अद्‌भुत देखने चौक में आदमी पर आदमी चढ़ा था। वाहन रुक गये थे। बैन्ड बंद हो गया था। शान से बग्घी में बैठे वर वधू की ओर किसी का भी ध्यान नहीं था। ऊँची छतों और बारजो से लोग मेरी ओर ही देख रहे थे। शायद सांस रोककर।

आँखें मजबूती से बंद की थी मैंने। पत्थर हो गया था मैं। सीने की धडकन और लाठी की पास-पास आती घुम्म-धुम्म के सिवाय कुछ भी सुनाई नहीं दे रहा था।..... कि एकाकए सिरपर तड़ाक आवाज उठी। सिरपर कोई हल्का घूसा मारे इतना लगा। और उठा लोगों का जोर का शोर और बड़ा होता, हो रहा था। नारियल के कवच गिर गये थे। पानी मेरे सिर से बह रहा था।

उस्ताद ने दोनों हाथ में लेकर उपर उठाया। चूम लिया। सीने से चिपकाये वह घूमने लगा। उस्ताद कहने लगा इस लड़के का दिल मुसलमान का है डरपोक हिन्दू का नहीं। उस दिन से मैं बस्ती का शेर था।

उस शेर को लेकिन कुत्ते ने काटा। उस कुत्ते ने जिसकी वह गंदी से गंदी सेवा भी कर रहा था। ड्राइव्हर के घरपर तो मैं उस कुत्ते की औलाद का कुछ बिगाड़ नहीं सकता था। पर शाम को उसे घुमाने तो मुझे ही ले जाना था। मैंने उस साले को दूर ले जाकर खूब पीटा। ड्राइव्हर को मालूम हो ही गया। उसने पुलिस में देने की धौंस दी। फिर पीटा भी। मुझे पिटता देखत अगल-बगल की माँ बहनें चिल्लाने लगी "कैसा देखो माटी मिलेका मारना। अयाई। छोकरे का माँ बाप नई। यतीम है तो क्या इतना मारना।" पास में एक टाल थी लकड़ी की। एक मुसलमान की। उतरती उमर का आदमी। बीबी मुझपर मेहरबान। बच्चा नहीं था। खसम से बोली। "बत्ते बच्चेकू अपने ह्या लाव नं। पालेंगे-पोसेंगे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बड़ा करेंगे।" और मेरी बदली हो गई। टाल पर लकड़ी तौलने का काम करना शुरु हो गया।

अखाड़ेवाला उस्ताद और टालवाला मियाँ दोस्त थे। उनकी क्या बातचीत हुई नहीं मालूम। टालवाला अढ़िया बढ़िया खिलाने लगा।

नागपूर में रहते पिताजी के साथ नवाब के यहाँ जाया करता था। मुसलीम खान-पान का परिचय था। वहाँ थोड़ा बहुत खाया भी था। पर मसालों की खुशबू से ज्यादा परिचित था। अब यहाँ तो चरने लगा। कबाब, पुलाव, बिर्यानी, अकाल पीड़ित कुत्ता जैसे। जो खिलाया वह खाया।

टालवाली ने चड्डी कुर्ता बनवाया, नया। वह पहन शान से ड्राइव्हर के घर पर हो आया वह बोला - "घी देखा, लेकिन बड़गा नहीं देखा।"

पुणें के दक्षिण पूर्व में गारपीर नामक स्थान है। पेशवाकाल में इस गारपीर मैदान में कितनी ही बार फौजों की छावनियाँ लगती थीं। पीर का स्थान पहाड़ी पर है। छोटा सा मकान अंदर कब्र। बाहर पत्थर का कोट। मुसलमानी रिवाज के अनुसार सब कली से पुता सफेद।

टालवाले ने कहा-"सुना रे आज अपने कु गारपीरकु जाना है। पहाड़ी पर पिरसाब हैं। वहाँ जायेंगे। खायेंगे। पियेंगे। मज्या करेंगे। शामकू वापस आयेंगे। भला क्या?"

टालवाले की एक बहन पास रहती थी। वह। उसके खचियाभर लौंडे-लौंडिया। टालवाला। उसकी बीबी। इन सबके लिये बढ़िया घी का परातभर पुलाव बनवा लिया गया। इलायची, लौंग, मसाला की खूशबू ही खूशबू। वह परात दूसरा कौन ले जाता? नई चड्डी शर्ट पहना मैं ठाठ से सिर पर परात लिये सबसे आगे। पीछे कबिले के साथ टालवाला। पसीना-पसीना हो गया। पर टालवाला इतना मिट्ठा बोल रहा था कि कुछ कह नहीं सकता था।

गारपीर चढ़कर गया। वहाँ गाड़े हुए मटकों का भरपेट पानी पिया। टालवाले ने कहा-

"शाब्बास वारे शेरु। अब भाईर जाकर खेलो। थोड़ी देर से काजी साब आयेंगे। तब थोड़ा ये वो करना होगा। फिर पुलाव खायेंगे।

'हाँ।'

इस क्षण मैं थोड़ा सजग हुआ। डरते पूछा-

"काजी साब आयेंगे? पुलाव खाने कू?"

"हाँ रे। तभी थोड़ा कलमा पढ़ लेना। बस सुंता कर लेंगे। ज्यादा दुखता नई रे। थोड़ा उस्तरा चलाते हैं चमडी पर। बस हुआ। समझा क्या?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ब्रह्मांड घूम गया। भागना चाहिये। भागना ही चाहिये नहीं तो दुनिया डूबी। लुटिया डूबी।

मन ही मन लाख गाली अपने को दे ली। अरे तू कौन? किसका लड़का कुल गोत्र क्या? लोकमान्य तिलक का तू नातेदार। भूख के बेबस तू यहाँ तक आया। छी! छी!

टालवाले के बहन के छोरे के साथ मैं कोट के बाहर आया। नीम की निंबोरी से खेलने लगा दिखावे के लिये। आत्मा तडप रहा - खोजता रहा कौन होगा सहायक?

टालवाला बेफिकीर था। मछली जाल में फंस चुकी है यह जान वह बीबी के पास अंदर गया। यह देखा। यह भी देखा एक दूधवाला साइकल जोर से दौड़ता ले जा रहा है। पहाड़ी के नीचे की सड़क से। पहाड़ी से कोई पत्थर टूटकर गिरे वैसा मैं टूटा उस साइकल वाले पर। पीछे किसी ने आवाज दी "भाग्या रे।"

दूधवाले को पकड़ा। चिल्लाया "पैरों पड़ता हूँ। मुझे बचाओ। मुझे मुसलमान बना रहे हैं।" उसने देखा पीछे से एक दाढीवाला मुसलमान हाँफता आ रहा है।

"डरो मत - आ जा - आगे डबलशीट।"

और उसने पूरे जोर से पैडल मारा। मैं आगे रोता व हाँफता। पीछे सारी ताकत से साइकल चलाता। रविवार पेठ में अखाड़े के पास आकर उसने गाड़ी रोकी। मुहल्ला काची लोगों का। अखाड़े के चबूतरे पर दो पहलवान बैठे हुए।

काची जमात दिलदार लोगों की मुस्तंड। काची जवान अखाड़े की मिट्टी में, कमाऊ फलों के व्यौपार में और बूढे सत्संग में। तुलसी माला लिये।

चबुतरे पर बैठे पट्ठे में से एक कबरु गोराचिट्टा तैयार। आगे जाकर यह पुणें नगर निगम का मेंबर बना। काची घर और इधर-उधर दखनी हिन्दी बोलते हैं। कमरु नीचे उतरा उसने पूछा

"क्या कह्या रे?"

"ये लड़का गारपीर से लाया-वहाँ खान लोग इसे मुसलमान बनाते हते।"

मैं तो रो ही रहा था। कमरु ने पूछा "क्या सच्ची रे?"

मैंने मुंडी हिलाई। सहारा मिलते ही फूट फूट रोने लगा। मुँह से शब्द नहीं निकले। मैं बोल नहीं पा रहा हूँ यह दूसरे पट्ठे ने पहचाना। उसने कहा: "बाद में पूछेंगे।-घरकू लिजा।"

कमरु मुझे हाथ पकड़ घर ले गया। घर में ऊँची पूरी उसकी माँ थी। और भी कई औरते मुझे देखने जाम हो गई। सभी पूछने लगीं। मैं चुप ही रहा।

एक औरत बोली-"माटीमिला बोलताच नई।"

कमरु की माँ ने कहा-"री फूफा चार घूँसे जमाकर पूछ तब बोलेगा।" मैं डर गया। पर कमरु की माँ मुझे घर के अंदर ले गई। खाना खिलाया और धीरे-धीरे मुझ से बहुत कुछ पूछा। मैने गाँव और नाम छोड़ सब बताया। यह सुनने के बाद कमरु की माँ ने कमरु को बुला कर कहा: "रे कमरु कल जाकू उस मुडदेकू चार बाता सुनाके आ तो?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कमरु ने वैसा ही किया।

पुणें में उस समय तक बहुत अखाड़े थे। हर एक अखाड़े का एक उस्ताद रहता था। रात को सारे पट्ठे उसके नजर के सामने सोते थे। कोई भी टेढ़ा चलता तो उस्ताद झांपड मारने से ने चूकता था। दिन भर में क्या खाया क्या पिया इसका भी पूरा हिसाब उस्ताद को देना पड़ता था। सभी अखाड़े में ही रहते थे। अखाडा ही उनका घर होता। स्नान और भोजन के लिये वे परिवार में जाते थे।

अखाड़े के हौज की मिट्टी विशेषकर तैयार की जाती। अच्छी लाल मिट्टी जंगल से खोज लाई जाती। गाते बजाते बैलगाड़ियाँ जाती और मिट्टीभर वैसे ही गाते बजाते लौटती। मिट्टी में एक भी कंकड न हो और वह मुलायम हो इसका ख्याल रखा जाता। हौज में घुटने ऊँचाई तक उसे भर देते। फिर उसमें मट्ठा-अंडी का तेल मिलाया जाता। कहीं कहीं कपूर भी मिलाते हैं। रोजही उसपर कुस्तियाँ होते रहने से वह और भी तैयार होती जाती हैं। भोर डंड बैठक लगाने के बाद पट्ठे फावडे से सारा हौज गोड़ ड़ालते।

ऐसे गोडे हुए हौज में फिर मुख्य पट्ठा उतरता। उसके साथ दो चार ऐरे गैरे। ये ऐरे गैर या तो कुस्ती छोड़ चुके पट्ठे होते या फिर नौसिखिया होते। दो तीन घंटे तक फिर फिर जोर आजमाइश होती रहती। पट्ठे। का दम बढ़ाने के लिये यह जरुरी माना जाता। हौज किनारे पर उस्ताद बैठे रहते। उनके निरीक्षण में ये जोर आजमाइश होती रहती। उस्ताद किसी को दांव सिखाते तो किसी दूसरे को उलट दांव। मुँह से समझाकर भी न समझता तो गालियाँ पड़ती या फिर उस्ताद स्वयं ही हौज में कूद पडते। पट्ठे से भिड़ जाते। इस तरह पट्ठे को तैयार करने का काम दस साढ़े दस तक चलता रहता।

इतनी देर में दूध की कलसियाँ आ जाती। हर पहलवान के यहाँ भैंस जरुरी रहती। फेनदार ताजा दूध आता। पहलवान कलसी में मुँह लगाता तो उसे खाली कर के ही नीचे रखता। चाय बिस्कुट का जमाना नहीं था। दूध चाहे जितना पियो।

दोपहर के भोजन में घी भी मक्खन की मात्रा अधिक रहती। अखाड़ा दोपहर घंटे दो घंटे शांत रहता। तीसरे पहर से फिर चहल पहल शुरु हो जाती वह ठेट रात दस बजे तक। शाम को अखाड़े की देवता हनुमान या पीर के आगे धूपबत्तियाँ जलाई जाती। परशाद चढ़ता।

काची अखाड़े का दिनक्रम भी इस तरह का रहता। मैं कमरु के यहाँ दोनो वक्त भोजन करता। बाकी सारा समय अखाड़े में ही रहता। दूसरों का देख मैं भी डंड बैठक लगा लेता पाँच आठ। हौज खाली रहता तो किसी दूसरे के साथ उतर जाता लगोट बंद होकर। कला जंग टांग, धोबीपछाड् ऐसे कुछ दांवपेच मैं भी पहचानने लग गया। पर गजस्तत्र न हन्यते।

मैं जनम से मरीयल। डंड बैठक मेरा विषय नहीं, क्षेत्र नही, मन में रस भी नहीं इसमें। मैं अखाड़े के पहलवानों को गाना गाकर सुना सकता था वह मैं सुना देता। वे खुश रहते। पर मैं बेचैन था।

आगे क्या यह प्रश्न मुझे बेचैन किये था। मुझे पहलवान होना नहीं था फल बेचना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नहीं था। मुझ में जो गुण हैं वह क्षेत्र मुझे चाहिये था। अखाड़ा मेरे लिये नहीं था। खाने-पीने की मंजा थी। कोई रोकता टोकता नहीं था। फिर भी यह पौधा यहाँ लगने वाला नहीं था। प्रभात फिल्म कंपनी का नाम सुना था। पर वह कोल्हापूर में थी। वह कितना दूर यह मालूम नहीं। फिर एक दिन गोदावरी सिने टोन का नाम सुना। वह नासिक में थी इसलिये तय किया चलो 'ना सि क।'

एक दिन उठा और गाड़ी में बैठ गया। कल्याण छोड़ वह नासिक की ओर बढ़ रही थी।

नासिक बड़ा ही उदार नगर।

भूखे कंगालो को भोजन कराते कितने ही छत्र यहाँ थे। ढ़ेर सारी धर्मशालाओं में भी बहुत सारा नित्य ही बाटा जाता। अनगिनत याचक कुछ भी न करते दूसरों के दानभाव पर जी रहे थे। कितने ही अनाथ और आसमां की छतवालों की यह नासिक भरणपोषण कर रहा था।

पर मुझे ऐसा किसी की भीख पर जीना नहीं था। हाथ पैरों से था काम चाहिये था पेट भरने। पर वह मिलना बिना ये पूछे कि तू कौन कहाँ का? कठिन था।

बडों-बडों की नहीं रहती मेरी यह टेक कैसे निभती। पेट की ज्वाला जो न कराये। अन्नछत्रों में जाता। पंगत जिमती वहाँ आशा से खड़ा रहता। निरुपाय भीख भी मांगता। दिन में फिर भी शरम लगती इसलिये रात में मांगता। आवाज देकर। खाने बैठता तो लगता उलट जायेगा। सब खाया पीया पर ऐसा नहीं हुआ।

कपड़े तार-तार हो गये। न गिने दिनों से नहाया नहीं। जुएँ हो गई थी ढेरों। ऐसा एक दिन मोटर स्टेन्ड के पास नाले के किनारे बैठा रो-रो रहा था। सब कुछ खो गया था।

अभी भी घर लौटता तो आश्रय मिलता। नासिक से सीधी गाड़ी नागपूर को जाती है। यह मालूम भी था। पर इतने घाव पड़ने के बाद किस मुँह से घर जाना। क्या सोचकर छोड़ा था घर? क्या हो गया? यार कर करके रो रहा था। और कुछ भी नहीं कर सकता था। घर जाऊँ लोग ऊँगली दिखा-दिखा हंसेंगे। जग हंसाई तो खैर पर माँ को क्या लगेगा? सबसें अधिक जीजी याद आती। कितना सिखाया था उसने। कितने संस्कार उसने जतन से किये मुझपर और मैं नाले के पास ही बैठने योग्य रहा। कैसे जाऊँ घर? क्यों जाऊँ?

पास में बाजार था। कितना हल्ला। कितने व्यवहार। कितनी आवाजाही। पर मैं सबसे अलग किसी में नहीं। आँसू पोछने को कपड़ा भी नहीं।

इतने में एक व्यक्ति सामने खड़ा दिखा। नितांत सभ्य भव्य मूर्ति। पर मेरा क्या वास्ता? यह भाव मन में।

सुना - "क्या बेटा! क्यों रोते हो?"

बेटा-मैं बेटा! मुझ में अभी भी बेटा गुण है? सांशक। इसलिये चुप। फिर वही आवाज-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"क्यों बेटे क्यों रो रहे हो ? मुझे बताओ।"

गुस्सा आ गया न जाने क्यों ?

"मेरा मैं रो रहा हूँ आप को क्या ?" शब्द निकल पड़े।

सभ्य व्यक्ति शायद सहमा होगा। उलटी बात सुनकर पर क्या मालूम ? सभ्य चेहरे ने फिर पूछा। "बेटे भूख लगी है क्या ?"

"खाना खिलाओगे क्या ?"

"आओ मेरे साथ।" चल दिये वे।

मैं पर अचल, चार कदम चलकर मुड़कर देखा उनने मैं वहीं बैठा देख बोले-"आ रहे हो ना ?"

"कुछ काम करवायेंगे तो खाऊँगा।"

"नहीं तो ?"

"फिर यहीं ही ठीक हूँ।"

"तू आ तो सही।"

उठकर उनके पीछे चलने लगा। मैं नतमस्तक हूँ। इस महात्मा के सामने। वे कारवार तरफ के थे। मुख्या मार्ग से थोड़ा हटकर उनका एक ढाबा था। दूसरी मंजिल पर।

सज्जन अति सज्जन थे। एक कमजोरी भी थी। सदाचरणी पत्नी के होते हुए भी एक उपपत्नी रखे हुए थे। उस जमाने में वह समाज मान्य था। फिर भी अपनी दुर्बलता पत्नी से छिपाये रखे थे। उस सदाचरणी से डरते भी थे।

ढाबा में पहुँचे हम। दोपहर ढल चुकी थी। दूसरे वक्त की तैयारी शुरु थी। मुख्य रसोइये को उन्होंने कहा -

"इस लड़के को भोजन कराओ-होगा ही बचा हुआ।"

"इल्ला। कुछ नहीं है।"

मद्रदेशीय नहीं थे। नाटकों में काम करते-करते अंत में कलछुलें पकडी थी। अलग-अलग स्वर और भाषा बोलकर नाटक के दिनों की प्रतिष्ठा जगाये हुए थे।

"देखो कुछ तो होगा ही - खिलाओ बेचारे को - जाने कितने दिनों का भूखा हैं।"

रसोइयाजी ने संकेत किया। मैं पीछे हो लिया - सीधे रसोई में कदम रखा। वे बिगडे।

"अबे ए गंदे। - रसोई मे घंस पड़ रहे हो।"

मैं परम गंदा था। लेकिन होश कहाँ था ? परमहंस जो हो गया था। बाहर आकर एक कोने में खड़ा हो गया। वे एक पत्तल पर तीन रोटी और आलू बैंगन की सब्जी लेकर पधारे।

फिर मुझे देखकर बोले-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"थोंबडा खंगार आ - उस नलपर पहले - देन सिट टू ईट।"

मुँह धो आया। हाथ मुँह पोछने का प्रश्न ही नहीं था। पत्तल खींचकर बैठा और रोटी के बड़े-बड़े कौर बना निगलने लगा। चबाने में समय गंवाने का धीरज नहीं था। देखे पंडित रसोइये ने कहा -

" ब का सू र। ई डि य ट।"

सब्जी लाजबाब बनी थी। कुछ ही देर में पत्तल साफ कर सब्जी भरी अंगुलियाँ चाटते मैंने पंडितजी की ओर देखा। वे समझ गये। अंदर गये। फिर पत्तल पर परोसी तीन रोटी और सब्जी।

मैंने उसी सपाटे में उसे भी साफ किया। सब्जी चाट-चाट खाई।

उनकी ओर देखते अंगुलियाँ भी साफ की।

उन्होंने कुछ पूछा नहीं। मैंने किया संकेत समझा नहीं। गये हप्ते भर भूखा था करीबन। किसी जमाने की बढ़िया खाने की आदत। सामने दोनों ही थे - भरपेट भी, स्वादिष्ट भी। इसलिये लाज शरम छोड़ फिर पूछा -

"भात मट्ठा है?"

वे खरखराये "है! तो।"

"लाइये फिर।"

वे परोसनी में तली का भात और बरनी में मट्ठा ले आये।

थोड़ासा भात परोसा - रुक गये।

"डालिये। डालिये। सब डाल दीजिये।" अधीरता से मैंने कहा- "मरेगा साल्ला" कहकर सारा भात उन्होंने सरका दिया। उसपर बरनी उँडेल दी। मैंने बहते मट्ठे को संभाला, भात मीड़ लिया। बड़े-बड़े चार कौर खाये तो पेट में मरोड़ मेरा चेहरा टेडा मेडा हो गया।

पत्तल की नजर मैंने महाराज की ओर की। कान पर जनेऊ रखने का संकेत कर पूछा "आप कहाँ जाते हो जी?"

घृणा और क्रूरता से उन्होंने एक कोने में संकेत किया। उठते-उठते बोला - "इसे रहने दीजिये ऐसा ही। निपटकर देखूँगा।

जल्दी से हो आया। फिर पत्तल चाट पोछकर साफ की। पत्तल समेट उठने लगा। उठा न जाता था पेट बेहद तना था। फटासा जा रहा था। पत्तल फेंक हाथ खंगारे।

बाहर जूते उतारने की जगह थी वहीं अपने लायक जगह बनाई और पसर गया। दूसरे दिन उठा तो एक पुरानी चादर बदन पर देखी। जरुर किसी ने रात को ओढाई। उठते-उठते मालिक दिखे। बोले "हो गई नींद?" मैंने झपटकर पैर छुए।

बोले "नहा ले - ये पंचा लपेट लेना फिर वो चिंधिया फेंक देना।"

दूसरे दिन तक नये कपड़े मिल गये। हजामत बन गई। एकदम नया सा दिखने लगा मैं। नहाते ही काम से जुट गया था। भोजन गृह झाडा पोछा। थालियाँ लगाई। पानी रखा। चटनी नमक थालियों में लगाया। दौड़ भाग देख मेंबरों ने पूछा-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"क्या गुरु महाराज चेला कहाँ से लाया?"

"उपरवाले की मर्जी! कैसा हैं?"

"फुर्तीला-बढ़िया।"

"हिज ग्रेस"-मालिक बोले।

वल्लभाचार्य खुश हो गये-कहने लगे "थोड़ा और काम सीख लेना तो अपन खुद ही धंदा करेंगे। कितने आगे की बात पर मैंने हामी भर दी।

दोपहर रसोई बनते ही एक बड़ा ड़िब्बा भरा जाता - गरमागरम भात सब्जी दाल चटनी रोटी घी-चुपडी। वह लेकर मालिक ने दिखा रक्खे निवासपर जाता। वहाँ डिब्बा देता पूजापाठ में लीन एक सुन्दर महिला वहाँ दिखती। दोपहर कोई माँ बिटिया दाल-चावल साफ करने आती थी। बिटिया जवान थी। दिखने में भी अच्छी। पंडितजी कह-कह कर मुझसे गीत गवाते। एक बार रसोइया पंडित से पूछा "ये कौन है?" - उसने बाँये नाकपर अंगुली रख मुस्कराकर मालिक के कमरे की ओर देखा। रसोइया पंडित भी छंदी फंदी थे। कौवे के अंडे के बलक में भीगी बत्ती की ज्योति में गडा धन दिख जाता है यह उनकी एक श्रद्धा थी। "कौवे का घरोंदा कहीं दिखा तो जरुर कहना" उन्होंने मुझे जता रखा था।

लेकिन उन्होंने मुझे चिंता में ड़ाला। मालिक के घर के रास्ते पर नीम के एक पेड़ पर मैंने कौवे का घरोंदा एक दिन देखा। मैंने उनसे वह बात कहते ही वे व्याकुल हो गये। दोपहर होते ही चल पड़े। मुझे पेड़पर चढ़ाया। कौवे के कांव-कांव की चिंता न कर मैंने घरोंदा टटोला उसमें अंडा नहीं था। परंतु दूसरे दिन से उस रास्ते से जाना कौवे ने मुश्किल कर दिया। वह मुझे देख झपटता था। आखिर मैंने रास्ता बदलने की सोची पर ढाबा ही छूट गया।

ढाबे पर एक सज्जन कभी-कभी आते थे, देशपांडे नाम के। मुझे देशपांडे याद है कान में पहनी बाली के कारण। सोने की बाली उनके कुछ मोटेसे शरीर पर बड़ी खुलती थी। व्यक्ति बहुत मृदुभाषी और प्रेमी था। उतना ही चतुर भी।

एक दिन उन्होंने मुझसे पूछा

"क्यों बच्चे यहाँ क्या काम करते हो?"

आश्चर्य से मैंने कहा - "काम वही जो ढाबे में होता है थाली लगाना, उठाना, मांजना, सफाई करना ड़िब्बे पहुँचाना।"

"फिर इससे अच्छा तो बढ़ई का काम हैं।"

"हाँ, मैंने कहा। बढ़ई का काम तो इससे अच्छा ही हैं पर मुझे कौन सिखायेगा?"

मैं खुश हो गया। मुझे अगर वह सीखने को मिल जाये तो मजा आ जाये मैंने सोचा। बचपन में घर के एक दो औजारों से मैं हमेशा खटपट किया करता था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"तू उसकी चिंता न कर-मैं सिखा दूँगा। यहाँ मुख्य सड़क पर मेरा एक कारखाना हैं मरे यहाँ रहेगा तो बढ़िया बढ़ई बन जायेगा।"

"पर मैं यहाँ जो काम कर रहा हूँ।"

"तुम्हें पैसे मिलते हें क्या यहाँ?"

"नहीं ले कि न!"

"अच्छा ठीक! मैं ही तुम्हारे मालिक से बात करता हूँ। उन्होंने क्या बातें की राम जाने पर एक दिन शाम को वे मुझे अपने कारखाने ले आये।

देशपांडेजी का बड़ा परिवार था। दो भाईयों का। माँ थी। ऊँची पूरी। बुढ़ापे में भी आकर्षक। मेरा घर से सम्बन्ध केवल दिन में खाना खाने व रात में सोने के लिए था। बाकी दिनभर मैं दुकान में ही रहता था।

दुकान में स्वयं देशपांडेजी, एक उत्तर से आया कारगीर, एक पालिशवाला ऐसे गिने चुने आदमी थे। कारखाने में नाशिक के बाजार में खपनेवाली कुंकमपेटी और देवमंदिर ही बनते थे। आर्डर आने पर दूसरा सामान भी बनता।

मैं सुबह उठकर दुकान में आता जल्दी ही। दूकान साफ करता। एक तरह की लकड़ी एक तरफ जमाकर रखना। दो बड़ी पेटियों में औजार रहते थे, तरह-तरह की आरियाँ, रंधे अलग-अलग तरह की हथौड़ियाँ-बसूलियाँ, सब जमाकर रखता।

लकड़ी की छीलन, चैली आदि एक तरफ घर ले जाने को जमा करता। अलग-अलग तरह की कीलें जिनमें बांस की बनी कीलें भी होती थी। अलग कागज या ड़िब्बे-पुडे में रखता।

मिस्त्री और 'दामूअण्णा' आने पर दुकान की खटपट शुरु हो जाती। मिस्त्री आते ही पहले सभी औजारों को पत्थर पर घिसकर धार लगाने का काम होता था। अंगुली फेर-फेर धार देखी जाती। मन माफक हो जाने पर दूसरे हथियार को धार होती। मैं सान वाले पत्थर के पास पानी पहले ही रखता था।

पॉलिशवाले दामूअण्णा समय के पक्के थे। आते की काम शुरु करते। लकड़ी पर पहले मिट्टी या मोम लगाकर उसके छोटे-बड़े छेद भरते। रेगमार चलाकर सतह चिकनी करते जामुनी या लाल पालिश का पहला हाथ फेरकर चीज को सुखाने रखते।

एक और दूसरे काम के बीच मुझसे चुहल करने में उन्हें बड़ा मजा आता। एक आँख उनकी तिरछी थी। चुहल के लिए ऐसा चेहरा बड़ा प्रभावकारी होता है। तिरछी आँख मेरी तरफ कर वे कहते "तुझे गाना सिखाऊँ?"

"कौनसा?"

"बढ़िया है। मारवाड़ी औरतें झुंड में बैठकर गाती हैं। उनमें घुसकर अगर तुमने गाया तो तुमको मालपुवा, बूंदी, कढ़ी ऐसा भोजन मिलेगा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"गाके तो दिखाइये।"

दामूअण्णा फिर अपनी अच्छी आँख बंद करते। एक हाथ गालपर और दूसरे हाथ में पालिश की चिंदी लिये नाक से सूर निकाल गाते :

रो रे म्हारे लछमण बाळाजी
रामकुंडमिरि आग लागो रि
मामुंजि रि मिरि देससे आयो रि
मालपुवा मिरि शिरा पुरि खायो रि

हंसते-हंसते मेरे पेट में बल पड़ जाते। फिर वे पलटी खाकर कहते - "ए हँसना नहीं जोर से।"

"क्यों ?"

"जोर से हँसने पर अंतडियों का व्यायाम हो जाता है और असमय भूक लग जाती है-वह ठीक नहीं।"

•

देशपांडे की दुकान पर काम सीखते हुए और भी कई बातें की। उतनी स्वस्थता वहाँ मिली। बहुत बार देशपांडे ने अनुमति दी। कई बार जिद करके वह मैंने प्राप्त की।

"अयोध्या का राजा" यह पहली मराठी सवाक फिल्म मैंने नाशिक में देखी। पर्दे पर के चित्र, बोल सकते हैं यह कल्पना ही एकदम अभिनव थी। उसमें भी हरिश्चंद्र, तारामती, रोहिदास सारे पात्र अतिशय सुन्दर थे। क्या वह हरिश्चन्द्र का अभिनय-उसका गाना -

सत्य जैसा परम धर्म
नाहीं दूजा -कितना ही खोजा

तारामती ने भी गाया। हरिश्चन्द्र तारामती को भी इतना मधुर गाना आता है यह देखकर प्राचीनों के लिये मेरा आदर द्विगुणित हो गया। इन दोनों ने गाना कहाँ सीखा होगा? ऐसा भी एक लड़कपने का प्रश्न मन में आया।

गंगनाथ जल्लाद का काम जिस व्यक्ति ने किया था उसके लिए मेरे मन में इतना गुस्सा था तब कि रोजही सोचता-फाँसी हो जाये पर्वा नहीं पर वह आदमी मिलते ही उसका खून करुँगा। कम से कम उसके मुँहपर थूकूँगा तो सही ही।

नासिक में नाटक कंपनियाँ भी बहुत आती थी। पर नाटक नहीं देखा। गोदावरी नदी के किनारे एक दिन एक अद्‌भुत दृश्य देखा -

कोई एक मोटे से छप्पर मूछोंवाले चौड़े के व्यक्ति कमर से दुपट्टा कसे तीरपर बैठे थे। चार छह जन उन्हें बैठे थे। एक तरफ नासिक के प्रसिद्ध कोंडाजी के चिवडे की फक्की लग रही थी तो दूसरी ओर अंगुर निगले जा रहे थे। हंसी के ठहाके लग रहे थे। फिर वे मोटेसे व्यक्ति एकनाथ की रचनाएँ सुनाने लगे -

सत्वर पाव गे मला। भवानि आई रोडगा वाहिन तुला
सासरा माझा गांवि गेला। तिकडच खपवी त्याला
सासू माझा जाच करते। बोडकी कर गे तिला॥

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भारुड नामक यह गीत प्रकार एक तरह की उलटबासियाँ होती हैं गीत का अर्थ है

हे देवि माँ भवानी मुझपर तुरन्त कृपा कर
मैं तुझ रोडगा (मोटी रोटी) चढाऊँगी।
मरे ससुर परदेश गये हैं उन्हें उधर ही मरवा दे
सास मेरा छल करती उसे रंडकी कर दे।

रचनाएँ सुनने और भी भीड़ हो गई। हंसी के ठहाके बढ़ गये। पर गायक इस सबसे बेखबर अपनी मस्ती में गाये चला जा रहा था।

बाद में मालूम हुआ। वह मस्तमेला व्यक्तित्व कथावाचक पांगारकर थे। कथावाचक पांगारकर श्रेष्ठ साहित्यिक, लेखक के रुप में महाराष्ट्र में ख्यात नाम हैं।

एक बार सुना डाक्टर आंबेडकर के लोग कालाराम मंदिर प्रवेश के लिये सत्याग्रह करनेवाले हैं। देशपांडे से पूछकर कालाराम मंदिर गया। किसी तरह मंदिर में घुस गया। दरवाजे बंद थे। चारों तरफ पुलिस का कड़ा पहरा था। मंदिर के चारों ओर ऊँचा मजबूत कोट है। उसपर चढ़ गया। देखा। बाहर उधम हो रहा था। सत्याग्रही टुकडियाँ आ रही थीं। पुलिस उनको पकड़कर ले जा रही थी। मेरी समझ में नहीं आ रहा था। महार भ्ज़ी तो हिन्दू ही हैं फिर उन्हें मंदिर प्रवेश के लिये सत्याग्रह क्यों करना पड़ता है। बहुत हुआ तो गर्भगृह में किसी को भी घुसने नहीं दिया जाये।

नाशिक का एक मजा और। तिर्थ क्षेत्र होने के कारण सारे भारत से वहाँ नाना रंग, रुप, भाषा बोलनेवाले यात्रिक आते हैं। दर्शन हो जाने पर बाजार घूमने निकलते हैं। हमारे दुकान में भी आते थे। चमकीले काले द्रविड, साहबों जैसे गोरे कश्मीरी, ऊँचे पूरे पंजाबी, ढीली धोती वाले बंगाली, उडिया, लंबी चोटीवाले पुरभैये सब आते हैं। उनको देखना, उनकी भाषा सुनना अपनी बात समझाने की उत्कटता देखना यह सब बड़ा रोमांचक होता था।

इसी बीच देशपांडे की यहाँ विवाह निकला। मेहमान आने लगे। उन रिश्तेदारों में एक हिमालय की ऊँचाई का आदमी भी आया। मेरे जीवनको अलग गति देने में इस व्यक्ति का बड़ा हाथ रहा। अनजाने में।

कुछ-न-कुछ काम निकलते रहते। इसके साथ बाजार जाओ, उसके साथ मंदिर जाओ ऐसे आदेश होते और फिर मैं दौड़ पड़ता। कहीं बीनना हैं, कहीं छीलना हैं, कहीं धोना है, कहीं बिछाना हैं। बच्चों की टट्टी धुलाने तक के सारे काम मुझे कहे जाते और मैं दौड़-दौड़ करता। घर का कारज है तो फिर सब करना है। इस कारज से तुम्हारा क्या सम्बन्ध यह विचार भी मन में नहीं आया कभी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वे सज्जन शायद मेरा निरीक्षण कर रहे थे। देशपांडे के घर में उनका शब्द बड़ा सन्माननीय था। देशपांडेजी के वे मामा थे। भला अच्छा व्यक्तिमत्व था। सिर पर पगड़ी बांधते। कोट के उपर दुपट्टा लेते। पैर में अच्छासा जूता।

विवाह होते ही उन्होंने अपने भांजे को बुलाकर कहा-

"मैं इस लड़के को पंचवटी ले जा रहा हूँ।"

"जरुर जाइये"-मामाजी को पंचवटी दिखा लाने का आदेश हुआ।

चल पड़े। उस सुंदर पुरुष पर प्रीत आ गई। जो कुछ मालूम था वह सब उन्हें दिखलाया। उन्हे वह सब मालूम ही था। मैं उत्साह से कहे जा रहा था वे सुन रहे थे। बीच में कुछ प्रश्न कर देते।

मुझे मालूम भी नहीं हुआ कब उन्होंने धीरे-धीरे मुझसे मैं कौन, कहाँ का यहाँ क्या करता हूँ वह सब पूछ लिया। मैंने भी सब बता दिया। केवल घर कहाँ है यह नहीं बताया। वे क्या करते हें यह पूछने का भी धीरज नहीं हुआ।

घर लौटे। मेहमान जाने लगे तो इसका उसका ट्रंक़, बिछौना और गठडी पठडी बस स्टेन्ड तक मैंने पहुँचाई। ऐसे ही लौट रहा था तो मेरे सम्बन्ध का संवाद हो रहा था।

"तुम इसका क्या करोगे?"

"बढ़ई काम सीखेगा-मिस्त्री बनेगा।"

"फिर आगे?"

"आगे? आगे क्या?"

"मैं कहता हूँ आगे कुछ नहीं। मैं इसको ले जाता हूँ।"

"आप इसका क्या करोगे?"

"मैं इसको आदमी बनाऊँगा"

मुझे देखते ही बोले "चल रे लड़के - तुम्हारा सामान ले ले। सामान क्या होगा? खैर कपड़े होंगे - वह ले ले।"

मैं देशपांडे के चेहरे की ओर देखने लगा।

"उसका मुँह क्या देख रहे हो। तुम चलो - मैं तुम्हें ले जा रहा हूँ मेरे साथ।"

उनके इस वाक्य का प्रतिवाद कौन करता? मैं मंत्रभरित उनके पीछे-पीछे चल दिया।

गणेश जगन्नाथ जोशी। लोग उन्हें गणपतराव बाबा कहते। इतना आदर कि राव और बाबा दो-दो विशेष नाम।

अकोला तहसील जिला अहमदनगर। पिछड़ा इलाका। उस पिछड़े इलाके को डांगण कहते। पहाड़ो पर महादेव, कोली, ठाकुर और भीलों की बस्ती।

गणपतराव ऐसे प्रदेश का अनिभिषिक्त राजा। उस इलाके के सुखदुख में समरस।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE 2025 Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अकोला में मारवाड़ी बहुत। सब के सब मारवाड़ से केवल धोती लोटा लेकर आये हुए। कृषकों का अज्ञान यह उनकी पूँजी। कृषक को नित्यही कुछ न कुछ किसी न किसी कारण से अटक पड़ती। वे मारवाड़ी के पास आते। कर्जे लेते। मनमाने ढंग से कागज बनते। ब्याज की जानलेवा दर फिर अंधाधुंद हिसाब कुछ एसा - माघ, फाग, होली, धुलेडी ये चार माह, इनमें से एक माह छोड़ा। पाच तिया पचहत्तर उसमें तीन छोड़े भये अठहत्तर कोली·ठाकर भील नंगे होने में कितनी देर लगनी थी।

गणपतराव स्टेम्प वेंडर हो गये। खरीद-बिक्री के कागज उनके सामने आने लगे तो वे चौंके। हरएक व्यवहार की चौकसी करने लगे। अन्याय होते ही टूट पड़ते। इसलिये आदिवासी समाज के वे गले का हार बन गये।

उसपर भी एक अपूर्व उन्होंने करवाया।

सन सत्रह का जमाना था महायुद्ध का। उस समय अकोला तहसील का तहसीलदार कोई खान था। बड़ा ही उन्मत्त, दुराचारी, मनमर्जी चलनेवाला उसकी कचहरी नदीपर लगती। आप नदी में मछली पकड़ने बंसी डाले बैठे हुए। पट्टेवाला छतरी थामे हुए। कचहरी वहीं लगती, वकील, अशील, पुलिस, आरोपी, फिर्यादी सब तपती धूप और रेत में खड़े।

यह भी जनता धका रही थी। अंग्रेज सरकार की सत्ता। मुँह ऊपर कर कुछ बोलने की शक्ति नहीं। सरकार विरुद्ध लोग बोलते थे वे कुछ पुणें बंबई के लोग। अंदर के पिछड़े इलाके में तो तहसीलदार ही राजा वो कहे सो होय।

अति होनेपर तो गरीब गाय भी सींग उटाकर वार करती हैं। तहसीलदार औरतों के बारे में भी भ्रष्ट था। दिया जले संदेसा आता आज भेज देना। लोग बहुबेटियों को अकोला नहीं रखते थे।

गणपतराव के यहाँ सभी खबरें पहुँचती थी। परन्तु रुद्र शांत ही रहता। सुना लेता। पापका घड़ा भरा नहीं था। महायुद्ध प्रारंभ हुआ। रिक्रूट भरती शुरु हुई। हाथ में बंदूक लिये सिपाही और अधिकारी गांव छानने लगे। इच्छा हो या न हो जवान को फौज में भरती कर लिया जाता। आनाकानी करने-भागने का प्रयास करने पर मारपीट तो बहुत मामूली बात होती।

सारा डागर इलाका जैसे धुन दिया गया। मारते-पीटते हथकड़ी पहनाये रिक्रूट। उसके साथ लगे हाथ लगी लड़कियाँ। आक्रोश आकाश तक उठ गया।

गणपतराव ने तहसीलदार को कहा -

"इसे सम्हालो! भारी पड़ेगा।"

उद्दंडता से उसने कहा

"जा बे बम्मन। मैं जिस हुकूमत का हपसर हूँ उसे अंग्रेजी सल्तनत कहते हैं, समझे।"

गणपतराव उठे। घोडेपर बैठे। अकोला से पांच एक मीलपर एक गांव था 'आंबड' वहाँ पहुँचे। पहाड़ी से पहाड़ी संदेश पहुँचे। एक चांदनी रात आंबड़ का पठार आदमियों से ठस भर गया। सब जोश में।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गणपतराव बाबा बाम्हन कहता है उसका सुनना होगा। जहाँ उसका पसीना वहाँ हमारा लोहू ऐसा होना चाहिये।

बात पक्की हुई - प्रतिज्ञा ली गई। सात आठ भील नेता तय हुए। सेनापती गणपतराव। रविवार बाजार का दिन। उस दिन शाम काम तमाम करना तया हुआ।

रविवार का बाजार। आदमी पर आदमी चला आ रहा। देखते-देखते सात आठ हजार भील बाजार में उतर आया। हाथ में हरेक के हथियार तलवार, भाला, लाठी, कुल्हाड़ी।

पुलिस केवल सात आठ। वे डरे सहमें। भीड़ में से कुछ ने तार के तार तोड़े। पेड़ काटकर सड़कें रोक दी। सारे रास्ते बंद हो गये। सात आठ हजार की भीड़ फिर चल दी तहसीलदार के घर। अगुवा गनपतराव। बड़ा शोर।

दरवाजा तोड़ घर में घूसे लोग। खान पड़ोस के घर में जा छिपा सीढ़ी के नीचे। पर वह काल से कहाँ छिपता। दादा भील ने उसे खोजा पकड़कर बाहर ले आया। कुल्हाड़ी से पहला वार किया और फिर इतनी कुल्हाड़ियाँ चली।

तहसीलदार का एक तांगा था। जिसपर बैठकर वह बहूबेटी घूरता रात के सुरतानंद के स्वप्न रचते जाता था। उसके घोड़े की टापें सुनकर लोग धड़ाधड़ दरवाजे बंद कर लेते थे। उसी तांगे में उसकी लाश डाली-उपर से किरासीन। जिसे कबर में गाड़ना था उसे अग्नि भेंट किया गया।

गणपतराव ने खान की बेगमों-बच्चों को बाहर निकाला। उनको सुरक्षित जगह पहुँचाया। मुंगफली के दाने के बोरे, गुड की भेलियाँ, गरी की थैलियाँ मारवाड़ियों ने दुकान के बाहर निकाली। हजारों का जमाव उसे खाता कुल्हाड़ियाँ, लाठियाँ आदि शस्त्र उपर उठाये विजयोन्माद में लौट गया।

तहसीलदार को सरेआम कत्ल किये जाने की खबर दूसरे तहसीलों-जिले के मुख्यालय पर पहुँची। सरकारी दमन प्रारंभ हुआ। अकोला में भारी पुलिस दल पहुँचा। प्रमुख आरोपी गणेश जगन्नाथ जोशी के साथ पचास-पचपन और पकड़े गये। दादा भील पर प्रथम कुल्हाड़ी चलाने का आरोप सिद्ध हुआ। उसे फांसी अन्यों को कालापानी। गनपतराव बाबा हाथपैर में बेड़ी ड़ाले अंदमान की ओर चल दिये।

लेकिन फिर अपीलें हुई। वकील भिड़ गये। कानूनी किताबों की उठापटकी हुई। सजाएँ घटी। पर फिर भी कुछ तो भोगनी ही थी। गनपतराव की पत्नी इसे सहन न कर सकी। स्वर्ग सिधार गयी। नकटी सी एक गोरी मोटीसी कृष्णाबाई परेदसी ने गनपतराव बाबा के जीवन में धीरे से प्रवेश किया। उस जमाने में ऐसा सब चलता ही था।

मैं गणपतराव के साथ अकोला गया तब वे एक बहुत बड़े में रहते थे। नदी के लिए जाते मुख्य रास्ते पर यह बाड़ा था। रास्ता पार एक पीपल वृक्ष, उसका बड़ा भारी चबूतरा। दाहिने हाथ एक और खंडहर बाड़ा और उसमें पचास एक गायें, बछिये, बछडे, बैल। जोशीजी गोरक्षण का कार्य करते थे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मुख्य बाड़े के पीछे एक छप्पर उसमें एक घोड़ा। उमदा, मस्त जानवर। बाड़े में नीचे कृष्णाबाई रहती थी उसकी रसोई अलग बनती थी। गणपतराव ऊपर अपनी रसोई अपने हाथ से अलग बनाते थे। थोड़ी पूजा, जप। फिर रसोई। घंटा एक भर नींद। फिर दरबार। झगड़े-फसाद लेकर लोग आते-गणपतराव न्याय करते। शाम को दरबार पीपल के नीचे लगता। चिलम साधना के दोस्त लोग आते। दो फेरे सामान्य होते ही कोई मेहमान आ जाये तो दो एक और।

गांव में कोई सवैय्या आ जाये तो पहली बैठक गणपराव के यहाँ। चार आठ दिन में कोई न कोई आता ही। गणपतराव बड़ा रसिक। गाने बजानेवालो को यहाँ अर्थ लाभ न होता पर गांव में बुलावे मिलने की गुंजाइश बढ़ जाती।

एक मुसलमान फकीरन की पंधरह बीस एकड़ जमीन बाबा अध-बटाई पर करते थे। एक सर्कती उन्होंने इसके लिए कर लिया था। सर्कती माने हिस्सेदार। शरीर श्रम उसका। बीज खाद आदि बाबा का।

गोरक्षण के लिये किसान चारा पहुँचाते थे। हफ्ते में एक दिन कृष्णाबाई एक पेटी और एक झोला लिए गांव में फेरी लगाती। उसके लौटने पर पेटी में खुर्दा बजता और झोला अनाज से भर जाता।

अकोला में आते ही बाबा ने एक-एक कर सब दिखाया। खेतपर ले गये। जवान बाजरा ड़ोल रहा था। पूछा -

"अच्छा लगा?"

"हाँ खूब बहुत अच्छा लग रहा है।" उत्तर दिया।

कंधे पर हाथ रखकर बोले "मुझे कोई संतान नहीं है तुम ही मेरे पुत्र अब।" बहुत दिंन बाद फिर आँखों में आँसू आये - चुपचाप पोंछ लिये।

और फिर सब कुछ अपना है यह समझ काम में लग गया।

मेरा आगमन कृष्णाबाई को खटका था। मैंने वह जाना भी पर ध्यान न दिया। वह गोरक्षण की पेटी और झोला लेकर निकली तब बाबा से कहा :

"मैं जाता हूँ। कृष्णाबाई के साथ।"

"शरम तो नहीं लगेगी?" उन्होंने पूछा।

उत्तर दिया - "धर्मकार्य में कैसी शरम?"

एक गीत भी बन लिया -

प्रार्थना है हिन्दूजनों गौमाता बचाओ
धन्य था शिवाजी गौ जिसने बचायी
रक्त वही तुममें यदि गौमाता बचाओ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

यह गीत गाते रास्ते से मैं चलता। कृष्णाबाई घर-घर से मिली भिक्षा जमा करती जाती। लोग पूछते उससे -

"यह कौन?"

"वह एक अनाथ है मेरी मदद के लिए लाया इन्होंने।"

सुना अनसुना कर मैं गीत गाने में अपना मन लगाता। पहले दिन लौटे तो पेटी और झोला ठस्स भरा था। शाम की चिलम गोष्टी में बाबा को बात बताई गई -

"छोकरा बड़ा अच्छा गाता है।"

"शरमाता नहीं - ढीठ हैं।"

"मुस्कराते गणपतबाबा कहते - छांटा किसने है?"

कृष्णाबाई को भी अच्छा लगा होगा। बोली नहीं पर मुझे से होते व्यवहार में अंतर आ गया।

पहले लोग कृष्णाबाई को भिक्षा गणपतबाबा के नाम से ड़ालते थे। अब औरतें हम दोनों के लिये भिक्षा लिये राह देखती रहती। एक पुरानी पुस्तक के कुछ पन्ने मिले। उसमें धेनु गीत थे। वे और याद कर लिये। नाटकों के पर्दो के तर्ज पर मैं ये धेनुगीत गाता। लोगों के लिए वह एक मनोरंजन सा हो गया।

हमारा सर्कती किसान कई कारणों से घर आता था। कभी हल लेने, कभी बैल गोरक्षण में देने या लेने। मैं उसके साथ खेत पर जाने लगा। खेत गांव से लगा हुआ। ऐसे खेत वैसे भी उपजाऊ होते हैं फिर इसमें गोरक्षण का सारा गोबर हर साल गिरता था।

घर घोड़ा था। उसको हरी घास लगती। फिर हाथ में खुरपी लेकर खेत में जाता। मुलायम घास ले आता। उसमें भी भेद। कुछ तरह की घास तो घोड़े के लिये जैसे मेवा-मिठाई। वह उसे बड़े चाव से खाता। ऐसी घास एक जगह नहीं मिलती फिर उसे खोजते रहना। इधर-उधर से थोड़ा-थोड़ा इकट्ठा करना। फिर उसका बड़ा पुवा बनाना। सिरपर लेकर घर आना। खोलकर घोड़े के आगे ड़ालना। घोड़ा खुश हो जाता। फिर उसके पुट्ठे पर थपथपाना, वह सिहरता और मैं भी।

घोड़े को खरारा बाबा स्वयं ही करते। खरारा हो जाने के बाद नारियल की रस्सी से बनी रगड़नी से उसका सारा बदन रगड़ते। फिर तोबरे में भींगा चना ड़ाल वह उसके मुँह पर अटका देते। घोड़ा बड़ा प्रसन्न हो मुंडी घुमा-घुमा चना चबाता।

जानवर गरीब था। चाल में भी अच्छा था। सुन्दर भी था। उसपर जीन कसकर रेशमी साफा बांधे बाबा उसपर सवार होते तो बहुत बांके लगते। मराठेशाही के किसी सरदार जैसे। धीरे-धीरे घोड़े को पानी पिलाने नदीपर ले जाना। वहाँ उसे लोटने-लेटने छोड़ना। खेत पर टहलाने ले जाना। उसके पैर में रस्सी अटका उसे चरने देना। ये सारे काम मैंने अपनी ओर ले लिये। खरारा लेकिन बाबा ही करते रहे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ज्वार की कटाई शुरु हुई। गणपतराव बाबा बाजार गये। मेरे लिए लाड से एक नया हँसिया ले आये। एक खुरपी भी ले आये हँसिया लेकर मैं कटाई में भिड़ गया। दूसरों के साथ एक कतार पकड़ ज्वार काटने लगा। मुट्ठी में पकड़ी कटी ज्वार जमीन पर रखते-रखते बिलकुल बंधिया तक जाना और फिर लौटना। कटाई में मैं निपुण हो गया।

ज्वार निकाल लेने के बाद उस खेत में ही चना बोया जाना था।

"चना मुट्ठी में से धीरे-धीरे छोड़ते बोया जाता है।" सर्कती ने कहा। मैंने कहा "तुम हल पकड़ चलो मैं बीज ड़ालूँगा मुट्ठी-मुट्ठी।"

"अरे आप तो कहीं मोटा पतला ड़ालोगे।"

उसने कहा

"नहीं। तुम एक बार दिखला दो बिलकुल वैसा ही ड़ालूँगा।"

उसने सिखलाया। कैसे मूठ में चना लेना। कैसे एक-एक दाना धीरे-धीरे छोड़ते जाना। मैंने वैसा ही किया। पूरा चना मैंने बोया।

गणपतराव से किसी ने कहा बड़े खुश-खुश हो गये।

बोनी हो जाने के बाद बखर उलटाकर उसे खेत में फिराते हैं ढेले तोड़ने। उसपर खड़ा रहना पड़ता है साथ ही बैल हंकाना अपना संतुलन बनाये रखना। लेकिन सब सध गया।

गेहूँ बालियों पर आ गया। उसकी रखवाली के लिये खेत में छप्पर ड़ाला था। उसमें रात को मैं और सर्कती सोता। रात एक दो बार उठकर चक्कर लगाते जोर से हांका भरते। पास के खेत वाले हांका का जबाब देते। सर्कती कहता था "अरे आप बामन-आप नहीं कर पाओगे- पर मैं सब काम करने लगा। भावना थी अब मुझे जीवनभर यही तो करना है। फिर सीख ही लूँ तो अच्छा रहेगा।

भीमा नामका दूसरा एक आदमी गोरक्षण की गायें चराने ले जाता था। वह सुबह जल्दी आता। गोबर फेंकता, दूध निकालता, फिर गायें छोड़कर उनको नदी पर ले जाता। नदी में पैर ड़ालने के पहले रेत में वे हगते-मूतते। फिर एक आध घूँट पानी लेते नदीपार हो जाते।

नदीपार अर्धचन्द्रकार फैला हुआ खंडोबा का पहाड़ था। ऊपर एक ठिंगना छोटा खंडोबा का मंदिर। उस पहाड़ की कोख में गांव के दूसरे गोरुओं के संग हमारे भी गोरु चरते।

भीमा एक दिन कहने लगा -

"मैं गांव जा रहा हूँ।"

"अरे फिर गोरुओं का क्या?"

"आप अपना जानो।"

"'मैं कैसे जानूँ - तू बदली दे।"

"मैं कहाँ बदली खोजूँ अब।"

मैं वही था कहा -

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"जाने दो उसे गांव में ले जाऊँगा गायें।"

बाबा ने आश्चर्य से पूछा - "महिनाभर?"

"हाँ उसमें खास क्या है? भीमा मुझे दिन दो दिन चलकर दिखा देगा।"

दूसरे दिन भोर ही गायें ले जाने निकला। गणपतबाबा ने एक पोटली हाथ में दे दी। मैं जान गया। मुझसे भी पहले उठकर उन्होंने मेरे लिये ये राटियाँ बनाई थी।

भीमा के साथ गायें छोड़न लगा। गोरुओं का ड़र था, सींगों-बींगो का, पर बाद में समझ गया। वैसा ड़रने की कोई बात नहीं होती। ढोरो को भी बातें समझती हैं, थोड़ा जोर से बोलना पड़ता है। बस।

खंडोबा पहाड़ी की गोद में ढोर लेकर जानेवाला मैं ही अकेला नहीं था। और भी कई लड़के ढोर, बकरियाँ लेकर आते थे। दो दिन में ही सबके सब मेरे दोस्त हो गये। दोपहर पोटरियाँ हम साथ ही छोड़ते। उसकी चटनी उसकी सब्जी एक करते। बारी-बारी से हम में से एक ढोर देखता और बाकी सारे किसी पेड़ के नीचे बैठ वाहियात बातें करते।

हम सबमें एक ठाकर का लड़का बड़ा तैयार था। उसके पास हर तरह के किस्सों का बड़ा संग्रह था। जंगल की पहचान भी उसे जबरी थी। उस ठाकर लड़के ने सारे पेड़ों की जानकारी मुझे कराई। छोकर के पेड़ की पांडवों की कथा मैंने उसे सुनाई। इससे मेरा भाव उनमें बढ़ गया। मेरा गीत गाना था ही।

नदी पर से ढोर लौटती बेरा ये लड़के थोड़े एक तरफ जाकर धोतियाँ छोड़ धड़ाधड़ पानी में घुस जाते। नया शरमाता। उसे पानी में खींचते उसका मजाक बनाते।

एक ऐसे ही मजाक का किस्सा मुझे खूब याद है।

मेरे बाद एक मराठा लड़का ढोर लेकर आने लगा। मैं बाम्हन ठाकरों के साथ खाता-पीता हूँ इसका वह बड़ा मजाक बनाता। बड़ा ही घमंडी और बातूनी। किसी से उसकी पटती नहीं अपनी-अपनी करता, कहता।

हमारे बीच के उस तैयार ठाकर ने एक दिन फिर एक जुगत सोची। हम सबसे वचन लिया न हंसने का। मुंडी डुलाने का।

ढोर बकरी पहाड़ी पर लगाकर हम सब जैसे ही पेड़ के नीचे आये ठाकर लड़के ने ऊँची कूद की बात निकाली। वह कहने लगा सात हाथ ऊँचाई तो वह ऐसे ही पार कर लेता है।

उस घमंडी ने कहा - "झूठ बिलकुल झूठ।"

"झूठ तो झूठ पर मैं अगर तेरे सिर पर से अभी कूद जाऊँ तो।

"आ कुद।" वह दूर जाकर खड़ा हो गया। ठाकर थोड़ा दूर गया। दौड़ते हुए आया और लड़के के पास आकर ठिठक गया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"क्यों ठहर गया ?"

"ठीक अंदाज नहीं आ रहा - तुम ऐसा करोगे ?"

"कैसा ?"

अपनी लाठी आड़ी कंधेपर लेकर खड़े रहो।"

उसने कंधेपर लाठी ले ली। फिर से ठाकर दूर से दौड़ता हुआ आया और उसके पास आकर ठिठक गया। रुआँसा बोला -

"ऐसे हिलते क्यों हो-फिर मैं कैसे कूदूँ ?"

"कहाँ हिलता हूँ ?"

मासूमी से हम सबकी ओर देख ठाकुर ने पूछा -

"क्यों हिलता हैं न यह ?"

"हाँ। हम सबने अस्पष्ट कहा।"

"ऐसा करे। तू लाठी हाथ से बांध ले फिर लाठी अलग नहीं हिलेगी।"

वह पगला तैयार हो गया। चट् ठाकर ने अपनी साफी से उसके दोनो हाथ लाठी से पक्के बांधे। वह येशु खिस्त की तरह हो गया। फिर ठाकर ने उसकी धोती खोल उसे नंगा कर दिया। हम सब ताली पीट-पीट उसके चारों ओर नाचने लगे। उसके नंगे बदन को नमस्कार करने लगे। वह जोर-जोर से रोने लगा।

फिर उससे कई शर्ते मनवा हाथ छोड़े। उससे गले मिले।

एक महिना गुजर गया। भीमा वापस काम पर आ गया।

सारे ढोर सीधे थे। एक बैल जरुर मरकहा था। बांधते परेशान करता। लाठी खाता तब बंधता। वैसे ही एक गाय वाभरी थी। यहाँ वहाँ मुँह मारती। धरने जाऊँ तो दौड़-दौड़ जाती। एक दिन उसने मुझे बेहद थका दिया। कृष्णाबाई भी उस गाय पर खफा थी। बोली, "अरे उसके गले में डेंगूर क्यों नहीं फंसाते। मोटी लकड़ी उसके पैर में फंसकर दौड़ने नहीं देगी।"

बात जंच गई। एक लकड़ी ले आया, कुल्हाड़ी उठायी और चलाई।

लकड़ी सरक गई और कुल्हाडी की चोट सीधे पैर के अंगूठे पर पड़ी। एक फांक लटक गई। सबसे पास कृष्णाबाई थी - मजे में पान खाते बैठी थी।

खून में लथपथ मुझे देख उसे उसकी मातृभाषा याद आ गई - बोली - "माटीमिले क्या किया रे।"

फिर उसने जो गर्गशा शुरु किया। राह चलते जिसे-उसे वह कहने लगी - "मैंने इसे कुछ नहीं कहा था। इसने अपने मन से ही कुल्हाडी अपने अंगूठेपर मार ली। मेरा इसमें कोई हाथ नहीं। हर एक को वह यही कहती जाती और रोती जाती। लेकिन उठकर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दवादारु या कुछ उपाय करने का नाम नहीं ले रही थी। मुझे भी कुछ सूझ नहीं रहा था अंगूठा पकड़े बैठा था सुन्न। खून बह रहा था। तलैया हो रही थी।

गणपतबाबा उतने में जल्दी सें आये। उनको बाजार में किसी ने कहा था। उन्हें देखते ही कृष्णाबाई और आवाज बढ़ाकर रोने लगी।

"आप कहेंगे मैंने कहा होगा। पर कहे देती हूँ इसे मैंने पैर पर कुल्हाड़ी मारने का कहा हो तो मेरी जीभ झड़ जाये।"

बाबा ने गुस्सेसे उसकी ओर देखाभर। मुझे दोनों हाथों से गठडी सा उठा लिया। ऊपर ले गये। फिर कोई दवा ला अंगूठे की फांक जोड़ कसकर बांधी। कुछ औषधि मुझे चटाई। और सुला दिया। पास बैठे रहे पंखा झलते।

आठ दिन तक मैं नीचे उतरा। घाव बुझ गया। पर अंगूठे का नाखून जन्म के लिये बट गया।

अकोला। प्रवरा नदी किनारे बसा प्राचीन गांव। कितना प्राचीन? सिद्धेश्वर का मंदिर, बहुत बारीक पत्थर की खुदाई का काम उस पर। मंदिर बाहर परकोटा। किसने बनाये ये मंदिर? माने किसने बनवाये ये मंदिर?

बड़ी-बड़ी प्राचीन हवेलियाँ। संत कुलनाम के घर बहुत। जोशी, देशपांडे ऐसे ब्राह्मणों के कोई पचास-पचहत्तर घर। सब बड़े सुखिया, संपन्न।

अधिकतर परिवारों की अकोला के आसपास खेती, किसानी। खुद काश्त नाममात्र की। अधिकतर बटाई। बटाईदार यहाँ सर्कती कहलाते। मेहमत मजदूरी उनकी, आधी उपज के अधिकारी। आधी फसल आकोला के इन घरों में आती। फिर गाय, भैंसे, घी-दूध। ऐसी सारी सम्पन्नता। ऐसी सम्पन्नता जहाँ, वहाँ फिर व्यसनाधीनता भी। उसके साथ कलारुचि भी थी। गवैये, बजवैये, मूर्तिकार, चित्रकार, रंगकर्मी थे। रामभाऊ संत थे। एक बड़ा भ्रा पूरा आदमी। गणपतराव का जिगरी चिलम दरबार का दरबारी। सावन माह में ब्राह्मण भोजनों की झड़ी लगती। आज इसके यहाँ कल उसके यहाँ। उसी के साथ शिवजी पर संतत धर अभिषेक। एक संत नामवर कीर्तनकार थे। बड़ी भारी हवेली थी। बड़े-बड़े बरतनं, भांडे, बड़ा सरंजाम।

पाटील लोग भी बड़े ऊँचे कलाकार थे। राघू पाटील गांजा दरबार के दरबारी। दोनों हाथों से हार्मोनियम बजाते। हार्मोनियम की धौकनी पैर से चलाते। रोज गणपतराव बाबा की बैठक में आनेवाले। निवृत्ति बोवा मेंढपाल थे। व्यवहार में बहुमत साफ सुथरे। बहुत ढ़िया भजन गाते। चिलम संप्रदाय के नहीं थे। पर बैठक में रोज आते। दूसरा बाबू पाटील सुंदर ऊँचा पा आदमी अभिनय पटु, रंग पक्का काला। शब्द के लिये जान देनेवाला कलाकार।

गणपतबाबा सूर्य की तरह प्रकाशित थे। वैसे ही प्रखर। शाम को चिलीम पीपल के चबूतरे पर होती। कोई न कोई आता शिकायत करता। कभी तहसीलदार की कभी सर्कल

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

की या कभी और किसी अधिकारी, कर्मचार की। गणपत बाबा सुन लेते और फिर गालियाँ देते बेमुर्वत। माँ बहन कोई देखी न जाती। कोई संकोच न होता। तहसीलदार, सर्कल होगा अपने घर का गणपतबाबा के यहाँ सब एकसे।

आदेश होता "उस भडवे से कह दो अभी सूर्य आकाश में चमक रहा है। सूर्य प्रकाश चुराकर चन्द्र जैसे चमकता है उतने पैसे खाये तो कोई बात नहीं, सब ही खाते हैं। सबके मुँह गोबर से लिपे हैं। पर काम करो। न किया तो गणेश जगन्नाथ जैसा बुरा न होगा। गाली उस तक पहुँच ही जाती और काम हो जाता।

डांगण के किसी गांव का पटेल। नामवर। उसकी कोई कबुतरी थी। युवती थी तब नाचने में मशहूर थी। बतासों पर नाचती थी पर बतासे फूटते नहीं थे ऐसा कहते थे। एक बार वे पटेल हमारे यहाँ आये। उपर के दालन में कबूतरी का नाच तय हुआ। रात किरासीन बत्तियाँ आयी। हारमोनियम। तबला-डगा। उसके संगतकार और कौन-कौन। दल्लान ठसाठस भर गया।

कबूतरी आई। पैर में घुघंरु बांधे पान का ड़िब्बा खींचा। पान लगाय। पहला पान मालिक को। पटेल ने वह गणपतबाबा को देने का इशारा किया। दोनों हाथ से पान उसने बाबा के सामने पेश किया।

"अरे इस उम्र में। अपना छोकरा क्या कहेगा? रहने दे। जहाँ की बेल पतरी वहीं जाने दे।"

बाबा ने मुझे सबके सामने अपना छोकरा कहा और सबने मेरी ओर देखा। बाबा का मैं पुत्र होनेपर जैसे मुहर लग गई। नाच चालू हुआ। रातभर चाय बनती रही। रातभर घुंघरु ठुनकते रहे। क्षणभर का भी आराम नचनी ने नहीं किया। फर्माइशें होती रहीं और वह गाती, नाचती रही। वाह-वाह क्या खूब गूँजती रही।

भोर हुई। बाबा कहने लगे भई हमारे पैर तो दुखने लगे। वह ठहर गई। वहीं बैठ गई। दर्दी फूट पड़े। वहाँ नहीं अपनी जगह पर।

कबूतरी होते हुए भी शरमा गई। लोग हल्ला मचाये ही रहे।

गणपतबाबा हंसकर बोले

"सबका ही कहना है तब मानना चाहिये।"

बड़ी मर्यादा से वह उठी। सिर आँचल से ढंका और पटेल के बाँयी ओर जाकर बैठ गई। पर लोग बहुत उत्तेजित थे। चिल्लाकर कहने लगे -

"पटेल साब ऐसा नहीं। इतना सबका रातभर दिल बहलाया उसने अब आप भी हमारा मन रंखिये।"

पटेल बड़ा दिल खुलास, बोला -

"क्या कहना है आप लोगों का?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"कुछ नहीं जहाँ का अलंकार उसी अंग पर शोभ देता है। उसे मुकाम पर बिठाओ।"

पटेल ने नचनी को उठाया और गोद में ले लिया। हंसते-हंसते सबके पेट में बल पड़े। बाबा भी दुपट्टा मुँह में लगाये हंसते रहे।

दूसरे दिन दोपहर कबूतरी अपनी आठ नौ साल की छोकरी लेकर आयी। बाबा के पास आकर बोली -

"बाबा कहाँ है?"

"मैं ही तो हूँ।"

"आप नहीं - आपका बाबा - बच्चा।"

"अच्छा वो यहीं होगा। मुझे बुलाया। कबूतरी ने कहा गणपतबाबा के पास बैठो।" मैं बैठ गया। पूछा "क्या काम है?"

"कुछ नहीं है काम" कहकर उसने अपनी छोकरी को कहा - "जा जाकर गोद में बैठ।"

और वह निर्लज्ज आ गई मेरी गोद में बैठने, मैं भागा। घोड़े के तबेले की ओर। मेरे पीछे उठे हंसी के ठहाके मुझे वहाँ भी सुनाई देते रहे।

कबूतरी मुझे एक ओर खींच रही थी तो निवृत्तिबुवा दुसरी ओर। उनका घर मंडी के पास था। ठिंगना एक मंजिला। आगे चबूतरा। उसपर हमेशा धागा तना। चिये घोटने का एक बड़ा सा पथरौटा। उसमें चिया पीसना। पानी ड़ाल पकाना। लेईसी फिर बड़े से झाड़ू से ताने पर लगानी। ताना सूखने पर अंदर लगे करघे पर चढ़ाना। फिर खटर-पटर आवाज करते क़रघा चलाना।

निवृत्तिबुवा वारकरी थे। पक्के। आलंदी पंढरी जाते। सूर चढ़ा था। काम लायक गायकी उन्हें आती थी। भजनी मंडली के वे खलीफा थे। हर आठवें दिन भजन होता। पूरे साज के साथ। मुझे कहते

"इतना अच्छा गा लेते हो फिर भजनों को क्यों नहीं आते?"

"आप लोग देर रात तक जागते हो।"

"जितनी देर पुसाये उतनी देर बैठे फिर चले गये।"

इस तरह मैं वारकरी लोगों में शामिल हो गया। साताठ भजन याद किये।

खेती के बैल बुवाई, पलटाई तक खेत में जुते रहते। भादो कुंवार में उन्हें कोई काम नहीं रहता। फिर वे पड़ोस की पहाड़ीपर ले जाकर वहाँ चराने को पठाने पड़ते। पहाड़ी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

पर उगती कमर तक ऊँची घास चरकर और जंगल का पानी पीकर वे मोटेताजे हो जाते। फिर वे दलाकते, सींग से मिट्टी के टीले खोदते। कुवांर अन्त में उन्हें फिर जाकर लाना पड़ता। इस वर्ष हमारे साताठ बैल पहाड़ीपर भेजने थे। मैंने कहा -

"मैं भीमा के साथ जाता हूँ। बैल चरनोई के लिए किस घर में छोड़े हैं यह प्रत्यक्ष देख आता हूँ।"

गणपतबाबा ने बड़े संतोष के साथ मेरी तैयारी कर दी। आटे में पनी की जगह दूध ड़ाल मेरी लिये दशमी बनाई। साथ में गुड़, तिल की चटनी। पोटली बनाकर दी। "संभलकर जाना" - उन्होंने कहा।

भीमा और मैं दोनों बैल लेकर निकले। बैलों को इस रास्ते की आदत नहीं थी। उन्हें ठीक रास्ते पर से ले जाना पड़ता। कभी वे बगल के खेत की फसल में मुँह ड़ालते। किसान चिल्लाते। लेकिन बैल गणपतबाबा के हैं यह मालूम होते ही कहते -

"ऐसा है - फिर कोई बात नहीं। ढोर है उसे क्या समझ?"

घडीभर बाद हम पहाड़ी चढ़ने लगे। प्रवरा नदी की घाटी इस समय हरी भरी थी। बीच में से झिलमिल बहती प्रवरा। दोनों किनारे इसे बित्ते गांव; खपरैल या फूँस की छौनार। बीच में चमकते गन्ने के खेत। ये पार पहाड़ी पर पहाड़ी, वैसी ही ऊ पार।

पहाड़ी पर से जाता एक ही रास्ता। उसपर से बैल चल रहे। धीमे। भीमा क्या-क्या सुना रहा। मेरा सारा ध्यान दृश्यावलोकन में। पगलाया सा दृश्य देखता।

अंत में जिस गांव बैल चरनोई के लिये रखने थे वह गांव आ गया। जिस किसान के यहाँ बैल छोड़ आना था उसने स्वागत किया। गणपतराव का मैं लड़का यह सुन वह हर्षभरित हो गया। पहले उसने गाय का दूध पीने को दिया। फिर बढ़िया चावल-गुड़ कटोरीभर घी ऐसा सारा लाकर रखा और बोला -

"भोग लगा लेना - गरीब के घर की मोटी-झोटी है। भात पकाया, खाया। उस दिन हाथ में जो चिकनाई लगी वह चार छह दिन बाद तक बनी रही।

नवरात्रि में देवी के सामने उत्सव होता।

नौ दिन पूरे रात को देवताओं की झाँकियाँ निकलती।

परशुराम, राम, कृष्ण राक्षस, गणपती, देवी कितने ही रास्ते में से नाचते ही निकलते।

इन सब देवी-देवताओं, राक्षसों के कागजी लुगदी के मुखौटे बनाकर रखे हुए थ। नवरात्री दरवाजे पर आते ही इनकी धूल झाड़ी जाती। रंग रोगन होता। शाम को सब स्वाँग तैयार होते। देवी के स्वाँग में छाती पर दो गोले बांधने से शुरुवात। फिर जरीदार साड़ी आदि पहनायी जाती। नकली पर चमकदार आभूषण मुकुट। आँखों की जगह मुखोटे को दो छेद होते।

सरस्वती मोरपर सवार होती। यह मोर भी लुगदी का। पैरों के बीच ऐसे बांध जाता

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

कि लगे मारे पर सवारी है। त्रिपुरासुरमर्दिनी लुगदी के शेर पर ऐसे ही सवार होती। और शेर भी नाचता।

मुझे यही एक आश्चर्य होता था कि ये सारे देवी देवता नाचते ही क्यों चलते हैं? हम आप सरीखा इनको सीधे चलना नहीं आता क्या? स्वर्ग में भी वे ऐसे ही नाचते चलते हों तो मुश्किल है।

मशालों के प्रकाश में ये सारे देवी देवता नाचते। राक्षसों की झांकी के समय मशाल पर राल फेंकी जाती। वह फेंकते-फेंकते सुलगती और उससे राक्षसों की पहले से ही बनी विकराल मुद्रा और विकट जान पड़ती। हाथ में शस्त्र नचाते, चिल्लाते, दहाड़ते ये जाते तो आदमी, बच्चे सचमुच डर जाते।

एक किस्सा मैंने सुना था। एक औरत का प्रसव अटक गया। दाई चतुर थी। उसने दरवाजे पर से जाती झांकियों में से राक्षसों की झांकियाँ दरवाजे पर रुकवाली। वे नाचे चिल्लाये, दहाड़े। प्रकाश अलग भयप्रद था। बस देखते ही देखते प्रसव हो गया। सबसे मजेदार पात्र गणेशजी का होता। चूहे पर वह आरुढ होता। बड़ा पेट दिखाने एक बड़ी सी पोटली पेट से बांधी जाती। उस पर से जरी का लंबा कुर्ता पोटली ढांकता। सूँड एकदंत सब लुगदी का। गणेशजी के साथ दो छोरे छातीपर गोले बांधे ऋद्धि, सिद्धि बने रंगे। ये गणेशजी धीमी गति आते। लुगाईयाँ उनके पैरों पड़ती। फल-फूल दक्षिणा रखी जाती। गणेशजी एक तरफ भक्तों को आशिर्वाद देते दूसरी तरफ आगे कितने पैसे रखे हैं इसका हिसाब करते जाते।

नौ दिन सारा गांव जा ग ता।

एक दिन बाबू पटेल और राधू पटल नगर से लौटे तो बालमोहन नाटक कंपनी का "स्वर्ग पर सवारी" नाटक देखकर।

शाम को हमारे बाड़े के सामने पीपल तले बैठक जमी। चिलीम चली। एक फेरा खाकर चिलम बाबा के हाथ पहुँची।

चिलम शास्त्र का यह सावधानी से पालन किया जाता नियम। चिलमची सब समान। महार चमार भी। चिलम उनको भी दी जाती। छापी या महावस्त्र अपना अलग। लेकिन पहला मान खलीफा का। फिर चाहे कोई भी मूँज की कुंडी तैयार करे। कोई भी उसे सुलगा गांजा भरे चिलम पर रक्खे। कोई भी उसे गांजे पर नपीतुली दबाये। ये सब होते ही चिलम आदर से खलीफा को सौंपी जायेगी। खलीफा दसों अंगुलियों की कमल कली बनाकर उसे उसमें तोले अच्छे होश में उसे मुँह से लगाये। फिर धीरे से दम लगाये। इच्छा हुई तो आखिरी दम तक सारा धुँआ मुँह में भरे रहे। और फिरवह आधा नाकसे आधा मुँह से ऐसा धीरे से छोड़े।

पहला दम खलीफा लगाकर चिलम बैठक को सौंपे और वह घूम कर फिर खलीफा के पास लौट आये। फिर क्या जो बचा वह हर्विभाग समाप्तकर खलीफा चिलम किसी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चेले चपाटे को दे। वह उसका वस्त्रहरण कर उसे औंधी कर जमीन पर ठोके। राख से कंकड बाहर निकाल उसे हाथ पर अच्छी तरह मले। फिर वह चिलम में रख चिलम सहेजकर रख दे।

उस दिन चिलीम खत्म होने को आते-आते बाबू पटेल दौड़ते हुए आया। पीछे-पीछे अपना हाथी पावं संभाले राधू पटेल।

दोनों ही गणपतराव को बताने लगे -

"बाबा क्या नाटक था?"

"क्या काम किया?"

"और क्या सीन सीनरी!"

"अरे पोशाक का तो जबाब ही नहीं।"

"गानों पे तो हम दोनों मर गये।"

नाटक का नाम कहने को दोनो ही भूल गये। तारीफ की बातें खत्म होने पर बाब ने पूछा -

"पटेल, नाटक बहुत ही बढ़िया होगा? शंका ही नहीं, नहीं तो तुम लोग उसके तारीफ के पुल नहीं बांधते। अब एक काम और कर दो तो हो जाये।"

"कौनसा?"

"उसका नाम और खोल दो।"

"हत तेरे की! ऐसी हो गई क्या? उसका नाम था "स्वर्ग पर सवारी।"

"तो "स्वर्ग पर सवारी" हम अपने अकोला से भी करेंगे।"

गणपतराव जान बूझकर बोले -

"करेंगे पर उसके सब पात्र भी तो हों?"

पटेल उठे। मैं लालटेन साफ कर रहा था। मेरे पास आये। मेरी बांह पकड़ चबुतरे पर ले आये बोले -

"यह रहा प्रह्लाद। अब इसकी नाक थोड़ी लंबोतरी है। देह से मामूली है। पर नाटक होने तक घी दूध थोड़ा अच्छा खाये तो फर्स्टक्लास प्रह्लाद।

गणपतबाबा ने यूँ ही मुझे पूछ लिया -

"क्यों रे गोपाल, करेगा न प्रह्लाद का काम।"

आखिर में नाटक में काम करने का चान्स आया। मैंने हामी भर दी।

पात्र योजना करने के लिये बहुत भागदौड़ नहीं करनी पड़ी। मैं प्रह्लाद। एक मोटेसे भारी आवाज के हलवाई थे वे हिरण्यकशिपु, एक सुन्दर दर्जी कयाधू। उस नाटक में रुद्राक्ष, भद्राक्ष और रुद्राक्ष की एक सुन्दर कन्या ऐसे हंसोड़ पात्र भी हैं। रुद्राक्ष बार-बार आकाश की ओर हाथ करके घोषणा करता है "मेरा अनुशासन बड़ा कड़ा है।" प्रह्लाद का वह शिक्षक है। उसकी घोषणा होने के बाद ही भद्राक्ष आता है और मुस्कराकर कहता

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

है - " तारीफ तो यही है।" यह भद्राक्ष आखिर में कड़े अनुशासन वाले रुद्राक्ष की सुन्दर छोकरी को भगा ले जाता है।

भद्राक्ष का काम बाबू पटेल ने लिया। रुद्राक्ष की लड़की के लिये मेरा मित्र शंकर सोनार का नाम आया। शंकर गोरा, दुबला पतला अच्छी नाक नक्श का था। वह थोड़ा गाता और नाचता भी था।

प्रह्लाद के आचार्य जिन्होंने प्रह्लाद को हरिभक्ति का रास्ता दिखाया होता है वह काम करने शंकर सोनार सामने आये। शंकर सोनार गाने के दर्दी। इसलिये वही नाटक के संगीत निर्देशक बने। गीतों को संगीत दिया।

पुस्तकें मंगवायी, फाड़ीं, कापियों पर चिपकाई। हमारे ऊपर की मंजिल का ही एक कोठा साफ सूफ करवाया। हर दिन रात को वहाँ पार्टी जमने लगी। हार्मोनियम, तबला आ गया। गाने-बजाने की धूम मच गई। बारी-बारी चाय-दूध शक्कर लाई जाती - चाय उबलती। पेट्रोमैक्स की प्रकाश खिड़की में से बाहर जाता। हिरण्यकशिपु के दहाड़ते भाषणों से आसपास की औरतें दचक उठती।

मुझे चार पांच गीत गाने थे। मेरे उन गीतों में से एक गीत बहुत भावपूर्ण था। गोरक्षण के लिए भिक्षांदेहि करने जाते तो लोग कहते वही गीत गाओ। मेरी लोकप्रियता बढ़ गई। दान-पेटी अधिक भारी होने लगी।

तालीम मास्टर गणपतराव के आगे अभिनय करना पड़ता। मैं अपना पार्ट बहुत करुण कहता। तो मेरी माँ कयाधू मुझसे कहती "तू इतना करुण कत कहा करो मुझे फिर अपना संवाद याद नहीं आता।" हिरण्यकशिपु भी यही कहता। फिर मैं ज्यादा ही चेत गया। बहुत करुण कहने लगा। एक दिन जब मैंने कहा -

"माँ, माँ तू इतनी कठोर कैसे हो गई? जिस हाथ से तूने मुझे दूध पिलाया मेरे लाड़ किये- उसी हाथ से पिताजी की इच्छानुरुप आज यह विष का कटोरा पिलाती क्यों नहीं?"

यह मैंने कहा और उसको आलिंगन देते हुए उसके पैरों गिर पड़ा।

कयाधू जोर से रोने लगी। हिरण्यकशिपु के आँखों में भी आँसू आ गये।

गणपतराव बोले - "यह बहुत ज्यादा है। हिरण्यकशिपू ऐसा ढीला पड़ जायेगा तो खी से नरसिंह प्रगट ही कैसे होंगे?"

पात्रों के लिये पोशाकें कहाँ से लायी गयी नहीं मालूम। हिरण्यकशिपू का कुर्ता जरा तंग था तो प्रह्लाद का ढीला। लंबा इतना कि नीचे का पीतांबर दिखता ही नहीं था। मुकुट जरुर दैदिप्यमान था। वह पहन एक बार आईने में देख लिया।

नाटक के लिये रंगमंच बना उसमें एक गड्ढे की योजना भी थी। गड्ढे में मुझे कूदना था और नीचे जाकर बैठना था। मंच के चारों ओर कनाते लगाई गयी थी। छोरे कनात ऊपर कर बार-बार देखते। उनको भगाने के लिए स्वयंसेवक रखे गये। ऐसा पक्का इन्तजाम

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

किया गया।

नाटक के दो दिन पहले से ही गणपतबाबा ने मुझे कहीं जाने नहीं दिया। रात को दूध में हल्दी ड़ालकर वे मुझे देते कहते -

"प्रह्लाद का स्वर जैसा स्वच्छ होना चाहिये।"

नाटक के दिन शाम छह बजे सब मंच पर आ गये। रंगमास्टर ने पात्र रंगना प्रारंभ किया। मूँछे कल्ले लगाने थे। इसलिये हिरण्यकशिपू सबसे पहले रंगा गया। फिर उसके साथीदार राक्षस पात्र। फिर कयाधू, मीनाक्षी आदि स्त्री पात्र। रंगने के बाद दोनों स्त्रीपात्र इतने सुन्दर दिखने लगे कि मुझे कयाधू के पास जाने और उसे माँ कहने में भी शरम लगने लगी।

सबसे बाद में आया मेरा नंबर। मेरा मत था कि मैं प्रमुख पात्र होने के कारण मुझे सबसे पहिले रंगा जाना चाहिये था। पर रंगने के बाद मुँह ऐसा कुछ कसने लगा कि बाद में रंगा यह अच्छा ही हुआ ऐसा लगने लगा।

नाटक को टिकट नहीं था। इसलिये बहुत भीड़ थी। इतना शोरगुल था कि कुछ पूछो मत। पेट्रोमैक्स हिस्स् की आवाज कर ही रहे थे। तबलेवालों की ठोंक-ठोंक चल रही थी। पात्रों के कर्ण भूषण और दंडभूषण मिल नहीं रहे थे इसलिये वह भी शोर था।

मेरी सजावट बहुत देर तक चल रही थी। इसे पहना उसे उतार फिर कुछ और पहना ऐसा करते बहुत देर बाद मैं सज पाया। जो-जो मुझे देखता कहता ऐसा सुंदर प्रह्लाद कभी देखा नहीं था। देखते भी कैसे? प्रह्लाद का नाटक ही कभी अकोला में हुआ नहीं था।

आखिर नाटक की तीनों घंटा हो गई। धूप जलाया गया। पर्दे और मंच की पूजा हुई। पर्दा खुला। पहला प्रवेश प्रारंभ हुआ। लेकिन दर्शकों का शोर और गड़बड़ बहुत थी। वे पात्रों के आने जाने पर टीका करते। उन्हें उनके वास्तविक नाम से बुलाते। पात्र सभी पहचाने होने से। अपने बुलाने पर भी न बोलने पर नाराज हो रहे थे। कह रहे थे "कल देखेंगे बच्चू तुम्हें।"

पर्दा गिरा दिया गया। गणपतबाबा सबके सामने हाथ जोड़ खड़े हो गये। सब धीरे-धीरे चुप हो गये। तब उन्होंने कहा ऐसे ही आप लोग चुप बैठेंगे तो नाटक होगा। सब अपने हैं। पहली बार नाटक कर रहे हैं इसलिये उनका हौसला बढ़ाने के लिए सबका चुप रहना जरुरी है।

वे अंदर आ गये। पर्दा उठा और नाटक आगे बढ़ा।

शुक्लाजी का लिखा यह नाटक ही रंगतदार है। हिरण्यकशिपू की उन्मत्तता-कयाधू की असहायता - प्रह्लाद का दृढ़ निश्चय सब उत्तम है। भद्राक्ष और मीनाक्षी के प्रवेश मजेदार हैं। शंकर बहुत अच्छा दिख रहा था। मनचले तो टकटकी बांधे उसे देख रहे थे।

मेरे प्रवेश भी खूब रंगे। प्रह्लाद बाप के कहनेपर आग में कूदता है इसके लिए एक गड्ढा किया गया था। प्रवेश के प्रारंभ में उसे सुलगा दिया गया। दो दैत्य प्रह्लाद को लेकर आये। वह नारायण-नारायण कहने से रुक ही नहीं रहा था। फिर उसे हिरण्यकशिपू

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आग में कूदने को कहता है। सुनते ही वह आग में कूद जाता है और गड्ढे में जाकर सुरक्षित बैठ जाता है। माँ बहने जोर से दहाड़ पड़ीं।

अन्तिम विष प्राशन का प्रयोग, खंभा फोड़कर नरसिंह बाहर आता है वह प्रयोग। प्रह्लाद का कष्ट देखकर जिसकी आँखें गीली न हुई हों ऐसा एक भी नहीं था।

नाटक समाप्त होते ही बड़े-बड़े दौड़कर अंदर आये। बाबा से बोले। अरे प्रह्लाद और मीनाक्षी की नजर जरुर उतार लेना।

बाबा को बड़ा अच्छा लगा। उन्होंने जिस पौधे को लाकर लगाया था वह अच्छा बढ़ा था। उनका नाम तो रख ही रहा था उसे बढ़ा भी रहा था।

आदमी एक संकल्प करता है तो उसका भाग्य उसे चिढ़ाता रहता है। ऐसा लगने लगा था - पक्का ही था कि अब यह गोरक्षण - यह खेती-यही बाड़ा-यह घोड़ा-गणपतराव की प्रतिष्ठा सब संभालना है। यहीं रहना है। अपने पैर के तलुवे पर पड़ा चक्र का चिह्न भी मैं भूल गया था।

कभी-कभी घर की याद आती। उसे मैं निश्वस से पोंछ ड़ालता। "मदायत्तम तू पौरुषम्" याद करता। यह सब मैं अपने कष्ट से खड़ा करुँगा।

और बहाना एक ककडी का हुआ।

डांगण से किसी ने ककडियाँ लाकर गणपतबाबा को दी।

मुलायम थी बिल्कुल। उसका रायता बनाया उन्होंने और मैंने उनके संग ही खाया।

दोपहर खेतर पर गया। हलवाही देखने। शाम को लौटा तो घरपर भीउ जमा। कांप गया। देखा तो गणपतबाबा का पेट मसक सा फूला था। और वे मछली की तरह तड़प रहे थे।

उपाय चल रहे थे। किसी ने उन्हें एनिमा भी दिया। पेट की सिंकाई की। पर ढम्म नहीं। सब रात ऐसी ही गुजरी।

सुबह एक वैद्यजी आये और बोले "मेरे मत से अभी तक जो उपाय हुए वे सब उलटे थे, मुझे अपनी तरह से इलाज करने की छूट दें तो उपाय करुँ।

जाने क्या-क्या किया उन्होंने। फिर डॉक्टर आया। उसने कहा यहाँ इलाज संभव नहीं, अहमदनगर ले जाइये।

अकोला आया था तब एक अनाथ बेपता माँ बाप का लड़का था। गणपतरावबाबा के कारण लोग मुँहपर वैसा कहते नहीं थे पर सच बात वही थी।

धीरे-धीरे मेरे गुणों के कारण लोग पहचानने लगे। आओ बैठो कहने लगे। माँ बहनें मेरी ओर सकौतुक देखती। बच्चों के बीच मेरी प्रतिष्ठा बढ़ी। फिर एक उपक्रम मैंने और किया और उससे मेरी प्रतिष्ठा और बढ़ी।

एक दिन मैं गणपतबाबा के सामने जाकर बोला -

"बाबा मैं कीर्तन करुँगा। कल।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आश्चर्य से मेरी तरफ देखते बोले -

"क्या कह रहे हो। कीर्तन?"

कीर्तन करने का मेरा यह प्रस्ताव पूरी तैयारी के बाद था। बाबा के यहाँ एक पुस्तक "धेनु कथा संग्रह" मुझे मिली। यह पुस्तक चौंडे महाराज की लिखी। उनके किसी चेले ने यहाँ लाई हुई। गोरक्षण के कारण चौंडे महाराज का बाबा का सम्पर्क था। धेनु कथा संग्रह देखी पढ़ी तो उसमें धेनु कथा पर आधारित कुछ कीर्तन थे। कीर्तन में जैसे मुख्य कथा को सजाया जाता है वैसे उसे दोहे-साकी-चौपाई आदि के साथ लिखा हुआ। मुख्य कथा के साथ अध्यात्म निरुपण भी। मैंने खेतों की मेड़ पर बैठे-बैठे एक कीर्तन सब तरह से कंठस्थ कर लिया और तभी बाबा से कहा।

मैंने कहा - "हाँ कीर्तन। चाहे तो आपके सामने अभी कर दूँ।"

बाबा का मेरे उपर विश्वास था।

"रहने दे। हार्मोनियम, तबला सब आ जायेगा और कल तेरा कीर्तन होगा।" बड़े लाड़भरे बोले।

दूसरे दिन उन्होंने घोषणा कर दी "हमारे चिरंजीव कीर्तन करेंगे आज" तबला हार्मोनियम वालों के साथ दोपहर थोड़ा अभ्यास कर लिया। रात हुई, मंदिर में संगतकार बैठ गये। मूठ भर ऊँचाई के धोती कुर्ते और कमर में जराकाम का दुपट्टा बांधे कीर्तनकार का कीर्तन प्रारंभ हो गया।

गणपतराव बाबा ने कहा था "मैं थोड़ी देर बाद आऊँगा।" प्रयोजन मालूम न हुआ। बाद में समझ में आया। वे आये और सीधे कीर्तनकार के चरणो में सिर नवाकर सामने ही बैठ गये। पहले संकोच हुआ फिर अभिमान। पर बाद में समझ आया कि बाबा का नमस्कार किर्तनकार लड़के को नहीं नारद जी को था।

बाबा स्वयं बैठे होने से कीर्तन में बड़ा रंग आया। एक अक्षर का भी अर्थ ज्ञात नहीं था पर कंठस्थ किया हुआ सारा अध्यात्म ठोक दिया। आरती हुई। चढ़ोत्री भी आई और थोड़ी सी। पंजरी बाटी गई।

घर लौटने पर बाबा ने कहा "मेरे गोरक्षण कार्य का क्या होगा यह चिंता अब नहीं रही।"

पर काहे का अ ह म द न ग र!

बाबाने गोरक्षण के पंचों को बुलवाया। मेरा हाथ उनके हाथों में दिया और आंखें फेर लीं। सब खत्म हो गया।

अकोला में ऐसी शवयात्रा निकली नहीं थी। इतनी भीड़ थी। गणेश जगन्नाथ जोशी के बहादुर की चिता में अग्नि मैंने दी।

गणपतराव थे तब तक कृष्णाबाई की कुछ चलती न थी। उनके गुजरते ही उसने अपने नख बाहर निकाले।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"इस कम्बख्त ने मालिक को क्या कुछ खिला दिया।" ऐसा प्रचार। इतना मुर्खतापूर्ण था कि उसको उत्तर देने की आवश्यकता नहीं थी। परन्तु कृष्णाबाई दस-बीस साल से गणपतराव के पास थी। मुझे हुए थे केवल दो वर्ष। ऐसी स्थिति में वह अगर उस बाड़े की, सम्पत्ति की मालकिन बन अपना अधिकार जताने लगे तो मैं प्रतिवाद भी किस तरह करता।

खेत में जाता पर उदास हो जाता। एक दिन शाम को लौटा तो कृष्णाबाई ने ताले ड़ाले देखे। उपर जाने न दे। पंच लोगों के पास गया। उन्होंने कहा -

"तुम जबतक नाबालिक हो तब तक तुम्हें कृष्णाबाई के अधीन रहना पड़ेगा।"

तेरहवें वर्ष घर छोड़कर बाहर आ गया था। माँ-बाप, भाई-बहन किसी का मोह मुझे बांधे नहीं रख सका। फिर उस दिशा में गया भी नहीं था। ऐसा स्वैर पंछी मैं। कल परसों के प्रत्याशित स्वामित्व का मोह मुझे कैसे पड़ता?

सीधे उठकर निवृत्तिनाथजी के यहाँ गया। वे बहुत अनुभवी। मेरा मजाक करने लगे। प्रह्लादजी तुम तो आग में कूद थे न? औरत से डर रहे हो!"

लेकिन अपने पास रख लिया। खिलाया-पिलाया। शाम को दोनों मिलकर सिद्धेश्वर की ओर गये। स्मशानघाट की साढ़ियों पर बैठे - गणपतराव को अग्नि दिया वह स्थान सामने था।

उन्होंने पूछा - मैंने बताया - क्या, क्या?

अंत में उन्होंने कहा -

"मैं कल जाता कोंकण आते क्या मेरे साथ?"

वे हरसाल जाते थे। एक बार इन दिनों केंबल देने फिर फसल कटने पर पैसे लेने। बोल - "चलोगे तो मुझे भी मदद हो जायेगी।"

एकदम कहा - 'चलो।'

निवृत्तिबुवा और मैं कोंकण जाने के लिए कंबलों की गठडियाँ लिये आसनगंगा रेल्वे स्टेशन पर उतरे। पिछला जीवनसूत्र टूट गया था। अगला कुछ दिख नहीं रहा था। अकोला से निवृत्तिबाबा मुझे साथ ले आये। यह लड़का कम्बलों के व्यौपार में उपयोगी रहेगा। उधारी लिख रखेगा। वह वसूल कर लेगा। ऐसा कुछ-कुछ उनके मन में हो सकता था। मैं बेहोश सा उनके साथ हो लिया था। अंधेरे में कुछ टटोल रहा था।

तांगे में बैठ हम अपने मुकाम की ओर बढ़ रहे थे। और हमने देखा कि सारा परिसर रंग-बिरंगी झंडियों से सजा हुआ था। हमारी जिज्ञासा जागी। मुकाम पर उतरे तो मालूम हुआ कि गाड़गे महाराज के कोई शिष्य शंकर महाराज हैं। गत सात दिन से वे वहाँ नाम सप्ताह कर रहे हैं और उसकी समाप्ति है। और तन्निमित्त स्वयं गाड़गे महाराज शाम को आनेवाले हैं। रात को उनका कीर्तन है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कीर्तन शब्द ने मुझे फिर जैसे खंगार कर चेताया। चार दो कीर्तन मुझे भी याद थे। यहाँ वहाँ कीर्तनकार का स्वाँग भरकर समय भी साधा था। एक ख्यातनाम कीर्तनकार का कीर्तन सुनने को मिलेगा यह समझ में आते ही मन उत्साह से भर गया। रात हम दोनों कीर्तनस्थान की ओर चलने लगे।

गांव के बाहर एक बहुत बड़े मैदान में कीर्तन था। सारा मैदान झंडियों से सजाया था। बीच-बीच खंभों पर गैस बत्तियाँ लटकायी हुई थी। मैदान आदमियों से भरने लगा था। गांव-गांव के आदमी-औरतें, मर्द, कच्चे-बच्चे, बूढ़े पांच कोस तक के। चलकर, बैलगाड़ी पर जैसे बने वैसे आये हुए थे। मैदान के बाहर बैलगाडियाँ छूटीं थी। सारा वातावरण उत्साह से भरा हुआ।

यह मेरे लिये नया और अपूर्व था। किसी एक ने कीर्तन के लिए आठ दस हजार आदमी जमा हो सकते हैं यह मेरी कल्पना के परे की बात थी। राजकीय सभा के लिए इतने आदमी जमा हो सकते हैं यह मुझे मालूम था पर कीर्तन को इतनी भीड़ जमा हुई यह देखकर मैं चकरा गया।

भीड़ बहुत थी। हर कोई आगे जाने को मचल रहा था। निसंग होकर सबकी गालियाँ और धक्के खाते, हम दोनों लेकिन बाबा जहाँ कीर्तन को खड़े होने वाले थे वहाँ तक दौड़ गये। झांझ मजीरे पर भजन सुरु था। बाबा के दस, पंद्रह शिष्य भजनी साथी - उनके कपड़े लत्ते सामान्य से अलग। सब खुले सिर। सिरपर अंटसंट बाल बढ़े हुए। किसी के बदन पर लाल शाल का कुरता तो कोई उघाडा। गले में सबके तुलसीमाला। और एक चोखाने का तिरछा कपड़ा। शायद वह जरुरी। सम्प्रदाय का चिह्न।

हल्ला उड़ा जोर से - बाबा आ गये।

चारों दिशा देखने लगा। बाजू की भीड़ चीरते गाड़गे महाराज चीते की गति से बीचों बीच आ गये।

उनका वह प्रथम दर्शन। चांदी से सफेद बाल। बत्तियों के प्रकाशन में चमचमाता लट्टूसा चेहेरा। जान बूझकर बढ़ाई रखाई थोड़ी दाढ़ी मूँछे। गोरे पन की ओर झुका रंग। कंजी आँखें। मुद्रापर अभय, करुणाई। फटीसी धोती-कुर्ता पहने।

थोड़ा खिलवाड़, थोड़ा नाटक, हाथ में डंडा और एक मटका ऐसे गाड़गे महाराज अचानक कीर्तन के फड में आकर दाखल हुए। भजन रोक दिया गया। बाबा ने एक बार सबकी ओर देखकर हाथ जोड़े। और फिर एक कान पर हाथ रखकर अंभग कहना प्रारंभ किया।

ऐसा लगा कि आकाश से घनगर्जना सुन रहा हूँ। उतना ही गंभीर गोल और उतना ही चौड़ा। भरा हुआ और आश्वासक। सुनते ही दीवाना बनानेवाला।

अभंग कदाचित तुकारामजी का उपदेशपर था -

पैर छू, निवेदन करुँ आपसे
ताली दिजो हाथ से, राम बोलो मुख से

जिसका भावार्थ सरल है - आपके पैर छूकर निवेदन है, हाथ से ताली मुँह से नाम बोलिये।

Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अभंग हो गया। फिर बाबा ने शुरु किया भजन - राम, राम, राम सीताराम राम राम। भजन रुक गया और फिर शुर हुए घोष 'पुडरीक वर दे हारी विठ्ठल' आदि। और फिर धरी से प्रारंभ हुआ वाणी का प्रवाह।

नागपूर के आसपास के इलाके को वर्हाड कहते हैं। बाबा इसी वर्हाड के। उनकी बोली ठेठ वर्हाडी। उस बोली में उनका कीर्तन प्रारंभ हुआ।

"तुकाराम माहेराज मन्तत्" ऐसा था कीर्तन का प्रारंभ। लोक करुणा से भींगे बाबा प्रसादवाणी से बोल रहे थे। कभी वे लोगों के गवारुँपन पर चढ़ रहे थे, दोषों पर चाबुक मार रहे थे तो कभी मजाक कर रहे थे। कभी समझा रहे थे। कभी उन्हें जैसे मालूम ही नहीं क्या स्वाँग बना रहे थे।

कीर्तन का गांव था कोंकण में। कीर्तन के लिए इकट्ठा लोक कोंकणी। बाबा की बोली वर्हाडी (मराठी सारस्वत लोगों के भी एकाएक पल्ले न पड़नेवाली) परन्तु भाषा का अन्तराय संवाद में बाधक नहीं हो रहा था।

बोलनेवाला, श्रोता के कलेजे को सीधा छू रहा था। श्रोताओं की पकड़ में आये ऐसा बोल रहा था। बोलने का ढंग और शब्दावली दोनों ही अपरिचित होते हुए भी श्रोता खूब खूष थे। हर एक शब्द दाद लेकर बाबा तक लौट रहा था।

वैसा कीर्तन मैं जीवन में पहिली बार सुन रहा था। जन-जन को इतना गोद में लिये, दुलारकर, कभी कान उमेठते हुए भी समझाया जाता है यह बात मुझे बिल्कुल मालूम न थी।

वह अद्‌भुत कीर्तन सुना और उसी समय मुझे मेरा ठिया मिल गया। मेरा स्थान अगर कहीं होगा तो बाबा के पास बैठे इन फक्कड बैरागियों में है - यह मैंने जाना।

कीर्तन हो गया और बाबा देखते-देखते नदारद हो गये।

दिनभर सुना था बाबा गुम हो जाते हैं। इस जनश्रुती पर विश्वास न था। उस वय में भी नहीं था। सोचा कहाँ जायेंगे। धरित्री फोड़ तो कहीं जा नहीं सकते - आकाश चीर कर भी नहीं जा सकते। एक युक्ति मैंने की। बाबा के एक चेले को पकड़ रखा। उस उफनती भीड़ में भी उसकी पीठ मैंने छोड़ी नहीं। उसकी पूँछ पकड़े रहा। उसके अनजाने।

और वह मुझे अन्ततः बाबा के पास ले गया। अपने पीछे लगते असंख्य लोगों को बिना पता लगे वे जंगल में एक पेड़ के नीचे अंधेरे में बैठे थे। पास में दो लकड़ियाँ जल रही थी। उस प्रकाश में उघाडे, तेजस्वी, गले तुलसी माला पहने, बाबा मुझे दिखे। शिष्यों से वे विनोद कर रहे थे, हंस रहे थे।

शंकरबुवा सुतार एक टोकरी में रोटी, दाल लेकर आया। पीछे एक गांववाला पानी भरी गगरी सिरपर लिये था। अलाव के प्रकाश में भोजन की तैयारी चल रही थी।

मैंने बाबा को देखा और एकदम जाकर उनके पैरों में गिर पड़ा। पीठ पर लाठी पड़ी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

और गुस्से में कहे शब्द कान पर पड़े।

"बह्याने व्हा काय जी? एकदम पायांवर डोकस ठेव्याले धावले?" (स्याने हो क्यों जी। एकदम पैर पर सिर रखने दौड़ पड़े?)

कुछ समझ नहीं पडा। पैरों के पास ही थोड़ा पीछे हटकर बैठ गया। बाबा का फिर थोड़ा सौम्य स्वर सुनाई पड़ा -

"किस गांव के हो?"

आती रुलाई को प्रयास से रोकते बोला -

"कौन सा गांव कहूँ मेरा कोई गांव नहीं हैं।"

बाबा का स्वर एकदम मुलायम हो गया, उन्होंने पूछा -

"क्या करते हो जी?"

मैं चौदह पन्द्रह का छोकरा, बाबा होंगे करीब पैंसठ सत्तर के। प्रसिद्ध साधुपुरुष। परन्तु मुझ से भी आदरार्थी बहुवचनी प्रयोग करते बोल रहे थे।

मुँह में आया - कह दिया - "कीर्तन करता हूँ।"

आश्चर्य से बाबा ने पूछा -

"कीर्तन करते हो?"

"हाँ बाबा गोरक्षण के कीर्तन करता हूँ।"

बाबा ने फिर पूछा :

"अभी कर दिखाओगे - कोई किर्तन?"

"हाँ।"

"अच्छा रहने दो लेकिन फिर अकेले किर्तन करते हो तो हमारे संग क्यों नहीं आते?"

प्यास के मुँह में अमृत सिंचन हो वह मेरी गति - मैंने केवल मुंडी हिलाई।

बाबा ने पूछा -

"नाम क्या है?"

"गोपाल!"

"ब्राह्मण हो क्या?"

"हाँ।"

"महानंदबुवा! इनको रखो अपने साथ।"

महानदंबुवा ने मुंडी हिलाई। तबतक मुझे खोजते निवृत्तिनाथ वहाँ आ गये। मुझे बाबा की मंडली में बैठा देख सब समझ गये। कहते गये - जहाँ भी राहे, अच्छे रहो।

महानंद स्वामी ठिंगना, इकहरा, चतुर आदमी था। हमारा मुकाम था देहू। इंद्रायणी नदी के तीरपर बाबा की बनवाई धर्मशाला में महानंद स्वामी के बच्चे रहते और अभंग पाठ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

करते रहते। बच्चे उनके नहीं - मुझ सरीखे ही बाबा के पीछे लगे, घर छोड़कर भागे हुए। कहाँ-कहाँ के, किस-किस जात के। सब इकट्ठे रहते थे। एक जगह खाना खाते। धर्मशाला अभी बन रही थी उसमें कुछ काम करना। बाकी फिर अंभग ओवी याद कर कीर्तन सिद्धता करना।

एक विधवा बनूताई उन सबकी व्यवस्था देखती थी। बनूताई तगड़े कद-काठ की, धारदार नाक की, शूर और बड़े हिम्मत की महिला थी।

बच्चे एक सरीखे लाल रंग के कपड़े पहनते थे। दुटांगी धोती, बाल बढ़े हुए, सिर खुला। दिनभर काम और पढ़ाई होने के बाद शाम को एक जगह बैठते प्रार्थना करते। महानंद स्वामी होते तो उनका प्रवचन होता।

आज के एक दो विधायक भी उसमें तब थे। मेरी ही आयु के पन्द्रह बीस लड़के थे। मैं देहू आया तो मैं कीर्तनकार होने से मैं बच्चों को सिखाऊँ यह आदेश हुआ। मेरे गले में सम्प्रदाय की माला नहीं थी। वह महानंदस्वामी ने पहनायी। हेतु यह कि मैं महानंदस्वामी का अनुग्रहित हो गया।

देहू गांव शांत और कुछ उदासी लिये हुए था।

उस जमाने में देहू के पास आर्डिनेन्स डेपो नहीं था। देहू रोड रेल स्टेशन भी नहीं था। फागून बदी दूज को यहाँ भीड़भाड़ होती। तुकाराम का वह वैकुंठगमन दिन। उस दिन देहू में पांच-पचास हजार आदमी इकट्ठा होते। उसके बाद फिर वही शांति। हर माह की ग्यारस सुदी को भी पांच-पचास वारकरी वहाँ इकट्ठा होते थे। पर सब सुबह आते शाम निकल जाते। इसलिए भी मठ या धर्मशाला नहीं के बराबर थी वहाँ। जो थी उसमें चार दो साधक पड़े रहते।

महानंद स्वामी मुझे सबका शिक्षक नियुक्त कर चले गये। लेकिन मेरे पास उन बच्चों को सिखाने लायक कुछ नहीं था। वे सब बच्चे स्वयंप्रज्ञ थे। घर छोड़कर गाड़गे महाराज के कीर्तन के पीछे दीवाने होकर आये हुए वे बच्चे। उनके ही आयु का किडामिडा मामूली सा मैं उनपर क्या शासन करता? फिर भी उनका शिक्षक होने के अहं का गुब्बारु मैंने फुलाया हुआ था। वह कई कारणों से फूटता फिर भी।

एक दिन महानंदस्वामी का पत्र आया बनूताई को। बंबई में भायखला में सप्ताह है - सब बच्चों को लेकर आ जाना। बनूताई सब लड़कों पर शासन चलाने में समर्थ थी। वह हम सब को लेकर बंबई चल दी। मैं बंबई से परिचित था ही। वहाँ पहुँचे। सात दिन सप्ताह हुआ।

सप्ताह की एक कड़ी शर्त थी। रातदिन भजन करते हुए गले में वीण लटकाये पहरा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

करना। पहरे की पालियाँ बदलती। घंटे-घंटे, दो-दो घंटे बाद।

मेरी भी एक पाली, अभंगों का पाठांतर शुरु था। जब पहरे पर मैं खड़ा होता तो अलग-अलग रागदारी मैं गाता। गले पर कुछ संस्कार घर के, कुछ नाटकों पर्दो के थे। इसलिये मेरा अभंग गाना सबको अच्छा लगता। जनीं सुनती बैठती। मेरे पैरों में सिर नवातीं। नमस्कार और मुझे। नहीं वह तो पहरेदार को होता है। पर इतनी अकल कहाँ। कोई आदमी दर्शन करने आते ही मैं दोनों पैर इकट्ठे कर लेता।

रोज रात को कीर्तन। महानंदस्वामी उस सप्ताह के महंत। इसके सिवाय बाबा के कितने ही शिष्य इस बहाने इकट्ठा हुए थे। उनमें से कुछ के कीर्तन सुने। सबकी रीति एक सी। सब बाबा के पठडी से तैयार हुए।

सप्ताह समाप्त हुआ और हमारी लालसेना बनुताई के नेतृत्व में बंबई से देहू के लिये पैदल चल दी।

जमाना था उन्नीस सो चौंतीस-पैंतीस का। उस जमाने में आज के जैसे अच्छे राष्ट्रीय राजमार्ग नहीं थे। बड़े-बड़े रास्ते भी केवल मिट्टी के होते। तेज वाहन जाते ही धूल उड़ती। कहीं किसी रंग को पहचाना नहीं जाता। इतने रंग से रंगता।

बैलगाड़ियों से माल यहाँ से वहाँ भेजा जाता था। सौ पचास गाड़ियों का काफिला एक के पीछे एक ऐसा चलता। बैल के गले में बंधी घंटियों का नादस्वर सुनाई देता। उस आवाज का बड़ा भरोसा लगता पादचारी को। उसका रास्ता भी सुभीते से कट जाता।

महाराष्ट्र में पेशवाई से सड़क के दोनों ओर वृक्ष लगाये जाते। अंग्रजों ने उसको जतन किया था। बड़, नीम, पिपरी, आम की घनी छाया रहती थी। थकान आने पर पलभर आराम कर तरोताजा हो यात्री आगे बढ़ता।

बंबई-पुणें रास्ते से हमारी यात्रा शुरु हुई। दिनभर रास्ते की धूल उड़ाते हुए चलना। गांव पास आते-आते दो-दो की जोड़ी में होकर चलना और भजन गाना। लाल कुर्ते पहने पंधरह बीस लड़के पंक्ति में हरिनाम गाते जाते अवश्य ही अच्छे लगते होंगे। इस दृश्य को देखने आदमी इकट्ठा होते पूछताछ होती। गाड़गे महाराज के सम्प्रदाय के हैं यह सुनते ही एकाध रात रहने का आग्रह होता ही। कहीं किसी मंदिर में उतरने की व्यवस्था भी हो जाती। घर-घर से रोटियाँ इकट्ठी की जातीं। दिनभर हमें देखने लोग मंदिर में आते। हम गंभीर मुद्रा बनाये हाथ में गाथा हरिपाठ लिये बैठे होते। मंदिर में अन्न आता उसके सुवास से जीभ पनियाती। लेकिन विरक्ति का नाटक करना पड़ता। मुझे अधिक। क्योंकि मैं शिक्षक बनाया गया था। मेरी शिक्षकी कोई मानता नहीं था फिर भी। सिवाय बनूताई का शासन कठोर था।

मंदिर के सामने मैदान में कीर्तन का रंग जमाया जाता। कोई पेट्रोमैक्स लाता, कोई झांज-मजीरे। भजनी मंडली भी कहीं से इकट्ठी हो जाती। फिर हम में से कोई एक कीत्रन के लिए खड़ा हो जाता। कीर्तन करता वैसे तो सरल था। दस बीस अभंग, पांच पचास दूसरे दोहे चौपाइयाँ। दस बीस किस्से, कुछ श्रोताओं अर्थात आम लोगों की कमजोरियाँ और खड़े होकर दस-पचास के सामने कहने का साहस।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गाड़गे महाराज ने बरसों घूमकर यह निश्चित कर रखा था कि श्रोताओं का दिल कैसे जीतना और वह अपने चेलों को सिखा भी दिया था। उसी बनूताई के संकेत पर बैठ जाता। आखीर में मेरा नम्बर आता। लेकिन मेरे साथ मुसीबत यह होती कि मैं जो कुछ तय करता वह दूसरे ही बोल जाते। फिर मैं कुछ बदल करता। कभी अच्छा परिणाम होता तो कभी बुरा। लोगों के सामने बोलने लायक बेशरम इन कीर्तनों से मैं बना।

दूसरे दिन भारे उठते ही दूसरे गांव के लिये चल पड़ते। रास्ते में नदी या कुआँ मिलते ही रुकते। प्रातर्विधि की जाती। फिर दोपहर के भोजन की खोज करते आगे बढ़ते। दोपहर तक दूसरे गांव में हमारी लाल सेना पहुँच ही जाती। फिर दरवाजे-दरवाजे रोटी माँगते। भीख मांगने में इतना घुट गया था, इतनी युक्तियाँ ज्ञात थी कि इस मामले में पूरी टोली मेरा आचार्य पद मानती थी।

कौन से घर टालने चाहिए यह मुझे ठीक-ठीक मालूम था। जिस घर में संस्कृति का कोई चिह्न नहीं, दरवाजे पर तुलसी का पौधा नहीं, आंगन लिपा नहीं, उसपर अल्पना या रांगोली नहीं, पुरुष ही पुरुष दिख रहे हैं, बच्चों की पलटन है ऐसे घरों में भीख मिलने की संभावना कम रहती है। जिस घर में गाय बछड़ा नहीं, कुत्ता-बिल्ली नहीं, सारे घर पर उदासी है वह घर छोड़ देना चाहिये। जिस घर की दीवारें सालो से लिपी पूती नहीं, जिस घर की छौनार उजड़ी हो। जहाँ अंधियारा हो, उस घर के दरवाजे में खड़े नहीं रहते। जिस घर से झगड़े की आवाज आ रही है, दुश्चिता दिख रही हैं, खंड़हर सा है वह घर भी छोड़ना चाहिये। जहाँ बहुत चमचमाट है, मोटर-गाड़ी है, बच्चे संभालने के लिए दाया-नौकर हैं वहाँ से भी भीख मिलने की संभावना नहीं रहती।

भीख सामान्यतः मध्यम स्थिति के घर से ही मिलती है। दोपहर के ऐन वक्त की आवाज उन घरों के माँ बहनों के कान पर पड़ने पर वहीं से रोटी मिलती हैं।

इस समय हम अधिकतर से अभिमान से भीख माँग सकते थे। लाल कुर्ते हमने पहने थे। गले में तुलसीमाला थी। गाड़गे महाराज के सम्प्रदाय का होने पर गर्व था। रात को कीर्तन कर सकते थे। दिन में जिसने भीख नहीं दी या दी उसकी निंदा-स्तुति खुले में कर सकते थे। भीड़ की अर्थात उसी गांव की भीड़ की साक्षी में कंजूस कहकर उसे नीचा दिखा सकते थे।

झांज-मजीरे की संगत में उनका मजाक कर सकते थे।

इसीलिये किसी भी दरवाजे पर लेनदार की तरह खड़े रहना - पूछने पर कहना गाड़गे महाराज के शिष्य हैं - देहू को जा रहे हैं रोटी चाहिये हैं। मानों वह हमारा अधिकार था। समाज मान्य अधिकार। हमें रोटी देकर वह हम पर उपकार नहीं करते भगवद-भक्तों को अन्न देकर वे अपनी ही संस्कृतिक झोली भरते हैं। देनी हो तो दो अन्यथा इस लाभ से वंचित रहो।

रास्ते के सार गांव अच्छी तरह देखे। सारे अव्यवस्थित - शौचायल नहीं - नालियाँ खुली बहती हुई। पर दरवाजे पर खड़े अतिथि को रोटी देने की सुजनता अधिक।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

देहू पहूँचे असाढ़ लगते। पंढरपूर की असाढ़ी यात्रा के दिन नजदीक थे। वारकरी सम्प्रदाय के कुछ लोग असाढ़ में और कुछ कार्तिक में पंढरपुर की यात्रा करते हैं। पर बाबा के सम्प्रदाय का सम्मेलन असाढ़ में ही होता। कार्तिक में दिन खुले होने के कारण शिष्य लोग मुलुख गिरि करते दूर-दूर जाते।

इसलिये अब देहू से पंढरपुर पहुँचना था। पंढरपुर में गाड़गेबाबा की विशाल धर्मशाला थी। वहीं पर सारे विरक्त और विजिगीषू देखने को मिलने का आनंद भी था।

देहू से पंढरपुर, पर सीधा न जाना था। देहू से वाई पहले पैदल ही जाना था। वाई उस समय के प्रसिद्ध चौंडे महाराज का स्थान। चौंडे महाराज की प्रेरणा से पंढरपुर की असाढ़ यात्रा के लिये एक दिंडी निकलती थी। इस दिंडी के साथ फिर वाई से पंढरपुर जाना था।

पुणें पीछे छोड़ कात्रज का घाट चढ़कर आगे निकले। सिलसिला वही। गांव आते ही दो-दो की जोड़ी में पंक्ति में गांव में भजन गाते फिरना। गाड़गे बाबा के नाम से भोजन जुटाना। किसी के जोर देने पर रात को ठहरना - कीर्तन करना। दूसरे दिन गृह विहीनों का यह मेला आगे बढ़ाना। दिन कैरियों के थे। पुणें सातारा रास्ते पर तब आम बहुत था। रात कीर्तन करता था। उपदेश बांटता था पर लड़कही से मुक्त नहीं था। फिर आम पर पत्थर मार गिराना - रास्ते में कहीं से नमक माँग लेना, कैरी खाते रास्ता चलना - ऐसा सब चलता था।

जीवन में पहली बार इतनी प्रतिष्ठा मिली थी। गाड़गेबाबा की मंडली का होने से जनलोक पाँव छूते। कीर्तन के लिये खड़े होने पर चाहे जो बकझक करता। लोग मुस्कुराते। कहते गाड़गेबाबा के कीर्तन ये ऐसे ही होते हैं। पर वे संभाल लेते। इससे एक तरह की हेठी और फेंकाफांक आ गई थी। कोई माँ बूढी कोई खस्ता, खुस्ता सहेज संभाल लाती तो "नाहीं" कह देता। तड़ाक से उठकर चल देता। लोग कहते - पीठ सुनती - कितनी विरक्ति है - पीठ में से गुदगुदी उठती। फूल कर कुप्पा हो जाता।

हवा में तैरते वाई पहुँचे। दिंडी निकलने को चार छह दिन की देर थी। वाई ठहर कर क्या करते? हम छोरों की पंडिताई गंवई गांव में। वाई में अन्न मिलता पर कीर्तन को कोई न आता इसलिये फिर आसपास का ग्राम दर्शन करने चल दिये।

नाना फडणीस का गांव मेणवली देखा। नाना बड़ा भी देखा। एक कमरे में पुराने कागजों का ढ़ेर पड़ा था। कृष्णा नदी के किनारे - मन में आया भटकना छोड़ यहीं किसी मंदिर में रहा जाये। ज्ञानेश्वरी पढ़ी जाये। अभंग याद किये जायें। फिर जीवन भर रोटी की कभी कमी न होगी। इस घुमक्कडी में कोई सार नहीं हैं। पर उतना ही. . . . आकर रह गया।

अगला मुकाम याद है धोम। कृष्णातीर पर ही। यह नरसिंह का स्थान है। ब्राह्मण बस्ती बहुल। एक किस्सा हुआ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कृष्णा घाट पर ही बच्चों की पंगत में गांव से माँगे अन्न का भोग लगा रहा था। वहीं एक व्रतस्थ बूढा ब्राह्मण जप करते बैठा था। वह उठकर मेरे पास आया। मैं कुर्ता पहने ही खा रहा था। फिर भी उसने मुझे पहचाना - सीधे मुझ से पूछा -

"किस जाति के हो? ब्राह्मण हो?"

'हाँ' कहना ही था। दूसरा प्रश्न

"गोत्र क्या हैं?"

उतना याद था, कहा 'वासिष्ठ'

'नाम'

'गोपाल जोशी।' बाबा सम्प्रदाय में आते ही दाण्डेकर छोड़ जोशी कुलनाम मैं कहने लगा था। यह कुल नाम गणेश जगन्नाथ जोशी का था जिनके यहाँ मैं दो वर्ष रहा था।

बूढा गरम हो गया एकदम।

झूठे लफंगे, अपना कुलगोत्र छिपाते हो और इन जाने कहाँ के छोरो के संग - कुर्ता पहन खा रहे हो। बेशर्म।

ध्यान में आया जो गोत्र मैंने बताया था वह जोशी का गोत्र नहीं होता। वह तो दाण्डेकर का था।

नीचे मुंडी किये खाता रहा। ब्राह्मण होने के कारण इस टोली में मुझे कुछ भाव था वह इस समय एकदम गिर गया।

धोम से लौटते थके हुए थे हम सब लेकिन बनूताई के एक प्रस्ताव से सब उत्साही हो गये।

रास्ते में पांडवगढ़ नाम का एक सुंदर किला था। बनूताई ने घोषणा की पांडवगढ़ देखेंगे और हम सब दौड़ पड़े उस ओर। गढ़ के तले छोटा गांव - पांडववाडी। वहाँ से रास्ता था उपर जाने का। बहुत कठिन। यह गढ़ चौकोर खोखे जैसा है। चारों ओर से ढ़ाई तीन सौ फूट सीधी पहाड़ी। पंजे से पहाड़ी पकड़-पकड़ धीरे-धीरे उपर चढ़ना पड़ता है। प्रश्न था। पहाड़ी बदन की बनूताई किला कैसी चढ़ेगी। परन्तु वह बहादुर औरत चढ़ गई।

ऊपर भेडपालों की चार पांच झोपड़ियाँ। उनके दरवाजे मट्ठा पीने को मिला। सूरज माथे पर था लेकिन हवा वहाँ बहुत ठंडी थी। चारों ओर पर्वतमालाओं की भीड़ दिख रही थी।

वहाँ से लौटे और चौंडे महाराज की संस्था में पधारे।

सुस्नात, भस्म चर्चित - शांत तपस्वी जैसे मिले चौंडे महाराज। सूर्य नमस्कार का दैनिक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

व्यायम करते हुए। उनके नमस्कार होने तक वही ठहरा। फिर उन्होंने पूछा - "कहाँ के हो बच्चे?"

बहुत कुछ कह दिया।

"अच्छा-अच्छा। नमस्कार लगाते हो या नहीं?"

"नही!"

"ऐसा नहीं करना चाहिये। बारह नमस्कार तो कम से कम रोज लगाना ही चाहिये।"

"परन्तु भोजन का भरोसा नहीं होता।"

"सभी घूमक्कडों का ऐसा होता है। पर बारह नमस्कार से कभी कोई हानि नहीं होती।"

चुप रहा मैं। कितने ही बार निश्चय किया - पर नियम से नमस्कार मैं लगा ही नहीं पाया कभी।

दिंडी वाई से निकली। लोणंद कस्बे में, आलंदी से निकल पंढरपुर जानेवाली बड़ी दिंडी में इस दिंडी को मिल जाना था। आलंदी से निकलती दिंडी के साथ ज्ञानेश्वर महाराज की पालकी, घोड़ा, निकलता था। उसका दर्शन करना था। पालकी देखने पर पेड़ पर चढ़ गया। आसपास न कोई झाड़ी न झाड़ इसलिये दूर तक दिखता था।

पालकी दूर थी पर उसके प्रसाद चिह्न दिखने लगे। अकेला पड़ा एक वारकरी दिखा। वारकरी का एक वेश। बाराबंदी धोती, साफा। कंधेपर कुरजी, पताका, सीधा खड़ा चंदन माथे पर, उसपर मुद्रा। उसपर कुंकुम या अष्टगंध का तिलक। गले में तुलसीमाला। वारकरी महिला हो तो इसके साथ सिर पर तुलसी वृंदृवन लिये रहती हैं।

हर दिंडी अलग-अलग अभंग गाती रहती है। अलग-अलग गायकी का मिश्रण इससे हो जाता हैं। कैसा घुमत्कार करता है वह। वह सब सुनने का ही मजा है कहा सुनने का या लिखा बांचने का नहीं।

सारा वातावरण एक अजीब धमाचौकडी से भरता गया। और वह अपार मेला धीरे-धीरे नजर आने लागा। अपने-अपने गीत (ताल) छंद में धुंद हुये वारकरियों का जमावड़ा। पताकाओं का जमघट। आगे बढ़ता हुआ। यह अनुपम दृश्य कभी देखा नहीं था। भीड़ देखी थी। सभा-जलसे-बारातें देखी थी। पर वह अलग। यह उस सबसे बहुत-बहुत अलग। यहाँ इन वारकरी लोगों को कुछ भी नहीं चाहिये था। प्रसिद्धी-अखबरों में फोटो प्रतिष्ठा जयजयकार। इन सारे लोकेषणाओं से यह वारकरी समूह कोसों दूर था।

हर वारकरी ज्ञानोबा की पालकी के साथ चल रहा था। रास्तें में कष्ट, पीड़ा झेल रहा था। और, और यह ऐसा सालों तक चल रहा था। बिना किसी के चलाये।

ये सब हरि जाति के लोग-बाग थे। उच्चवर्णी से चांडाल तक के।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

नाना प्रदेश, नाना पंथ की सीमा-रेषा हरि रंग में डुबोकर आये हुए। वैश्यवाणी थे। लिंगायत थे। जैन और मुसलमान भी थे। 'जातपांत पूछे नहीं कोय। हरि को भजे सो हरि का होय' इसकी सौ फीसदी पक्की साक्ष्य।

वे गा रहे थे। नाच रहे थे। एक दूसरे के पैरों पड़ रहे थे। तुकाराम बाबा कह गये थे "पंढरीच्या लोका नाहीं अभिमान - पायां पड़े जन एकमेकां।" समाज में स्थान कुछ भी हो पंढरी के रास्ते चलते अभिमान पैरों तले कुचलकर एक दूसरे के चरणों पर माथा रखना ही होगा। यही रिवाज है यहाँ का। वही पक्का नियम। "वर्ण अभिमान विसरती याती एकां लोटांगणी जाती रे, निर्मल (चित्ते) झाली नवनीतें पाषाणा पाझर फुटती रे।"

ऐसा यह हरि रिंगण। हरिनाम का हल्ला करते रास्ता चल रहा था। बीचों बीच थी ज्ञानोबा की पालकी।

उसे कंधे पर तौले वे सब पंढरपूर जा रहे थे।

इन बहुजनों के स्वभाव में छोटा बड़ा नहीं था ऐसा नहीं था। यहाँ भी उसका साक्षात्कार होता था। बामनों की पंगत अलग - वह हो जाने पर दूसरे लोग। मेहतर महार सबसे अंत में। पालकी उत्सव भी विशाल समाज का एक अंग ही था उसके गुणदोष से वह अछूता कैसे रहता? फिर भी वंह व्यक्ति के आचरण में था। समूह के, यहाँ के नियम अलग थे। साधू श्रेष्ठी द्वारा बनाई गई परंपरा का उल्लंघन करने का सामर्थ्य यहाँ अभी किसी में अधिक दिखता नहीं था।

कोई-कोई मठपति पैर जोड़े बैठा रहनेवाला होता है। सारे उसके पैर छुएँ वह शंभू किसी के आगे झुकने को तैयार नहीं। मिट्टी के ढेले जैसा, वैसा ही बैठा। पर यह सब उसके अपने मठ में। दिंडी में खड़ा रहने पर या रास्ते में अभंग कहते चलने लगने पर तो दूसरों के सामने झुककर दूसरे के चरणों का स्पर्श किये बिना उसको गति नहीं। यहाँ वारकरी नियम पक्का।

हरि आनंद उत्सव देखते-देखते इस दृष्यमान का साक्षात्कार होने लगा।

पालकी के मुकाम ठहरे हुए हैं। आलंदी से पालकी पहली बार हैबतराव ले गये। वे मालवा के थे। किसी राजा के यहाँ अधिकारी थे। कितनी ही लड़ाइयाँ लड़ी। आगे वैराग्य उपजा। आलंदी आये। व्रतस्थ होकर ज्ञानोबा के सामने वीणा लेकर रातदिन भजन करने लगे। पहले उपेक्षा हुई। फिर निंदा, उपहास। लेकिन वे कसौटी पर खरे उतरे। वारकरी उन्हें मान गये।

ज्ञानोबा की पालकी पहली बार वे ही पंढरपुर तक ले गये। जेठ बदी ग्यारस को पालकी आलंदी से चलती और असाढ़ सुदी दशमी को पंढरी पहुँचती। बीच के गांव कब छोड़ने हैं यह भी उन्होंने तय किया। तब से आज तक बड़ी निष्ठा से उसका पालन किया जाता है।

आगे फिर इन वारकरियों में झगड़े भी हुए। पालकी के सामने खड़ा होने के क्रम के

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लिए झगड़े। मान सम्मान के लिये झगड़े। वीणा किसके गले में रहे इसके लिए झगड़े। हायकोर्ट के चक्कर हुए। परन्तु सामान्य वारकरी का इससे कोई सम्बन्ध नहीं रहा।

वारकरियों के दो भेद। कई एक पीढ़ी से निष्ठापूर्वक पंढरी की वारी करने वालों का पहला। इनके फड निश्चित। अमुक यह 'वासकर' के फड का। अमुक यह 'देहूकर' के फड का। इनके पिता, बाबा, पडबाबा ऐसी कई पीढ़ियाँ उसी एक फड पर हाजिरी लगाती रहीं। इनके वंश के सारे वारकरी को उस विशिष्ट फडकरयों ने ही माला पहनाई। जैसे एक गोत्रकार ऋषि और उसके अनुयायी, वैसा यह फडकरी ओर उसके अनुग्रहित के मध्य सम्बन्ध। मानों यह एक परिवार हो। चतुर फडकर्ता अपने सारे सम्बन्धियों को बड़े प्रेम से संभाले रहता है।

दूसरी तरह के वारकरी वे जो किसी फड से बंधे ही नहीं। नाना कारणों से लोग पंढरी के रास्ते चलने लगते हैं। कभी घर गृहस्थी से परेशान होकर, कभी देव-दर्शन के लिए। चोरी-चकोरी करने के लालच में भी पंढरी की वारी करनेवाले कम नहीं होते। असाढ़ी यात्रा में सौ-सव्वा सौ जेबें कटती ही। लाख-दो लाख की यात्रा में इतना तो चलता ही हैं।

ऐसे दोनों तरह के वारकरी पालकी लेकर आ गये। पालकी में रखी पादुका के दर्शन करने गांववाले धकम् धक्का करने लगे। मुकाम पर पहुँचते ही वारकरी नित्यनेम का भजन करने लगे। तब तक फड के साथ चली बैलगाड़ियाँ अपने-अपने ठहरे हुए स्थानपर जाकर खुल गई। बड़े भगोने और थालियाँ उतारी गई। चूल्हे बने और चेते। अन्न ब्रह्म तैयार होने लगे।

रात को पालकी के सामने कीर्तन-प्रवचन। सिवाय इसके, अलग-अलग फड के तंबे शामियानों में भजन होते सो अलग। हमारी दिंडी भी एक मंदिर के आसरे से ठहरी थी। हमारे मुकाम पर भी जगन्नाथ बुवा का कीर्तन। अनुशासन के अधीन मुझे वहीं ठहरना था। पर मेरा मन उचटा। सौ दो-सौ झांजे एक साथ बजते, एक सुर में भजन गाते-लोगों के पास जाने की तमन्ना ने वहाँ बैठने नहीं दिया। फिर अलग-अलग अभंग पर होते कीर्तन, अभंग की अर्थ छटा स्पष्ट करते निरुपण आदि भी सुनना था।

पालकी के साथ दैनिक जीवन तय रहता है। फिर भी हर दिन नया गांव होने से नयापन लगता ही। दिंडी फड न पकड़े हुए अर्थात खुले चलते वारकरियों के लिए भोजन गांववाले तैयार करते हैं। ग्राम के मंदिर के सामने पंगत बैठती। चार-पांच हजार आदमी पंगत में खाते।

मैदान में पानी छींटा जाता। वारकरी पंक्ति में बैठ जाते। पत्तलें लगायी जाती। गांववासी दौड़-दौड़ इस पर अन्न परोसते, भोजन करते अभंग गाये जाते। "पुंडलीक वर दे" की आवाज लगती। एक पंगत उठते ही सेवक पत्तलें उठाकर किसी घूरे या गली कूचे में फेंक देते। वहाँ पहुँचते भिखारी और साथ में कुत्तों की भोंकनी। फिर दूसरी पंगती।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

एक दो अपवाद छोड़ बीच के गांव मामूली अपने छोटे से। शौच की कोई व्यवस्था नहीं। हो तो भी इतने पाच पचास हजार की व्यवस्था कैसे हो? फिर जंगल।

नाले-नदी पहला असाढ़ पानी दिखता मटमैला। उसी में नहाना-धोना और पालकी चलने लगने के पहले दिंडी मे आ जाना। दिंडी में सुबह के अभंग ठहरे हुए। भजन 'रामकृष्ण हरि' से प्रारंभ होता। फिर और भूपाली-बीरानी-हरिपाठ।

इस तरह अभंग कहते दिंडी बढ़ने लगती। रास्ते में ठहरे स्थानपर 'रंगण' होता। रंगण माने पालखी के साथ चलते घोड़े की दौड़। ज्ञानोबा को अर्पण किया हुआ ऊँचा पूरा मस्त घोड़ा चलता है। वारकरी इसके भी पैर छूते हैं।

रंगण की जगह पर सारे वारकरी बड़ा गोल बनाकर खड़े हो जाते। घोड़ा दौड़ाने का समय होने तक वे भारुड, खेलिये गाकर अपना मनरंजन करते हैं। भारुड तो बस मजा ही है। भारुडां की रचना एकनाथ महाराज ने बड़ी कुशलता से की। भारुड के बहाने उन्होंने परमार्थ की भाषा पददलितों तक पहुँचायी जैसे -

अजजबब बायको मोठी
अगे बायको नको मारु
तुझे वासरु आणतो चारू

(पत्नी बड़ी खराब। मसूर लिये मारती है अरी तू मुझे न मार मैं तेरी बछियाँ चरा लाता हूँ)

यह भारुड गाते एक आगे दौड़ता तो दूसरा उसके पीछे उसकी घरवाली बन। झंडी की डंडी का मसूर बनाये उसके पीछे दौड़ता हुआ। साफी या दुपट्टे से सिर पर आंचल लिये हुए। ओंठों पर मूठ-मूठ बड़ी मूँछों वाली यह पहलवान घरवाली घरवाले के पीछे लगी हुई देखते ही हंसी ठहाकों से आसमाँ गूँज उठता।

कभी फुगडी का फड चल पड़ता। फुगडी में दो व्यक्ति आमने सामने खड़े होकर एक दूसरे के दाँये हाथ से बाँया और बाँये हाथ से दाँया हाथ पकड़ते है। और फिर दोनों एक साथ चक्कर घित्री करते हैं। विशेषकर महिलाओं का यह खेल माना जाता है। पर यहाँ तो बुड्ढे वारकरी भी मजे से फुगडी खेलते हैं। ज्ञानोबा ने फुगडी के साथ गाने के लिये भी रचनाएँ की हैं जिन्हें 'फुगडी' ही कहा जाता है। वे गाई जाती फुगडी खेलते हुए

फुगडी ग फू बाई फुगडी ग फू
मन चित्त धू - विषयावरी थू
मग परब्रह्म तू ग बाई
फुगडी ग फू

ऐसे सारे आनंद-कल्लोल में हकारा होता। ज्ञानोबा का घोड़ा आ रहा है। फिर सब झांझ-मृदंग खनखना उठते। हरिनाम का कल्लोल जोर से उछलता और घोड़ा दौड़ा-दौड़ा आकर रंगण में फेरी लगाता। फेरी पूरी होते ही रंगण पूरा माना जाता।

ऐसा आनंद उछालते उस रंग में तरंगते हम सब पंढरपूर पहुँचे। पालकी के साथ का

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

जमाव बिखकर अपने-अपने मुकाम चला गया। हम सब बाबा की धर्मशाला पहुँचे।

धर्मशाला के पिछवाड़े के कमरों में हम सोये थे। चलकर आने से बेहद थके। गहरी नींद लगी थी। अचानक भोर ही वह आवाज कानपर पड़ी - मेघगर्जन जैसी-

उठो। उन्हें जगाओ। चलो, झाड़ना पड़ता है चलो उठो।

चौंककर उठ बैठा। देखा। किसी शेर की तरह गर्जना करे बाबा खड़े थे। उनके पीछे हाथ में झाडू लिये लोगों की पलटन। सबके सब नीचे झुककर आंगन मैदान साफ कर रहे थे। उठी हुई धूल में कौन-कौन झाड़ रहा है, यह समझ में न आया पर बाद में ज्ञात हुआ कि वे बाबा के ही अतिरथी महारथी शिष्य थे। पट से उठा। बाबा को नमस्कार किया। एक वृद्ध के हाथ की झाडू ले ली और मैं भी झाड़ने भिड़ गया। घर के काम-काज की आदत होने के कारण झाड़ना कठिन नहीं लगा किन्तु घंटा डेढ़ घंटा लगातार झाड़ने पर मेरी तो कमर टूट ही गई।

लाठी हाथ में लिये बाबा आगे बढ़ रहे थे। सोये हुए लोगों को जगा रहे थे। पैर पड़ते व्यक्ति की पीठ पर धौल जमाते। कोई बच्चा दिख जाये तो उसे गोद ले लेते थे।

झाड़ते-झाड़ते मैं साथ के अतिरथी महारथी देखता जा रहा था। बाबा के ये चेले कैसा-कैसा विचित्र परिधान किये, रुप बनाये। पर परिधान और रुप से क्या होता है? काम में एक-एक आदमी शेर था। बाबा की तरह ही ये वाणी का चाबुक लिये सब ओर घूमते थे। गांव-गांव में होनेवाली पशुहिंसा इनके कहने से ही बंद हुई थी। ये हजार आदमी साथ लिये चारों धाम यात्रा कर रहे थे। बड़े-बड़े हरिनाम सप्ताह इनके कारण होते थे। इन सप्ताहों में से हजारों आदमी भोजन करते थे। ऐसे ये वीर यहाँ बाबा की धर्मशाला में झाडू लगा रहे थे। बड़े अचरज की बात थी।

इस यात्रा में ये सब पास से देखने को मिले। इनमें से कोई तो दिनभर मौन पालन करता। कोई भूमि को पीठ लगाता ही नहीं एक बैसाखी रखी हुइ उसपर सिर रखकर विश्रांती लेता। कोई करतल भिक्षा वाला करपात्री। कोई भोजन करता ही नहीं। केवल मूँगफली और गुड खाता। कोई ढ़ेर सारी नीम की पत्ती घोट खाता। कोई एक कम्बल के सिवाय कोई वस्त्र न रखनेवाला।

सभी बाबा के पठडी से तैयार हुए। हमेशा हाथ जोड़कर नम्रता से बात करते। पैर छूने नहीं देते। भीख माँगे बिना किसी के यहाँ परोसी थाली पर जीमते न थे। कोई मिताहारी, कोई एक भुक्त, कोई व्रतस्थ। ऐसा वह सारा हठयोगियों का जमावड़ा था। वैसे हठयोगियों का भी एक खास तंत्र होता है। उस तंत्र को पाले बिना कोई भी हठयोगी नहीं कहला सकता। इन फक्कड़ों को उनके विचित्र और कठोर नियमों के कारण मैंने हठयोगी कहा यूँ ही।

इनके कीर्तन भी सुनने को मिले। उस विशाल धर्मशाला में पांच छह स्थान पर ऐसे कीर्तन होते थे। हर कीर्तन के साथ एक भजनी दिंडी होती थी। भजन बाबा की पद्धति से होता था। दूसरे वारकरी ताल सूर में भजन गाते, यहाँ ठाठ अलग था। बाबा एक टुकड़ा कहते उनका शिष्य वर्ग उनके पीछे सुर बढ़ाकर दूसरा टुकड़ा कहता। जैसे बाबा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

कहते - भगवान मन्नत मानता. . . . .

शिष्य कहते . . . . . नह . . . . .ही. . . . .। एक धमार सा होता।

जिसे विद्वत्ता कहते हैं उस तरह की दृष्टि से उनकी ओर न देखना ही अच्छा। उस दृष्टि से वे सब अहोविद्वान थे। कीर्तन के सम्बन्ध में अन्य बातों में उनमें से अधिकतर तैयार थे। उनके पास वैराग्य था। वे व्रतस्थ थे। सभा चातुर्य उनमें था। निर्भयता थी। समाज को घंटों बहलाये रखने लायक वाक्पटुता थी। ग्राम्यता की ओर झुके किस्से-कहानियों का भंडार भरपूर था। इतना काफी था।

हर फड में आधा एक घंटा बाबा कीर्तन करते। वे जहाँ होते वहाँ श्रोता की भीड़ उमड़ पड़ती। उनके फड छोड़कर जाते ही श्रोताओं को वहीं रोक रखने का कठिन कार्य करने में शिष्यों को सारा वाक्चातुर्य खर्च करना पड़ता।

पंढरपुर के विठोबा मूर्ति का दर्शन ग्यारस को हो नहीं सका। गाड़गेबाबा सम्प्रदाय के किसी को दर्शन की उत्सुकता नहीं थी। दो या तनी दिन बाद मैंने बारी में खड़ा रह पांडुरंग का पहला दर्शन किया।

कैसा दिखा पांडुरंग?

कहना कठिन है। बहुत सारा पढ़ा था उसके रुप के बारे में। कीर्तनों में बहुत सुना था।

वह घननील है। वह ईंट पर खड़ा है। कटि पर उसके हाथ हैं। गले में तुलसी माला है। पीतांबर वह पहने हैं। कान में मकर कुंडल हैं, कंठ में कौस्तुभ है।

बारी की भीड़ में आगे सरकते-सरकते इस सबका स्मरण किया। चिपके लोगों के पसीने की दुर्गंध नाक में घुस रही थी। मैं अपने को कह रहा था यह सब भूल। अब तुझे त्रिभुवनसंदर के दर्शन होने वाले हैं - यह कुछ भी सामने न आने दे।

ओर हम देहरी पर खड़े हो गये थे। टकटकी आँखे खुली रख भूखा सा देवमूर्ति की ओर देखने लगा।

मंदिर में बेतहाशा धूप बत्तियाँ जल रहीं थीं। उसका धुआँ डांटकर भर गया था। पुजारियों, जिन्हें यहाँ बड़वे कहा जाता है, की तोबा जल्दी चल रही थी। वे हर एक को पांडुरंग के चरणों पर ड़ाल रहे थे। मुंडी पकड़ उसका सिर पटक रहे थे। फिर पीछे खीच रहे थे। लोभी वे - पैसों के लिये छीना-झपटी कर रहे थे। यात्रियों की पीठ पर कोड़े मार रहे थे। उनपर खिसिया-चिल्ला रहे थे।

सच कहूँ, मुझे इस सबका कोई अनुभव न हुआ। यानी मैं इस कुचक्र से छूट गया ऐसा नहीं। परन्तु संज्ञाशून्य हो गया था मैं। सारा ध्यान सांवरी मूर्ति को ओर केन्द्रित जो था।

पांडुरंग का वह अत्यंत सौम्य, स्नेहभाव से भरा मुखमण्डल देखा। आँखें चांदी की

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लगाई हुई थी। पर मैंने नहीं देखी। मुझे मुद्रा दिखी मुद्रा के अवयव अलग-विलग नहीं। भान हुआ वह केवल सुस्मित मुख मुद्रा का।

देखते-देखते पांडुरंग के आगे खड़ा हो गया। माने धकेला गया। अगले क्षण मेरा सिर श्रीचरण पर गिर गया और अगले क्षण मैं पीछे खींचा गया - उतने क्षणार्थ में मैंने चरण देख लिये।

मन में एक विलक्षण उछाल आया - कितनों के, कितने बड़ों-बड़ों के सिर यहाँ टिके। ज्ञानदेव, निवृत्ति, मुक्ताई, एकोबा, जनी, तुकोबा. . . . . अनगिनत - पुण्यवन्तों ने जहाँ मस्तक नवाया नहीं मैंने भी अपना सिर 'न वा या।'

आषाढी यात्रा के बाद बाबा ने मुझे 'वरवंडी' जाने को कहा। वरवंडी अहमदनगर के राहुरी तहसील का गांव। इस गांव की विशेष प्रसिद्धि थी वहाँ के मरी माता मंदिर के कारण। मरीमाता पर हर साल यात्रा में हजारो बकरियाँ कटती। मंदिर के आगे रक्त की इतनी कीच होती कि बिना रक्त में पैर सने कोई मंदिर में जा नहीं सकता था।

इस पशुवध को बंद कराने बाबा के एक शिष्य महानंदस्वामी ने वहाँ अपना आश्रम बनवाया। पांडुरंग का मंदिर स्थापित किया। हमारे सम्प्रदाय के अनुसार मंदिर में रात और दिन का पहरा रहता था। पहरा के दौरान गले में वीणा पहनकर खड़े रहकर हरि स्मरण करना होता था। आश्रम में एक मास्टर और रहते थे। एक महिला भी थी जो रसोई देखती थी।

सुबह शाम दो वक्त दो-दो घंटे का पहरा। दो वक्त का खाना और सोना। दिनभर वही-वही। वही पांच छही आदमी और वही उदासी भरा परिसर।

एक 'फक्कड़' बाबा ने और भेजा। बाल बढ़ाये थे उसने, नीचे लुंगी, गले में बड़ी माला, माथे पर तिलक मुद्रा। उसके कारण समय थोड़ा अच्छा कटने लगा। आठ दस दिन बाद की बात। एक दिन नियम से हरिपाठ, पंचपदी सब पढ़ा। खाना खाया और सो गया। नींद खुली टीन पर बजते ढणाढण आवाज से। कमरे के टीन पर धडाधड पत्थर गिर रहे थे। सब डर गये इतने कि मंदिर का प्रहरी भी वीणा छोड़ कमरे के अंदर आ गया।

मैंने पूछा क्या है? क्या है? मास्टर पसीना पोछतें बोला मरीमाता के पुजारियों का हमला हुआ हैं वे सब भील हैं?

मरीमाता का स्थान बहुत पुराना। इस क्षेत्र के आदिवासियों की वह कुल स्वामिनी। पूजा, रखवाई भलो के पास। पुजारी को बकरा कटाई मिलती चार आना। मुंडी, चमड़ा और एक फांड़ा मिलता था। बाबा के चेले उस पर ही संकट लाये थे। इसलिये बाबा की संस्था से उनका बैर हो गया। यह अब तक ज्ञात न था।

डरते हुए मास्टर से पूछा - "अब क्या होगा?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वे खिसियाये - "चुप रह। कुछ भी हो सकता है, खून भी।"

उसके बाद उस रात नींद? पूछो मत। खुद ही जान लो। दूसरे दिन से भीलों के बारे में जानने में लगा रहता। उनसे डर था लेकिन उत्सुकता भी कम नहीं थी।

विठ्ठल मंदिर के पीछे मरीमाता का स्थान। मरी माता माने सिंदूर पुते गोल पत्थर दस बीस। एक ओटले पर एक के पास दूसरे गोल पत्थर रखे हुए। वहीं एक आला। उसमें एक दीया। ओटले के सामने एक बड़ा पत्थर बलि के लिए।

मन्नाती बकरी लाता। साथ होता कुटुंब-कबीला। और उनका अपना 'मुलाणी'। वही काछ खोलता, फल्या पढ़ता फिर बकरी की मुंडी पत्थर पर रखता। मन्नाती बकरी के पैर पकड़ता। फिर मुलाणी पास के एक पत्थर पर छुरी घिसता और फिर बली की मुंडी पर चलाता। मुलाणी तगड़ा हो तो दो तीन बार छुरी चलाते ही मुंडी कट जाती। लेकिन किकडी मुलाणी से जल्दी मुंडी कटती नहीं। बली मिमियाने लगता। हाथ-पैर झटकता। इधर लोग उसका मजाक बनाते सो अलग।

यात्रा के बाद के दिनों में कभी-कभात कोई मन्नाती बैलगाड़ी से आता। गाड़ीभर आदमी साथ लिये। बबूल के किसी पेड़ के नीचे गाड़ी खोली जाती। जिसके लिये मन्नत माँगी वह छोरा-छोरी मरी माता के सामने लाया जाता। अधिकतर ये मन्नतें बच्चे की बीमारी में माँगी जातीं। कहा जाता कि "हे माता भवानी मेरे दो पैरों का बचने दे मैं तुम्हें चार पैर का चढ़ाऊँगी।"

माता के चरणों पर अर्थात ओटले पर वह बच्चा रख उसे सिंदूर लगाया जाता। फिर हलदी रोरी, धूपबत्ती, कपूर माता को चढ़ाई जाती। फिर बलि चढ़ाने का कार्यक्रम। भील पुजारी अपना हिस्सा लेने आ टपकता ही। उसे चार आने, चमडा, मुंडी और एक फांडा मिलता था। मुलाणी को चार आना और भोजन।

फिर चूल्हे बनाये जाते तीन-तीन पत्थर के। कटे बकरे पर खटाखट छुरियाँ चलती। एक चूल्हे पर तवा दूसरे पर बरबट का भगोना। उसमें मिर्च ही मिर्च। गाड़ी के चारों ओर पंगत बैठती। लोग नांक टपकाते, साफ करते बरबट खाते। नलियाँ फोड़ते। फिर बैलगाड़ी जोती जाती। आते समय एक बकरा मिमियाते संग होता, जाते वक्त कुछ नहीं।

अपने मंदिर की चार दीवारी के पीछे खड़े रह कर यह सब देखा। एक बार में ही नहीं। माष्टर का ड़र था। साथी पूछते क्या देख रहे हो? पर फिर भी इसका थोड़ा उसका थोड़ा करके सब समझ में आ गया। मेरी विशेष जिज्ञासा थी हम पर रात को पत्थर फेंकनेवाली भीलों को देखने की।

काले रंग के, उग्र मुद्रा के, लाल-लाल आँखों वाले। कंधे पर लाठी, कुल्हाडी या फिर तीर कमठा। मन्नती के साथ आये भील पुजारी के साथ मैंने ड़रते-ड़रते बात की। उसने हाथ के तलुवे रगडे, दाँत निपोरे आश्रम की ओर मुँह करते थूका। मारे ड़र के दौड़ कर मन्दिर में घुस गया। 'गाथा' निकाल उसपर से आँखें फेरने लगा। एक अक्षर भी समझा नहीं।

उन भीलों को हममें से किसी का खून करना सरल था। कजरी रातें। अकालपीड़ित

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जिला। पांच-पांच मील तक आदमी दिखता नहीं था। ऐसे में हममें से किसी को उतरती शाम पकड़ मुंडी उमेठ वे मार सकते थे। पता चलता ही नहीं। चील कौवे ही खा जाते। साताठ माह बाद कहीं किसी चरवाहे को खोपड़ी मिलती शायद। उसे वह लात मार एक तरफ ही करता।

परन्तु भीलों ने मेरे वहाँ रहते किसी पर भी ऐसा अवसर न लाया था। पत्थर रोज रात आते रहे। परन्तु उसकी आदत हो गई। ड़र नहीं रहा। बाद-बाद तो हम उसका मजाक ही बनाते।

हमारे बीच एक लमाण फक्कड़ था यह मैंने कहा ही हैं। वो तलवार चलाने की बात हमेशा करता। हम उसे कहते इतने बहादुर हो तो भीलों के आगे क्यों नही जाते?

वह कहता अब मैंने माला पहनी है हिंसा करना छोड़ दिया है।

हम कहते लमाण बुवा ने माला न पहनी होती तो यहाँ से रक्त के दो प्रवाह नदी तक गये होते। पहली बकरी के खून का दूसरा भीलों के शोणित का। चलना मुश्किल होता उनके शवों के कारण।

"देखो, मुझे परेशान न करो वरना . . . . . ." वह कहता

एक रात फिर पत्थरों की ऐसी बरसात हुई कि हमारे माष्टर जी का सिर फूटा। काफी खून बहा, चूना हल्दी चढ़ाई। फिर भी लमाण साधु चुप, दूसरे दिन हमने उसे बहुत परेशान किया। वह उठा। मंदिर के लिये आये सामन में कुछ लोहे के पट्टियाँ थी। उनमें से एक उसने चुनी। ठोकठाक कर उसे तलवार का आकार दिया। मूठ पर चिंदियाँ लपेटी फिर बोला -

"अब आने दो पत्थर फिर देखता हूँ।"

हम मन ही मन प्रार्थना करते रहे आज भी पत्थर गिरे। हमारी प्रार्थना सुनी गई। अंधियारा होते ही पत्थर आये।

और हमने अपने तलवार बहादुर को बाहर धकेल दिया। वह बाहर निकला और अपने चारों ओर तलवार घुमाते ज्वार के खेत में घुस गया। मुँह में फेन आने तक वह तलवार चलाता रहा।

दूसरे दिन बाहर देखा पूरा खेत कटा पड़ा था।

तीन चार माह भील पत्थरबाजों के बीच इस तरह रहा। इसके पहले बच्चों के साथ रहकर व्रतपालन किया था। मन में आया इतना काफी है। अब बाबा के चेला रुप में कीर्तन करते घूमना चाहिये।

आलंदी के कार्तिक ग्यारस को बाबा आते। अपनी धर्मशाला में ठहरते। इंद्रायणी नदी के किनारे यह धर्मशाला बाबा के एक भक्त दानशूर भागोजी बालाजी कीर ने बनवाई हुई है। इंद्रायणी से चढ़ते घाट की। नीचे फुलवारी बगीचा और उपर तीन पांख का विशाल

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भवन। इन तीन पांखों के बीच खुला बड़ा आंगन। एकदम साफ दर्शनीय।

बाबा की एक लक्षणीय विशेषता। वह पुरुष अंतर्बाह्य निर्मल था। अस्वच्छता उसे रत्तीभर पसंद नहीं थी। हर चीज झाड़-पोंछ चमचमाती रहनी चाहिये। फिर वह आंगन हो या मूर्ती। पानी का विशाल हौज हो या छोटी सी झारी।

इसका पाठ उनके साथ रहते हर एक को बिना कहे मिलता जाता। आलंदी की, नीचे के घाट की वह बगिया, वह मैदान यह सब बाबा के लिये बिलकुल साफ रखनी पड़ती। नाना जाति के पेड़-पौधे वे कहाँ कहाँ से संभालकर लाते और रोपते। परन्तु उन पेड़-पौधों के नीचे एक तिनका या पत्ती भी पड़ी उनको भाती नहीं थी। ऐसी वह आलंदी की धर्मशाला। उसमें मेला लगा था। बाबा भी आ गये। दिनभर उनका सफाई कार्यक्रम चलता रहा। उनके पीछे झाड़ू फावडे तसले लिये पूरी पलटन रहती।

मैंने उन्हें देखा। पैरों पड़ना उन्हें नहीं सुहाता यह भूल गया। घुसकर उनके पैरों पड़ा। पीठ पर घमघमाकर डंडा पड़ा। मैं वैसे ही आड़ा टेढ़ा बना रहा। बाबा ने मुझे पहचाना बरस पड़े।

"थे इतले लोक झाडून राहिले दिसत नाही"

ये इतने लोग झाडू लगा रहे हैं दिखता नहीं। मैं समझ गया। झाडूओं के ढ़ेर में से एक झाडू उठाई और झाड़ने को भिड़ गया। दिनभर मैंने हाथ की झाडू रक्खी नहीं। कमर टूटने लगी। मैंने मन से कहा "टूटने दे। कमर टूटने से कोई मरता नहीं।" दूसरे दिन और तीसरे दिन भी मैंने वही जारी रक्खा।

मेरे साथ ही झाडू लगा रहे साथीदारों में से एक ने कहा

"साधुबाबा - बाबा के खाते में जिन्दगी भर यही करना पड़ता है इसलिये आस्ते-आस्ते, अपनी जान इतनी धूप में मत सुखाओ।"

मैंने वह अनसुना कर दिया। आखिर तीसरे दिन मेरी तपश्चर्या फली। बिना ऊपर देखे मैं झाड़े जा रहा था तो स्वर सुनाई दिया - "कैसे झाड़ रहे हो जी। आड़ा हाथ करो इधर दो झाड़ू, मैं दिखाता हूँ।"

बाबा स्वयं बोल रहे थे। उन्होंने मेरे हाथ से झाडू ली और झाड़कर दिखाया। मैं उनके पीछे-पीछे चलने लगा। थोड़ी देर बाद झाडू मेरे हाथ में देते हुए उन्होंने कहा -

"चलो अब दिखाओ तो"

बाबा जैसा ही झाउकर मैंने दिखाया। वे मुस्कुराये। बोले - "देखो आया कि नहीं। देखो तो। ध्यान देने पर सब कुछ आ जाता है।"

दीक्षा जैसी उन्होंने दी वैसा ही करता रहा दिनभर। रात उनके कीर्तन में झांज बजायी। दो बजे कीर्तन दूसरे को सौंप भीड़ में से वे बाहर निकले। रास्ता पार उनकी दूसरी धर्मशाला थी - अजामेला। वहाँ पहुँचे और एक पेड़ के नीचे बैठ गये।

फिर वे वहीं कहीं से आयी रोटी हाथ पर लेकर खाने लगे। यह मौका देखकर आगे बढ़ा। हाथ जोड़े खड़ा रहा। वे मुस्कुराये और बोले -

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"गोपाल महाराज हैं क्या? खड़े क्यों हैं? बैठिये ना।"

मैं अदब से बैठा। बाबा ने पूछा

"झाडू लगाना आ गया?"

"जी"

"तो कहिये अब क्या लेकर आये?"

गुजारे सातआठ माह का सार सुनाया

"फिर तो पते की बात आ गई जी तुम्हारे ध्यान में।"

फिर रुककर बोले -

"समझने का रास्ता मालूम है क्या बाबू तुम्हें? ईश्वर ने इतनी बड़ी पुस्तक हमारे लिये लिखी वह पढ़ते हुए मस्ती में घूमना चाहिये।"

"मैं भी वही कह रहा हूँ।"

"अरे वही कहते क्या? चलो चलने लगो। एक जगह रहो नहीं। किसी के लिये काम किये बिना खाओ नहीं। किसी का भी काम करो। झाड़ दो, पोंछ दो, लकड़ी फाड़ दो, कुछ भी करो फिर कोई भी खिलापिला देता है। मस्ती से कीर्तन करना। किसीसे कुछ लेना नहीं। एक ही घर खाना नहीं। किसी के घर रहना नहीं। जंगल में रात को सोना जाकर।

जिसके मन में आशा नहीं वही सारे जगका राजा। एक बात तुम्हें कह रखता हूँ। कबीर की साक्ष्य है -

ऐसी बात बोलिये कोई न बोले झूठ
ऐसे जगह बैठिये कोई न बोले उठ
फिर कब निकल रहे हो?"

मन में आस थी कि बाबा आठ पन्द्रह दिन अपने पास रखेंगे - कहा भी - "आप के साथ थोड़े दिन घूमने की इच्छा थी।"

"मेरे साथ नहीं। अकेले घूमो। ड़रते हो क्या अकेले घूमने से?"

"नहीं।"

"तो फिर चल पड़ो।"

दौड़कर जाकर तुलसी की एक माला ले आया। एक चारखाने का कम्बल का टुकड़ा। गले में बांधने बाबा के सम्प्रदाय की पहचान हेतु। पहले महानंदस्वामी ने एक माला पहनायी थी। माला वारकरी सम्प्रदाय की निशानी। गुरु उसे चेले को पहनाता है। वह पहले की माला निकाल ड़ाली। हाथ में नयी माला लिये बाबा के सामने खड़ा हो गया।

बाबा का अनुग्रह हुआ। उन्होंने मेरे हाथ से लेकर माला मेरे गले में पहनाई। कम्बल का टुकड़ा मेरे गले में बांधा। इस समय रहा नहीं गया। उनके चरणों में सिर नवाया। उन्होंने उठा सीने से लगाया। अब दसों दिशाएँ मेरे लिये एकदम खुली थीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

खुले आसमान के नीचे पहले भी फेंका गया था। दिशाहीन फिरना नया नहीं था। भख माँगना मेरे लिये अपूर्व नहीं था। उस बात की बिलकुल निचली तली देख चुका था। आवरण रहित जंगल में कितनी ही रातें इसके पहिले भी गुजारी थीं।

पर उस समय एक ड़र मन में रहता। झूठ बोलने की मिथ्याचार करने की कितनी ही सीढ़ियाँ मैं तब फलांग चुका था। इस कारण मन में हमेशा एक खुटका रहा करता था। मेरा परिवार सदाचार सम्प्पत्र था। उसमें मुझ जैसा कुलकलंक दूसरा कोई पैदा हुआ मुझे ज्ञात नहीं। कुल को धब्बा न लगे इसलिये नाम बदल लिया था। कुल नाम भी बदल लिया था। फिर भी लगता कि कभी भी पुलिस पकड़ लेगी। मार खाने की आदत है। पिटाई का कुछ खास नहीं परन्तु जो बदनामी होगी उससे मर जाना भला।

दादा के पागलपन ने हमें पहले ही बदनाम किया। दादा जैसा बुद्धिमान आदमी दुर्लभ पन उनकी वह बुद्धिमत्ता पागलपन के कारण मिट्टी हो गई थी।

और उनका बड़ा लड़का मैं घर छोड़ निकला था। जीवन की रैना कर ली थी। झूठ के पीछे छिप रहा था। भीख माँग रहा था। चाहे जैसे दुराचारी लोगों के बीच रह रहा था। चाहे जो खा रहा था। चाहे जो कर रहा था।

कभी-कभी मन विषाद से भर जाता तो ऐसा लगता कि छुट्टी करो जीवन की।

और अब मैं फिर एक बार नीले अम्बर तले भिक्षापात्र हाथ में लिये आ गया था। पर मन में आता वह अलग था यह अलग है।

इस समय वेष बिलकुल अलग है। पहले फटी ही सही परन्तु एक चड्डी होती, गंदा फटा ही सही पर कुर्ता होता।

अब।

बाबा का अनुग्रह होते ही मैंने वेष तय किया। उस मसय तक बदन पर लाल रंग का एक कुरता था कमर में लुंगी थी। अनुग्रह मिलते ही मैने तय किया कि अब बोरी का एक टुकड़ा लपेटूँगा। बदन पर बाबा सम्प्रदाय के उस चौखाने के टुकड़े के सिवाय कुछ और पहनना नहीं है। हाथ में एक डंडा। उससे बाबा का अनुकरण भी होता था सिवाय अपने इस स्वाँग के कारण कुत्ते पीछे लगते उनसे बचाव भी होता। बाँये हाथ एक टमरेल। बहु उपयोगी। प्रातर्विधि से लेकर भीख माँगने तक और कीर्तन में ताल देने के लिए भी।

यह ऐसा भेस और ड़र किसी के बाप का नहीं। आलंदी से पैदल मराठवाड़ा की ओर चल दिया। एक पानवाले के यहाँ लगे बड़े आईने में मैंने अपने को लाइफ साइज में देख लिया। मैं अपने पर ही हँसा जोर से। परन्तु जो जीवन-क्रम पकड़ा है उसमें हँसना विसंगत है, यह मन में आते ही उसे दबाया।

मराठवाड़ा की ओर ही क्यों? मेरा ही प्रश्न था और मेरा ही समाधान था।

कैकाडी बुवा नाम के बाबा के चेले ने दो तीन माह बाद उसी क्षेत्र में एक सप्ता रखा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

था। अंतिम दिन स्वयं बाबा का कीर्तन होना था। उनका भी दर्शन होगा, यह बात मने में थी।

बिना टिकट रेल यात्री को पकड़ जेल में बंद करने का नियम अब बना। पहले नहीं था। उस जमाने में टिकट चेकर इतने निष्ठुर नहीं होते थे। जिन्होंने टिकट नहीं लिया है उनकी मुख मुद्रा के असहाय भाव वे सहज पहचान जाते थे। फिर वे ध्यान देते ही नहीं। यदि कोई देता तो अधिकतम ऐसा करता कि ऐसे सब मुफ्तखोरों को वह इकट्ठा करता और किसी स्टेशन पर उतार देता। कोई थोड़ी बहुत पीटा-पाटी भी करता लेकिन इससे कुछ बिगड़ता नहीं था।

वह कोई दुनिया की आखिरी गाड़ी भी नहीं होती। उसके बाद भी अनगिनत गाड़ियाँ आती जाती रहनेवाली थी। और किसी एक विशेष दिशा की ओर ही जाना है ऐसा कोई तय तो होता नहीं। फिर सब आनंद ही था। एक तत्त्व जरुर याद था।

गंगा बहती भली

साधू चलता भला।

गाड़ी में हम जैसों के बैठने की जगह भी तय थी। रात की यात्रा में हम ड़िब्बे में घुसते ही किसी बेंच के नीचे घुसकर हाथ सिर के नीचे लेकर सो जाते थे। उपर टिकटधारी बैठते। हमारे गले में पड़े चौखाने के टुकडे के कारण भी लोग हमें पहचान लेते थे। इसलिये बेंचे के नीचे सोने के विरुद्ध कोई कुछ कहता नहीं था। टिकटवाले यात्री रात में बेंच पर बिछौना बिछाते। उसके नीचे हम ढंक जाते हमारी यात्रा सही सलामत पूरी होती।

कभी-कभी एक समस्या आती। कल्पना कीजिए कि बंबई में गाड़ी में बैठे हैं और नाशिक उतरना है। नींद लग जाती और जाग तब देखा कि भुसावल आ गया है। भुसावल है तो भुसावल ही सही। गाड़ी से उतरना। टिकट चेकर की नजर बचाकर रेल की पटरी फांदकर बाहर आ जाना। दोपहर होने पर किसी के दरवाजे खड़े होकर भीख माँगना। किसी ने कहा "भीख क्यों माँगते हो काम क्यों नहीं करते" तो उससे झाडू माँग लेना। उसका सामनेवाला आंगन साफ कर देना फिर वह जो दे वह अन्न हाथ में लेना कहीं किसी पेड़ तले बैठ खाना। ऐसे ही माँगकर पानी पीना। हाथ पोंदपर पोछना और किसी पेड़ की छाया में पड़े रहना।

बनाया हुआ स्वाँग और बाबा की निशानी देख कोई दादा बाबा पास आता। पूछताछ करता। कहाँ से आये? कहाँ जाना?

फिर एक के दो। दो के चार। कीर्तन करते हैं यह सुनकर वे अचंभा करते। इतनी सी तो उम्र है और कीर्तन कर लेते हैं - विश्वास न होता।

कोई भजन मंडली इकट्ठा करते। कोई झांझ कोई मृदंग। कोई ऐन समय पर भकभक जलती पेट्रोमैक्स ले आता। कीर्तन की प्रसिद्धि का कोई प्रश्न ही नहीं। वह खुद ही करनी। आस-पास गली चौक में जाकर हाथ के टमरैल पर लाठी बजाकर। कुत्ते भूँकते। छोरे-छोरी इकट्ठा होते। फिर जोर से कहना -

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"सुनो भाईयों सूनो
आज रात फलां स्थानपर
सदगुरु महाराज के
शिष्य फलां व्यक्ति का कीर्तन है
अमूल्य अवसर का लाभ अवश्य उठायें।"

कोई पूछता ये गाड़गे महाराज के शिष्य कहाँ ठहरे हैं। कभी सच कहता मैं ही हूँ कभी गप मारता - वे रात को कीर्तन में प्रकट होंगे।

लेकिन कभी भी हम यह न कहते कि टिकट चेकर ने हमें कान उमेठकर नीचे उतार दिया है।

यह हुई रात के सफर की कथा। दिन की यात्रा में कभी भी बेंच पर न बैठते। संडास के पास कोने में हाथ जोड़कर बैठना। टिकट चेकर ड़िब्बे में घुसते हुए दिख जाये तो तुरन्त हाथ जोड़े खड़ा रहना। वह पास आये और खिसियाकर पूछे - कान पकड़े एखाद झापड़ भी रसीद कर दे तो भी नम्रता छोड़नी नहीं। शब्द मुँह से हरगिज निकालना ही नहीं। कहाँ से आ रहा है? उत्तर नहीं। अबे गधे कहाँ जायेगा? उत्तर नहीं।

सुजन मिलता वह आगे बढ़ जाता। कोई खरमुंडी मिलता तो उतार देता। स्टेशन के बाहर कर देता। फिर दूसरी गाड़ी। दूर जाना हो तो यथा संभव मेल और एक्सप्रेस गाड़ी से चलना। हिसाब यह कि कहीं चेकर उतार भी दे तो भी दस बीस स्टेशन तो निकलेंगे ही। गाड़ी से उतारना उनके वश में जरुर है पर गाड़ी बीच में रुकवाने में वह भी बेबस। उतार देने पर भी काफी यात्रा हो ही जाती।

कभी ऐसा भी होता कि कीर्तन सुनकर कोई भक्त जहाँ जाना है वहाँ तक का टिकट निकाल देता। टिकट रहते भी अपनी रिजर्व जगह छोड़ना नहीं। दिन में संडास का कोना और रात में बेंच के नीचे।

मानो रेल से यात्रा करना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार था। गाड़ी अंग्रेजी सरकार की थी। बिना टिकट यात्रा कर अंग्रेजों से शत्रुता बनाये रखने का सुख था। वैसे कीर्तन में सदाचार की बात करते पर बिना टिकट यात्रा पाप है यह हमने कभी माना ही नहीं।

देशभर रेलमार्ग नहीं है। सड़क मार्ग से भी यात्रा करनी पड़ती। जंगल लतियाते, पगडंडियाँ नापते। परिव्राजक व्रत ही था। बाबा ने एक जगह रहने को मना किया था।

सोलहवाँ लगा था। उस उम्र में इतना वैराग्य। पहले-पहल ओढ़ने-बिछाने को मिलने पर लेता था। किसी किसान से कंबल किसी से चादर। फिर लगने लगा कि ऐसा किसी-किसी से ओढ़न-बिछावन लेने की क्या जरुरत है?

'शय्या भूमितलम्, दिशो पि वसनम्' इससे अधिक अच्छा कुछ नहीं।

गर्मियाँ शुरु हो गयी थी। रात दो-तीन बजे तक कीर्तन होता। शेष रात कहीं किसी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

के ओटलेया खलिहान में हाथ सिर के नीचे लिये काट देता। भोर उठ आसपास के आदमी उठने के पहले ही चल देता। रमते राम फकीर।

जनेलाक आश्चर्य करते। पैरों पड़ते। अलग-अलग ढंग से प्रस्ताव आते। ग्कबीर के नाम पर एक दोहा है

भगवान के दरबार बड़ी अंधेर उलटी रीत।
अनमांगत मोती मिले माँगे मिले न भीख॥

बाबा बार-बार यह दोहा कहते। उसका प्रत्यय आने लगा। पहले अन्न के लिये तरसता था। दरवाजे-दरवाजे दीनता दर्शाते रात-बेरात घूमता। फिर भी गड्ढा भरता न था। अब उसकी ओर पीठ करके चलने लगा तो प्रवाह पीछे लग गया। और ऐसे अस्वीकार में एक तरह की मस्ती अनुभव होने लगी।

तरुणाई थी। चार छह वर्ष बुरे कटे थे। यह भी सच। हरहरा कर शरीर गिर पड़ता इतने बुरे दिन गये थे। लेकिन चढ़ती उम्र ने वह सहन किया था। और अब वह "इनकार" के लिये सिद्ध था। ज्यों-ज्यों पदार्थ सामने आने लगे त्यों-त्यों उसका त्याग करने की भावना जोर करने लगल। बैराग्य का आनंद समझने लगा। बैरागी की मस्ती समझने लगी।

भोग का मजा मालूम नहीं था ऐसा नहीं था। न अंधा था न लूला। सभी इन्द्रिय सक्षम थे। बल्कि कुछ बाँये ही झुके हुए थे। कृशता का पुतला था। फिर भी वासना जागृत थी। तरुणाई के प्रदेश में पैर रखा ही था। मन दसों दिशाएँ दौड़ने के वय में था। किसी का बंधन नहीं था। शासन नहीं था। कोई जेठा नहीं था। मेरा मैं अकेला था।

पर शरीर से मरीयल लोग भी वक्त आने पर निग्रह से एक छोर पर खड़े हो सकते हैं। निग्रह से भोग नकार सकते हैं। भाग्य से बाबा का मार्गदर्शन भी मिला। तरुणाई के जोश में "नहीं" कहना सीख गया। नकारने के इस आवेश के कारण कहीं उलझा नहीं। भटकता रहा।

पगडंडियों से यात्रा। देश के अन्तर्भाग का जीवन साम्नने लाती। मेरा वेष साधू का, बैरागी का। इस वेष की इन लोगों को आदत। इनके विचार से साधु निरुपद्रवी जीव। इसलिए मेरे सामने सारे व्यवहार निसंगता से चलते।

गांव खेड़े में कहीं कोई नदी नाला। उसके किनारे ग्राम कन्या, औरतें धोने के लिए कपड़े और गगरी, मटका लिए दोपहर आती। कपड़े धो सुखाने ड़ालती। फिर हाथ पैर बढ़िया घिसकर नदी में खुली नहातीं। गांव का कोई मर्द दिखाई पड़े तो लज्जा से कपड़ा ओढ़ लेती पूरा। मैं नदी किनारे किसी पेड़ के नीचे बैठा दिखता धूल भरे-सने पैर दबाते। मैं युवा परन्तु वेष से साधू। फिर मेरे सामने कोई संकोच न होता। उल्टे मजाक ही होताः

"कौन बैठा है वहाँ मरा। ठठरी बंधे उसकी।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"अरे यूँ ही हल्ला कर रही है। वो तो काई साधू है। उससे काहे की लाज शरम-चल आ पानी में।"

फिर खुद ही सोचना। धूप उतरने तक वहीं पसर जाना जिससे नदी दिखे ही नहीं या दूसरा पेड़ पकड़ना।

मराठवाडा मे एक खेड़े में कीर्तन रात के ढ़ाई-तीन बजे तक चला। उसके बाद भजन मंडली से हनुमान मंदिर में घंटे भर तक गप्पें की। चार बजने को हो गये। चांदनी थी ठंडक थी। सोचा ऐसे ही निकल जायें। पास के ही गांव जाना था। एक भजनानंदी वहाँ तक छोड़ आने को आतुर थे पर उन्हें मना किया। फिर भी गांव से बाहर जाती सड़क दिखा गये।

बस्ती छूट - बाहर आया। वही क्यों भारत भर में अधिकतर गांवों में शौचालय नहीं हैं। सभी जंगल जाते हैं। महिलायें सड़क किनारे मुँह अंधेरे निपटने जाती हैं, पंक्ति से बैठती हैं - आपस में बतियाती हैं।

जिस रास्ते जा रहा था वहाँ यही चल रहा था बातें कान पर आयीं -

"बहन उठो कोई आ रहा है।"

"किसकी ठठरी चली इस अबेर।"

"अरे वह तो बाबा है रात भजन किया, अब जा रहा है।"

"वह तो भला है बेचारा।"

"बैठो जी बैठो। जायेगा अपने रास्ते। अंधेरा तो है ही।" संकोच से गड़ा नीचे देखते मैं बढ़ा। और वहाँ से आगे आते ही दौड़ा और दौड़ता ही चला गया।

कई एक जगह स्वागत होता। बाबा का और उनके चेलों का चारों ओर बड़ा बोलबाला था। दिनभर जरुर किसी पेड़ के नीचे काटनी पड़ती। शाम आदमी खेंत जंगल से लौटते तो उन्हें पता चलता। गाड़गे महाराज का कोई चेला गांव में आया हुआ है। टाट की लुंगी लगाये हैं। भीख माँग कर खाया है। विरक्त है। मुद्रा पर तेज है। और जाने क्या-क्या।

फिर झांज, ढोलक, भजनी मंडली सब जुट जाते। कहीं कुछ भी कमी न रहती।

कोई गांव ऐसा भी होता जहाँ मुसलमान ज्यादा। वहाँ कुछ भी लग्गा नहीं लगता। उन्होंने उनके सिर-फोड़ फकीर देखे हुए। उनके हाथ में एक गुर्ज गदा जैसा हथियार रहता। चौक में खड़े रहना - चिल्लाना अल्लाह के नाम पर - इतना-इतना दो - खड़ा सवाल है। उसकी तरफ किसी ने न देखा तो वह गुर्ज अपने ही सिर पर मार लेना। बड़ी-बड़ी सुईयाँ रखना और फिर सुईयाँ जीभ में से आरपार करना। खून से लथपथ होकर लाल आँखें कर के नाचना। फिर बेचारे मुसलमान चंदा कर उस खरमुंडे की माँग पूरी करते। उनके सामने मेरे जैसे टाट लपेटे, बालों का जंगल सिर लिये-नंगे उघाडे बाबा की क्या कीमत?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उसमें मैं वारकरी। वे मेरी तरफ ढूँकते भी नहीं।

एक अपवाद कहने लायक। एक मुसलमान पंढरी का वारकरी था। नियम से वारी करता। पास के गांव में उसने मेरा कीर्तन सुना। बड़े प्यार से अपने गांव ले गया। मसजिद के सामने कीर्तन हुआ। दस पांच लोग थे। ढोलक, मृदंग नहीं था। एक नगारची फिर अपना नगारा ले आया।

कीर्तन के लिये तुकाराम का हिन्दी अभंग लिया

क्या गाऊँ कोई सुननेवाला
देखे तो सब जग ही भूला
खेलो अपने रामहि साथ
जैसी वैसी कर रहुँ मात
कहाँ से लाऊँ मधुरा बानी
रीझे ऐसी लोक बिरानी
गिरिधर तो भाव का भूखा
राग कला नहिं जानत तुका ॥

फिर कबीर, तुलसी, सूर, मीरा सारे खीचं-खाचं कर कीर्तन में खड़े किये।

कीर्तन हुआ। वह अच्छा हुआ। यह मेरी धारणा। प्रशंसा के चार वाक् पुष्पों का इंतजार कर रहा था। पाटील मुझे छोड़ने आया। रास्तें में बोला -

"बाबा ऐसा क्या किया तुमन्ये।"

"क्या किया?"

"अपना तुकुब्बा, नामदेव का म्हराठी परमान देने का। वत्ता छोड़कर ये अजनबी क्या बोल्ये?"

आश्चर्य से मैंने कहा -

"मुसलमान ज्यादा थे।"

"तब क्या हुआ। माटीमिलों का समझ्या क्या? कुछच नहीं समझ्या अगर सादासुदा म्हराठी बोलते तो समझता।"

एक गांव ऐसा भी जहाँ कीर्तन नहीं हो पाया। रोटी भी बासी-बुसी मिली। एक कुएँ के पास बैठकर खाई। रहट चल रहा था पर किसान को मेरी जाति पर शंका हुई। कुएँ पर उसने चढ़ने न दिया। फिर खेत में से टमरेल में पानी लिया। पीया। गांव के बाहर भैरों बाबा का एक स्थान। चबुतरा। छोटासा आला उसमें सिंदूर पुते भैरोजी। शाम को कोई दिया जला गया था। फिर भी वहीं कमर का टाट छोड़ा, बिछाया और घुटने पेट में मोड़कर सोया। भोर उठा तुरन्त चल दिया। बुरा लगा - मन कचोटता रहा रात में ही गांव छोड़ देना था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

रात को भोजन भरपेट कभी-कभार ही होता। कहाँ मिलेगा - कब मिलेगा इसका कोई भरोसा नहीं। कई बार पानी पीकर ही सोना पड़ता। इससे भोर उठकर प्रातर्विधि के लिए केवल आदतन जाना। पेट साफ होगा ही इसका कोई भरोसा नहीं होता।

इसलिये दोपहर को अन्न का ठिकाना हो जाये तो शौच को जाना। जिस दिन कहीं कुछ भी ठिकाना नहीं उस दिन व्यर्थ में जाकर पेट हलका क्यों कर लेना? कुछ नहीं से भला उतना सहारा। भिक्षा का लग्गा लगने पर फिर हो आना।

फिर वह शुभकाल उदय होने तक किसी पेड़ के नीचे कुलबुलाते पड़े रहना। बार-बार भिक्षा की दिशा की ओर देखते। कभी किसी फक्कड़ का साथ हो तो उसे ही उस दिशा की ओर भेजना आप कभी जाना नहीं। प्रतिष्ठा को ढका लगेगा यह ड़र। कहीं समाराधना हो रही होती तो कहा जाता - बाबाजी ठहरना - रसोई बनने पर पंगत के समय बुला लेंगे।

बड़ी ऐंठ से आप कहते

"किसी एक घर का भोजन न करने का नियम है मेरा।"

"ऐसा। तो ऐसा करते हैं पत्तल लगाकर ला देते हैं फिर आप चाहे जैसा करो?"

"कितनी देर है?"

"ये हो ही गया समझो - अभी होता है।"

आज ठीक-ठाक भोजन मिलेगा यह आशा बंधती। नियम पालन के लिये कहीं से नमक माँग लाता और फिर सिर नीचे हाथ रखकर सो जाता। बे खबर। भरपेट भोजन के सपने देखते।

नींद खुलती तब दिन ढ़ला होता। समाराधना की तरफ एकाएक देखता। तो सब कुछ निपटकर बर्तन मंजते दिखते। अनुपम आनंद (?) होता तब। फिर वहाँ ठहरना कठिन लगता। चुपचाप उठ खाली पेट चल देता।

भोजन का ऐसा आनंद था इसलिये वह भैरों का स्थान छोड़ जाते समय प्रातर्विधि का भी विचार मन से निकाल दिया। दूर ऊँचाई पर एक गांव दिखा उस ओर चल दिया। प्यास बहुत जोर की लगी थी। सोचा गांव कोई दूर नहीं है - होगा कोई चार पांच मील। वहीं जाऊँ। किसी के घर से धुआँ उठ रहा होगा। नाश्ते के लिये रोटियाँ सेकी जा रही होंगी। वहीं दरवाजे पर खड़ा रहूँ। आधी रोटी भी मिल गई तो वहीं कीर्तन कर देंगे। आधी रोटी पर कीर्तन। वह भी उन्हें न पुसाए तो सारी गली झाड़ दूँगा। लकड़ी फाड़ दूँगा। जबरी भूख लगी है रोटी चाहिये। पानी चाहिये।

पांच मील के रास्ते में मन रमें ऐसा कुछ भी नहीं। पेड़ भी नहीं। गाड़ी रास्ता भी आधा पौना। पैर घसीटते चल रहा था। भोर से कुल्ला तक न किया था। मुँह पर से हाथ भी फिराया नहीं था। शरीर अंदर से पानी के लिए तड़प रहा था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चार एक मील इस तरह कटे। धूप चढ़ रही थी। गांव दिख रहा था। पर कहीं कुआँ या कछवारा दिख नहीं रहा था। प्राण निकलने को हो रहे थे। पैर रुक-रुक रहे थे। बैठिया बैल की तरह। शरीर पर चोखाने के उस टुकड़े के सिवाय कुछ नहीं था पर वह भी भारी हो गया था। तुलसी माला भी उतार फेंकने की तीव्र इच्छा हो रही थी।

पैर घुटने तक धूलि से भर गे थे। उन्हीं से रास्ते पर लकीरें बनाता बढ़ा। गांव नजदीक किया।

क्या आश्चर्य !

गांव के बाहर ढोर-गोरु की कोई आवाजाही नहीं। सभी घर मरे से। किसी भी घर पर छप्पर नहीं। ठाठ भी नहीं। घर के आग-पीछे की बाड़ टुटी टाटी। कहीं कोई दरवाजे खुले दिख रहे हैं। पर उसके सामने दुनियाभर का कूडा, मिट्टी जमा है। कहाँ गये सब? क्या कहीं यात्रा पर गये? या किसी विवाह की बारात में गये? पर यात्रा या बारात में गये होते तो घरों पर ऐसी स्मशान छाया न आती।

गांव को जाती गली के छोर पर खड़ा हो गया। ऐसे ही कोई सुबह के दस बजे होंगे। परन्तु गांव में घुसने को ड़र लग रहा था। सोचा प्यास-भूख से जान जा रही है उतना ही काफी है इससे अधिक कुछ न हो तो ही बेहतर है। पर जिज्ञासा? उसने इतना जोर किया कि गांव में घुस गया। रास्ता सीधा नहीं था। आड़ेटेढे घर थे। एक-दो घरों में ताले लगे थे पुराने। पर कुछ के दरवाजे एकदम खुले थे। उसमें से एक के दरवाजे पर खड़ा हो गया। छप्पर गिरा पड़ा था। उसमें एक कोने में कुछ मटके दिख रहे थे। बदबू अंदर से इतनी आ रही थी कि खड़ा रहना कठिन हो गया। नाक दबा वैसा ही भागा। रास्ता घूमकर बायें जाता था। उस रास्ते आगे आया।

बाप रे बाप। आधे घर में आधे बाहर ऐसे ढोरों के अस्थि पंजर पड़े थे। चमड़ा सूख फट गया था। पेट फटे हुए। अंदर का सब कुछ बाहर निकल उसकी मिट्टी बनी हुई। असह्य दुर्गन्धि। सब ओर थी।

डर से मरा सा हो गया। उसमें एक कुआँ दिखा। अंदर झाँका। सुखे कुएँ में एक अस्थिपंजर मानव का। हाथ पैर के पास मटके। पंजर भी मसला हुआ जैसा। पेट में सिर धँसा हुआ। सूखी पड़ी जीभ सूखे ओठों पर फेरी। पीछे घूमा तो लगा शरीर पर कुछ चल रहा है। देख-मार ड़ाला। पिस्सू-पैर जंघा और उसके भी ऊपर तक चढ़े हुए। भूखे थे वे भी। तत्काल रक्त पीने भिड़ गये मेरा।

भागा और भागा। पैर जंघा झाड़ता-पटकता। पिस्सू नोंचकर फेंकता। ऐसा लगता कुएँ का वह पंजर आकर मेरा गला दबाएगा।

कितना दौड़ा-भागा पता नहीं। सांस फूलती-फूलती और मैं औंधा गिर पड़ता। मुँह ढँक लेता। सांस किंचित सांस में आते ही फिर उठता और भागता।

दूसरे गांव की कछवारी। खेत की नाली से पानी बह रहा। अंत में उसी में गिर पड़ा। कुत्ते जैसा मुँह से पानी पिया-पड़ा रहा।

नाली में आदमी जैसा क्या गिरा यह देखने किसान काम छोड़ आया। मुझे हाथ देकर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

उठाया। उसी ने बताया। दो माह हो गये पिलेगे ने पूरा गांव लील लिया। दीया लगाने भी कोई नहीं रहा। बात का पक्का साक्षी मैं भी था।

मराठवाडा - उस समय निजामी शासन था वहाँ - वारकरी लोगों का बड़ा जमावड़ा। महिलाएँ - पुरुष सीधे सरल भोले निरुपद्रवी सश्रद्ध लोग। बड़ा ही अच्छा लगता। मन में लोभ होता। कीर्तन कार के फक्कड जीवन का प्रारंभ करने सबसे उत्तम भूमि।

दुनिया से कुछ नहीं चाहिये यहाँ तक ठीक। पर निस्पृहता की भी कठोर परीक्षा हो ऐसे रुखडे-सुखडे प्रदेश में भटकने की अपेक्षा ऐसे सश्रद्ध प्रदेश में भटकना अति सुखकारी था। मोर्चा इसीलिये मराठवाडा की ओर मोड़ा।

घृष्णेश्वर, औंढेनागनाथ, परळी बैजनाथ ये तीन ज्योतिर्लिंग मराठवाडा में हैं। एकनाथ का स्थान पैठण यहाँ हैं। ज्ञानेश्वर महाराज का ननिहाल आपेगांव यहाँ। समर्थ रामदास का जन्मस्थान 'जांब' यहाँ। गुरु गोविन्दसिंह का 'नांदेड' यहाँ। अजंता-एलोरा यहाँ। यादवों का देवगिरि यहाँ। ऐसे मधुमक्खी के छत्ते सा मराठवाडा महाक्षेत्र है। इसलिये भी उस क्षेत्र का लोभ होने का कारण था।

मराठवाडा की सारी भलाइयाँ अच्छाइयाँ याद करता उस और पैर बढ़ा रहा था। पर इस गुलाब के कांटे की ओर ध्यान ही नहीं गया। लेकिन पहले ही झटके में उसने अपना अस्तित्व दिखला दिया।

निजाम सीमा में प्रवेश कर रहा था। दोनो ओर चौकियाँ थी। उस ओर निजामशाही की थी। निजाम नाके को करोड़गिरी कहते थे। मेरे पास चुंगी देने लायक क्या था?

एक धमकी भरी आवाज कान पर आई

"अबे औ लौंडे?"

मुझे कोई लौंडा कहे! मैं फक्कड बाबा का शिष्य। कीर्तनकार। जिसके कीर्तन में हजार पांचसौ आदमी पांच-पांच घंटे बैठे रहते हैं - ऐसा साधु। फिर मुझे क्यों. . . . .

"कान फटे हैं क्या? ओ लौंडे।

इधर उधर देखा। उस अभिधान लायक और दूसरा कोई सड़क पर न था। खड़ा रहा। नाके की ओर देखा।

"इ ध र आ. . . . .। घूरता क्या है?"

समझ में आया ये वाक्य पुष्प मेरे लिये ही हैं। मेरे अहंकार के मटके पर लगे पत्थर ने सारा पानी बहा दिया। ड़रा थोड़ासा। पलभर के लिये सोचा कि पीछे घूमकर भाग जाना चाहिये। इनके प्रदेश में आया ही नहीं तो क्या करेंगे? पीछा थोड़े ही करेंगे।

लेकिन इस विचार की अपने आप शरम लगी। मन में कहा कि फकीर हो। जाओ सामने जाओ। क्या कर लेगा? मारेगा तो निश्चित नहीं। और मारा तो मारा। मार खाने की आदत है तुम्हें। और कीर्तन में जिस ज्ञानोबा और तुकाराम् की बानी कहते हो उनकी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

सत्कीर्ति तुम्हारे भाग जाने से कलंकित हो जाएगी। ज्ञानोबा ने कहा है "पावेल ते निवांता साहोनी जावे।" (प्राप्त भाग को शांति से भोगना चाहिये)

ऐसा सारा धीरज बटोर कर नाके के सामने जा खड़ा हुआ। एक मियाँ टेबल के पीछे कुर्सी पर बैठे थे। उनके पीछे करोड़गिरी का पट्टा गले में ड़ाले दूसरा मियाँ खड़ा था। मुझे वही बुला रहा था।

उसने पास बुलाया। पास पहुँचते ही कान उमेठते हुए बोला -

"हरामजादे, कहाँ चोरी की? कहाँ भाग रहा था?" टमरैल पकड़ बोला -

"ये कटोरा है क्या तेरा?"

गुस्सा आ रहा था। ड़र भी लग रहा था। मुँह से बोल नहीं निकल रहे थे।

"गूँगा है क्या कमीने - बोलता क्यों नहीं?"

इतने में एक बैलगाड़ी नाके के सामने रुक गयी। उसमें दो वारकरी थे। मरे को पहचानने वाले। उन्होंने सहायता की और मैं छूटा।

गोदावरी नदी के किनारे का गांव गंगाखेड़। दस पंद्रह हजार की बस्ती। नदीपर घाट चौड़े अच्छे। दो-चार देवालय। आड़े-टेढे रास्ते। सभी गोदागंगा के घाट पर जानेवाले।

गंगा किनारे के खेत में ही बड़ासा शामियाना तना था। चारों ओर झंडियाँ-तोरण लगे हुए। बीच शमियाने में विठ्ठन रखमाबाई की तसबीर की झांकी सजी। उसके इधर उधर साधु संतो के चित्र। सामने गले में वीणा लटकाये कैकाउी बुवा खड़े हुए।

ठिंगंना भरासा छोटी नाक का कैकाडी अपने धंधे से लगा था। राजाराम उसका नाम। रीति के अनुसार विवाह हुआ। पत्नी होते हुए वह अंदर से बेचैन। क्यों कैसे यह उसे भी ज्ञात नहीं। एक बार गाड़गे बाबा का कीर्तन सुना और जैसे सूखे ईंधन पर चिनगारी पड़ी। पंछी घरौंदे से उड़ गया।

लुंगी पहनने लगा। बाबा भी लुंगी ही पहनते थे। उनकी लुंगी भगवे रंग की थी। तो इसकी सफेद। कैकाड़ी बुवा ने साधना क्या की? अध्ययन क्या किया? यह ज्ञात नहीं। शायद ही किया हो।

बाबा से अलग दूसरा विशेष कलाई और पैरों में चिंदियाँ बांधना था। परन्तु विरक्ति स्वीकारने के बाद जो शारीरिक कष्ट करने पड़ते हैं वे उन्होंने अपार किये। उनका व्रत पालन भी सामान्य से अलग ही था।

दिन रात में से कभी एक बार लेट जाने पर थकान दूर हो जाती है। अच्छी नस्ल का घोड़ा छोड़ शेष सारा पशु जगत भी रात को लेटता है फिर आदमी तो आदमी ही है।

परन्तु कैकाडी बुवा का आश्चर्य यह कि दो नियम उन्होंने बड़ी निष्ठा से कितने ही वर्ष तक कठोरता से पालन किये। पहला यह कि वे कभी लेटे नहीं। और सारे नियम हम फक्कडों जैसे - माने एक घर में नहीं खाना। गांव में मुकाम न करना। गांव के बाहर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जंगल में रहना। रात तीन-तीन बजे तक कीर्तन करना। जहाँ तक बने बिना श्रम किये किसी के यहाँ न खाना आदि आदि।

परन्तु वे कीर्तन के बाद भी लेटते नहीं थे। कहीं किसी के खेत, बगिया में किसी वृक्ष के नीचे जो रात निकालनी वह वैशाखी पर टिककर बैठे बैठे। वैसे ही सोना। कठिन था परन्तु उन्होंने कितने ही वर्ष अपने नियम को निभाया।

उनका दूसरा नियम था कि वे केवल कीर्तन में ही बोलते थे। कीर्तन समाप्त होते ही मौन धारण करते।

ऐसे ये केकाडी बुवा गंगाखेड में सप्ते के लिये लगाये गये शामियाने में गले में वीणा लटकाये खड़े थे।

मुझे देखते ही एक गुरु बंधु मिलने का आनंद उन्हें हुआ। इस सप्ते में विठोबा के आगे गले में वीणा लटकाकर दो-दो घंटे भजन करना और कैकाडी बुवा का आदेश हुआ तो रात को कीत्रन में एक आध घंटे के लिए उपस्थिति लगाना और शेष समय आदमियों की निरीक्षण करना। कैकाडी बुवा का दैनिक जीवन देखना। महानंदस्वामी का देखा था। और कितने ही अतिरथी महारथियों का देखा था। हर एक की अपनी एक पद्धती थी।

साधू का केवल विरक्त होना ही काफी नहीं है। केवल निस्पृहता उपयोगी नहीं। वह गुण लोगों के ध्यान में आना चाहिये। लोग कहें - कैसा ऊँचा विरक्त है - साधू है। पैर पड़ने नहीं देता तब उसकी विरक्तता-साधूता।

बाबा के सभी शिष्य उनके देखादेखी पैरा पड़ने नहीं देते थे। परन्तु उनमे कितने प्रकार थे। कोई पैरों पड़नेवाला दिखते ही चिल्लाना शुरु कर देते। कोई पैरों पड़ना चाहते के पास आने पर एकदम कूदकर अलग हो जाते। फिर कोई बावला भक्त भूमि पर गिर जाता। इधर उधर के लाग मुस्कराते। फिर उस भक्त को बहुत कृपापूर्वक उठाया जाता। उसका शरीर झाडा जाता उसे सीने से लगाया जाता। लोग सोचते कितनी अनुकंपा. . .।

कैकाडीबुवा तो पैरों में चिंदिया बांधते थे। किसकी हिम्मत जो पाद स्पर्श करे। ऐसे लीन हो जाते कि कहा न जाये।

कीर्तन की भी कैकाडी बुवा की अपनी पद्धति अलग थी। स्त्रियों की भावनाओं को स्पर्श कर जाये ऐसा उनका कीर्तन होता। जनाबाई के अभंग भोर चक्की पर गाये जाते। रचना बहुत सुघट और महिलाओं के दैनिक जीवन नाते रिश्ते से जुडी। वे अभंग उनके कीर्तन का बड़ा भाग रहता। वह भी मजेदार से। वे स्वयं अभंग कहते और महिलायें खुले गले उन्हें दोहराती-गाती। हजार-हजार औरतें एक साथ ओवी अभंग गायें तबका सुनने का अहो आनंद क्या कहना। बिना सुने जाना न ज़ा सके।

दूर से तो वह अजब प्रत्ययकारी होता। कीर्तनकार और दो तीन हजार श्रोता के मध्य का यह सुंदर संवाद एकदम तृप्त-तृप्त करनेवाला होता।

चार दो मिनट बातें की। श्रोताओं को एक आध बार फटकारा। उन्हें कोई मजेदार बात बताकर हंसाया और फिर उनसे भजन करवाया :

राधा राधाकृष्ण रा धा. . . . . . .।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पूरा दो ढ़ाई तीन हजार का जमाव काड़-कड़ाड तालियाँ बजाता व भजन गाता। किसी को भी ताली बजाने से छूट न होती। कोई धीरे-धीरे ताली बजाता या नहीं बजाता तो उसपर अवश्य ही व्यंग किया जाता। कहते अभी मत बजाओ ताली अगले जन्म में औरत का जन्म लोगे तब पूरी जिंदगी रोटियाँ बनाते तालियाँ बजाना।

इसपर हँसी का कहर उठता कि फिर भजन चलता। राधा. . . . .वह बेचारा लज्जित होकर तालियाँ बजाने लगता।

कैकाडी बुवा कवि थे। गाय के सम्बन्ध में उनके मन में अपार करुणा थी। उन्होंने गाय पर एक गीत लिखा था।

गाय की दुर्दशा, पूरा जन्म किसान के उपयोगी पड़ने के बाद बुढ़ापे में उसका कसाई के हाथों बेचा जाना और छुरी से उसकी मृत्यु यह सब कैकाडी बुवा बहुत ही करुणाई से उस गीत में गाते थे।

मनुजा कुछ विचार कर ले।
गौ कसाई को न बेच रे

भोली जनता और सीधा कीर्तनकार अजब मेल था। लोगों के मन में उनके प्रति जो भाव था वह कीर्तन के बाद यूँ प्रगट होता था -

"ऐसा कैसा कैकाडी बाबा
दीवाना बना के गया।"

सप्ते के समाप्ति की सिद्धता बड़े उत्साह से चल रही थी। अंतिम दिन बाबा आये।

चारों दिशाओं से अपार भीड़ आने लगी। बैलगाड़ियाँ, घोड़े पैदल, औरतें, आदमी एक हो हल्ला। हम सब व्यवस्था में जुटे, उसमें भी जो आये वह पैर छुए। नाही-नाहीं कहते मुँह में फसुकर आये। और शाम को बाबा आये -

मैं भजन मंडली के साथ था। वहीं से जितना हो सका पैरों की पोरों पर खड़ा हो मुंडी उठी मैंने देखा तो जैसा आदमियों का समुन्दर। इधर आदमी, उधर चारो ओर आदमी ही आदमी और इस समुन्दर पर जोर से वर्षा हो जाये वैसा बाबा का कीर्तन। घन गंभीर आवाज, बीच में ही कोई मजेदार बात बताते तो वह इतना बड़ा समूह गदगदा हँसता। उसके बाद भजन का सपाटा। सब लोग तालियाँ बजाओ ये आदेश। हाथ उपर कर के बजाओ शरमाओ नहीं की फटकार। माँ बहन पर गाली देते समय माँ बहन से शरमाते नहीं, सारी शरम यही आती है। ईश्वर का नाम लेते, भजन करते, तालियाँ बजाते समय। चलो बजाओ तालियाँ और फिर जन सागर का वह काड़-कड़ाड़-काड़-कड़ाड़ ऐसी तालियाँ बजाना।

केवल अभूतपूर्व ऐसा भी नहीं कह सकते क्योंकि बाबा के हर कीर्तन में ऐसा ही होता। यही उनके जनमानस की प्रचंड लोकप्रियता का राज था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

राम राम राम सीता राम राम राम
काड़ कडाड काड कडाड काड कडाड
या फिर राधा कृष्ण राधा कृष्ण
कृष्ण कृष्ण राधा कृष्ण
या गोपाला गोपाला देवकीनंदन गोपाला
घनघेर ओले बरस रहे हो जैसे

सारे-सारे कीर्तन सुन तृप्त-तृप्त हो गये। आधीरात से अधिक हो गई। बाबा ने कीर्तन समाप्त किया। विठ्ठल-विठ्ठल जय-जय विठ्ठल। शुरु हो गया। लोग उठकर खड़े हो गये। और उस भीड़ में बाबा अनादिखे हो गये। और साथ में कुछ गिने चुने हम उनके साथ।

गोदामाई के किनारे दूर एक नीम का पेड़ शाम को ही तय कर रखा था। वहाँ पहुँचे। दो चार लकडी के लट्ठ जोर से जलते हुए। उस अलाव के चारों ओर बैठे हम सब। सबने रोटी खाई करतल पर लेकर। फिर बाबा बोलने लगे। पहले कैकाडी बुवा की पूछताछ की। सारी व्यवस्था पूछ ली फिर उन्हें सप्ते की ओर भेज दिया।

जाओ-जाओ जल्दी। तुम्हें सब कुछ देखना है। रसोई शुरु करो बारह बजे तक पंगत बैठनी चाहिये। कैकाडी जाने के बाद बाबा ने मुझसे पूछा

"हाँ बताओ महाराज यहाँ कैसे टपक पड़े?"

आलंदी से गंगाखेड तक का सारा वृत्त उनको थोड़े में बताया। करोड़गिरी पर हुई पिटाई। मुसलमान गांव में हुआ कीर्तन। सब सुन लिया। मेरी पीठ ठोंकते बोले-मेरे साथ रहता तो ये अनुभव कहाँ मिलते। अकेला फक्कड जोगी जब घूमने निकलता है तो वह सूरमा हो जाता है। और ओढ़ने-बिछाने का क्या करते हो।

कुछ नहीं। तीन बजे तक कीर्तन होने के बाद रात रहती ही कितनी है। जाड़ा लगता तो अलाव सुलगा लेता। उसके पास हाथ पैर पेट के पास लिये पड़ा रहता। अति होता तो घास फूस में घुस जाता।

पेट से चिपका उन्होंने आशीर्वाद दिया।

बाबा के कीर्तन के ही दिन जिजाबा मोहिते पाटील यह मेरी ही उमर का गुरुबंधु मुझे आकर मिला। वह भी मुझ जैसा ही टाट का टुकडा लपेटता था।

माँ बाप का अकेला। घर में खेती पाती। इकहरा। गोरा। स्वभाव से उमदा जाने कैसे इस प्रवाह में आ गया। परिचय हुआ। और हमारे ग्रह जुड़ गये तुरन्त।

बाबा के कीर्तन के बाद नीम तले सोये थे हम तब उसने कहा

"गोपालबुवा तलबीड को मैंने सप्ता ठहराया है।"

"ऐसा? किधर है यह तलबीड।"

"वसंतगढ़ कहाँ है?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"तलबीड के उपरी छोर पर।"

फिर उसने गंभीर हो पूछा-आअेगे मेरे साथ, एक से दो भले रहेंगे। तुरन्त मान गया। दूसरे दिन बाबा निकल जाने के बाद तलबीड के पाथेय की चिंता करने लगा। गंगाखेड वालों ने उसकी व्यवस्था कर दी। हम दोनों रामदूत गंगाखेड से तलबीड की ओर उड्डाण करते भये।

तलबीड का जिला सातारा, तहसील कराड़। यह जिला मर्दानी कहा जाता है। पहलवानी यहाँ को शौक। ओठों पर मूँठ-मूँठ मूँछें रखना दूसरा शौक। लोग लेकिन बड़े झगडालू। न कुछ बात पर फरसा कुल्हाडी निकलती। जैसे झगडालू वैसे ही निष्ठालू वारकरी भी।

जिजाबा के सप्ते के बहाने सातारा आया इसलिये फिर सातारा से कोल्हापूर तक का सारा क्षेत्र खूप घूमा।

इस क्षेत्र की भूमि जैसे काली बरफी का टुकडा। बहुत सारे लोग फौज में। फौज में काम आये जवान की विधवा घर गांव में। जिसके जमीन पर भाई बंदो की निगाह। विधवाएँ वारकरी। आलंदी पंढरी फेरा लगानेवाली। भाईबंदो से भूमि का टुकडा और जान दोनों बचाते हुए हरिनाम के आसरे रहनेवाली।

हम दोनों पंधरह सोलह साल के। नंगे उघाडे। तलवार की धार पर चलनेवाले। एक टाट के टुकडे के सिवाय ओढना बिछाना छोड़े हुए। एक घर का भोजन न करनेवाले। कीर्तनानंदी।

गांव बाहर खलिहान बगीची में अलाव के सहारे शेष रात गुजारते। दूसरे दिन कुछ भी न माँगते लाठियाँ फटकारते हाथ के डबडे पर ताल देते भजन गाते दूसरे गांव की राह पकड़ते।

हमपर ये माँ बहनें बहुत नेह बरसाती। हमें पकड़ रखने की जिद करती। हम से जी लगाती। हम भी जिद्दी। उनके नेहपाश में अटके नहीं। फिर गांव सीमा छोड़ने वे आतीं। आँखों में से टपटप आँसू टपकाती। ऐसा बहुत-बहुत याद है।

नाम याद नहीं अब वे बूढी हो गयी होंगी। हमें भूल गई होंगी। कदाचित मृत्यु के रास्ते बहुत दूर जा पहुँची होंगी।

कृष्णा नदी के तीरपर के दो गांव। ये पार एक वो पार दूसरा। वहाँ कृष्णा में बड़ी बड़ी मछलियाँ। दो तीन हाथ तक बड़ी। मछली मारना मना। आदमी उन्हें देखने, दाना फली ड़ालने आते। उसे खाने वे सारी एक झुम्मड हो जाती।

दो में से किसी एक गांव ठहरते हम। कीर्तन के फड रंगते खूब। आज इस गांव कल उस गांव। तलबीड के सप्ते को अभी देर थी। इसलिये हम यहीं रमे थे। कीर्तनों में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्पर्धा सी हो गई थी। कीर्तन का प्रारंभ कभी मैं करता तो कभी जिजाबा। दोनों गांव की भजन मंडलियाँ इकट्ठी हो जाया करती थी। ऐसा रंग जमता कि क्या कहूँ।

हम एक घर में भोजन करते नहीं यह गांववालों को मालूम था। फिर घर-घर से ये वो आता। कहीं से बैगन की सुस्वादू सब्जी आ रही है तो कहीं से उबले भुट्टे। उबली हुई मूँगफली। गरमागरम रोटियाँ। दही के डबोले। ऐसा खूप-खूप आता। फिर हम इसमें से थोड़ा उसमें से थोड़ा ऐसा हाथपर लेकर खाते और हाथ टाट से पोछते थे।

दो चार वैष्णव उन दिनों हमारे साथ ही रह रहे थे हमेशा। बहुत दिन से जो भोजन कष्ट था उसकी सारी भरपाई यहाँ हो गयी। लेकिन वह स्थान याद रहा उसका कारण दूसरा ही था। सप्ते की तैयारी में जीजाबा जल्दी चला गया। मैं वहीं रहा। जीजाबा निकल जाने से आधा मजा कम हो गया। रात कीर्तन करना। दोपहर को तानखूटी सोना। हाथ सिर नीचे लिये। निर्घोर नींद लगती। चिंता किसी बात की थी ही नहीं।

दोपहर ढ़ले नींद खुली एक दिन। दो जनी मेरी ओर पीठ किये बैठी थी। उसमें से एक को तुरन्त पहचाना। वारकरी थी। हमने मौसी का नाता जोड़ा था। रोज कुछ न कुछ खाने को ले आती। आज वह अबेर आयी थी किसी दूसरी को लेकर। उठकर मौसी से मजाक किया -

"क्यों मौसी बहू ने भगा दिया क्या?"

वहीं के वहीं सिर भूमि से छुलाते बोली - "नहीं बेटा।"

"नहीं मुझे तो ऐसा ही लगता है। कल मेरे लिये दही का ड़बोला ले आयी थी न, इसलिये भगा दिया होगा।"

मुझे उत्तर देना छोड़ उसने सहेली से कहा - "पड़ पैरों।"

सहेली उठ मेरी दिशा में थोड़ी आगे बढ़ी-

रुपसी - इकहरी गले में अच्छासा सोने का जेवर, बीस से उपर नहीं पर भाल पर कुंकुम नहीं. . . . . . . मेरे पैरो पड़ने आगे बढ़ती हुई।

संकोच से गड़ गया। हे भगवान ये तो मेरे जीजी जितनी बड़ी पैरो कैसे पड़वाऊँ? पीछे-पीछे सरका।

आखिर वहीं रुक उसने भूमिपर मत्था टेका। और मौसी के पास जाकर खड़ी हो गई।

मौसी ने फिर बात बताई। मरद लड़ाई में गोली का प्यारा हो गया। तबसे इसने एक व्रत पकड़ा है। रोज कागजों पर सवा हजार राम नाम लिखना। वे सारे कागज एक पर एक रख फाड़ना हर एक में राम नाम रहे ऐसे। फिर उनकी गोलियाँ बनाना। फिर उनको आटे की सवा हजार गोलियों में रखना फिर दोपहर वह राम गोली कृष्णा नदी के मछलियों को अर्पण करना।

माह के चार दिन छोड़ यह व्रत अखंड है।

मौसी बोली।

रोज कीर्तन को आती है। पैरो पड़ने की इच्छा थी इसलिये ले आई आज। इसपर मैं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

क्या बोलता चुप ही रहा। मौसी ने आगे कहा -

"इसको आपसे थोड़ी मदद चाहिये।"

"कहिये ?"

"अब का सवा लाख इसका कल पूरा होना है। तो इसको एक रोज का रामनाम आप लिखकर दो।"

कागज, कलम, दवात, कलम का रानी निब सब लाकर दिया उसने मैंने सवा हजार राम नाम लिखे।

उतनी वह अवधि सचमुच सत्कार्य में लगी ऐसा मन में बार-बार बना रहा।

तलबीड गांव वसंतगढ़ के ठीक नीचे। पूर्व को। बगल के एक और गांव से उपर जाने को गाड़ीरस्ता। किलेपर एक राम मंदिर कुछ गिरीपड़ी इमारतें।

तलबीड पहुँचा तब सप्ते की तैयारी करीबन हो गई थी। गांव के पास ही मंडप सजा था। झंडीयाँ लग रही थीं। जीजाबा सप्ते की तैयारी में जुटा था। उससे पूछा "किलेपर हो आऊँ? उसने 'हाँ' कहा। फिर एक जानकार लिया - किला चढ़ गया।

उपर कितना बड़ा प्रदेश दिख रहा था। पूर्व ओर आड़ी टेढ़ी बहती कृष्णामाई। दाँये से दौड़कर आकर उसके गले पड़नेवाली कोयना नदी। कराड़ के पास इन दो बिगड़ी बहनों का संगम। उधर दिखती उँची मीनारें जिनके तले बसा कराड़। कितना बड़ा शहर लेकिन यहाँ से छोटासा दिख रहा। दूर दिखता सदाशिवगढ़। दाहिने हाथ को मच्छिद्रगढ़ ऐसा बहुत कुछ सारा।

किसने बनाया। कौन-कौन यहाँ रहा। कुछ बता नहीं सका मेरे साथ का जानकार। गिरी पड़ी इमारतें देख मेरी मन-मीनार उदास हो गई। तलबिड पहुँचे। बात नहीं, चीत नहीं किसी से।

जीजाबा ने पूछा

"क्या हुआ ?"

उत्तर नहीं दिया। उसने कहा

"तबीयत तो ठीक है ?"

मैंने कहा "अरे वो तो सब ठीक है परन्तु इस किले के बारे में कौन बताएगा ? मुझे।"

"हत्त तेरे की। इतना ही। यहाँ एक सेवानिवृत्त फौजी अफसर हैं उन्हें मालूम है।"

फौज के अफसर।

इस गांव के ढेरों आदमी फौज में हैं। रणमर्दो का गांव है। वे इस इलाके में प्रसिद्ध हैं। दवाई करते हैं - गंडमाला पर। उन्हें किले के सम्बन्ध में बहुत जानकारी है।

दूसरे दिन उनके घर पहुँचा। पोर में ही वे बैठे थे। दो तीन रोगियों से बतिया रहे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

थे। मैं बाबा का शिष्य हूँ यह जानकर आइये बैठिये कहा। तूते उतारने की जगह पर मैं उकड़ूँ बैठ गया। बहुत कहा उन्होंने पर बैठक पर गया नहीं। उन्होंने पूछा "कहिये क्या सेवा करुँ - किसको दवाई चाहिये?"

"नहीं मुझे तो किले की जानकारी चाहिये।"

आश्चर्य हुआ उन्हें। मेरा भेस और पूछा गया प्रश्न विसंगत था। उन्होंने इतिहास के दो चार प्रश्न किये। सही उत्तर मैंने दिये। आश्चर्य बढ़ा उनका - बोले

"आप जोगी कैसे हो गये? सच देखा जाये तो आपको इतिहास से प्रेम . . . . ."

माथे पर हाथ लगाकर कहा - "यहाँ . . . . . .। यहाँ लिखा होता है वह होता है। खैर वसंतगढ़ के बारे में . . . . . .।"

फिर उन्होंने इतिहास बताया। किला भोज शिलाहार का बनवाया हुआ। बहुत साल शिवाजी के पास था। फिर औरंगजेब ने संभाजी को मारकर किला लिया। उसका नाम बदला वह रखा - किली द फतेह। माने विजय की चाबी। लेकिन यह चाबी उसके पास बहुत दिनों रहीं नहीं। मराठों ने फिर से किला जीत लिया।"

इस किले के कारण ही पाड़ली स्टेशन के पास का नंदगिरी या कल्याणगढ़ भी जाकर देखा। देखने का एक कारण भी हुआ।

किले की तलहटी के गांव में कीर्तन था। बड़ी उत्सुकता से किले को देखते-देखते गांव वालों ने मुझे देखा और बताया -

"नांदगिरी कहते हैं उसे"

इस किले की खास बात यह कि इसमें बीचों बीच एक बहुत विशाल पेड़ है। दूर से भी वह स्पष्ट दिखता है। उस पेड़ ने मेरा ध्यान खींच लिया - पूछा -

"वह पेड़ काहे का है?"

"क्या जाने क्या है? - शायद अरहर का है?"

आश्चर्य से पूछा

"अरहर का? इतना बड़ा"

"हाँ ईश्वर की करनी और नारियल में पानी। ऐसी उलटी बात देखी नहीं क्या?"

"आपने उपर जाकर देखा है कभी"

"नायजी। आपुन कंदी ग्येलोच नाहीं।"

आश्चर्य से पूछा

"किले की तलहटी में रहते हो कभी किले पर चढ़े ही नहीं?"

"काहे के लिये किले पर जाना? उनका कहना भी सही था। इन पहाड़ी किले का महत्व जिस राजा ने जाना था वह तो किलेपर ही मर गया। उसका नाती किला छोड़कर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नीचे आया। सातारा में जलमंदिर बनाकर रहने लगा। राजा स्वयं ही किले के नीचे आ जाने पर उसके सचिव ऊपर क्या करते? पेशवा पुणें मे, सेनापति तलेगांव मे, पंतप्रतिनिधि औंध में, पंतसचिव भोर में ऐसे सारे किला छोड़-छोड़ नीचे आ गये।

ऐसे में कोई गेंवार यह पूछे कि किलेपर काहे के लिये जाना तो उसे क्या कहना। अपने भले के सम्बन्ध में उदासीन रहना यह इस देश का स्वभाव ही तो है।

मैंने उससे पूछा - "मेरे साथ चलोगे?"

"कहाँ - किलेपर?"

"हाँ चलो! अरहर की फलियाँ ही तोड़ कर लायें।"

पर वह नहीं आया। चरवाहें से पूछते-पाछे रास्ता चढ़ता गया। चढ़ाई खड़ी। कभी सीढ़ियाँ होंगी यह सोचता बढ़ता रहा। तीन चौथाई चढ़ जाने के बाद एक गुफा मिली। अंदर देखा पानी। कितना मधुर, कितना ठंडा। डांटकर पिया। बाहर आकर देखा तो बर्रे के ये बड़े-बड़े छत्ते। पर मेरे उपर वे मेहरबान रहे। खंडहर हो चुके दरवाजे से उपर गया। उपर लंबा चौड़ा मैदान। बड़ी जिज्ञासा थी पेड़ के लिये। वह अरहर का नहीं था। जो था उसे मराठी में 'पिंपुरणी' कहते हैं यह याद आया। उसके नीचे बैठा। फिर बातें करता रहा उस पेउ से।

"रे भाई तुम कितने पुराने? ये आसपास के किले भोज, शिलाहार ने बनवाये तब तुम थे क्या? यह किला जिसने किसने जीता वह वह तुम्हारे नीचे बैठा होगा। शिलाहार कुल का नाम इतिहास से नामशेप हुआ तब तू किसके अधीन था?"

उसे पूछने मेरे पास ऐसे कई प्रश्न ही प्रश्न थे पर वह क्या कहता? वह चुप खड़ा था। हवा भी बंद थी।

जीजाबा का गांव सोहोली। तहसील माण। जिला सातारा। पूरी तहसील अपने वीराने के लिये प्रसिद्ध। चारों ओर वीरानी। करौंदा आदि की ठिंगनी झाड़ियाँ। बबूल के बौने पेड़। सहमी आँखों से परिसर खोजते दौड़ते खरगोश। भूले भटके कुएँ। साठिया गहरे। घर के मरद पानी भरते हुए। कंधे पर गगरियाँ लोहे की लिये।

मैं और जीजाबा सोहोली। उसके गांव - घर। पिताजी और माँ से मिले। माँ ने कितना कहा-यह लाड़ला। कितने लोग उसे चाहते हैं।" बहुत-बहुत कहा पर माँ का समाधान नहीं हुआ।

रात दोनों सोये तो जीजाबा बोला -

"गोपाल बुवा यह बात सच ही है कि गांव का जोगी जोगड़ा आनगांव का सिद्ध। किस पर से कह रहे हो।"

"मेरे ही गांव में एक देवता है। हर साल लोग उसको बकरी चढ़ाते हैं।"

"फिर तुम उसे बंद कराने के लिए क्यों नहीं कहते?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"वे कहते हैं - अरे ये लौंडा हमारे सामने नाली के किनारे बैठा करता था अब हमें ज्ञान बता रहा है।"

"मेरा सुनेंगे क्या?"

"शा य द।"

"देखता हूँ - करता हूँ कुछ।"

मुझे सोहोली छोड़, जीजाबा निकल गया।

मेरे कीर्तन सोहोली गांव को पसंद आये। मैंने अपने कीर्तन में पशु हत्या के विरुद्ध प्रचार प्रारंभ किया। तय किया यह पशु हत्या बंद करवाऊँगा। तबतक यह गांव न छोडूँगा।

कीर्तन में मैं कहता :

मन्नत से बेटा बेटी होवे
तो फिर पति काहे को होवे

मन्नत को मानकर काम करने के लिए भगवान कोई लालची तहसीलदार नहीं है। बजरंग बली को कह रहे है। बजरंगबली साहूकार ने मेरे खिलाफ चलाया मामला मेरे मन का कर दे। तुझे नारियल चढ़ाऊँगा। संयोग से कौआ बैठा और ड़ाली टूटी। मामला इसके पक्ष में लग गया। फिर शनिवार को बच्चों को पूरी पलटण लेकर नारियल चढ़ाने जाता है। रमिया, धनिया, मुनिया, मंगली, बुधिया ऐसी नाक बहती छोरियाँ और सखाराम बकारा, धनीराम, गोपालराम, गंगाराम ऐसे नंगे उघाडे लड़के देकर मन्दिर जाता है। नारियल फोड़ता है। पानी बह जाना होता है इसलिये उसको बजरंग बली पर उड़ाता है। फिर आधा नारियल घर ले जाने के लिए थैली में ड़ाल लेता है। फिर बड़ी नरोटी में से नख के बराबर टुकड़ा रख प्रसाद चढ़ाता है। बजरंग का ही सिंदूर निकाल सब बच्चों को लगाता है। रमिया, धनिया, पुनिया, मंगली, बुधिया, गंगाराम सखाराम सब बजरंग के पैरों पडों। उसे कहो हमें सुखी रखो। अब ऐसा देखो नख के बराबर गरी के टुकडे के लिये इतनी पलटन को सुखी रखे वह बजरंग क्या गांजा पिया हुआ है।

इसपर हंसी का. . . . .

देवता को मन्नत मानते हैं हमें बेटा दे तुझे बकरी चढ़ायेंगे। अब यह देखो कि बकरी चढ़ाने से बेटा-बेटी होते हो तो कन्या खोजो, बारात लेकर जाओ, फेरे पाडो, बाजे बजवाओ, दावत दो इन सब का क्या काम? सीधे बकरा लेकर जाओ, देवता को दो और बच्चा लेकर लौट आओ।

और बच्चा अगर बकरी चढ़ाने से होता है तो बीबी को एक कमरे में और मियाँ को दूसरे कमरे में बंद करो और बकरा चढ़ाओ देखें बच्चा कैसे होता है?

फिर हंसी, फिर भजन।

और एक बात। देवता को बकरा चढ़ाना है तो वह उसके दरवाजे पर जाकर छोड़

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दो। वह उसे कच्चा पाये पकाकर खाये या वैसे ही गट्ट कर ले। तुम्हें क्या करना है उसका? नहीं उसे खुद की काटते हो। मसाला घोटते हो, पकाते हो, पंगत बिठाते हो, पेट फूटने तक खाते हो, फिर घर जाते हो। जिस बच्चे के लिये वह बकरा काटा वह आगे जाकर बीमार पड़ता है देवता उसको ले जाता है फिर पैर फैलाकर रोते हो। बकरे की अम्माँ भी ऐसी ही रोई होगी इसका तुम्हें फिर भी होश नहीं।

ऐसा हजार तरह से करता रहा। गांव के मुखिया बुढ़ऊ, उन्होंने वचन दिया। देवता को बकरा अब बंद। "मैंने कहा मेला देख लूँगा फिर आगे बढ़ूँगा।"

सोहोली में मूर्खता के कारण जान जाने की स्थिति आ गई थी। पेट खराब था। उस गंवई गांव में दवाई क्या मिले? एक ने कहा आप मेरी मानो। चार छह भूने चने लो उन्हें पीस लो। उसमें वह शेर होता है ना उसका थोड़ा दूध ड़ाला। उसकी बनाओ गोली सोते समय उसे लो। भोर ही दो चार जुलाब हो जायेंगे कि पेट साफ।

शेर की झाड़ी सोहोली में खूप थी। उसकी ड़ाल पत्तियाँ मच्छरों आदि को भगाने गांव में लटकायी जाती। चार चनों का चुटकी आटा लिये शेर के पास गया। ड़ाल तोड़ी तो टपटप दूध निकला। उससे वह गोली बनाई। बेर बराबर। रात को पानी के साथ निगल गया और सो गया।

आधी रात हुई होगी और पेट में खलबली मची। सोचा क्या बढ़िया दवाई है। तुरन्त असर कर रही। हो आया। फिर पड़ने को हुआ तो फिर खलबली। मचती और पानी निकल जाता बाहर।

मन सावध था। वह गिनता रहा। सत्तहत्तर अठहत्तर उन्यासी अस्सी।

सुबह हो गई थी। किसी की आवाज कान पर पड़ी। जीजाबा के चचा थे। मैं पहचन गया। बड़ा प्यार था उन्हें मुझसे। चिंता के स्वर में पेट पर हाथ रखते बोले

"क्या? क्या हुआ?"

जीभ सूख गई थी। जोर लगाने पर भी आवाज निकल नहीं रही थी। मुँह के पास कान लगाये उन्होंने तब सुना। शेर का दूध लेने की बात मैंने कह दी।

उन्होंने घुटने के नीचे एक और गले के नीचे दूसरा हाथ ड़ालकर उठाया। दौड़ते भागते घर लाए। सारे गांवको पता पड़ गया। जीजाबा की चाची ने ईट गरम की। मेरा पेट सेंकना चालू किया चमडी जलने लगी तब भी। सिकाई करती रही।

मुँह से बार-बार कहती - "बिराने देश में ऐसी वैसी कोई चीज क्यों खानी?"

जायफल, भिलावा और जाने क्या क्या? अुपचार वे चाचा-चाची भाग भागकर करते रहे। मरने से बच गया। हप्ते भर तक उनका कैदी रहा। चावल की मांड के सिवाय कुछ खाने नहीं दिया उन्होंने।

मेले का दिन आ गया। सुबह ही बुढ़ऊ मुखिया ने कहा केवल दो घर छोड़कर कोई

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

बकरी नहीं चढ़ा रहा। पर दो घर की बकरी चढ़ेगी। वे नहीं मान रहे।

क्या करूँ। सोचा अब बातों से काम नहीं होगा। सोचता रहा उपाय। ये भी सोचा मरने दे बकरी। पर फिर सोचा नहीं मन्दिर के सामने नहीं। बकरी काली या गोरी मेरी देखी नहीं। फिर भी देवता के नाम से काटने नहीं दूँगा। नहीं दूँगा। उठा।

नहाया, धोया और हरिपाठ कहते मन्दिर तक गया। जिस सीढ़ी पर बकरी कटनी थी। उसपर ही बैठ गया। सोचा जान तो निकल ही गई थी यह जो नई जान मिली है उसका सार्थक किया जाये। इसी काम के लिये बचाया होगा मुझे।

गांववाले आकर पूछ गये।

"यहाँ क्यों बैठे हो जी?"

बोला नहीं। भजन गुनगुनाता रहा। दिन चढ़ आया। ग्यारह बज गये। गाँव के रास्ते पर से तासों की आवाज आने लगी। पास-पास।

दिल की धड़कन बढ़ गई। हाथ सीने पर बाँध लिये। कुछ ही देर में ताशा बजाता खटिक उसके पीछे बकरा लिये साफा बांधे वह गांवभाई। पुजारी। पूजा की थाली लिये एक छोकरा और एक दो आदमी और। एकदम पास आ गये।

उठ खड़ा हो गया। चिल्लाया " ब क रा कटने नहीं दूँगा।"

साफेवाला वही ठहरा-बोला

"क्यों जी?"

"देवता के नाम पर यह नहीं होगा।"

अनसुना उसने। और बोला "यासीन आगे बढ़ देखूँ यह मरीयल क्या करता है?"

यासीन आगे बढ़ा। बकरा लेकर देवता की सीटी चढ़ने लगा। गश सा आया मुझे। भड़भड़ाकर उठा और बकरे के गले पड़ गया।

जोर से बोला चला छुरी मियाँ चला पहले मेरे उपर फिर. . . . . .

यह अजब हमारे बुढ़ऊ मुखिया देख रहे थे। वे दौड़ते आये साफे वाले के पास। बकरी की ड़ोर खींचकर बोले

"बहुतही स्याने हो गये हो तुम तो। कुछ तो समझो। उस लड़के को कुछ भी हो गया तो ब्रह्म हत्या लग जायेगी। भाग जाओ यहाँ से। नहीं तो . . . . . ."

और उस साल गांव देवता को बकरी नहीं चढ़ी।

जनाबाई का एक अभंग है। नामदेव का वर्णन किया है उसमें कि मूँज की करधनी में नारियल की लंगोटी लगाये नामदेव कीर्तन कर रहे हैं।

सोचा नामदेव के चरण चिह्न पर क्यों न चला जाये? मूँज की करधनी, नारियल की लंगोटी क्यों न पहनी जाये?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

कुछ प्रश्न दिमाग में उभरे। फिर सोचा पहनकर तो देखें। अब ऐसी लंगोटी बाजार में तो मिलती नहीं। लंगोटी के लिए नारियल की डोरी खोजी। एक दुकानदार लोटाभर दूध लिये पीछे लग गया था। उसे कहा दूध नहीं डोरी दे। उसने दी। फिर ताना बाना समझने भटका। ऐसी स्वयं निर्मित लंगोटी। लंगोटी या पैरपोछ ही बना। उसे पहना। चार छह कदम चलते ही जांघे कटने लगी। चल ही नहीं सका। लंगोटी फेंक दी। पर अभंग दिमाग पर छाया रहा।

सोचा आड़ी ड़ोरी की जगह सुतली लगाई तो? पर सुतली। वह कहाँ से आये? लेकिन जहाँ भीखही माँगने हो वहाँ किस बात की कमी। एक लज्जां परित्यक्त सर्वत्र विजयी भवेत।

एक दुकानदार गया। सुतली का क्या करोगे? महंतजी। उसने पूछा। मैंने उसे सविस्तार बताया। वह हँसने लगा। इतना हँसा कि पूछो मत और उसने मुझे भगा दिया। दुकानदार की कृपण बुद्धि पर मुझे दया आ गई। सुतली चाहिये थी नई मजबूत। इतना ही दिमाग पर छाया रहा।

और मुझे हँसी आ गई। अभी तक क्यों नहीं सूझी यह बात। सीधे मरघट गया। एक चिता जल रही थी। पास में ही टूटी ठठरी पड़ी थी। उसमें सुतली बंधी थी मुझे चाहिये थी उतनी।

खड़ा ताना नारियल का और आड़ा बाना सुतली का यह तंत्र जमा। और एक हिकमत की दोनों खड़ी बाजू में टाट लपेट वह सी दिया। कैसी भी हो इस लंगोटी ने मेरी जिद्द पूरी की।

कुछ दिन फिर भी बहुत कष्ट हुआ।

दिनभर चलते समय तो थक जाता था। लेकिन कहीं विश्राम करने पर या रात को जांघे जलती, दुखती। जांघों का उपरी भाग घिस-घिस लाला हो गया था। छिल गया था। बहुत बार वह एक रक्त से भर जाता। फिर ज्ञात दवाईयाँ किसी से माँगता मुँगता। ब्रह्मदंडी की पत्तियों का रस निकालकर लगाता। लंगोटी छोड़ कर रख देता उतनी देर के लिये। बहुत अच्छा लगता।

एक बार लेकिन दुर्दशा हुई। गण्डस्योपरि पीटिका। एक चरवाहे ने मेरी अनसुनी कर घाव देखे। कारण भी उसकी समझ में आ गया। फिर उसने एक सीसी ताजा शहद दिया। बोला यह लगाओ। दिन भर चिपचिपा रहता। इसलिये कीर्तन के बाद रात को शहद लगाया और एक खलिहान में जाकर सोया। खलिहान के पास ही बगीचा थी जिसमें एक बावड़ी थी।

जखमों पर शहद लगाते ही वह आग पड़ी कि जान ही न गयी। वह सहन की। सोया। सुबह होते-होते चमक कर उठा। क्या कुछ काट रहा है। यह न समझा। सारी जांघ पर और खास जगह पर भी काटा जाता रहा। चिल्लाने रोने की स्थिति आ गई।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

मरणप्राय वेदना होने लगी। साथीदार सोये थे।आखिर उठकर एक तरफ गया। लंगोटी छोड़ फेंकी। जो काट रहा था वह इधर उधर चलने लगा। वह चीटियाँ थीं।

वैसा ही गया और बावडी में उतर तैरने लगा। रगड़ रगड़ जाघें साफ की। शहद निकल गया और धीरे-धीरे जलन शांत हुई।

हिकमत और कष्ट से बनाई वह लंगोटी फेंकने की इच्छा नहीं थी। फिर एक टाट की लंगोटी बनवाई। कभी ये कभी वह ऐसा वस्त्रांतर करने लगा। दो तीन वर्ष तक वही लंगोटी पहनता रहा।

शरीर दंडन का एक नशा रहता है। कष्ट होते हैं होने दो। देखें कितने होते हैं? यही देखते हैं। यह भावना प्रबल हो जाती है। लेकिन ऐसी ही प्रवृत्ति के कारण हजारों लोगों ने संकट की अग्नि में अपनी आहुति दी।

शरीर कितना ही नियमों से बांधो धूप में खड़ा रखो फिर भी जैसे-जैसे आयु बढ़ती है वैसे-वैसे शरीर में कलाएँ प्रगट होती ही हैं।

ओठोंपर मसें उग आई थी। स्वर नाजुक था खूप ऊँचाई तक चला जाता था। वह बदल गया, बैठा हो गया।

दुनिया बहुत देखी थी। अच्छी भी, बुरी भी। किंबहुना बढ़ती आयु में बुरा ही अधिक देखा। कितना ही अस्वीकारा उसकी छाप मनपर पड़ती ही। स्त्रीपुरुष सम्बन्ध भी दृष्टि में पड़े। इच्छा या अनिच्छा से।

मराठवाडा में एक साथीदार मिला। चरवाहा था। लक्ष्मण, सीधा सच्चा और पक्का। वह और मैं वैद्यनाथ के दर्शनों को चल दिये।

पूर्णा स्टेशन से यात्रा प्रारंभ की। रेल से 'बिटी' माने बिना टिकट। हमारी नाक तेज हो गयी थी। टिकट चेकर कंडक्टर और टिकट कलेक्टर ये तीनों हमारे शत्रु। इनकी खूशबू हमें बहुत दूर से आती। स्टेशन पर पिछवाडे से प्रवेश में हम तेज थे। गाड़ी ब्रिटिशों की या निजाम की। दोनो ही शत्रुपक्ष। इसलिये उनको चूना लगाना मोक्षदायक कार्य था। नाना उपाय से वह करना, पुण्य जोड़ना हमारा लक्ष्य था।

गाड़ी में बैठे। हमारे पीछे ही चेकर। उसने हमको देखा। अब शुरु हो गया छुवाछुव्वल का खेल। गाड़ी पैसेन्जर थी। हम पिछले ड़िब्बे में बैठे। हमारे पीछे ही चेकर अन्दर आते ही हम दूसरी ओर के दरवाजे से उतर कर अगले ड़िब्बे में चढ़े। दूसरे स्टेशनपर वह फिर हमारे ड़िब्बे में आया। हम फिर सनातन रास्ते से निकले अगले ड़िब्बे में पहुँचे। इंजिन के पासवाले ड़िब्बे तक यह खो-खो चलता रहा। लेकिन उसके बाद?

वास्तव में उसका खेल एक तरफा था। खेल की सारी सुविधा उसे थी। गाड़ी ठहरते

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ही वह स्टेशन पर टहलता और शुरु होते ही चट से चढ़ जाता। हमें पीछे से छड़ से लटकते हुए नीचे बिछायी गिट्टी पर उतना पड़ता। फिर ड़िब्बे में वह चढ़े उससे अगला ड़िब्बा पकड़ने के लिए गाड़ी चल देने पर गिट्टी में से छोड़ते छड़ों को लटकते चढ़ना पड़ता। सामने इंजिन आ गया। फिर हमको हार स्वीकारनी पड़ी। हम खेल से निवृत्त हो खड़े हो गये। गाड़ी चल पड़ी। तो हमने उसे हाथ दिखाकर बिदाई दी। फिर रोटी कैसे पैदा की जाये इसकी चिंता करने लगे।

पैंसेजर के पीछे रेल मार्ग पर बिछाने की गिट्टी लादे एक मालगाड़ी स्टेशन में आकर रुक गई। गिट्टी के ड़िब्बे खुले थे। उसे देख अन्नोपार्जन का यज्ञकर्म अगले मुकाम पर करने का विचार कर गाड़ी चलते ही किसी तरह एक ड़िब्बे में हम चढ़ गये। संतुष्ट मन से गिट्टी पर बैठ गये। अब यहाँ टिकट चेकर निश्चितही आनेवाला नहीं था। एक ही करना पड़ता। स्टेशन आते ही ड़िब्बे की किनार से बाहर हमें बैठा कोई देख न ले इसलिए गिट्टी से चिपक पड़े रहना। गिट्टी कोई सुखद शैय्या नहीं। उसमें भी कहीं-कहीं गाड़ी ज्यादा देर रुकती। फिर भी कुल मिलाकर यात्रा सुखद ही रही।

वैद्यनाथ आया। चटपट नीचे कूदे। निषिद्ध रास्ते से ड़िब्बों के पीछे छिपते स्टेशन बाहर आये और टीले पर के मंदिर की ओर चले।

देवमंदिर लंबाचौडा है। दर्शन लिया। बाहर आये। यहाँ हमें महत्व नहीं था। तीर्थस्थली होने से साधू बैरागी यहाँ आते ही हैं। कोई पूछकर दो रोटी देनेवाला भी कठिन था। ऐस कुग्राम में रहने की अपेक्षा आगे बढ़ना अच्छा, ऐसा सोचा। स्टेशन पहुँचे तो एक गाड़ी तैयार थी। कहाँ जाना इसका विधि निषेध था ही नहीं। सबैभूमि गोपाल की यह भावना थी। टिकट जाचक नहीं था। गाड़ी में बैठ गये। गाड़ी ने हमें विकाराबाद लाकर छोड़ा।

स्टेशन पर एक भैय्या मिला। खोमचेवाला। सज्जन था। हमारे भेष पर से हमें पहचान गया। खिलाया-पिलाया। बोला इसके आगे तेलंग प्रदेश, तेलगुभाषा। तुम्हारा कीर्तन कौन सुनेगा? अच्छा है तुम मराठवाडा जाओ। पूर्णा (मराठवाडा) जानेवाली गाड़ी में देर थी। उसने कहा स्टेशनपर ठहरोगे तो कोई टिकट पूछेगा। गाड़ी आकर निकलने तक बाहर ही ठहरो।

स्टेशन बाहर आये तो कुछ दूर आगे बलूचियों का डेरा पड़ा देखा। ड़ेरा बड़ा दिखता था। सौ सवासौ लोग होंगे। औरतें लड़कियाँ छोकरे जवान बुड्ढे बलुची। रंग बिरंगे घाघरे पहनी ऊँची पूरी औरतें और लुंगी लगाये तगड़े बलुची। उनके बरतन, चटाईयाँ, संदुकें बिछावन सारा मैदान भर फैला था। औरतें और मर्द जोर-जोर से कल्ला कर रहे थे। कुछ झगड़ा होकर बंद हुआ हो पर धधक रहा हो कुछ ऐसी स्थिति थी।

हम दोनों स्टेशन के बाहर लगे लोहे के जंगले के पास एक नीम तले बैठे थे। हम बैठे थे वह स्थान बलुची डेरे से थोड़ी ऊँचाई पर था। इसलिये ड़ेरा साफ दिखाई दे रहा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

था। सुनाई भी दे रहा था पर समझ से परे।

शांत हुआ झगड़ा फिर उठ खड़ा हुआ। दो पक्ष बने ही थे। दोनो पक्षों की बड़ी औरतें गला फाड़-फाड़ खड़ी होकर हाथ मटका-मटकाकर झगड़ने लगी। पुरुष लेकिन हुक्का गुडगुडाते ही बैठे थे। जैसे उनका इस झगड़े से कोई सम्बन्ध ही न हो। छोरे खेलते एक दूसरे को नोच रहे थे।

एकाएक झटके से हम दोनो उठ खड़े हो गये। एक पक्ष का एक तगड़ा जवान बलुची उठा और झपटा दूसरे पक्ष की ओर। और उसने वहाँ खड़ी एक गोरी फक्क बलुची युवती का कुड़ता टर्राकर फाड़ा गोलाईदार घाघरे का नाडा तड़ाक तोड़ा। उसके किसी भी प्रतिकार की पर्वा न कर उसने जमीनपर उसे सीधे पटका और भोगा।

बिजली गति से यह हुआ। और यह होते ही दोनो पक्षों में हाथापाई होने लगी। तंबू के डंडे, लाठियाँ, चाकू छुरियाँ जो जिसके हाथ लगा वही लेकर सब युद्ध करने लगे।

कांप-कांप गये हम। ड़र से पसीना नहाये। लक्ष्मण को खींचते हुए मैं न जाने क्यों उस स्थान से दूर-दूर भागने लगा। करबला की युद्ध भूमि से बहुत दूर जानेपर दोनो ही निशब्द एक पेड़ तले पसर गये। हाँपनी लगी थी।

नहीं, नहीं। दिखा था वो, जो दिखना न था। देखा था वो, जो नहीं देखना था।

उस दिन बाद भूमि पर पसरते ही वह बीभत्स दृश्य चक्षु के सामन आता था कितनी ही बार कितने तरह से उसे भूलने भुलाने का प्रयास किया। बहुत झगड़ना पड़ा। मन से उसे निकालने के लिए कितने असफल द्वन्द्व किये।

नांदेड में गोदा गंगा घाट पर नहाया। नदी से बाहर आ रहा था। एक नागा बैरागी गंगा स्नान को आ रहा था।

जटाभार मस्तक पर। पूरे बदन पर भभूती रमी हुई। और विशेष - विशेष यह कि वह एकदम नंगा था। इतना ही नहीं उसने इन्द्रिय के अग्र में तांबे का एक छल्ला अटका रखा था।

विस्मित हो गया। वह घाट पर आया। नदी में उतरा। पानी में गोता लगा उसने सारी बभूत धो ड़ाली। फिर साथ लाया हुआ भस्म तलुवेपर लिया उसमें पानी मिलाया और सो बदनपर उसने मला। और जैसा आया था वैसा ही चला गया। कुछ छोरे-छोकरे मेरी तरह ही उसे निरख रहे थे। उसने हमारी ओर देखा भी नहीं। नागा बैरागी मेरे मन में एक आग लगा गया। इन्द्रिय दमन में मैंने उसे गुरु माना - मन ही मन।

ज्ञानदेव ने कहा है - मन समेटना चाहिये। उसे न समेटते केवल इन्द्रियों को बांधना निष्फल होता है -

जैसे उपर-उपर ही कोंपल तोडी
और जड़ में जल दिया
फिर कैसे नाश हो
उस वृक्ष का।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मन नियंत्रण में किये बिना इन्द्रियों को बांधा तो इन्द्रिय तो बेबस ही रहेंगे।

मन नियंत्रण कब नहीं रखा मैंने। उसकी तो चारों ओर से घेरा बंदी कर ही रहा था। पर शरीर को भी कसना जरुरी था। कबीर कह गया है -

मन गया तो जाने दे मत जाने दे शरीर
नहीं खेचेंगी कमान तो कहाँ से चलेगा तीर।

पर शरीर को दंड देना उपाय अघोरी है। लेकिन वह करना जरुर।

रात दिन चिंतन - वहीं - कैसे करें? चमडी में छेद करने पर वैसे घाव नहीं होते। आवश्यक उतनी सावधानी रखने पर वे जल्दी ठीक हो जाते हैं। यह मालूम नहीं था। इस कारण मैं भयभीत था। बहुत सोच समझकर प्रयोग करने का तय किया। पर यह किसको कहूँ। किसकी राय लूँ। छी-छी लोग हँसेंगे। प्रयोग सफल रहा तो ठीक और असफल रहा तो।

जाने दो और किसी के सलाह की आवश्यकता ही क्या है? आप ही शल्यज्ञ आप ही वैद्य।

एक गांव में एक सुनार मिला। दूसरे दिन उसे ठहरा था उस बगीची में बुलाया। आने पर कहा -

"मुझे छत्री की तान की मोटाई की डेढ़ बालिश्त लंबी तांबे की तार चाहिये है। एक छोर नुकीला होगा दूसरा गोलाई लिये होगा।"

"किसलिये?"

"चाहिये।"

मेरी तरफ वह देखता रहा अनबूझासा। मेरा आग्रह देख बोला।

"पुराना सुराना तांबा मेरे पास होगा। लेकिन दुकानपर आपको आना पड़ेगा। जैसी चाहिये वैसी तार बनवा लीजिये।"

"देखो बाद में मत कहना, मेरे पास तुम्हें देने के लिए कुछ नहीं है।"

"दुकान पर तो आइये - मुझे और कुछ नहीं चाहिये।"

जाकर दुकान बाहर बैठा। कीर्तनकार बाबा दुकानपर आये यही उसके लिए बहुत था। घंटेभर तक खुट-खुट काम करता रहा। जो तांबा उसके पास था उससे उसने मुझे जैसी चाहिये वैसी चीज बनाकर दी।

नाल तैयार थी - घोड़ा खरीदना ही रह गया।

अगले मुकाम पर उपयुक्त स्थान खोजा। झाड़ी से ढंका चबुतरा गांव से दूर। सिंदूर पुते साताठ पत्थर वहाँ रखे थे। पास में ही नाला था एक।

तैयारी में पहले गांव से रोटियाँ माँगकर टिनपाट में भर ली। ब्रह्मदंडी की पत्तियाँ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तोड़कर रख ली।

अब केवल अटकाना भर रहा गया।

हिम्मत नहीं हो। मन कच्चा पड़ रहा था। वैसा ही पड़ा रहा। फिर स्वयं पर ही गुस्सा हो आया। नागा बाबा जो कर सकता है मैं नहीं कर सकता? इतना हिम्मत पस्त मैं कब से हो गया।

उठा लंगोटी छोड़कर रखी। चमड़ी आगे खींची तार के नोकसे छेद तार अंदर ड़ाली बड़ी चीटी काटती है उतनी झुनझुनी हुई। फिर उसे लपेटे दे ठोक दिया। थोड़ासा खून बाहर आया उसपर ब्रह्मदंडी का रस लगाया।

तांबा शुद्ध नहीं था। उसमें हीन तत्त्व थे। यह उस गांव के सुनार को क्या मालूम? गंवई गांव का सुनारु उसे शुद्ध अशुद्ध क्या जाने। बेचारे ने तार बनाकर दी यही उसकी मेहरबानी।

परन्तु वह मेहरबानी भायी नहीं - सेप्टिक हो गया। दूसरा दिन उगा भी नहीं। वह सारा भाग सूजने के लक्षण दिखने लगे। लकड़ियाँ इकट्ठा कीं। एक राहगीर से आग जलाने का साधन जुटाया। आग जलाई सिकाई की। सूजन नहीं उतरी। दर्द बढ़ा।

क्या करने गया? - क्या हुआ? सच ही कहा है गुरु बिन कौन बताये बाट। वह गलत नहीं है। नागा बैरागी की ठीक है। उनमें कड़ा पहराने की विधि होती है। उसका समारोह होता है। गुरु परंपरा होती है। तांबे की शुद्धि अशुद्धि देखी परखी जाती है। दवाईयाँ उन्हें ज्ञात रहती हैं। कहते हैं? देखा देखी लिया जोग फटे काया बढ़े रोग। कहावत का पूरा अनुभव हुआ।

क्या किसी डाक्टर से मिल लूँ? क्या कहूँ?

गुह्य स्थान पर हुई जखम। इतने दिन इस इलाके में कीर्तन भजन किये। विरक्त-निरिच्छ कहलवानेका दंभ पाला। गाड़गे महाराज के अच्छे शिष्य जाना जाने लगा। उन्हें यह मालूम हो जाये तो क्या कहेंगे? उन्हें कैसे समझाऊँगा? वे तो यही समझेंगे कहीं नाली में मुँह ड़ाला होगा अब ढोंग कर रहा है। थूकेंगे मुझपरु गोबर फेकेंगे। गधे पर बिठाकर जुलूस भी निकालेंगे। घर से भाग गया इसलिये नातेदारोंने क्या कुछ नहीं कहा होगा। सब तरह निंदा का विषय होकर बाबा का पल्लू पकड़ा वहाँ यह। इससे अच्छा है मृत्यु आलिंगन।

मैं अपने को ही हर तरह से कठडे में खड़ा करता रहा। लांछित करता रहा। यहाँ मवाद पड़ता रहा। वहाँ ऊँगली रखना भी कठिन हो गया। तीव्र वेदना होने लगी। रुलाई आने लगी। लेकिन रोने से लाभ?

फडफडाता पड़ा रहा। चिल्लाने भी लगा। अरण्यरोदन कौन सुनता? मैं भी यही चाहता था कोई न आवे। चुप हो गया। फिर -

इतने छोटे से दुःख से इतने टूट रहे हो - बातें बहादुरी की बहुत करते हो। कितनों को कितने-कितने जखम हो जाते है। और ये तुम्हारा स्वयं की मूर्खता का भोग। अब चुप हो सहन करो। मैं ही अपने को डपटता रहा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लेकिन अधिक सहन नहीं कर सका। हिम्मत भरकर वह तार खींचकर निकाल ड़ाली। न रहे बाँस . . . . .।

एक सप्ताह तक वह चबूतरा ही मेरा सब कुछ था। नीम की पत्ती कूट-कूट बांधता रहा घाव पर। रात को कहीं जाकर भीख माँग लाता। सब कुछ ठीक हो गया। व्रण चिह्न अभी भी बने हुए हैं।

जिला परभणी का एक गांव "असोल।" बार-बार उसकी स्मृति हो आती है। बैरागी जीवन में सबसे अधिक प्रेम मुझपर उस गांव ने किया। लोग वहाँ के भी ठेट। वही के एक वारकरी ने किस्सा बताया।

राज्य निजाम का। कोई भी औंधा मियाँ गांव में आता। भले-भले की उसके माँ बहन से आरती उतारता। उसके विरुद्ध शब्द कहने की हिम्मत किसी की न होती।

एक बार एक पापी का पितर, मरीहत्या कान्स्टेबल गांव में आया।

"वो साला पटेल कहाँ हैं? हम आते हैं खातिरदारी करने पेश नहीं हुआ अभीतक।"

पटेल आनेपर वह मुर्गी लाओ। ये लाओ वो लाओ। भरपेट चरने पर चला। दस एक मील दूर परभणी गांव। कुछ कपड़े लत्ते बिछावन ओढ़ावन कागज थे उसके पास। पटेल से कहा वह हराम जादा बलई कहाँ हैं?

बलई माने कामगार महार। ये था वारकरी। विठ्ठल भक्त बहुत भला। हर वर्ष आलंदी पंढरी जाने वाला। ऊँचा पूरा। आते ही उसपर गालियों की बौछार की मियाँ ने। उसके सिर वह गठडी दे। चलो परभणी - चला बलई।

रास्ता वीरान सुनसान ऐसे में एक स्थान पर बेर के दस पचास पेड़। वह बदरिकावन देखकर मीयाँ साब की जीभ लपलपाई बेरों के लिये।

हुक्म दिया -

"अबे ओ कमीने जा बेरला ढूँढ़कर।"

बेर का मौसम नहीं था। बलई ने कहा

"हुजूर अभी बेर कहाँ हैं?"

मियाँ भड़क गया - हरामजादे - हुक्मकी तामिली नहीं करता। गुश्ताख कहीं का। और फिर बलई की अम्मा नानी दादी पर नानी दादी ऐसे दोनो कुल से उसने नाता जोड़ा।

बलई ने चारों दिशा एक बार देखी। कहीं कोई गवाह नहीं था। सिर पर की गठडी नीचे रख दी और मियाँ की गठडी बांधी सात आठ बार उसे जमीन पर अटका पटका। सारा काम चुपचाप।

इतनी पूजा होने के बाद मियाँ के हाथ की लाठी फिरसे उसके हाथ में थमा दी। तुर्की टोपी कहीं गिरी पड़ी थी वह उसके सिर रखी। धूल झाड़ी और गठडी अपने सिर रख कर आगे बढ़ा। कुछ मियाँ चिल्लाकर बोले -

CC-0.Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"अबे धीरे चल। साथ तो हो लेने दे।"

परभणी पहुँचने पर मियाँ ने बिना शिकायत बलई को लौटा दिया।

ऐसा वह असोल गांव। वारकरी लोगों का। उस गांव का मुझपर ऋण है। कोई भी अच्छा काम अपने उपर लेकर कैसे पार लगाना यह मुझे उस गांव ने सिखाया।

चार छह कीर्तन हुए। मुकाम गांव बाहर किसी भागवत भक्त की समाधी के पास नीम तले। चार छह घर से रोटी आती। दरवाजे-दरवाजे भीख माँगने की जरुरत नहीं थी। कीर्तन के बाद दस बीस गांववाले मेरे मुकाम के गिर्द जमा होते - धुनी भी रमती।

धुनी के पास महंत का चिमटा कमंडलू होता है मेरे पास लाठी टिनपाट था। किसी ने गोबर ला आस पड़ोस लीप दिया। कोई चार छह फूल ले आता। कोई धूपबत्ती। भांग घोटने का सील लोढ़ा और गांजे की चिलम इतनी कसर और रह गई थी।

हर रोज शाम हनुमान मंदिर के आगे कीर्तन खड़ा होने के पूर्व धुनी धरे आदमी बैठे रहते। बड़े-बूढ़े सब। पंढरपूर की बातें। बाबा के अद्‌भुत कीर्तन। वे हमारे गंवई गांव आने चाहिये।

"बुलाव तो आयेंगे।"

"सप्ता करवाओ। आखिरी दिन बाबा को बुलवाओ। उनके सप्ता को लोग जमा होंगे उनको दूसरे दिन खीरकढ़ी खिलाओ।"

एक ने कल्पना निकाली। दूसरे ने अनुमोदन किया। तीसरे ने शंका निकाली। चौथे ने उसका समाधान किया। बात-बात में पूरा गांव एक हिम्मत से खड़ा हो गया।

चार गांववाले और मैं उठा। बाबा का पता खोजा। वहाँ पहुँचे। उन्हें निवेदन किया। तारीख तय की उनकी। बड़े उत्साह से लौटे।

'सप्ता करना' कहना सरल था। उसके लिए क्या-क्या करना पड़ता है यह उन गांववालों को क्या मालूम। मैं ही सारा सयाना। मुझे भी क्या मालूम था। कल परसों घर से भागा हुआ मैं। दरवाजे-दरवाजे भीख माँगी। और आज इतना बड़ा बोझा सिरपर लिया।

बहुत बड़ा शामियाना लगवाना। वहाँ देवता की स्थापना करना उसके सामने सातो दिन आठो प्रहर वीणा बजती रहे इसलिये पहरा ठहराना। वे पहरेदार समय पर आते हैं या नहीं यह देखना। देवता के सामने निरंतर आठो याम दीप जलता रहे यह देखना। रोज रात को पांच छह घंटे कीर्तन करना। गांववालों की बैठकें लेनी। आखिरी दिन आठ दस हजार आदमी की पांत जिमाने का इन्तजाम करना।

पच्चीस तीस बोरी गेहूँ। दो चार बोरे बेसन। पचास एक भेली गुड। इतनी रसोई हो सके इतना ईंधन। बड़ी-बड़ी भट्टियाँ। पानी की व्यवस्था। पत्तलें, बरतन। रसोई करने वाले हलवाई। रसोई कोई खास नहीं होती गेहूँ का दलिया मोटा पकाना उसमें गुड ड़ालना हो गई खीर। वैसा ही कढ़ी। पानी उबालना उसमें बेसन ड़ालना, मिर्च, नमक और इमली। कढी तैयार।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ग्राम भोजन ऐसे ही होते हैं।

पांच दस हजार आदमी के पंगत को पत्तल दोने में परसने के लिए भी पांच-पचास बालटियाँ चाहिये। कढ़ी परोसने के लिए कलछुल नहीं तो मिट्टी के डबोले।

पानी के लिए बड़े ड्रम। खीर बनाने के लिये लोहे की बड़ी कढ़ाइयाँ। अधिकतर वे इधर उधर से बटोरनी पड़ती है। वैसे ही कढ़ी के लिये देगची उनपर ढंकने के लिए परातें।

बाबा का कीर्तन माने एक मेला। रात को होनेवाला। इसलिये पांच-पचास पेट्रोमक्स की बत्तियाँ चाहिये। उनको पहिले से लाकर रखना पड़ता है। इतने आदमी औरतें इकट्ठा होंगी तो दूसरी व्यवस्था भी चाहिये। मर्द तो कहीं भी दूर जाकर निपट आयेंगे पर औरतें? उनके लिए फिर खाई खंदक खुदवाना टाट लगा परदा खड़ा करना बहुत जरुरी।

बैलगाड़ियाँ आयेंगी सौ दो सौ उनके लिए कहीं गाड़ी ठिया बनाना। बैलों के लिए चारे का भी इंतजाम करना। एक दो नहीं पचास काम।

रोज रात हनुमानजी के सामने कीर्तन होता। वह हो जाने के बाद गांववाले मेरे धुनी के पास जमा होते। एखाद बत्ती जलती रहती उसी के प्रकाश में योजना बनती।

प्रसंग जैसा गुरु नहीं। जबतक शरीर पर आकर पड़ा नहीं तबतक कैसा होगा? क्या होगा? सीने में धड़कन। पर सामने आ पड़ने पर सब्र हो जाता है सब बूझने लगता है। ये ऐसा वह वैसा।

कितनी ही गलतियाँ हुई। पहले ध्यान में नहीं आया। जिनपर भरोसा कर काम सौंपा वे बीमार हो गये। सच झूठ राम जाने। परदेस निकल गये। गायब रहे। फिर ऐन समय दौड़ भाग कर उसे पूरा करना पड़ा।

कमाल असोल वालों ने की। इतना सा गांव फिर भी कहीं कम नहीं पड़ने दिया। इतना बड़ा सप्ता करना तो फिर उसका अच्छासा विज्ञापन होना चाहिये। पत्तर छपवा लेना चाहिये किसी ने कहा। फिर कच्चा प्रारुप तैयार किया। इसके पहिले दूसरे गुरुबंधुओं के देखे पढ़े पत्तर स्मृति में लाये। कुछ नया अपना मिलाया। उपर पांडुरंग रखुमाबाई का चित्र उसके दोनो ओर दो दोहे। उन दोहों का प्रयोजन ध्यान में नहीं आ रहा। लेकिन कदाचित लोगों के दातृत्व को आवाहन करने और अपनी मंगनी को शास्त्रपूत करने का हेतू होगा। उन दो दोहो में से पहला -

मोती पहने घोड़ा चढ़े रण बांधे तलवार।
गरीब की कदर जाने बाको नाम सरदार॥

दूसरे दोहे का उत्तरार्थ ही याद है वह ऐसा

गरीब के लिये मांगो दिलमें रखो न लाज।

अन्य बड़ो-बड़ो के विज्ञापनों में भी यही छपा रहता है। फिर वह परंपरा छोड़ने का

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कोई कारण ही नहीं। नीचे कुछ और अभंग - नाम स्मरण की महत्ता बतलाने के लिये और फिर नीचे खास मजमून -

सद्‌गुरु श्री संत गाड़गे महाराज के शिष्य हरिभक्त परायण गोपाल बुवा जोशी ने अमुक गांव में अमुक तिथि से अमुक तिथि तक श्री हरिनाम सप्ताह आयोजित किया है। हर दिन रात को हरि कीर्तन भी होगा। सभी भक्त जन इसका लाभ अवश्य लेवे। दूसरे दिन महाभोग होगा।

विशेष सूचना - गाड़ी खड़ी करने और बैलों के चारे पानी की व्यवस्था अलग से की हुई है।

भ व दी य

ह. भ. प. गोपाल बुवा जोशी एवं

समस्त असोल गांव वासी

ऐसा विज्ञापन तैयार किया। चार आदमी लेकर स्वयं परभणी गया। छापखाना खोजाा। साथवाले कमर में रुपये बांधकर ले गये थे। वे वहाँ गिने अपना नाम कागज पर छपा जीवन में पहिली बार देखा, धन्य हो गया।

इसके पहिले भी एक बार नाम अखबार में छपा था ऐसा बहुत साल बाद ज्ञात हुआ। घरसे भाग आने पर पिताजी ने केसरी और लोकमान्य में इस तरह का विज्ञापन दिया था।

"मेरा लड़का आत्माराम नीलकंठ दाण्डेकर नाक लंबी-दुबला पतला भाल पर घाव का निशान, रंग सामान्य गोरा, घर से भाग गया है। उसकी मातृभाषा मराठी है। थोड़ी बहुत अंग्रेजी उसे आती है। नागपूर कांग्रेस के सर्वाधिकारी श्री हरकरे जिस दिन पकड़े गये उसी दिन वह भागा है। वह कांग्रेस के किसी शिविर में मिल सकता है।

खोजनेवाले को योग्य बक्षीस दिया जावेगा।

यह बक्षीस किसी को भी मिला नहीं। मुझे यह विज्ञापन कहीं पढ़ने को मिला नहीं। मैं तब भूमिगत जो था।

गांव के बाहर मैदान में बड़ा शामियाना लगाया। खंभे गाड़ने से सारा काम खुद करने लगा। इसलिये कोई भी पीछे नहीं रहा। बच्चे-बूढ़े, जात-गैरजात। स्पर्शास्पर्श या अमुक के हाथ का खाना नहीं ये निर्बन्ध मैंने कभी के गंगा बहा दिये थे। बट्टा खोदकर खन्ती बाजू में रखते ही मिट्टी निकालेन के लिए आदमी मेरे पास भीड़ करते। ऐसे समय उन सब को छोड़ मैं किसी दूर खड़े महार (अछूत) को बुला पूछाता -

"आओ भाई मिट्टी निकालने।"

"शरीर सिकोड़ते हुए वह कहता।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"आप दूर हो जाइये महाराज।"

"क्यों मैं यहाँ रहूँ तो मिट्टी छुतही होगी क्या?"

फिर वह बड़े संकोच से पास बैठ मिट्टी निकालता।

मेरा यह महार आदि के संग व्यवहार सबको पसंद न आता था। वे कहते अपनी-अपनी मर्यादा का पालन सबको करना चाहिये। महाराज-महाराज जैसा व महार-महार जैसा रहे। मैं कुछ न कहूँ प्रत्यक्ष काम करता रहूँ यह मेरी भूमिका थी।

प्रत्यक्ष काम यह ऐसी चर्चा बंद करने की महौषधी। आदमी काम करने लगते ही चर्चा ठंडी पड़ जाती है। चर्चा और काम जैसे एक दूसरे के बैरी हैं।

औंरते घर में रसोई बनाती। दोपहर होने पर टोकरियों में उसे भर शामियाने के पास आ जाती। दिन माथे पर चढ़ने पर मैं कहता - अब तो कौवे कांव-कांव करने लगे। काम पर लगे लोग जिमने उठते। पंगतसी बैठ जाती परन्तु मैं एक जगह बैठ कर खाता नहीं था। किसी के टोकरी में की रोटी, किसी की चटनी किसी का भुरता, सब्जी, ऐसा लेकर खाता जाता था।

एक दिन कुछ महार दूर पेड़ के नीचे रोटी खाते बैठे थे। मैं हाथ पर रोटी लिये उनके पास गया और एक के रोटी पर रखी चटनी उठा ली और रोटी के साथ खा गया। वह जैसे पत्थर मूरत वैसे ही बैठा रहा।

हाः हा कार हो गया सब ओर। मैं गांववालों की पंगत की ओर गया चटपट सब उठ गये।

बोला कुछ नहीं हाथ टाट से पोछे और काम में भिड़ गया। मेरे इस अघोरी कृत्य का परिणाम काम पर भी हुआ। कम ही लोग काम पर आये। छोरे ओरे ही इधर-उधर करते रहे।

शाम ढले गांव में पंचायत हुई। गरमागरम चर्चा हुई। आखिर यह तय हुआ कि परमहंस कुछ करे उसे दोष नहीं। वह समरथ है तभी तो गुसाई जी कह गये 'समरथको नहीं दोष गुसाई।'

गांववाले वैसा भ्रष्टाचार न करें। उनका उनके साथ अपना अपने।

मंडप खड़ा हो गया। लता पल्लव आमपत्तियों से उसे सजाया गया। बाबा ने जिस तिथि को आने का वचन दिया था उसके पहिले सात दिन बड़े भोर सप्ता प्रारंभ हो गया।

आसपास के गांवों की भजनी मंडलियाँ बुलाई गई थी। वे सब गांव के ही नाते रिश्तेदार थे। सप्ताहभर वही रमनेवाले थे। वे सब भोर ही उठ नहा धो रेशीमी रंगीन साफे बांध भाल पर चंदन और कुंकुम का टीका लगा मंडप में आये थे। गांववाले भी अपने-अपने तीज त्यौहार के कपड़े पहने थे। केवल मैं ही अकेला वहाँ टाटधारी खरमुंडी था।मंडप के एक तरफ बीच में देवायतन सजाया था। पांडुरंग का सुंदर चित्र। दोनो बाजू ज्ञानेश्वर तुकाराम के चित्र। उनपर मालाएँ। इधर-उधर फूल बिखरे। सामने बड़े-बड़े दीपक। उदबत्ती, धूप एसे सारे ठाठ में गले में वीणा लटकाये मैं-बगल में लकड़ी की घोड़ीपर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मृदंग।

दोनो तरफ झांझे लिये पचास एक भक्तगण। मंडप में महिला समाज भी ठस्स भरा।

वीणा का सूर पकड़ मैंने भजन शुरु किया।

जय जय राम कृष्ण हारी.........

मृदंग का घुमत्कार। झांझो की झंनझनाट ने संगत साधी। पहले ही संगत में ज्ञात हुआ भजन मंडली असूर नहीं है। सुरीली है। फिर

जय जय राम जय जय राम

जय जय कृष्ण जय जय कृष्ण

मैंने कितने ही तरीके से गाया। भक्त उतने ही तरके से गाते रहे। ऐसा रंग भरता रहा। पहिले ही हरिनाम स्मरण से श्रोता भोक्ता एकदम खुश हो गया।

घोष रुकते ही अभंग शुरु हुए। ज्ञानोबा, तुकोबा के अभंग के तीन चरण सामान्य तर्ज पर मैं गाता लोग वैसे ही गाते। अंतिम चरण मैं रागदारी में गाता कुछ थोड़े राग मुझे ज्ञात थे। गाड़गे सम्प्रदाय में रागदारी बैठती नहीं थी। उस सम्प्रदाय में बहुजन समाज को जो पच सके वैसी सरलता थी। इसलिये सरल शैली में भजन गाये जाते। ताल भी उसी तरह का घमार।

परंतु उस दिन मैंने अपने मन का किया क्योंकि ऐसा करने की मनाई नहीं थी। भजन मंडली भी उसी तरह की थी। उन सबको अभंग आदि भी बहुत याद थे।

चार पांच बजे तक पहिले दिन ही भजन होता रहा। पूरा गांव भजन रंग में सराबोर हो गया। महार की चटनी खाने वाला मैं हूँ यह सब भूल गये थे। पहिले दिन जो रंगत जमी वह पूरे सात दिन चढ़ती ही चली गई।

ढ़ेर सारे काम थे।

जैसे-जैसे दिन गुजरे वैसे-वैसे उन सीधे सादे ग्रामीणें के दातृत्व को उफान आने लगा। जो हाथ लगा वही पहुँचाया जाने लगा। ज्वार मिर्च तो सही पर कपास। जो आता उसे भंडारे में पहुँचाया जाता। मंडप के एक तरफ भंडारा बनाया था-उसपर टीन। सप्ता के लिये जो अनावश्यक उसे आते जाते के हाथों परभणी बड़े बाजार भेजना उसका नगदी करना चालू था।

अनाज इकट्ठा हो रहा था। बोरे पर बोरे रखे जा रहे थे। गुड़ की भेलियाँ आदि सारी ढंग से लगवाता-कहीं कुछ कहीं कुछ ऐसा नहीं होने दिया।

गेहूँ का दलिया बनवाना था। एक उदार मिले। बोले मैं अपने यहाँ का गेहूँ भेजकर दलिया बनवा लेता हूँ। आपके यहाँ जैसे-जैसे गेहूँ आये लौटा देना। काम सरल हो गया। दलिया चार छह गाड़ियों में आ गया। सहायक बहुत थे। अच्छे भी थे। पर फिर भी मुझे ही देखना पड़ता सारा। भंडारी मैं, खजांची मैं। भीख मांगनेवाला मैं। कीर्तन कर्ता

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मैं, योजक मैं, जनलोक आते मुझे खोजते, पैरो पड़ना चाहते उनको नाहीं कहनेवाला मैं। ऐसा सारा मैं। नीम की कड़वी निंबोरी।

घमंड़ भी हो जाता पर फिर यह भी स्मरण हो आता कि गाड़गे बाबा इस गांव आ रहे हैं इासलिये यह सब है।

रात दो-दो तीन-तीन तक कीर्तन चलता। रोज तीन चार हजार आदमी। तब लाऊड स्पीकर नहीं थे। एक तरह से आवाजी की परीक्षा ही होती थी। पर वह सारा समूह शांत बैठा रहता। भगवतनाम कान पर पड़े यह इच्छा लेकर जमा होता। सुनाई न दिया तो भी हल्लागुल्ला करने की उनकी आदत नहीं थी। पचास एक लोग झांझे लिए, दो-दो मृदंग। कीर्तन में ऐसा रंग भरते।

वारकरी सम्प्रदाय में झांझवाले दोनो तरफ खड़े रहते हैं। हमारे सम्प्रदाय में वे एक जगह बैठ जाते हैं। इससे श्रोता और कीर्तनकार के बीच कोई परदा नहीं रहता। दोनों एक दूसरे को देख लेते हैं। और समूह में बैठे होने से सामूहिक घोष की जो गूँज उठती वह मनोहारी होती।

आधी रात हो जाती। रोज पांच-पांच घंटे खड़े होकर कीर्तन करना और दिनभर एक विशाल अन्नकूट की नाना उलझनों में व्यस्त व्यग्र रहना एक अग्नि परीक्षा ही थी।

परन्तु एक तो चढ़ती उमर दूसरे बाबा ने कह रखा था शरीर बहु दुर्लभ है उसका जितना उपयोग करो थोड़ा है। यह पानी का बुलबुला कब फूट जायेगा। इसको तो जोतो जितना जोत सको।

जिंदा है तबतक इसके चाहे जितना लाड़ करो। इसकी झांकी लगाओ। फिर भी अंत में गंदगी के सिवाय कुछ नहीं हाथ लगने का। कबीर कहता है-

पशु की होत पनैया नर का कछु ना होय।

बाबा यह सब बड़े मजे से रंगत से सुनाते हैं। वे कहते गाय को देखो तुम उसे ढंग से खिलाते-पिलाते भी नहीं। मूठभर चारा घास उसके सामने ड़ालते हो। दिनभर वे फिर इधर-उधर चारा खेजती फिरती हैं और देती क्या हैं? दूध और गोबर। दूध तो है ही। ससुरु गोबर। उसके सिवाय भी काम रुक जाता है। देवस्थान से सब लीपने को गोबर चाहिये। जलाने रोटी बनाने को कंडे चाहिये।

अब अपना हिसाब करो। नाना तरह के सुगंधित मसाले केशर कस्तुरी इलायची ड़ाल पकाकर खाते हो। ढरढरा डकारें देते हो। उसपर पान चाहिये। वह भी मसालेदार। लेकिन जैसे गाय के गोबर से लीपते हो वैसे तुम्हारे. . . . .।

हंसी का सागर लहराता। बाबा की बात क्षणभर के लिये उसमें डूब जाती।

आगे वे कहते गाय-गोरु जिंदगीभर तुम्हारे काम आती है। मरने पर उनका चमड़ा भी काम आता है, कुछ भी फालतू नहीं जाता। और तुम्हारा रेशमी कपड़े से ढंका शरीर। मरने पर चार का बोझा बनता है। इतना ही नहीं साताठ घंटे रह जाये तो दुर्गन्धी के मारे आफत आ जाये। ऐसा ये कौड़ी कीमत का नहीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इसलिये इसका भरपूर उपयोग कर लो। यह मानो कि किराये की घोड़ी है जितना ले सको उतना काम लो।

बाबा के इस कहे का मनपर प्रभाव था। उनका स्वयं का उदाहरण भी सामने था। इसिलए देह का लाड़ कने की रीत नहीं थी। जितना चाप के काम ले सको उतना लेना यह रीत थी।

उन सबके नाम साफ भूल गया हूँ। परन्तु उनका उल्लेख यहाँ न करना अपराध होगा। असोल गांव की महिलाओं की मुझपर बड़ी कृपा थी। वे कहती "दैयारी। माँ बाप से अलग यह छोरा। उघाडा नंगा। कोई बंधुवा नौकर हो वैसा काम करे है। रात दिन। एक घर का खाता नहीं हाथ सिहराने ले सोता है।" था तो मैं कीर्तनकार। इस सप्ता का उत्सव पुरुष। फिर भी मैं एक बिजनवासी हूँ यह बात बढ़ी-बढ़ी भूलती नहीं थी।

सुबह सात से नौ बजे तक पहरा मेरा रहता। मैं इसलिए बड़े भोर नहाता और फिर मंडप में आता। मंडप में आते ही देखता दो चार बड़ी बूढी ताजे गाय के दूध की लुटियाँ लिये बैठी हैं। मेरी राह देखते। टमरेल लिये उनके पास जाना ही पड़ता। हर चाहती कि उससे अधिक दूध मैं लेऊ। पर मुझे सबका समाधान करना होता। कैसे वैसे उन्हें मनाकर मैं थोड़ा-थोड़ा दूध सबसे अपने टमरेल में लेता। उनके सामने पी जाता। इससे उनके चेहरे पर बड़ी प्रसन्नता रहती। वही बात दोपहर के भोजन की।

मेरा ड़ेरा नीम तले रहता। दो प्रहर दिन चढ़े बाद ऐसी ही कोई तीन चार बड़ी बूढी मेरे लिये टोकरी लिये बैठी रहती। सिरपर लाई उस टोकरी में बड़े जतन से बनायी चटनी सब्जी रोटी ऐसा कुछ न कुछ होता। मंडप के काम से जल्दी आना होता ही नहीं था रोज ही देर होती। दोपहर के दो बज जाते। तबतक बेचारी टोकरी पास किये बैठी रहती। मेरे आते ही टुरटुर करती-अबेर काहे को करनी इत्ती?

मैं माथा ठोककर कहता - यहाँ लिखा ही नहीं है समय पर ठीक से खाना। उसके लिये मैं क्या करुँ।

फिर एक-एक की टोकरी का थोड़ा-थोड़ा लेता। हर जनी यही चाहती कि उसी की टोकरी में से ज्यादा लूँ। 'और लो' का आग्रह टालता सबका समभाव से लेता। सबको बढ़िया होने का प्रमापत्र देता चाहे फिर किसी का इतना चरपरा हो कि मेरे आँसू आ जाये।

हड्डी निकला-ठिंगना बरसों से न खाया मैं, खाता भी कितना? उनकी भरी टोकरियाँ खाली न होती इसलिये वे बड़ा आग्रह करतीं।

मेरे ना कहने पर टुरटुर करती।

"कोई पेट भरा ही नहीं।"

"टोकरी भर तो खा गया फिर भी कह रही हैं।" मैं कहता-सिर चढ़े आंचल से मुँह

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

ढाँप कोई कहती

"मुँह तो हेरो टोकरी भर खावे वारे को।"

उनके ऐसे व्यवहार के सारे भाव में कितना मातृत्त्व, कितना भगिनी प्रेम और क्या कितना? इसकी चीरफाड़ मैंने कभी की नहीं पर इतना अवश्य की बीमार पड़ता तो मेरे लिये जान बिछाने में वे कम न रहती।

गाड़गे महाराज आने का दिन परसों पर आ गया।

मेरी जान सूख जाती यह सोचकर। कभी वे न आये तो। ये भीड़ मुझे कुचल देगी। सुकृत पर बाढ़ का पानी चढ़ आयेगा।

अच्छा किया - बाबा की तारीख तय करने चार दो गांववाले पटेल मुखिया को ले गया था।

इधर सब तैयारी पूरी हो गई। दलिया दलकर आ गया। गुड़ की भेलियों के ढेर लग गये। पानी के लिए, परोसने के लिए बड़े से बड़े और छोटे से छोटे बरतन आ गये। पत्तलें, दोने, कुल्हड आ गये। लकड़ियाँ काट-फाड कर के ढेर में लग गई। झड़ियाँ बन गई।

मैदान साफ करने झाड़ू, कूडा उठाने तसले-फावडे, पांत सीध में बिठाने डोरी, चूना। ऐसा जो-जो याद आया सब इकट्ठा करवा लिया। कीर्तन के दिन लगाने पचास साठ पेट्रोमक्स मंगवा लिये। उसके लिए किरासीन, माचिस, पिनें ऐसी पक्की व्यवस्था जितनी बनी उतनी कर ली। गांव में हर घर में मेहमानों की भी। उनके घोड़े, टट्टू, बैल, बैलगाड़ियाँ इतनी कि गांव के रास्ते भर गये। मुझे एक सेकंद भी मिलता न था। भोर से ही आदमी मुझे घेर लेते। वह देर रात सोने तक। रात में भी मेरे नीम तले के डेरे पर पाच-पचास आदमी होते। कुछ भी छोटा बड़ा काम हो वह करने का मौका खोजते कुछ, तो कुछ निठल्ले। यहाँ की वहाँ तिनके का बांस करनेवाले बकवादी और विराट शंकाओं के धनी। कुछ इतना ही देखने आते कि मैं खाता क्या? बैठता कैसे? बोलता कैसे? हर क्षण उन कौवों की नजर मुझ पर रहती।

ऐसी सारी भीड़भाड़ में अन्तिम दिन का कीर्तन हो जाने के बाद देर रात सब विभाग पंचों को मैंने धुनी पास बुलाया। बाबा को पंढरपुर के सदावर्त के लिए एक हजार रुपया देना था।

यहाँ के रुपये पैसे को मुगलाई सिक्का कहते। ब्रिटिश भारत से वह पैसे से रुपये तक अलग था। इन सिक्कों पर अरबी उर्दू में लिखा छपा था। पैसा खड़कू कहलाता। एक आने के छह खड़कू होते थे। नोट थे ही नहीं ऐसे में हजार रुपया एक गठडी थी जोखिम थी। वह गिनगिनाकर पंचों के सामने एक पंच को सौंपी। फिर रसोईया, भंडारी, बत्ती विभाग के पंचों से बात की, सूचना दोहराई, नई दी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रात में नींद नदारत थी उसने अपनी जगह भेज दिया था एक ड़र, एक आशंका-बाबा नहीं आये तो ?

बाबा आये।

उन्हें लिवाने परभणी बैलगाड़ियाँ भेजी थीं। उनके साथ एक घुड़सवारु वह आया धूल उड़ाते उसने खबर दी। बाबा रेल से उतर गये। बैलगाड़ी से आ रहे हैं। यह खबर मिलते ही परभणी की तरफ भीड़ की भीड़ जाने लगी। दौड़ने लगे लोग। मैं भी उनका स्वागत करने दौड़ा। मेरे पीछे चार पांच हजारकी भीड़। हवा में तैरते हम सब जा रहे थे। रास्ते की धूल खूब उड़ रही थी।

मील दो मील गये तो बैलगाड़ियाँ और भीड़ आती देखी। सामने से हमारी भीड़ आती देख बाबा गाड़ी से उतर गये और पास का खेत फलांगते एक पेड़ की तरफ जाने लगे। मैं दौड़ते हुए उनके पास गया तो वे जोर से चिल्लाये।

"क्यों आ रहे हो जी ?"

दूर से नमस्कार करते हुए मैंने कहा

"आपको लिवाने।"

"हमें क्या गोद में ले जाना पड़ता है। उधर मंडप में कौन है ? झेंप गया मैं - मुँह से निकला - कोई नहीं।"

"फिर कुत्ते घुसेंगे वहाँ मंडप में जाओ उधर जाओ। शाम तक हमारे पास न आना। हमें रोटी भेज दो।"

लौटा ! मन में बार-बार आता, सुन तो लेते। मैंने इतना बड़ा यह कारज कैसे रचा कुछ नहीं। मन खट्टा हो गया।

फिर जो सामने आया उसी पर चिल्लाया - बिगड़ा। पैर पड़ने जो आया उसे दुतकारा।"देखते नहीं काम कर रहा हूँ ऐसे में काम कैसे होगा ?"

रोटी की टोकरी बाबा के पास भिजवा दी। उनके कीर्तन के स्थान पर बत्तियाँ लगाने के लिए खंभे गड़वा लिये। औरतों के लिये नालियाँ खुदवा ली। उनके चारों ओर टाट लगवा लिये। कल की रसोई के लिये पानी भरवा लिया।

इतने दिन हँसी मजाक करता काम लेनेवाला मैं आज धसपस क्यों कर रहा हूँ यह पर किसी के ध्यान में न आया।

बत्तियाँ लगवा ली शाम ढ़लने के पहिले ही। बाबा के कीर्तनकी पूरी तैयारी की फिर उसग बगीची की ओर चला जहाँ बाबा रुके थे।

बाबा के साथ दो आदमी अवश्य रहते थे। उसमें से एक पखवाजी थे तो दूसरे वीणा वादक। पखवाजी रास्ते में मिले बोले

"गुस्सा हो गया क्या ?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"गुस्स किसपर होना?"

"बुड्ढा ऐसा ही है। काम में ढ़िलाई उसे जरा भी पसंद नहीं। जाओ तुम्हारी ही बाट जोह रहे हैं।"

बाबा एक बंधिया पर पेड़ तले बैठे थे। दर्शनार्थी जमा थे। उनसे हंस बोल रहे थे। मैं पहुँचते ही हाथ के संकेत से मुझे बुलाया। मेरा कंधा पकड़ दर्शनार्थियों को पूछा।

"इसे जानते हो?"

लोगों ने 'हाँ' कही। बाब बोले

"तुम नहीं पहचानते - हमसे पूछो" और वे गंभीर हो गये। "एक माँ ने जनम दिया वो अलग हो गई। ऐसा ही सबकी अम्माँ करती हैं। पर एखाद सूरमा बैरागी धार में ऐसा शरीर झोंक देता है। देखो ये उमर खाने पीने की है। मजा करने की है। लोगों के लौंडे इस उमर में गुलछर्रे उड़ाते हैं। पर उसी उमर में शरीर ऐसी आग में झोंकना।"

चुप हो गये - मेरा कंधा पकड़े-पकड़े।

सब खलमल बह गया। ऐसा लगा चरणों में गिर जाऊँ वहीं पड़ा रहूँ। पर ड़र था पीठ में लाठी पड़ने का - वैसा ही खड़ा रहा।

रात तीन बजे तक बाबा का कीर्तन चला। ऐसी रंगत रही कि बरनी न जाये। इतने दिन दौड़भाग की - सारी सार्थक हुई।

कीर्तन के बाद बाबा दूर जंगल में जाकर सो रहे। मुझे कह गये।

"बेटा सोने से काम नहीं चलेगा। कल की पंगत के लिए भट्टियाँ चेताओ। रसोइयों को काम में जोतो। आलस नहीं।"

उलटे पैर लौट आया। आदमी भट्टियों के पास थे। काम शुरु था। मेरे पहुँचने पर उन्हें जोर आ गया। भट्टियाँ आग उगलने लगी। उसपर कढ़ाव चढ़े। पानी उबलने लगा। उसमें दलिया की बोरियाँ रीती होने लगी। आधी पकी होनेपर उसमें गुड़। खीर पक जाने पर वह बालटियों से ले जाकर हौज में भरी जाती। लोहे की सफेद चद्दर गहरे बड़े गड्ढे में चारो ओर लगा होज बनाया था!

देगची दूसरे भट्टी पर चढ़ी थी। एक तरफ औरतें कद्दू, भटे, मूली ऐसी जो कुछ सब्जी मिली थी वह काट रही थी। वह उबलते देग में लाकर ड़ालना फिर उसमें बेसन, इमली, गुड़, मिर्च, नमक ड़ालना। कढ़ी की देग इस तरह तैयार कर एक से दूसरी सटी सजाई जाने लगी।

दिन उगते रसोई तैयार होने को हो गई।

बाबा दो एक घंटे सोये होंगे। धुंधुरका होते ही मंडप में आ गये। वहाँ सोये पड़े

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

लोगों को उठाने लगे। झाडू, फावडे, तसले मंगवाये उन्होंने। मैंने भी जाकर झाडू उठाई तो मेरे हाथ से छीन ली बोले यहाँ नहीं उधर तुम्हारे लायक काम ढेरों पड़े हैं।

बात सच थी। असोल गाँव वाले थोड़े भड़भड़ा गये थे। इतना बड़ा कारज उनकी जिन्दगी में पहला ही था। पंच लोग अपने-अपने काम पर थे पर उनके सहायक सब गायब। सब बाबा का चरित देखने में मशगुल। उन्हें डांट डपट कर पंचों के पास भेजा।

नहा आया। खीर की बालटियाँ भरवा रखीं। पत्तलें पानी से धुलवा ली। कढ़ी परोसने-पानी देने के साधन लगवा लिये।बाबा का बुलावा आया। मैदान झाड़ लिया था। अब उसपर पंगत के लिये चूने डोरी से लकीरें बनवानी थी।

आदमियों ने डोरी पकडी मैं चूना ड़ालने लगा। एक आदमी बात करने आया। चूना मूठ में पकड़ उससे बातें करने लगा। पीठ पर धौल पड़ी। देखा तो शेर गरज रहा था। गप्पें भिड़ाने यही समय मिला। वे आदमी डोर पकड़े खड़े हैं।

भाग-भाग चूना ड़ाला। रसोई तैयार हो गई थी। बाबा को उसकी खबर भिजवाई और उनसे अनुमति मिलते ही आदमी बैठने लगे। सब तय कर रखा था। इतने खीर परोसेंगे इतने कढ़ी-इतने पानी उनके नायक नियुक्त थे। इधर-उधर दौड़ने और काम खराब करने की गुंजाइश नहीं रखी थी।

असोल गाँव वालों से जो कहा उसे वैसा ही किया। मर्यादाभंग नहीं की। ऐसा अनुशासन उन्हें ज्ञात न था। पर एक बार समझा दिया। वैसा की अंततक उन्होंने किया।

मैदान बहुत बड़ा था। पंगत पर पंगत बैठ रही थी। पंगत उठते ही पत्तलें उठा झाडू फिरा दूसरी पंगत बिठा दी जाती।

यहाँ की भीड़ से मैं परिचित था। मूठ ऊँचाई का - दुर्बल - नंगा उघाडा छोरा सब पर नियंत्रण किये है यह देख उन्हें अचरज था। मैं होता वहाँ स्वे मुझे चट घेर पैरों पड़ते। मै। उन्हें चकमा देकर खिसक जाता। काम देखता।

एक रह गया। इतनी दस हजार पत्तलें कहाँ फेंकनी यह तय नहीं किया हवा झूठी पत्तलें उड़ाती रही फिर उनपर ढेले रखे।

मैं ऐसा पूरे मैदान में दौड़ भाग रहा था और मेरा अफसर मुझपर नजर रखे हुए था। मैं क्या कर रहा हूँ, क्या बोल रहा हूँ, कैसे बोल रहा हूँ सब-सब।

बोले नहीं वे।पर शाम को समझ में आया। मैं बाबा की परीक्षा में पास हो गया था। वे मुझे चाहने लगे थे।

सब का भोजन निपटने पर एक एक पेड़ तले खाने बैठे। बाबा ने दो चार घर से रोटियाँ मंगवई थी उन्हें हाथ पर लेकर खपरे में ली हुई खीर से वे खाने लगे।मुझे पास बुलाया बोले-

"कल कहाँ जाना है ?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मैंने कुछ सोचा ही नहीं था - कहा

"दो चार दिन यहीं ठहरुँगा।"

उन्होंने तत्काल सूत्र बताया। जहाँ लोग मानने लगे वहाँ रहना नहीं। आदमी लोगों के प्रेम में फँस जाता है। मक्खी नाक में अटक जाती है जैसे। इसलिये अब यहाँ नहीं रहना।

मैंने प्रश्न मुद्रा से उन्हें देखा।

"हमारे साथ चलो 'ना सि क' वहाँ तुम्हारे लिये काम है।"

बहुतही खुशी हुई। क्या कहूँ। उस्तादों का उस्ताद, गुरुओं का गुरु अपने साथ चलने को कहे और क्या चाहिये?

असोल गाँव से जी जुड़ गया था। ढ़ेर सारी माँ, मौसी थी। मुझपर माया करनेवाली। स्नेह से खिलानेवाली। लुटिया भर-भर दूध लानेवाली। कुछ अधिक करने को चाहने वाली। मेरी दौड़ भाग उन्हें लगता इसके पैर दाब दें। उसे तेल लगा नहला दें। तवे की रोटी खिला दें, गुदडी में सुला दें। ऐसा उनके मन में बहुत कुछ था। कोई बड़बोली कहती जो थी।

मेरे लिये स्त्री का स्पर्श वर्ज था। मन में कुछ आते ही संत स्मरण करता। श्री हरी को विनय करता। संत तुकाराम ने काम क्रोध का झुनझुना बजने लगते ही कहा थाः

स्त्री का संग न दे तू नारायण
काष्ठ पाषाण या मिट्टी की
नहीं रहे स्मरण न हो भजन
ललचाता मन संभले नाहीं
तुका कहे अग्नि हो गया ऋषि
निकट आते ही जलावे है॥

हे नारायण स्त्री संग न दे। लकड़ी, पत्थर या मिट्टी की भी स्त्री न हो। क्योंकि उसे ईश्वर स्मरण, भजन नहीं हो पाता। ललचाया मन रोके नहीं रुकता। तुकाराम कहते हैं यदि अग्नि भी साधू हो गया तो भी उसके संग के कारण बाधा हो जायेगी।

स्त्री का पकाया खा रहा था। और उसी से दूर रहने का प्रयास कर रहा था। उस समय वह सच भी लगता था। तुकाराम ने परमार्थ में स्त्रीसंग वर्ज्य माना था पर उन्होंने स्त्री जात को रखुमाई समान माना था। [illegible] परकिया नारी रखुमाई समान।

यह हमारे ध्यान में न आया। हमने पहिला अभंग ही याद किया। एक अंधा दूसरे अंधे की पीठ पर हाथ रखे चल रहा था। ऐसी हमारी गति थी। तरुणाई की हवा लगने लगी थी और सारा जोश, आवेश, ओज सारा जीवनावश्यक जो वह त्यागने के काम में लगा था मैं।

बाबा ने मेरे साथ चल कहते ही वही पेड़ तले सारा हिसाब किया। बाबा का जोथा वह उनको सौंपा और गांव के स्नेह लगाये जनों की दखल भी न लेते उसी पेड़ से ही

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

प्रस्थान किया। असोल से संबंध छूटा।

हमारी बैलगाड़ियाँ निकली। मैं चला यह सुनकर लोग स्त्री पुरुष सब दौड़-दौड़ आये। मैंने मुस्कराकर उन्हें देखा और अब पंढरपूर में मिलूँगा यह कह गाड़ीवाले को गाड़ी जल्दी हंकाने को कहा।

मैं दूसरी बार नासिक आया था। पहिली बार एक अनाथ, भगोड़ा, अन्न के लिये दशदिशा खोजनेवाला निपट कंगला था। यहाँ वहाँ किसी मंदिर के आसरे रातें गुजारना, कहीं पकते अन्न की गंध के पीछे असहाय होकर पड़ना इसके अतिरिक्त कोई जीवन नहीं था।

अब पुरुषार्थ जाग जाने के बाद नासिक देख रहा था। वही धाट, वही मन्दिर, वही गलियाँ, वही घर, सब वही परन्तु अब सब अद्‌भुत था। नया रुप लिये था।

बाबा की धर्मशाला, नगर के बिलकुल निचले हिस्से में गोदा गंगा के किनारे अंतेष्ठी घाट के पास थी। पुराना नासिक वही था। सातवाहनकाल में।

धर्मशाला ऊँचाइ पर थी। नीचे एक-उसपर दूसरी-फिर तीसरी ऐसी इमारतें थी। चौथी का काम चालू था। उसके नींव की खुदाई चल रही थी।

पांच पचास आदमी काम पर था। जिसमें बाबा के इकलौते दामाद भी थे। दामाद होते हुए भी उन्हें किसी तरह की विशेष छूट नहीं थी। सब जैसे वैसे ही वे। सब के साथ रहना कष्ट करना खाना। बाबा की लड़की भी वहीं थी उसके लिये भी वही सब।सभी को भोर उठना पड़ता। मोतीराम अजामेला बाबा की सींगवाला था। भोर चार बजे सींग का घुमत्कार करना उसका काम। तुरन्त सब उठ जायें यह नियम था। प्रातर्विधि से निपटकर सूर्योदय के साथ काम पर हाजिर हो जाना पड़ता।

काम पर आते ही काम शुरु हो जाता। बाबा स्वयं सबके साथ काम में लग जाते। दर्शनार्थियों की पूछ परख भी चालू रहती। यह साधू दूसरे महंतों की तरह सिंहासनपर बैठता नहीं है प्रत्यक्ष सबके साथ काम पर लगा रहता है इसका लोगों पर बड़ा प्रभाव पड़ता।

नासिक में आते ही बाबा ने एक दिन की छुट्टी नहीं दी। तुरन्त जोत दिया कामपर। भोर से काम पर लग जाना पड़ता। नौ बजे नाश्ता होता - नाश्ता माने आधी मोटी रोटी और चटनी।

यहाँ बाबा के पास आये हर एक को जुत जाना पड़ता जरुर परन्तु किसी पर जबरदस्ती नहीं थी। सारा खुशी का मामला था। कौन अधिक काम करता है इसकी स्पर्धा थी। अधिक काम करने वाले को कोई पदवी भी मिलने वाली नहीं थी। बाबा “भले” कहे इतने भर की आस लोगों को होती।

वह एक यज्ञ था। हरेक उसमें आहुति ड़ालना चाहता था। इतनी सुंदर वैभवशाली

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

धर्मशालाएँ बंधवाकर भी बाबा ने कभी उनका स्वयं उपयोग नहीं किया। वे अधिकतर किसी मजदूर के साथ उसकी झोपड़ी में रात निकालते। ऐसा यह आदर्श सामने होने के कारण ही हरएक अपना जीवन उस यज्ञ में अपने हिसाब से झोंक देता था।

बारह बजने पर भोजन की छुट्टी होती। सभी एक पंक्ति में भोजन करने बैठ जाते। हम में किसी भी जाति का प्रतिनिधि नहीं है ऐसा नहीं था। उच्च से लेकर निम्न से निम्न जाति का आदमी यहाँ बिना संकोच एक पंगत में बैठता था। यह बात उन्नीस सौ तैतीस चौतीस की है। सब के लिए रसोड़ा एक ही जगह बनता। परोसिये परोसते, सब खाते। खाने के बाद अपनी-अपनी थाली मांजकर रख देते। फिर आधे घंटे बाद कामपर लोग लग जाते। आलस की लाज लगती थी। चार दो दिन का यह मामला नहीं था। एक जगह का काम हो जाने के बाद सारी पलटन दूसरी जगह काम पहुँच जाती। पंढरपूर, नासिक, देहू, आलंदी, बंबई, पुणें, मूर्तिजापूर, ऋणामोचन जहाँ-जहाँ बाबा ने इमारतें बनवाई-घाट बनाये वहाँ-वहाँ इसी मस्तान मंडली ने अपना पसीना बहाया। एक पाई भी न लेकर। मैंने भी इस मेहनतकश लोगों के साथ फावडा, कुदाल चलाना सीखा यह मेरे जीवन का एक भाग्य योग मैं मानता हूँ।

मुझ से बाबा ने शरीर श्रम का काम लिया जरुर पर वे मुझे लाये थे दूसरे काम के लिए ही। उन्हें मुझे लेखन में तैयार करना था।

लेखन माने ललित लेखन नहीं। उनका हिसाब, चिट्ठी-पत्री उनकी योजनाओं के नक्शे अंधे-लूलों के लिये खरीदे जाते कटोरे, साड़ियाँ, धोतियाँ, लाठियाँ इन सबकी सूचियाँ ऐसे सैकड़ों बातों का लेखन था।

नासिक पंढरपूर इन दोनो स्थानों पर धर्मशाला में अंधे, लूले, महारोगी ऐसों के लिए सदावर्त था। उनको कपड़ा, थाली, कटोरा ऐसा सामान दिया जाता। बाबा बाहर याचना कर पैसा इकट्ठा करते और वह इस तहर खर्च करते। इन सारे व्यवहारों की पक्की नोंद करने का काम मैं एक अन्य सज्जन व्यक्ति के साथ करता था।

बाबा के पत्र लिखने का काम बड़ा मनोरंजक था। उनका पत्र व्यवहार बहुत बड़ा था। आयी हुई चिट्ठियों को उन्हें पढ़कर सुनाना, उसके उत्तर लिखना। बाबा अक्षर पढ़ना नहीं जानते थे। जिस व्यक्ति के नाम से आगे जाकर महाविद्यालय और अकादमियाँ खुली वह महान व्यक्ति सचमुच में अक्षरशत्रु था। डेबूजीबुवा यह अपने नाम का हस्ताक्षर भी उनको करना नहीं आता था। लेकिन इस अक्षरशत्रु महापुरुष ने लाखों रुपया इकट्ठा कर उसका सुन्दरतम विनियोग किया। उसमें से एक पैसा भी अपने लिये खर्च न करते हुए।

उनका पत्राचार करना मैंने नासिक में सीखा। पत्र का मायना होता

श्रीमन्त, कर्ण समान उदार, दानशूर अमुक तमुक साहेब को गाड़गेबुवा का अनन्तकोटि नमस्कार

राजा, महाराजा, रजवाडे, मिल मालिक, श्रीमान, धनिक, सेइ साहुकारु किसान, संपत्तिवान

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विधवा, धर्मशालाओं के व्यवस्थापक ऐसे कितनों को ही चिट्ठी लिखी जाती। जिन्होंने दान दिया वे स्वयं पंढरपूर आदि स्थानपर पधारे और अपने धन का विनियोग स्वयं देखें ऐसा बाबा का आग्रह रहता। वे पत्रों में से यही बात लिखते। पहिली चिट्ठी मैं लिखने बैठा और जैसा उन्होंने कहा वैसा ही लिख दिया।शिरीमन्त कर्नासारखे उधार दानशूर

आमुक तामुक साहेब, याहिले गाड़गेबोवाचे

आनन्तकोटि नमस्कार पत्र लेहिन्याचे कारन

गणपतराव गांगण अबतक बाबा का सारा पत्राचार देखते थे। वे ही मुझे तैयार कर रहे थे। वे आये तो बाबा ने उन्हें मेरा लिखा देखने को कहा -

उन्होंने देखा और वे हंसने लगे

बाबा ने पूछा "हंसते क्यों जी?"

तब उन्होंने बताया बाबा को कि यह पत्र इन्होंने बिलकुल वैसा ही लिखा है जैसा आपने अपनी वऱ्हाडी भाषा में कहा है

बाबा भी सुनकर मुस्कराये। फिर उन्होंने एक किस्सा बताया। एक अरण्य पंडित थे। उन्हें किसी ने बताया कि रास्ता मंदिर से जाता है। आगे बढ़ने के पहिले वे अरण्यपंडित सीढ़ी खोजने लगे।

शरमा गया। फिर मैंने वह पत्र नागर भाषा में लिखा। गनपतराव को पढ़ने को दिया। उन्होंने मुंडी हिलाई। आगे मैं बाबा के पत्र लिखने में निपुण हो गया।

एक सकेशा विधवा ब्राह्मणी। नाम गंगूबाई। रुपसी, सातारा जिले में कहीं खेती किसानी थी, घर था। विरक्ति का कुछ ऐसा रंग उसपर चढ़ा कि घर द्वार छोड़ बाबा के साथ हो ली। कभी वह पंढरपूर में रहती कभी नाशिक। एक छोटे कमरे में उसका मुकाम रहता। दिनभर वह रसोड़े में लगी रहती शांतचित्त। उसके मुख मुद्रा पर हमेशा स्निग्ध शांत भाव बिराजे रहता।

सब के साथ पंगत में भोजन करती। उसने छुवाछूत कभी माना नहीं। यह भी नही माना कि वह सबसे अलग कोई खास है। एक आचारशील ब्राह्मण परिवार की उस महिला ने किस ताकत के भरोसे छुवाछूत की पोटली चन्द्रभागा नदी में बहा दी हरि जाने। बाबा की उनपर बड़ी मर्जी थी वे कहते :

गंगूबाई, गनपतराव और इनके जैसों को इकटठाकर एक गांव बसाना चाहिये। उस गांव में किसी ऐरे गैरे को धसने नहीं दिया जाना चाहिये। रसोड़े की बातों में वह निपुण थी। कितने आदमियों को कितना सीध लगेगा यह वह अनुमान से बराबर कहती। इस विषय की बात निकले ही बाबा कहते थे "आमाले मालूम नाहीं गंगूबाई ले पुसा।"

रसोड़ा समेट वह गाथा ग्रंथ लिये बैठ जाती। अभंग चौपाईयाँ उसे बहुत याद थी। लेकिन उसका प्रदर्शन कभी मैंने सुना नहीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अपने नियम का काम वह मितभाषी रह करती। कभी कभार उसके चेहरे पर उदासी की रेखाएँ अवश्य झलकती। लेकिन वह मुँह से कहती नहीं थी।

कभी-कभी पुरे दिन का काम समेट जाने के बाद बाबा उसके कमरे में जाते वह उनके लिए बिछावन ड़ाल देती। कभी बाबा कहते - "गंगूबाई बड़ी बुरी सर्दी हुई है। कढ़ी बना पिलाती क्या?" गंगूबाई तुरन्त स्टो सुलगा उसपर हिंग की बधार देकर कढ़ी बनाती। बाबा गरमागरम कढ़ी पीते। सर्दी पर उनकी यही दवाई थी।

कभी बाबा, गनपतराव, गंगूबाई, अच्युत देशमुख, मैं ऐस पांच सात जने कमरे में इकट्ठा होते। बाबा बड़े प्रेम से नाना विषय पर बोलते जाते एक छोटा बल्ब जलता रहता।

और भोर हो जाती। बाबा कहते

चालोजी, वह अवघडनाथ मोतीराम सींग बजायेगा। चाहे हाडफोउ जाड़ा हो या मूसलाधार वर्षा। उसका सींग बराबर चार बजे बजेगा ही। यह कैसे जाग जाता है। गत जनम का मुर्गा होगा यह।

अच्युतराव देशमुख। मुर्तिजापुर के पास का जमींदार। गढ़ी थी। खेती थी। अच्युत की माँ ने पतिनिधन के बाद बाबा को कुछ रकम सत्कार्य के लिए दी। इस कारण इस परिवार का बाबा से हुआ परिचय स्नेह और बंधुभाव में बदलने लगा।

नासिक धर्मशाला का बढ़ता कारोबार संभालने के लिए बाबा को एक ढंग का आदमी चाहिये था। और बाबा की नजर अच्युतराव पर पडी। एक दिन बाबा अच्युतराव उनकी पत्नी, माता, दो बच्चे सबको उनकी गढ़ी से नासिक ले आये। तबसे अच्युतराव बाबामय हो गये।

अच्युतराव। उन्होंने कीत्रन किया नहीं कभी। बैरागी की कफनी पहनी नहीं। हम जैसे जंगल की खाक छानते घूमे नहीं। सीधा सादा वेश छोड़ हम जैसे विचित्र वेश किये नहीं। सप्ते किये नहीं। मैं नंगा उघाड़ा किसी से स्वयं के लिए एक पैसा न लिये दस-दस हजार आदमी खिला सकता हूँ ऐसा झूठा अंहकार मन में लाया नहीं।

पर यह आदमी हम सबमें श्रेष्ठ था। अकथ विरक्त था। अधिक नम्र था। प्रापंचिक होते हुए भी उन्होंने किया त्याग हम सब से उच्च कोटि का था। हम सबन नाटक किये। चेहरे रंगे। पर बिना चेहरे रंगे और रंगमंच पर आये वे जिस रंग में रंगे उसका स्पर्श भी हम में से किसी को हुआ नहीं।

हम सब नाना देश नाना जाति के। नाना स्वभाव के भी। नाना हमारे स्वाँग। विरक्ति का नाटक करते हमारा अहंकार जागृत। बल्कि दुगुन-तिगुन हुआ, हुआ। मैं अमुक खाता नहीं। निराहारी हूँ, अमुक मेरा व्रत, अमुक मेरा नियम। क्या-क्या और क्या-क्या? और इससे भी अधिक एक भ्रम यह कि बाबा की मुझपर कृपा अधिक प्यार अधिक। ऐसे अभिमान की नशा किये हम सब नंगधडंग नासिक में इकट्ठा होते थे। इस अहंता की चकिया अपने शरीर के चारों ओर जोर से फिराते थे। तब उससे कई दूसरों का घायल

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

होना स्वाभाविक रहता था। हम में इतने झगड़े थे कि एक दूसरे को चेहरा कतई न देखने की कसम खाये हम में कई कीर्तनकार थे। हाथ शस्त्र लेने की अनुमति होती तो आपस में हुए खून खच्चर के नाले गोदामैय्या के प्रवाह में मिल गये होते।

ऐसे हिंस्त्र कीर्तनकार फक्कडों को संभालना सर्कस के रिंग माष्टर के भी बूते के बाहर था। पर अच्युतराव के लिए यह सहज था। हमारे आपस में एक दूसरे के सम्बन्ध में मत चाहे जो हों पर हम सब अच्युतराव के सुजनता के सम्बध में एकमत थे।

मुझे नासिक में छोड़ बाबा अन्यत्र चले गये। कुछ दिनों बाद लौटे भी। उनके आने का समाचार मिला। पर मैं उनके पास गया नहीं। सोचा भोजन के समय शाम को मिलेंगे ही। और उसपर भी जरुरत होगी तो बुला भेजेंगे।

संध्या समय भोजन के समय कुछ बातें हुई। मैं भजनों के बाद सोने के लिए गया तो बुलावा आया। गंगूबाई के कमरे में गया। बाबा वहाँ गुदडी ओढे सिगडी तापते बैठे थे। अंदर जाकर नमस्कार किया। हाथ पकडकर मुझे पास बिठाया। प्रसन्नता से मुस्कुराते बोले

"क्यों जी महाराज, नासिक भाया?"

"जी बाबा"

"दिनभर कामपर जाते की नहीं।"

मैं कुछ उत्तर देता इसके पहिले ही गनपतराव बोले, "खूब काम करते हैं सीखने की इच्छा रहती है।"

बाबा गंभीर हो गये, बोले

"बाबू रे। ईश्वर ने यह इतनी बड़ी पुस्तक लिखी है वह किसके लिये कही जाये। जो पढ़ सकता है उसके लिये ही तो। वह इलम आना चाहिये। कैसे पर्वत, कैसी नदियाँ, कैसा आकाश, कैसी गर्मी, कैसी बरसात। इस सबमें भूल जाना चाहिये। इसीका नाम हे भगवत भजन। ईश्वर ने शरीर इसके लिये दिया। आलस छोड़ देना चाहिये। यह सब मालूम कर लेना चाहिये। उससे ईश्वर खुश होता है।"

बहुत देर तक वे अपनी भर्राई हुई आवाज में बोलते रहे। फिर ठहर कर बोले

"कल तुम्हें मेरे साथ चलना पड़ेगा।"

मन में उछाल आया पूछूँ कहाँ चलना है। पर उछाल को दबा दिया। बाबा मुझे अपने साथ ले जायेंगे इसी आनंद तरंग में सोने के लिए चला गया।

नासिक स्टेशन गाड़ी की सीटी होने तक बाबा के साथ प्लेटफार्म से दूर अंधियारे में मैं खड़ा रहा। अब गाड़ी छूटेगी इतने में किसी एक ने आकर दो टिकट हमें पकड़ा दिये। बाबा को नमस्कार किया। जल्दी कर हमने गाड़ी पकडी और एक ड़िब्बे में चढ़ गये। गाड़ी में बैठे, तब बाबा का एक लंबोतरा सा थैला मेरे गले में लटक रहा था। ड़िब्बे में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बाबा घुसे यह देखते ही सारा ड़िब्बा आनंद चित्कार के साथ उठ खड़ा हो गया। परिचित अपरिचित सब। गाड़गेबाबा का व्यक्तित्व अति प्रसिद्ध। महाराष्ट्र, कर्नाटक में महात्माजी, नेहरुजी से भी रत्ती भर अधिक ही। वे किसी को पैरो पड़ने नहीं देते। कीर्तन समाप्त होते ही अदृश्य हो जाते हैं। एक जगह जब वे कीर्तन करते होते हैं तभी वे पांच पचास मील पर दूसरी, तीसरी जगह भी कीर्तन करते हैं - ऐसी अनेक किवदन्तियाँ उनके लिए प्रसिद्ध थीं।

जिन्हें देखे यह इच्छा हजारो लाखें के मन में बसी हुई वे बाबा अपने ही ड़िब्बे में बैठे यात्रा कर रहे हैं यह समझते ही आनंद कल्लोल उठना ही था। सब ने बाबा को घेरने की कोशिश पहली बार की।

फिर बाबा हाथ जोड़ एक सिरे पर खड़े हो गये। अपने रुद्र गंभीर आवाज में बोले

"सुनिये। हमें यात्रा करने दे रहे हो या गाड़ी से नीचे हम कूद जाँयें।" सभी ने नाही कहा फिर बाबा ने कहा -

"फिर अपनी-अपनी जगह सुख से बैठिये। कोई उठे नहीं कोई हल्ला न करे।" ड़िब्बा अपनी-अपनी जगह बैठ गया। और बड़ी उत्सुकता से बाबा कहाँ बैठ रहे हैं यह देखने लगा। बाबा जहाँ खड़े थे वहीं नीचे बैठ गये। पास में एक परिवार बैठा था। उसमें एक नन्हा भी था। उसे बाबा ने गोद में ले लिया। नन्हा एकटक बाबा को देखने लगा और फिर उसने बाबा की दाढी पकड़ ली। सभी हंसने लगे। नन्हे की माँ उसपर बिगड़ने लगी। बाबा ने हंसकर उसे कहा -

"रहने दे वो बच्चा है उसे क्या समझे?"

फिर उस परिवार की पूछताछ की। बड़े प्रेम से। गाँव कौनसा? कहाँ निकले? खेती कितनी? यात्रा का कारण क्या आदि-आदि उससे बात हो जाने पर दूसरे से। इस तरह सबसे उन्होंने पूछताछ की। सब को लगा जैसे उनके ही घर का कोई बड़ा बूढ़ा अपने पास बैठा है अति प्रेम से पूछताछ कर रहा है। हरएक के सुखदुख में सहभागी हो रहा है।

इस तरह पूरे ड़िब्बे का कबजा बाबा ने ले लिया। गाड़ी मेल एक्सप्रेस थी। घंटे-दो-घंटे इस तरह पूछताछ कर बाबा ने सबसे पूछा "अब येिंगे नहीं क्या आप लो?"

मंत्रभारित से बस लोगों ने हाँ कहा। बाहर रात का अंधियारा, अंदर एक वात्सल्य पुरुष का सानिध्य। सारे लोग घुडीमुडी हो सो गये।

बैठे-बैठे ही सोना था। बाबा ने मुझे कहा

"अरे बाबू आ। मेरी गोद में सिर रख सो जा।"

वैसा ही किया। तुरन्त सो गया। नींद भी आ गई। उठा किसी की मारी हल्की चपत से। भोर हो गया था। ड़िब्बे में कोई एकाद ही जागा था। कल्याण स्टेशन आ गया। हम दोनों पट से नीचे उतर पड़े। पुणें की ओर जानेवाली गाड़ी को अभी समय था। रेल लाइन के बाजू में हम्मालों की झोपड़ियाँ थीं। सभी करीब-करीब वारकर थे। बाबा एक झोपडी में घुस पड़े। वहाँ गड़बड़ हो उठी। बाबा ने कहा "हल्ला न करो गाड़ी को

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अभी देर है इसलिये बैठने को आये।"

हर बार इसी झोपडी में वे ठहरते रहे होंगे। झोपड़ी मालिक लेकिन वहाँ उस समय नहीं था। स्टेशनपर उसे कोई खबर दे आया। वह हर्षभरित दौड़ता आया। पूछताछ हुई। तत्काल रोटियों की तैयारी शुरु हुई। पास की दो एक झोपड़ियों में चटनी, बैंगन की भुरता बनवाया गया।

नाश्ता हुआ। गाड़ी स्टेशन में आ जाने के बाद किसी ने खबर दी। हम उठे और गाड़ी में जा बैठे। हर गाड़ी में बाबा के लिये वैसी ही उत्सुकता। उन्हें देखने इतनी ही आतुरता। उसी तरह का कौतुहल।

फिर पुणें में गाड़ी बदली। हमें जाना था धारवाड़ की तरफ। धारवाड़ माने कर्नाटक। धीरे-धीरे मराठी इलाका खत्म हो गया। कर्नाटक आ गया।

वहाँ मैंने जाना। गाड़गेबाबा वहाँ भी महाराष्ट्र इतना ही लोकप्रिय थे।

मूल कड़वाड की बदला रुप कारवार। हम वहाँ पहुँचे। सारा वन साम्राज्य। ऊँचे गगनचुंबी वृक्ष। सागौन का सुरक्षित बवन। वृक्ष की बाजू की शाखायें तोड़ उसकी बढ़त केवल आकाश की ओर बढ़ाये हुए वृक्ष। ऐसे गहन वन में मेरा जी तो घुटने सा लगा। आकाश कहीं दिखता नहीं था। कहीं-कहीं बीच-बीच बड़े तारों सा दिखता वह विशाल आकाश।

हम एक जगह उतरे। वहाँ एक खुला सा राममंदिर। वहाँ कोई गिरी नाम के गोसाईजी गृहस्थी वाले। पंढरपूर को आने जाने वाले। वहाँ का बाबा का परिचय। वहाँ से एक विशाल काष्ठ डिपो हम जा पहुँचे। लकड़ी के विशाल लट्ठे। बढ़िया सागौन कटते हुए उड़ता एक सूक्ष्म मदिर गंध वातावरण में भरा-भरा। कितना लूँ।

कटे लट्ठे एक दूसरे पर रच रखने का काम दो हाथी कर रहे थे। ठिंगने। उनके सिरपर बैठे महावत कान से पीछे पैर अड़ा उन्हें संकेत कर रहे थे। कभी कोई शब्द उनके मुँह से निकलता। उनके आदेशानुसार हाथी सूड से कड़ियाँ उठा-उठा इधर-धर रख रहे थे। मैं पगलाया सा यह दृश्य देर तक देखता खड़ा था।

बाबा ने बुलाया। तुरन्त गया। एक दफ्तर में बाबा जमीन पर बैठे थे। उन्हीं के पास एक कर्मचारी भूमिपर ही बैठा था। बेचारे को मन मार बैठना पड़ा होगा। दूसरे किसी कर्मचारी ने कुछ बिल लाकर बैठे कर्मचारी को दिये। उसने देखे, वे बाबा को दिये।

बाबा ने मुझे कहा-वह थैली है उसमें से बही निकालो।

मैं चकित विमूढ़। ये थैली में नंगा उघाड़ा पूरी यात्रा में गले में लटकाये हुए था। अभी कुछ देर पहले इसे ही पहने पगलाया हाथियों के करतब देखता रहा था।

बड़ी मात्रा में लकड़ी एक धर्मशाला के लिये खरीदी जा रही थी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

मराठवाड़ा में घूम रहा था। जिला परभणी का विशेष आकर्षण था। पर बीच में नागनाथ के ज्योतिर्लिंग का दर्शन मन खींचे हुए था।

वन प्रदेश में बैठा है अकेला नागनाथ। आसपास सागौन की झाडी, वृक्षावली नहीं। चारों दिशाओं अस्तव्यस्त बढ़ा सागौन। सागौन लगता ही नहीं। सागौन के कोमल पत्ते हाथ पर लेकर मलने पर तलवे लाल हो जाते हैं। गडेरिये मानते हैं कि यह गौ का रक्त है।

इसलिये कोई गडरिया रोटी खाते तले कभी सागौन का पत्ता नहीं लेता।

राहगिरी का तरीका वैसा ही। शाम किसी गाँव में ठहरना। रोटी माँगते भजन मंडली का जुगाड़ जमाना। बन गया तो रात कीर्तन करना और धुंधलके में ही उठ कर चल देना।

ऐसा ही किसी गाँव कीर्तन किया। गांववालों को बहुत पसंद आया। कीत्रन के बाद आग तापने बैठा। कुछ लोक और थे। बोले-

"कहाँ जाते हो बाबा। यही रम जाओ। कीर्तन अच्छा करते हो।"

दूसरे दिन रह गया। बहुत आग्रह पर तीसरा दिन भी वहीं रहा। लेकिन फिर जैसे नागनाथ बुला रहा हो मन बेहद उचटा। तीसरे दिंन के कीर्तन के अंत में कहा। "तीन रात कीर्तन हुए। आनंद रहा। अब नागनाथ बुला रहा है सो कल उठकर चला जाऊँगा।

धुधंलके में ही आठ दस गाँव वाले और पटेल सबसे आगे आ गयें। मैं धुनी ठंडी कर निकलने की तैयारी में। उन्होंने अपनी तीसरी ही बात शुरु की। पटेल ही शुरु हुआ ऊँची ठसक से।

"कहाँ जाते हो बाबा। बिना कारण पैर तोड़। कहीं बीबी-बच्चे भूखे भी नही मर रहे। रहो यहीं। गांववाले इतना कह रहे हैं।

"तीन दिन तो रह गया।" नाराजी से बोला

"तो क्या हुआ। गांववालों की इच्छा हैं तो नहीं गये।"

"लेकिन मुझे तो नागनाथ देखना है।"

"अरे नागनाथ भी कोई आला हजरत है क्या? वह बैठा है जमाने से पालथी लगाये। इतने पास है पर हम नहीं गये आजतक।"

नागनाथ की तुलना आलाहजरत-निजाम से करते ही मेरा माथा ठनका। मैं लाल हो गया। क्या कहूँ न समझे। पटेल गाँववालें से बोला। रहेंगे भाई। पड़ोस के गाँव कहलवा दो।

निश्चय से कहा

"यह आप क्या कह रहे हैं। मैं रुकनेवाला नहीं। यह चला।"

पटेल ने आपे से बाहर होते कहा-

"आप। और जायेंगे। मेरी हद से बिना मेरी इजाजत। बुवा इसको मूगलाई कहते हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गला दाब जंगल में ड़ाल दिया तो पता भी न चलेगा।"

खून जल गया। इसकी ये मजाल। अरे नंगे से तो खुदा भी ड़रता है। खड़ा था। दोनो हाथ उपर किये। एक हाथ में लाठी थी वह भी ऊँची खड़ी। गुस्सा इकट्ठा कर स्वर नियंत्रण में रखते हुए बोला -

"पटेलजी कोई फटासा मुसलमान सिपाही आ जाये अभी और वह तुम्हें डांटे तो तेरी घिग्गी बंध जावे। ये तो हिम्मत है तेरी। मुझे क्या बहादुरी दिखाते हो। पीया हो कभी माँ का दूध तो आ जाना सामने-रोकना मुझे।"

और जुते खेत के बड़े-बड़े ढेलों पर पैर रखता मैं चला। कोई आगे नहीं आया। मैं चला नागनाथ से मिलने।

नागनाथ के परिसर में पहुँचा। मंदिर का शिखर दिया। सारा शरीर आनंदित हो गया।

कितने प्राचीन समय से महादेव यहाँ बिराजे हैं। नामदेव, ज्ञानदेव यहाँ मुकाम कर गये। नामदेव की तो कथा है। नामदेव देवता के सामने कीत्रन करने खड़े हुए तो पुजारियों ने उन्हें करने न दिया। नामदेव बिचारे मंदिर के पीछे गये और कीर्तन करने लगे।

घूमा दिया मन्दिर बात है जग जानी।
दूध की कटोरी पी नामदेव से॥

साक्ष्य भी यहाँ है। महादेव के हर मंदिर में नंदी मूत्रि सामने रहती है। यहाँ नागनाथ के सामने नंदी नहीं है। पीछे है। शिवलिंग स्वयंभू है। मंदिर भी छोटासा है। सामने तीर्थकुंड है।

भूख लगी थी। गांव में यहाँ-वहाँ टटोला। गले में बाबा सम्प्रदाय की माला थी। परन्तु वह तीर्थस्थान। रोज ही साधू सन्यासियों का वहाँ पर जमघट। मुझ जैसे फटेहाल की तरफ कौन ध्यान देता। तीर्थ-वासियों की प्रसिद्धि, लेने के लिए दातृत्व के लिये नहीं।

याचना भी की। उत्तर मिला। "जाओ बाबा आगे बढ़ो। रोज कितने ही चले आते हैं। भीख भी किसको-किसको दी जाये।"

मुगलाई जुल्म की एक कथा किसी ने वहाँ सुनाई।

किसी के यहाँ सत्यनारायण की कथा थी। उसने थोड़ी अधिक झांकी लगाई। केले के पेड़ लगाये। तोरण बांधे। समारंभ चल रहा था तो एक मुसलमान दफेदार वहाँ आया। हिन्दू के घर चल रहे उत्सव को देखकर उसका जी जला। हाथ की छड़ी नचाते हुए वह घर के सामने खड़ा हो गया। पूछा-

"ये क्या तमाशा लगा रक्खा है?"

नम्रता से कहा गया "हुजूर भगवान की पूजा है।" "पूंजा। ये पूंजा क्या बला होती है। और बगैर इजाजत के।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"हुजूर ये तो बस"

"हम पूछते हैं इजाजत माँगी थी।"

"जी नई !"

"तो बंद करो। ये सब केले वेले के पेड़ फैंको।"

निरुपाय होकर सब बंद करना पड़ा। वह मुगलाई का नियम था। किसी भी भजन की आवाज मंदिर के बाहर जाना निजाम सरकार को पसंद नहीं था। एक नियम तो विशेष कड़ाई से पालन करवाया जाता रहा। किसी भी मंदिर का शिखर मसजीद के शिखर से उपर नहीं जाना चाहिये।

प्रजा इतनी पीड़ित थी कि उसके विरुद्ध आवाज उठाने की हिम्मत किसी की नहीं थी।

हम लोगों के कीर्तन मैदानों में कैसे हो पाते थे यह भगवान ही जाने। खुद बाबा का कीर्तन भी एक बार एक निजामी अधिकारी ने बंद करवा दिया था। और ऐसी परिस्थिति में भी हम परतवाड़ा में घूम रहे थे। सब तरह की मुसीबतों से टक्कर ले रहे थे।

एक बात ध्यान में आयी। मंदिर की अपेक्षा देवता की आवश्यकता अधिक है। खूले चबुतरे पर भी हनुमानजी की स्थापना की जा सकती है। और वही किया जाये।

प्रश्न था हनुमान की मूर्ति कहाँ से लाई जाये? इस पर मार्ग भी मिला। अच्छा सा गोल पत्थर लेकर उसे सिंदूर पोतकर हनुमानजी की स्थापना की जा सकती है। उस पत्थर का क्या बिगाड़ेंगे निजामी अधिकारी?

जिस बगीची में ठहरा था। वहीं एवंगुण विशिष्ठ पहले निर्गुण हनुमान की स्थापना की। संकल्प किया स्वामी रामदास जैसे ग्यारह हनुमान की स्थापना करने का। पांच सात किये भी। उनका मेरे पीछे क्या हुआ वह बुद्धिमानों का अग्रदूत हनुमान ही जानें।

परभणी आ गया। संयोग से पहला कीर्तन दाना बाजार में हुआ। परभणीवालों ने उसे बहुत पसंद भी किया। परभणी जिला मुख्यालय। व्यापार केन्द्र भी। बड़े धनत्तर व्यापारी वहाँ। कुछ ऐसा संजोग बनता चला कि किसी को मेरा कीर्तन पसंद आया। तो किसी को मेरा वैराग्य किसी के मन में गाड़गे बाबा को परभणी बुलाने का था उसको धागा मिला और परभणी में भी सप्ता किया जावे यह बात तय हुई।

मुझे कहा गया आप बाबा से मिलो और तिथि पक्की करके आओ।

मुझे हिंगोली जाना था। वहाँ का टिकट निकाल दिया और लौटती बेर के लिये रुपये दिये। अब प्रश्न यह था कि रुपये रक्खूँ कहाँ। कोई कुर्ता कमीज मैं पहनता नहीं था। लंगोटी में जेब नहीं थी। रुपये भी सिक्के थे निजामी। आखिर में एक लंगोटी में वे बांधे और लंगोटी टमरेल में ड़ाल गाड़ी में बैठा।

हिंगोली के लिये नांदेड से गाड़ी बदलनी पड़ती थी। गाड़ी रात कभी जाती थी इसलिये वेटिंग रुम में जाकर बैठ गया। बैठे-बैठे झपकी लग गई।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

किसी ने हिलाकर मुझे जगाया। आँखे खोलकर देखा तो एक मियाँ पुलिस था। उसेने पूछा -

"क्यों बें कहाँ जायेगा?"

आँखें मलते उत्तर दिया "हिंगोली।"

"टिकट बिकट है? अच्छा जा तो उस दूकान से चार खड़कू (निजामी पैसे) के सिगरेट ले आ।"

वह मुझे पैसे देकर सिगरेट लाने को कह रहा था। 'मुझे' एक कीर्तनकार को। 'उसे' जो अपने कीर्तनों में मद्यपान, धूम्रपान आदि व्यसनों के विरोध में प्रचार करता था। नींद रफू चक्कर हो गयी।

सामने खड़ा रहा। खंबा बना।

"अबे गूँगा है क्या? सुनता नहीं।"

"हाँ सुना है।"

"तब तेरी माँ कू. . . . . जाता क्यों नहीं बे लौंडे।"

यह आव्हान था। स्वीकारना जरुरी था। बहुत जरुरी था। अन्यथा सारी साधुता खाली रह जाती। उस भिक्षाटन को, बैराग को, कीर्तन को कोई अर्थ नहीं रहता।

इधर-उधर देखा। दस बीस मुसाफिर गाड़ी के इंतजार में वहीं बैठे हम दोनों को देख रहे थे। वह पुलिस नहीं था निजामी सत्ता का प्रतिनिधि था जो एक निसंग भगत को आव्हान दे रहा था।

मन में निश्चय किया और कहा - "नहीं जाऊँगा।"

आँखे तरेर वह उठा। यह ऐसा सीधा उत्तर सुनने की उसकी आदत नहीं होगी। चिल्लाया -

"ये गुस्ताखी। नहीं जायेगा। अभी बताता हूँ।" और उसने मारना चालू किया। तकदीर अच्छी थी उसके हाथ में लठिया नहीं थी। चप्पल या जूता था पर उसने सोचा होगा, मरिहत्या को मारने उसकी जरुरत ही क्या?

मैंने आँखे मूँद ली। मुँह ढाँप लिया। बचपन में दादा मारा करते थे वह याद किया और मन ही मन कहा - मार खाने की आदत है तू करले अपने मन की।

कितने चाटे घूसे मारे गिने नहीं। पांच पचीस मारे होंगे ही। पूजा वैसे दोहरी थी। मुँह से वाकपूजा और हाथों से ताडन पूजा। कौन-कौन सी गालियाँ वह दे रहा था हाँपते बकते। फिर उसने लत्ता प्रहार चालू किया वाणी प्रहार दुगुना किया।

कोई एक पुलिसवाला किसी एक लंगोटी वाले को भर तबीयत मार रहा है यह दृश्य बड़ा मनोरंजक होगा। आजू बाजू के लोग बड़ा रस लेकर उसे देख रहे थे।

कुछ थक जाने पर उसने प्रश्न किया -

"तेरे और साथीदार कहाँ है?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उत्तर दिया - "अकेला हूँ।"

"अच्छा अकेला चोरी किया करता है।"

फिर उसने तलाशी लेनी चाही। लंगोअी में हाथ ड़ाला। गलत जगह पर हाथ जाते ही मेरा शरीर सुकड़ा। अब उसने चारो ओर के दर्शकों के लिए स्पष्ट करना जरुरी समझा। ये साले चोर कहाँ-कहाँ चीजे छिपाकर रखते हैं। फिर उसने पूछा सामान कहाँ हैं? मैंने पेश किया। एक टिनपाट और लाठी। टिनपाट में लेकिन रुपयों की पुड़िया थी। वह हाथ में आते ही खुश होकर बोला -

"कमीने बोल ये रुपये कहाँ से लाया?"

"मुझे लोगों ने दिये हैं किराये के लिये।"

अंगुलियाँ मेरे सामने नचाते हुए वह बोला - "अबे उल्लू के पट्ठे एक खड़कू तक तो रेल के पहिये के बराबर दिखता होगा तुझे। और तुझे लोगो ने रुपये दिये हैं किराये के लिये।"

उसी समय एक अकल्पित घटित हुआ। रंगस्थली में एक भले आदमी का प्रवेश हुआ। वह वारकरी होगा। उसकी निगाह में मेरा बाबा सम्प्रदाय का निशान पड़ा। मैं कौन पहचानते ही वह दौड़कर आया। और उसने थोड़ा अनुनय थोड़े कड़ाई से सिपाही से कहा -

"छोड़ दो मियाँ आप हम लोगो के मुर्शद हैं।"

उसकी तरफ देखते हुए मियाँ बोले

"क्या कहता है तू।"

"मुर्शद। गाड़गे बाबा के चेले हैं कीर्तन करते हैं।"

"कीर्तन याने?"

"इ बा द त"

"इ बा द त! क्या वाकई?" मेरी तरफ विचित्र निगाह से देखते बोला वह। मैंने केवल मुंडी हिलाई।

"अबे तो साले पहले ही क्यों नहीं बताया? मार-मार के मेरे हाथ दुखने लगे।"

बाबा की तारीख मिल गई।

वे मुर्तिजापुर के अपने गोरक्षण शिविर में थे। बड़े स्नेह से सारी पूछताछ की। पर एक दिन भी वहाँ रहने नहीं दिया। तुरन्त वहाँ से दौड़ाया।

परभणी आया। जिस बगीची में उतरा था वहाँ सब लोग इकट्ठा हो गये। वकील थे। व्यापारी थे। शिक्षक थे। बाबू थे। वारकरी सात्विक और सदाचरणी पुरुष। ऐसे सब इकट्ठा हुए और एक अनौपचारिक समिति ही स्थापित हो गई।

असोल जहाँ मैंने पहला सप्ता किया था वहाँ सब मुझको ही करना, देखना था। यहाँ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जानकार लोग थे वे समिति में लिये गये। नहीं थे उन्हें बुलावाया गया। योग ऐसा कि जिले का पुलिस अधिकारी वह मुसलमान। भला आदमी। थोड़ा फिलासाफर। वेदांती था। किसी वकील के कहने पर कीर्तन को भी आया था। उसने कहा होने दो सप्ता। जो कुछ मुझसे बन पड़ेगा वह अवश्य करुँगा।

सपाटे से तैयारी शुरु हो गई। शहर से लगा एक व्यापारी का खेत था। कपास का। कपास कट गई थी। वह स्थान तय हुआ। खेत के नीम तले मैंने अपना ड़ेरा जमाया। देखते-देखते मंडप खड़ा हो गया। वीणा की पहरेदारी करने में तू-तू मैं-मैं होने लगी। सभी को इस सत्कार्य में भाग लेने की इच्छा थी।

मन में एक निर्णय ले लिया। पहरेदारी तय करने की बैठक हुई। तब मैंने कहा

प्रश्न शाम छह से सुबह छह बजे तक का ही हैं केवल

आश्चर्य से लोगो ने पूछा "दिन के बारह घंटो का क्या?"

"उसकी चिंता न करें उसका कुछ न कुछ हो जायेगा।"

"साफ-साफ कहियेगा।"

"वह बारह घंटे का पहरा मैं ही करुँगा।"

चकित लोगों ने पूछा

"अखंड बारह घंटे खड़े रहेंगे सातो दिन।"

"हाँ।"

"और रात को कीर्तन"

"कीर्तन भी करुँगा।"

कुछ समय तक कोई कुछ नहीं बोला। फिर वकील बोले

"फक्कडों का कुछ नहीं कह सकते। बदली के लिए व्यवस्था किये लेते हैं। यदि बाबा (माने मैं) थक गये तो बदली वाले वीणा संभालेंगे। मैंने मान लिया। मन में कहा हे भगवान यह बारी मुझपर आने न देना। सप्ता प्रारंभ होने के पूर्व रात-रातभर लोगों ने काम किया। झंड़ियाँ पत्तियाँ, केले के ठूँठ और जाने क्या-क्या सारा मंडप लोगों ने सजाया। उत्साह उमंग से लोग भरे-भरे थे। किसी बात की कमी नहीं थी। सभी साधन साथ थे।

भोर उठा। प्रातर्विधि से निवृत्त होकर कुएँ में स्नान किया। तेरा। मन में कहता जाता बार-बार हे प्रभू मुझे मेरे संकल्प पर दृढ़ रहने की शक्ति दे।

बड़ा भारी समुदाय इकट्ठा हुआ था। आरती की थालियाँ लिये स्त्रियाँ और पुरुष। सभी सुस्नात प्रसन्न। देवप्रतिमाँओं के सामने दीपों की सजावाट। धूपबत्ती - धूप जल रहा था। एक उदात्त भावना से एकत्रित वह समुदाय सिकी देवसभा जैसा शोभायमान था।

दोनों बाजू लकड़ी के घोड़ी पर रखे मृदंग। पीछे पाच-पचास झांझवाले। सभी सुशोभित, गोपीचंदन लगाये। बीच में गले में वीणा लटकाये मैं। उस सारे समुदाय से विशोभित। जूट की करधनी और मूँज की लंगोटी। सिर बढे हुए टोकनीभर बाल अस्तव्यस्त परन्तु

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मैंने अपना रुप मन से निकाल दिया। कान के पास वीणा का दंड पकड़ा। मणि उपर नीचे कर सुरीली की वीणा। आँख बंद कर परमात्म चिंतन किया और शुरु किया।

जय जय रामकृष्ण हरि। जय जय रामकृष्ण हरि।

झांजे झन झना उठी। मृदंगों के धुमत्कार शुरु हो गये। ऐसा रंग भरा कि क्या कहूँ?

भजन बंद हुआ। झांझे मृदंग रख दिये गये। वीणा बजाता मैं अकेला ही रह गया वहाँ।

वकील साहब मेरे पास आये बड़े आदर से होनो हाथों से मुँह ढाँपे बोले

"बारह घंटे खड़े रहने का आपका संकल्प. . . . . !"

मैंने कहा

"प क्का।"

वे लौटे। बदली के लिये लोग थे उन्हें वहीं बैठा रखा। सप्ता शुरु हो गया।पहरेदारी में एक जगह खंभे सा खड़ा रहना नहीं पड़ता। भजन करते इधर-उधर घूमाफिरी भी की तो चलती है। पंढरपुर में तो कितने ही लोग पैर में घुंगरु बांध नाचते हैं। मेरे भी मन में वह हुक उठी। पर फिर तुरन्त ही लगा बंदरवाले का नचना बंदर लगूँगा।

सातो दिन गाय के दूध पर रहने का विचार किया हुआ था। चाहे जितना दूध आ जाता था। दिनभर लोग लुगाई देवदर्शन को आते। फल लेकर। उन फलों का पहाड़ जमा हो गया। उसे संभालने एक आदमी लगाना पड़ा।

शुरु के छह सात घंटे निकल गये। फिर पैर भारी होने लगे। पैर तोड़ करने की बहुत आदत थी। पर आठ घंटे हो जाने के बाद पैर में खून इकट्ठा होने लगा। पैर थोड़े सूज गये। दुखने लगे। पीड़ा असह्य होने लगी। इतने में भानुदास का एक अभंग स्मरण हो आया।

भानुदास कहता है आकाश यदि गिर जाये, ब्रह्मगोल फट जाये या वडवानल त्रिभुवन खाये फिर भी मैं तेरा भक्त बना रहूँगा।

मन को समझाया। भानुदास कहता है वैसा कुछ भी नहीं हुआ है केवल तुम्हारे पैर कुछ दुख रहे हैं। उस दुख को तू सह, निसंग सह। बहुत बढ़चढ़कर प्रतिज्ञा की तुने। स्वयं ही। कोई कहने नहीं आया था। अब पहिले दिन ही तू बैठ गया पैर लेकर तो लोग थूकेंगे। कहेंगे

यास्मिन कुले त्वमुत्पन्न : गजस्तत्र न हन्यते।
इसलिये भजन कर। इसे चुप सहन कर।

पांव उपर उठातो तो उतनी देर के लिए भला लगता। पर फिर पीड़ा।

फिर स्मरण हो आया। जितने अभंग कंठस्थ हैं उतने की आवृत्ति की जाये। फिर पैरों पर लगा ध्यान अभंगों के पुनःस्मरण में लगाया। और फिर जो-जो कंठस्थ किया था सबकी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

आवृत्ति करने लगा। धीरे-धीरे।

संध्या हो गई। बाबा बारह घंटे खड़ा है तो कैसे ?यह देखने स्त्री पुरुषों की भीड़ आ रही थी। सभी आकर पैरों पड़ते और वहीं बैठ जाते। मेरी तरफ टकटकी लगाये देखते।

अंतिम घंटा बहुत ही कष्ट का गया। मिनिट-मिनिट भारी था। पैर नाम का कोई अवयव अपने को है ही नहीं ऐसा लगने लगा। नीचे दो लकड़ियाँ खड़ी हैं ऐसा लगता। बार-बार घड़ी की तरफ नजर जाती। लेकिन वह भी अच्छा नहीं दिखेगा इसलिये फिर आँखें बंद कर ली। वीणा दंड काने से सटा लिया। हरिस्मरण करने लगा। छह बजे और बदली का पहरेदार मेरे पास आया। मेरे आगे वह झुका और उसने मेरे गले में से वीणा निकाल ली। वीण देकर मुझे हट जाना था परन्तु मैं जगह से हिल ही नहीं पा रहा था। कीलें ठोक कर क्रूस पर चढ़ाया हो जैसे। लगे कि गिरा। परन्तु मन को पक्का करते मैं बहुत धीरे-धीरे पंडाल के बाहर हो गया। कुएँ की तरफ चला। मरे पीछे आदमियों की भीड़। इस भीड़ के होते मैं किसी कोने में जाकर बैठ भी नहीं सकता था। आखिर वह आवेग वैसा ही रोका और कुएँ की सीढ़ियाँ उतर पानी में खुद का झोंक दिया।

वे सात दिन मंतर भरे थे।

रात साढ़े नौ बजे कीर्तन को खड़ा हुआ। कीत्रन के लिए विलक्षण भीड़ हो गयी थी। सभी करीब श्रद्धा से आये थे। पर कुछ यह देखने भी आये थे कि देखें बारह घंटे खड़ा रह यह आदमी कितनी देर कीर्तन करता है।

डेढ़ दो बजे तक कीर्तन चलता रहा। वकील साहब से आखिर नहीं रहा गया। उन्होंने उठकर लोगों से कहा अब बस करें। महाराज को कल सुबह फिर छह बजे से बारह घंटे के लिये खड़ा रहना है।

लोग उठे मैंने धुनी के पास जाकर जमीन पर देह ड़ाल दी। तुरन्त नींद लग गयी। बीच में ही पर लग रहा था कि कोई मेरे पैर दबा रहा है।

भोर पांच बजे ही नींद खुली। देखा तो दो चार आदमी मेरे पास बैठे हुए। मैंने पूछा तो वे बोले

"हमें नहीं मालूम। वकील साहब ने हमें कहा है इसलिये . . . . . .।"

"क्या कहा हैं ?"

"जे की जहाँ-जहाँ महाराज जायें वहाँ-वहाँ जाना। प्रातर्विधि कर मैं कुएँ के पास गया और कुएँ में कूद गया। रखवारों ने कहा -

"महाराज अधिक देर पानी में न रहे।"

मैंने साश्चर्य पूछा - "क्यों ?"

"वकील साहब हम पर नाराज होंगे इसलिये।" तबीयत से तैरा, नहाया। और ठीक छह बजे पहरे पर जाकर वीणा गले में अटका ली। सात के करीब वकील साहब आये

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मैंने उन्हें सरोष पूछा

"यह पुछल्ला आपने मेरे पीछे क्या लगा रखा है ?"

वकील साहब ने अदब से कहा

"महाराज यह इतना बड़ा कारज खड़ा किया है आपने। इस शरीर पर अब आपकी सत्ता नहीं है। यह इस कार्य का है - सो राखना पड़ेगा।"

हंसी आ गई। मन ही मन कहा पंधरह दिन पहले नांदेड स्टेशनपर मार खाते समय नहीं मुझे बचाया।

सप्ता बहुत बढ़िया रहा। हर दिन कमान चढ़ती ही रही। पहिले दिन बारह घंटे खड़े रहना जितना अखरा था उतना कष्ट दूसरे दिन नहीं हुआ। दोनों समय पानी में मस्त तैरता। श्रम परिहार का यह अच्छा मार्ग लगा।

एक दिन शरीर में आते देवता के सम्बन्ध में मैंने कीर्तन में कहा -

यहाँ इतने वारकरी भक्त हैं बड़े नियमशील हैं पवित्र आचरण हैं इनके। देवता की सवारी इनके शरीर में कैसे नहीं आती। सदाचारी ब्राह्मणों के भी वह रास्ते जाता नहीं। सम्पन्न व्यापारी, साहूकार पर भी सवारी आती नहीं। सदाचार सम्पन्न किसी पर भी सवारी आती नहीं।

और आठ-आठ दिन न नहानेवाले, चाहे जो खाते पीते सच झूठ बोलनेवाले लोगों पर सवारी आती है। क्या कहते हैं जग का रखवारा इनपर सवारी करता है।

नाच क्या? हुंकार क्या? चिल्लाना क्या? दहाड़ना क्या? सारा तमाशा।

जब शरीर पर सवारी आये तो और क्या रह जाता है। जिनको अपने चीथडों को ठीकरी लगानी भी मुश्किल है। वे कहें कि देवता उनपर सवार होते हैं तो परमात्मा कया साग भाजी है जो कोई भी खोदकर ले आये।

घर आये भगवान तो उसकी है पहचान

फटा उसका आंगन गृहस्थी का
भगवान का संकेत करे सत्यानाश
अपने से अलग रहने न दे
भगवान का संकेत आशा से निराश
ममता के पाश छूने न दे
तुका कहे साक्ष्य हुई मुझे देखो
और इन लोगों को क्या कहूँ

तुकाराम कहते हैं देवता आने की पहचना है वह जिसके घर गया उसके गृहस्थी में दरार पड़ गयी। गृहस्थी टूट टाट गई। ममता के पाश टूट गये।

ईश्वर का अवतार या सवारी होनी है तो वह किसी अंदर बाहर से पवित्र शुद्ध स्थान

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

पर ही होगी।

ऐसा बहुत-बहुत कहा। अवसरानुकूल नाचा, भाव भंगिमा भी की। सारा श्रोता समूह हंसते, हंसते लोट-पोट हो गया।

सप्ता समाप्त होने का था दूसरे दिन। बाबा के कीर्तन के लिए मैदान साफ हो रहा था। सौ पचास आदमी सफाई में जुटे थे। कंकड़ पत्थर बीन रहे थे। मैं एक तरफ पहरा दे रहा था। दूसरी ओर सफाई का काम देख रहा था।

इतने में मैदान के एक बाजू से बड़ा हो हल्ला उठा। कर्मचारी काम छोड़ उधर दौड़े। आदमियों की एक भीड़ पंड़ाल की ओर बढ़ती दिख रही थी। बात कुछ भी समझ नहीं आ रही थी।

धीरे-धीरे वह भीड़ ठीक मेरे सामने आकर रुकी। एक औरत बीच में घूम-घूम रही थी। उसपर देवता की सवारी आयी हुई हो जैसे। पंडाल के कुछ लोग मेरे पास आकर बोले बहुत जागृत देवता है। इनके पास भीड़ लगी रहती है। आपने रात में जो कुछ कहा उसके कारण मरीमाता कुपित हुई हे। अब आपही संभालों। मुस्कराकर पूछा -

"क्या करेगी वह मेरा?"

"मंतर कर नींबू मारेगी।"

"तो उससे क्या होता है?"

"झाड़ा, उलटी होने लगती है। मुँह से फने आता है। आदमी मर जाता है।" इतने वह स्वाँग काफी पास आ गया। मेरे उसके बीच कोई न रहा। भीड़ उसके ही तरफ अधिक थी। मुझे देखते ही उसने अंगुलियाँ चटकाई। कहने लगी

"कीर्तन में हमारा मजाक बनाते हो"

"हाँ बनाता हूँ।" मैंने उत्तर दिया। "नाच कर दिखाते हो।"

"हाँ कहो तो अभी दिखलाऊँ।"

गला फाड़ वह चिल्लायी

"मरे तेरी ठठरी बंधेगी सत्यानाश होगा तेरा।"

"होने दे।"

"जीभ झड़ेगी तेरी।"

"झड़ने दे।"

"खून की उलटी होगी।"

"होने दे।"

मुझे घेरे आदमी दीनता से कहने लगे "ऐसा न कहे महाराज, देवता के लिये ऐसा कहना ठीक नहीं।"

"क्या होगा?"

"बुरा होगा अपाय होगा।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कठोर होकर मैंने कहा सर्वेश्वर पर मेरा विश्वास है वह जो कहलवाये वही कह रहा हूँ। उसमें एक अक्षर भी झूठा नहीं है। फिर कहता हूँ "ये सारा ढोंग है। स्वाँग है, नाटक है।"

अंतिम वाक्य उसने सुना। चिल्लाकर बोली -

"मरे तेरी ठठरी बंधेगी।"

"आज ही बंधने दे।"

"शाम के पहिले।"

"मैं तैयार हूँ।"

चिल्लायी-चिल्लायी जमीनपर गिर गयी। फिर उठकर चली गई। मैं शाम तर्क मर जाऊँगा यह उसकी शाप वाणी सारे गांव में फैल गयी। मुझपर प्रेम करनेवाले लोग सिहर गये। पंडाल की ओर भागे आये। भारी भीड़।

शाम का पहरा समाप्त हुआ। रखवालों के रखवाली में मैं कुएँ में उतरा। खूब तैरा।

रात कीर्तन में भीड़, न भूतो. . . . . . . कीर्तन के लिये अभंग लिया ॉ ्ं सब तरह से हरि सहायक सखा हो गया।

हो गई कल्पलता, लता अंगना की॥

कीर्तन का प्रारंभ ऐसा किया। "शाम उलट चुकी है अभी मैं जीवित हूँ। एक भी नींबू मेरे सीने पर लगा नहीं। एक भी सुई मेरे जीभ में चुभी नहीं।"

रात दो बजे तक कीर्तन हुआ। कीर्तन के बाद वकील साहब मेरे धुनी के पास आकर बोले -

"महाराज आज सत्पक्ष की विजय हुई।"

मैंने कहा "वह तो हमेशा ही होती रही है।"

बाबा शाम को आनेवाले थे। उसके पहली रात का मेरा अंतिम कीर्तन। दूसरे दिन सप्ता समाप्त होना था। इसी कीर्तन में मैंने कहा -

"कल गोपाल काला है। श्रीकृष्ण ने जमुना तीर पर गोपालों के साथ दही दूध इकट्ठा कर "काला" किया था। उसके स्मरण के रुप में कल सुबह कीर्तन होगा। साथ में इसीलिये थोड़ा-थोड़ा दूध दही लाइयेगा जी।"

सुबह पहले एक भगोना रखा गया। इतना दही-दूध आया कि वह भर गया। फिर एक टब रखा। वहा भी लबालब हो गया। "काला" के कीर्तन के लिये खड़ा हुआ। अभंग लिया था

चलाबाई पांडुरंग पाहू वाळवंटी
मांडियेला काला भवती गोपाळाची दाटी
आनंदे केवळ देती एकामुखी एक
न म्हणती सान थोर अवघे सकळिक

(खाल बाल इकट्ठा हुए हैं जमुनातीर पर। दूध दही सब एक कर काला किया है छोटे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

बड़े सब एक दूसरे को कौर दे रहे हैं - आओ उन्हें देखने चले)

आदमी पर आदमी चढ़ा चला आ रहा था। किसी को किसी की बात बात सुनाई नहीं दे रही थी। उधर भंडारे में बोरियों पर बोरियाँ गिर रही थी। तेल घी के ड़िब्बे, गुड़ की भेलियाँ, सब्जियाँ मानो एक पहाड़ रचा जा रहा हो। प्रबंधको के मुँह में फेन आने लगा था।

मेरा कीर्तन चल ही रहा था। सामने एक मटकी छीके पर टंगी थी कीर्तन के अंत में अभंग गाया

छीका लगा दूरपर
मैं चढ़ूँ
तीन की पीठ पर।

दोचार लड़के घुटने मोड़कर नीचे बैठे। उनकी पीठ पर चढ़कर मैं छींके में टंगी मटकी में से मलाई निकाल-निकाल चारों ओर फेंकने लगा। और भीड़ टूटी हम पर। मैं गिरा। लतियाया गया। बड़ी कठिनाई से बाहर निकाला मुझे। घायल हालत में लाकर धुनी के पास लिटाया। वकील साहब और व्यवस्थापक सब चिंतित। सिर पर हाथ धरे बैठ गये मेरे पास।

सात दिन निरंतर बारह-बारह घंटे "प ह रा" दिया था। फिर हर रोज रात को चार पाँच घंटे कीर्तन भी किया था। इस अपार कष्ट से मेरा शरीर बिलकुल टूट गया था। उसमें और सात दिन का उपवास। शरीर में उष्णता बढ़ गई।

बीती रात आँखों पर दूध की पट्टियाँ रख सोया था। केवल मन के भरोसे ही मैं दौड़ भाग रहा था।

तिसपर मेरी चटनी बनी थी। बेहोशी छा गई थी कुछ देर तक तो। होश में आया तो देखा व्यवस्थापक मंडली को मुझपर उपचार करते। उठ बैठा और साश्चर्य पूछा -

"क्या हो गया - क्या कर रहे हैं आप?"

"बात न करें कृपाा कर। केवल पडे रहें।" संयुक्त स्वर में उन्होंने कहा

शाम को बाबा आनेवाले थे। तब तक कितने ही काम करने को पड़े थे और ये मुझे कह रहे हैं आप चुपचाप पड़े रहें।

किसी ने शंकित स्वर में कहा - परसों उस महिला ने इनपर मूठ मारी थी उसके कारण____।"

तड़ाक उठकर खड़ा हो गया। गुस्से में बोला "तुम सब अपने-अपने काम करो जी। मुझे कुछ भी नहीं हुआ है। सप्ता पार होने तक कुछ होनेवाला भी नहीं है। जाइये कृपाकर।"

और मैंने उन्हें वहाँ से भगा दिया। एक मारवाड़ी महिला का मुझपर बड़ा स्नेह था वह आँसू बहाती मेरे पास बैठी थी।

उससे पूछा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"माताजी क्यों रो रहीं हैं?"

सुबकते हुए वह बोली। आप इतने संकअ में से गुजरे और फिर काम में जुतने निकले हो।"मैंने कहा

"ऐसा देखो माताजी यह शरीर अगर तब भक्त गणों के पैरों तले कुचला जाता तो मेरे जैसा भाग्यवान कोई और नहीं था। पर मुझे कुछ हुआ नहीं। अच्छा भला खड़ा हूँ। मरे गुरुदेव शाम को आयेंगे उन्होंने अगर मुझे आराम करते हुए देख लिया तो उनकी नजरों से सदा के लिये गिर जाऊँगा। ऐसा कर्महीन आपको अच्छा लगूँगा?"

बुढ़िया आँसू पोछते हुए बोली

"सच है बेटा।"

"तो अम्मा ऐसा आर्शीवाद दो कि शरीर काम करते-करते गिरे।"

रसोड़े की तरफ हो आया। वहाँ पूरी तैयारी थी। बाबा कीर्तन को खड़े होते ही वे रसोई तैयार करनेवाले थे। मुझसे बोले

"निश्चित रहो जी महाराज।"

कीर्तन के स्थानपर जाकर बैठ गया। आँखे जल रही थी। देह दुख रही थी। भजन शुरु हो गया बाबा आये। कीर्तन हुआ और मैं सारे समय ऊँघता रहा।

बाबा को जिस बगीची में सोने के लिये स्थान बनाया था वहाँ हम सब पहुँचे। बाबा धुनी सेंक रहे थे। सारे काम का झाड़ा उनको दिया। पीठ ठोकते हुए बोले।

"अबतक कष्ठ किये वैसा ही कल और करना। नहीं तो सारा किया कराया मिट्टी हो जायेगा।" मुझे वहाँ बैठने भी न दिया। वकील साहब के साथ पंडाल में लौटा तो वकील साहब बोले

"महाराज आजतक आपसे कुछ नहीं कहा आज एक बात कहनी हैं।"

"क्या?"

"बाबा सोये हैं आप भी घंटे भर आराम कर लीजिये।"

मैंने उनकी बात माल ली और वहीं सो गया।

उठा तो बाबा की घनगर्जना से। वे मैदान में सोये आदमियों को उठा रहे थे। सरा मैदान साफ करना था। वैसे ही उनके साथ जुत गया। मैदान साफ करना था पंगत बैठानी थी।

परभणी के आदमी अनुभवी और मेहनती और फिर बाबा जैसा जानाबूझा नेता। कहीं कुछ भी कमी बेसी न रही। सब बढ़िया रहा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बाबा की गाड़ी शाम छह की थी। साढ़े चार पर वे निकले मुझसे बोले। भाड़ा खर्ची लेकर हिसाब कर आधे घंटे में स्टेशन पहूँचों।

सब हिसाब तैयार था। बाकी बचा खुचा अनाज सामान वहीं के वहीं बेचकर नगदी लेकर मैं स्टेशन की ओर चला।

पीछे बड़ा समुदाय सारे भाव विह्वल। मुझे बांबा के साथ ही परभणी छोड़ जाना था। रास्ता चलते लोगों का सद्भाव याद आ रहा था छोड़ जाते मेरा मन भी व्याकुल था। इतना थका था कि जहाँ हूँ वहीं बैठ जाऊँ।

स्टेशन पहुँचा। समुदाय साथ। तो स्टेशन पर एक मारवाड़ी अम्मा दस बीस सखियों को लिये बाबा को घेरे थी। मारवाड़ी अम्मां का दिल मेरे लिए बहुत टूटता रहा। यह मैंने देखा था। बाबा को वह कह रही थी।

"बाबा गोपाळमहाराज कू एक दिन यहीं राखो।

बाबाने उसकी बात मान ली। दूसरे दिन मुझे मारवाड़ी अम्मा के यहाँ भोजन पर निमंत्रण था।

दूसरे दिन दोपहर मैं मारवाड़ी अम्मा के यहाँ पहुँचा। साथ वही भीड़। बड़ी कठिनाई से दूर हुई। बुढ़िया की आँखों से आँसू झरने लगे। मुझे पेट से सटाये वह गाने लगी-

-आज हरि आयो विदूर घर पावणों।

भोजन के लिए उसने बहुत कुछ बनाया था। थोड़ा थोड़ा सब खाया। भोजन कर निकलने लगा तो उसने एक पोटली मेरे हाथ पर रखी। बोली पच्चीस रुपये हैं। लड़के के कमाये नहीं हैं। मेरे आदमी ने मेरे लिये मरते समय जो रकम छोड़ी है उसमें से हैं इसे रख लो।

मैंने पूछा-मैं लंगोटीवाला इसका क्या करुँ? कहाँ रखूँ?

कीर्तन में तुमने कहा था तुम्हें ज्ञानेश्वरी खरीदनी हैं इसकी ज्ञानेश्वरी खरीद लो, उसने कहा

रात के कीर्तन में अभंग लिया

हम तो जाते अपने गाँव
सबको राम राम राम
आगे कैसा आना जाना
सभी बातों का ठहर जाना

कीर्तन में अपार रंग भर गया। वैसा आनंद फिर नहीं आया।

मुगलाई में स्वच्छंद घूम रहा था। साथ दो सप्ते करने का लौकिक था। लोगों का

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रेम मिल रहा था। कीर्तन बड़े रंगते थे। कुछ फीकें भी रह जाते थे। परभणी बार बार याद हो आती।

लगता फिर वहीं जाऊँ। वहाँ के वृद्ध, तरुण, स्त्री-पुरुषों के प्रेम वर्षा में नहाने। बार बार मेरे मन में वह लोभ निर्माण होता। बार बार मैं उस लोभ का परदा फ़ाड़ उसे चारो तरफ फेंकता जाता। कबीर याद करता-

मन गया तो जाने दो मत जाने दे शरीर
नहीं खेचेगी कमान तो कहाँ से छूटेगा तीर

शरीर को काबू में रखने के लिये क्या किया जावे। विचार करते-करते थक जाता।

कपड़ा त्यागा। केवल लंगोटी पहनी। इन्द्रिय छेदा। भीख मांगकर खाता। गांव में कहीं सोता नहीं। जंगल में सोता हूँ। पास में किसी को आने देता नहीं। पैर पड़ने भी नहीं देता। और क्या किया जाये। बार-बार यह मन चलित क्यों होता है?, नहीं जाना चाहिये वहाँ क्यों जाता है? नहीं करना चाहिये उसका साथ क्योंकर करता है। कितने ही बार इसको समझाया बुझाया। राजा बेटा कहा पर फिर भी नहीं माने तो। तो फिर इसे दंड़ित करें।

ऐसा लगने लगा कि ऐसे नहीं मानेगा यह, इसकी तो एकमात्र दवा दंड ही है। इसे तो दंडित ही करना होगा।

ऐसे में एक दिन रेल के किसी स्टेशनपर देखे कुछ कैदी। उनके साथ के सिपाही उनको कहीं ले जा रहे थे। उसमें एक काले स्याह पहाड़ से तगड़े कैदी के पैर में बेड़ियाँ थीं। दो-दो लोहे के छल्ले। उन छल्लों में अटकायी गयी जंजीरें उपर कमर के पास बंधी थीं।

मन में आया शरीर को दंड़ित करने का यह मार्ग उत्तम है। इससे रात दिन यातना सहन करनी पड़ेगी। मन इधर-उधर भागने लगते ही उसे समझाया जा सकेगा। देख रे बदमाश, पैर में पड़ी बेड़ी याद है ना।

एक गाँव में गाड़िया लोहारों का ड़ेरा पड़ा था। उस गाँव जान बूझकर दो तीन कीर्तन किये। उस इलाके में मुझे लोग एक भला कीर्तनकार साधू जानने, पहचानने लगे।

एक सुबह उठा और गाड़िया लोहर के पाल के सामने जाकर बैठा उसे कहा

"राम राम लोहारजी।"

कीर्तनवाला महाराज अपने पाल के सामने आकर पालथी मारकर बैठा देख उसे बड़ा संतोष हुआ। वह हाथ जोड़कर बोला

"क्या सेवा करुँ महाराज आपकी?"

"मुझे एक बेड़ी बनाकर दे दे।"

चकित वह मेरी तरफ देखने लगा बोला-

"बेड़ी काहे के लिये?"

उसे कहा- "तू बना दे तो सही।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उसने छड़ों के कुछ टुकड़े निकाले। उसमें से एक अच्छी मुटाई का छड़ छांट कर मैंने कहा - "इसकी बना।"

किस के पैर में पहननी हैं।

"फिर बताऊँगा।"

उसने छड़ भट्टी में खोसी और उसकी घरवाली धौंकनी की जंज़ीर खीचने लगी।

मैंने कहा ला मुझे दे।

वह संकोच करने लगी। नहीं-नहीं कहने लगी। जोर दे देकर उसके हाथ से वह जंजीर ले ली और चलाने लगा।

इन सारी कलाओं के सम्बन्ध में बचपन से ही बड़ा आकर्षण था। लुहार गरम लोहा कैसे ठोकता-मोड़ता है। यह देखना, देखते ही रहना बड़ा भला लगता। लुहार ही नहीं सुनार, दर्जी, चमार सब के ही काम देखते रहना अच्छा लगता था। सुनार छोड़ सब के काम देखे भी। किसी सुनार ने जरुर मुझे अपने पास बैठने न दिया। उसे लगता हो यह कोई चीज लेकर उड़ गया तो।

लुहार ने गरम छड़ ठोंकपीटकर नवाई। दोनो और को चपटे से मुँह बनाये। उनमें छेद किये कील ठोकने के लिए। सब हो जाने पर उसने पूछा-

"अब इसका क्या करना?"

तुरन्त बायां पैर उसके सामने किया और कहा "ठोक दे इसमें।"

अपने गाल पर थप्पड़ मारते हुए वह पीछे हट गया बोला-

"महाराज लोग मुझ गरीब का आल-पाल जला देंगे।"

"नहीं बेटा तू मेरी बात मान। मैंने मनौती मानी है उसे मुझे पूरा करना है।"

तबतक पाल के आसपास दसपांच आदमी इकट्ठा हो ही गये थे। यह महराज यहाँ क्या करता है यह देखने के लिये। मैंने हाँकी हुई मनौती की गप उन्हें पट गई। वे कहने लगे मनौती है तो फिर तो बेड़ी ड़ालनी ही पड़ेगी।

तब वह तैयार हो गया। उसने बेड़ी का मुँह बड़ा किया। वह मेरे पैर में अटकायी। कील ड़ालकर ठोक दी।

वह एक अलंकार ही हो गया। लेकिन जल्दी ही ध्यान में आया कि यह अलंकार काट रहा है फिर उसे एक सुतली से बांधा और वह करधनी में अटकाली।

जिला याद नहीं पर एक जगह बारह गांव की सीमाएँ एक जगह आ मिली है। वहाँ पर एक हनुमान स्थापित हैं। उस हनुमान की बड़ी प्रसिद्धि।

कुशाबा तनपुरे नाम का एक युवा बाबा का चेला। बड़े बड़े नियम थे उसके। पर हम जैसा स्वांग उसने नहीं किया था। कुर्ता धोती पहनता साथ एक पीतल का लोटा रखता। इस युवा तनपुरे महाराज ने उस बारह गांव की सीमा के हनुमान पर सप्ता आयोजित

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

किया।

हम दो चार चेले बाबा के साथ उस सप्ते के लिये गये। वहाँ का नजारा देखा तो चकित हो गये। सैकड़ो बोरी अनाज वहाँ इकट्ठा। बहुत विशाल मंडप। सारा वैभव दर्शनीय। और आदमी उनका तो कोई पार ही नहीं जैसे। आदमी ही आदमी चारो ओर। कमसे कम लाख सवा लाख आदमी वहाँ होगा। इतनी बड़ी जगह थी पर आदमियों से खचाखच भरी थी। रात को कीर्तन के लिये सैकड़ो प्रेट्रोमैक्स बत्तियाँ लगी थीं। और उन बत्तियों के पास आदमी इकट्ठे थे।

प्रश्न था कीर्तन कैसे हो? तब लाउडस्पीकर नहीं थे। फिर बाबा ने एक तरकीब की। पांच सात जगह पर कीर्तन के फड़ जमाये। हम में से हर एक को उन फड़ों पर कीर्तन करने को कहा। और वे हर एक फड़ पर घूमते हुए कीर्तन करने लगे। हम पूरे जोर से चिल्ला-चिल्लाकर कीर्तन करते रहे। भजन कराते रहे। पर सब हार गये। वैसी हार बाबा के कीर्तन में शायद ही कभी हुई हो।

रातभर हम गला फाड़ते रहे। भोर होते ही बाबा आदमियों को मैदान के बाहर निकालने लगे। ये अपरंपार आदमी इनको सबको खिलाना तो पहले मैदान साफ करना। पर आदमी जाये तो जाये भी कहाँ। हम लाठियाँ चलाते रहे। बड़े ही कठिनाई से मैदान खाली हो पाया। फिर पत्तलें बिछायीं गई। लोगों को बिठाया। अब शुरुवात करनी थी परोसने की तो मैदान के दूसरे छोर से बड़ा हल्ला गुल्ला सुनाई देने लगा। बाबा उस तरफ दौड़कर गये। लोगो को पूछा- 'क्या हुवा? क्या बात हैं?'

गुस्से से लाल दस बारह बड़े ठाठवाले आदमी आगे आये।

बाबा से बोले "जे हमारे साथ बैठकर खाना खायेंगे?"

बाबा ने आश्चर्य से पूछा-

"क्यों जी क्यों?"

"अरे ये महार-भंगी हमारे पंगत में।"

बाबा की मुद्रापर क्रोध उभर आया। उन्होंने गर्जना कर पूछा

"क्यों जी मुसुनमान पुलिस आये खाने को तो उनको भी उठाओगे क्या?"

"उनकी बात अलग हैं।"

"माने वे पीठपर लाते मारते हैं इसलिये उनकी बात निराली।"

"मुझे बताओ आप इन्हें खाने देते या नहीं।"

"हमारे साथ तो बिलकुल ही नहीं।"

बाबा ने निश्चय किया मन ही मन और बोले

"ठीक है तो हमको भी यहाँ रहना नहीं। चलो जी सारे आदमी।"

हम सब अपने-अपने काम वहीं ड़ाल बाबा के पीछे चल दिये। सारा मजा किरकिरा हो गया। आगे बाबा उनके पीछे हम। भूखे प्यासे-

चार भले लोग दौड़कर आये बोले

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"ऐसा न करिये। बहुत कष्ट कर ये सब रचा है उसकी ऐसी मिट्टी न करो।"

बाबा बोले

"उन बेचारों को भरी पत्तल से उठाया उनको साथ खिलाते क्या?"

"जरुर खिलायेंगे। सबके बाद उनको भी खिलायेंगे।"

बाबा दहाड़ते हुए उन महारों से बोले

"ससुरो हो पेट में काटे क्यों नहीं भर लेते तुम। ये इतना लतिया रहे हैं फिर भी तुम नीचे मुंडी किये इनके परोसने के लिये रुकोगे चलो हम भी भूखे जा रहे हैं तुम भी चलो हमारे साथ। यहाँ अब रहना नहीं।"

बिचारा तनपुरे महाराज दौड़ता हुआ आया। नीचे मुंडी किये खड़ा रहा। बाबा ने उसकी पीठपर हाथ रख कहा

"तुम काहेको उदास होते हो?"

"मैं भी आता हूँ, आपके साथ।"

"हमारे साथ और यहाँ कुत्ते घुसेंगे रसोई में।"

"आप भोजन तो कर लेते।"

"नहीं अब यहाँ हम एक बूँद पानी भी नहीं लेंगे।"

महार, भंगियों का अपमान किया गया इसलिये वह बाबा बिना खाये चला उसके पीछे हम भी पैर घसीटते हुए।

निजामी राज्य की ही एक बात। सप्ता का आयोजन था एक गाँव में। सप्ते के लिये बाबा के साथ हम उनके चार पांच चेले भी थे। हम वहाँ पहुँचे और खबर आई कि निजामी पुलिस घोडों पर आ रही है। वातावरण में आतंक छा गया। हम सब एक पेड़ तले खड़े हो गये। बाबा इकट्ठा हुए लोगों से बातें करने लगे। उन्हें धीरज देने लगे।

घुड़सवारों की टुकड़ी आ पहुँची सचमुच। हवालदार घोड़े से उतरा बड़े गरुर से

बाबा उसके आगे चले गये, हाथ जोड़ बोले-क्या हुकुम है सरकार।

हवलदार अटपटा गया। वह सोचकर आया होगा। डड़े बरसाने की बात। गिरफ्तार करने की बात। और यहाँ कीर्तनकारों का पातशाह सामने खड़ा हो झुककर अदब से पूछ रहा है- "क्या हुक्म है?"

फिर भी कुछ रोब से बोला

"भजन वजन नहीं होगा।"

"क्यों?" बाबा ने पूछा

"मुमानियत है-आला हजरत का हुक्म है।"

"खुद आला हजरत का।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"हाँ उन्हीं का समझना चाहिये।"

"अच्छा तो भजनवजन नहीं करेंगे।" समूह की तरफ मुँह कर के बाबा बोले- "सुना आपने आला हजरत का हुकुम है भजन कीर्तन नहीं करना।" फिर अधिकारी की तरफ मुँह फेरकर बाबा बोले

"अच्छा दो चार बातें पूछूँ?"

"हाँ पूछो।"

"आप इबादत तो करते ही होंगे।"

"करते है।"

"तब तो नमाज भी पढ़ते ही होंगे।"

"हाँ पढ़ते हैं।"

"क्या कहते हैं नमाज में कि अल्लामियाँ सबको सुखी रख।"

"नहीं कहते-अल्लामियाँ एक है।"

"वा खूब कहीं। अल्ला मियाँ अकेला है। सुना आप लोगों ने ईश्वर एक है। नहीं तो आप इस उस पत्थर को पूजते रहते हो।"

"अच्छा एक और अर्जी-क्या ये सब अल्लामियाँ ने बनाया है ये पहाड़ ये आसमान।"

"हाँ उसी ने बनाया है।"

"सुनोजी ये सब उसी ईश्वर ने बनाया है।"

"अच्छा ये तो बताइये क्या अल्लामियाँ मुसलमानों का अलग और हिन्दुओं का अलग है।"

वह अधिकारी अपनी कही बात के जाल में था-बोला

"नहीं सभी का एक ही है।"

"वाह खूब जी। सुनिये जी। सबका ईश्वर एक ही है।"

"अच्छा एक बात और। अल्लामियाँ का हुक्म क्या है? कि दूसरों के साथ दुष्मनी करो।"

"नहीं तो।"

"सुनिये भाईयों ईश्वर का आदेश हैं सब पर प्रेम करो।"

आधे घंटे से अधिक ऐसे प्रश्नोत्तर चलते रहे। अधिकारी को प्रश्न करना उसका दिया उत्तर वहाँ इकट्ठे बड़े भारी समुदाय को सुनाना - थोड़ा घुमा के।

फिर बाबा ने झुककर अधिकारी से कहा

आपका बड़ा रहम रहा। फिर सबको कहा-हो गया ना कीर्तन अब सब अपने-अपने घर जाओ शांति से।

ऐसा बिना भजन का कीर्तन अधिकारी की साक्ष्य में सम्पन्न हुआ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बीच में कहीं किसी स्टेश्न पर बाबा से मिलना हुआ। मेरा बेड़ी पड़ा स्वाँग उन्होंने देखा मुस्कराये - फिर कहा-

"क्यों रे बाबू तुझे वह कहानी मालूम है रे!"

"कौन सी बाबा?"

"एक पुरवैय्या था। उधर बिहार देस का। बड़ा छूआछूत माननेवाला रसोई बनाता तो पहिले चौका लीपता। एक बार वह नदी नहा आया। फिर उसने चौका लीपा और फिर बैठा रसोई बनाने। बायाँ हाथ चौके के बाहर वह किये हुए था।" एक ही हाथ से रसोई बना रहा था। किसी ने इस विचित्रता को देखा पूछा-

"बायाँ हाथ चौके के बाहर क्यों रखा है भाई?"

वह बोला -"वह गंदा काम करता है। मैला धोता है। इसीलिये उसे बाहर धरा है।"

पूछनेवाले को हंसी आ गई उसने कहा

"पण्डतजी गंदा काम करनेवाला हाथ तो बाहर रखा है आपने। ये बहुत अच्छा किया। लेकिन जहाँ मैला पैदा होता है वह पिटारा तुम्हारा पेट तो चौके के अंदर ही धरा है।"

बाबू समझ्या क्या? शरीर को शासन तो करना ही चाहिये। लेकिन उसके साथ ही मन को भी रास्ते पर लाना चाहिये। नहीं तो मोरी में डांट और दिल्ली दरवाजा खुला।

अब बहुत हो गया शरीर को दंड अब यह बेड़ी निकाल ड़ालो।

ऐसा ही एक सप्ता। जाड़े के दिन। ठंड़ बहुत। शाम से ही ओस पड़नी चालू हो जाती।

मैं बिलकुल उघाड़ा। जाड़े से शरीर वैसे ही चिरा-चिरा। शरीर की तरह से पैरों की भिवाई भी बुरी फटी। लंगड़ाना पड़ता था। भिवाई से खून रिसता था। और फिर उस दिन तो जाड़ा जान लेवा।

बाबा का कीर्तन हो रहा था। मैं झांजे लिये। चारों तरफ भीड़ उपर प्रेट्रोमेक्स की बत्तियाँ जलती हुई। मैं भजन भी जी तोड़ कर रहा था। इससे शरीर में उष्णता भरी हुई थी। कीर्तन सम्पन्न होने तक ठंड का कडाका अनुभव नहीं हुआ।

बाबा के साथ हम सब एक बगिया में सोने गये। कीर्तन के बाद। मैं बिछाता ओढ़ता नहीं। यह बाबा को मालूम था इसलिये उन्होंने पहिले लकड़ी के चार छह ड़ूँड मंगवाये। फिर दूसरों के लिये बिछावन ओढ़ावन मंगवाया।

लकड़ी सुलगी - चेती। मैं उसी के पास जगह साफ कर लुढ़क गया। दूसरी तरफ बाबा और दूसरे लोग सोये।

हाथ पैर पेट के पास किये पड़ा था। एक बार पेट सेकता तो पीठ ठंडा जाती। फिर पापड़ पलटता। दिन भर खूप थका था। इसलिये नींद आँखों की कोर पर ही टिकी हुई। परन्तु ठंड का हल्ला इतना कि पूछो नहीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सब सो गये। सबको नींद लग गई। मुझे नींद नहीं। भस्त्रिका कर के देखी। हमेशा ठंड में इस उपाय से ठंड कम हो जाती थी। परन्तु उस दिन कोई उपाय काम नहीं आ रहा था।

दो घंटे हो गये। चार साढ़े चार का समय हो गया। आकाश से और ओस पड़नी चालू हुई। मैं जैसे उसका आकाश से गिरना और जमीन पर पसरना दोनों ही प्रत्यक्ष अनुभव कर रहा था।

धीरे-धीरे ठंडक ने मुझे पूरी तरह जकड़ लिया। लकड़ियाँ बुझ गई थी। मैं सारा का सारा गीला हो गया था।

दाँत बजने लगे। चिरे शरीर में से जैसे ठंड अंदर घुस रही थी। माँस ही नहीं वह मज्जा तक पहुँच गयी। हड्डी के अंदर घुसकर वहाँ का जीवन तत्व भी जैसे उसने जमा दिया हो ऐसी स्थिति आ गई।

प्रज्ञा खोने को हो रही थी। शरीर स्वाधीन रखने के लिए आखिरी लड़ाई लड़ रहा था। लगता था सारे प्रयास बेकार हैं। दांत का तार यंत्र जोर-जोर से बजने लगा। हाथ पांव को हिचकी जैसे झटके से लगने लगे। ऐसे में लगा

बाबा मेरे पास आकर बैठे हैं। उनकी आवाज सुनाई दी-

"बाबू रे।"

न जाने मैंने उत्तर दिया या नहीं फिर सुना

"मेरी सुनेगा क्या?"

मुंडी बड़े कष्ट से हिलायी। उन्होंने बाँह पकड़कर उठाया। पैर घसीटता मैं उनके पीछे चला। अपने बिछावन पर वे मुझे ले गये। मुझे उसपर सुलाया अपना ओढ़ावन मुझे ओढ़ाया। फिर मुझे अपने पेट के पास खींचते हुए बोले

अपने पैर मेरी जांघों के बीच कर ले।

मैंने अपने पैर की लकड़ियाँ उनके जांघों के बीच कठिनाई से ड़ाली और उस स्थिति में मुझे कुछ ही देर में नींद आ गई।

माँ की गोद भूल गया हूँ वैसे बचपन कितना ही याद है पर माँ की गोद भूल गया हूँ।

परन्तु उस दिन मुझे जो गोद मिली वह माँ की ही थी।

भिवंडी के कोई डाक्टर जोशी प्रतिवर्ष पंढरपुर की यात्रा के समय दवाखाना लगाते थे। बाबा के लिए उनकी भक्ति विशेष। दवाईयाँ भी स्वयं के पैसे से लाते थे। जगह केवल बाबा की। यात्री वहाँ बिना दाम दवा पाते थे। परन्तु आगे बुढ़ापे के कारण आ नहीं पाते थे डाक्टर जोशी। एक दिन बाबा मुझे लेकर भिवंडी गये। बाबा आये तो डाक्टर के घर आनंद ही आनंद। बाबा बोले "आप तो आ नहीं पाते हो अब। आपका

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इलम हमारे बाबू को सिखा दो।"

"बामन है। हमारी चिट्ठी पतरी लिखने का काम करते हैं। होशियार हैं। सब तो इसको आयेगा नहीं पर कुछ तो काम कर ही लेगा। इतने आदमी पंढरपुर आते हैं। बीमार भी पड़ते हैं तो कठिनाई होती है। अस्पताल में जाने तक कुछ साधारण इलाज यह कर ले काफी होगा।"

डाक्टर ने मुझसे पूछा "अंगरेजी समझती है बेटा?"

"थोड़ी बहुत" मैंने कहा।

डाक्टर ने एक पड़ा हुआ टाइम्स उठाया मुझे दिया कहा- "पढ़ो" कितने दिनों बाद अंगरेजी की परीक्षा देनी पड़ रही थी । वह दी। डाक्टर ने मुंडी हिलाई कहा "रहने दो बाबा। थोड़ा बहुत जो आ जायेगा इसे वह सिखा दूँगा।"

पहिले दिन डाक्टर ने अपना दवाखाना साफ करने को कहा।

शायद वे मेरी परीक्षा ले रहे थे। मैंने हर सीसी उठाई जहाँ रखी थी वह जगह और सीसी दोनो साफ की। सब साफ किया अच्छी तरह।

डाक्टर खूष हो गये बोले-

"डाक्टरी विद्या बहुत गहन है। पूरे जीवन धंदा करने के बाद अब मुझे समझने लगा है कि मैंने अपने रोगियों को अधिकतर ठगा ही था। उनकी तबीयत के बारे में मुझे बहुत थोड़ा समझता था।"

"हर शरीर सप्तधातू का अलग-अलग मिश्रण है। माँ के गुणधर्म भी बच्चे के शरीर में जैसे के तैसे उतरते नहीं। ऐसा लगता है कि ईश्वर के घर से बच्चे को एक अलग रसायन ही प्राप्त हुआ है।"

हर व्यक्ति की प्रकृति अलग अलग होती है। हम हर बीमार के लिये अलग-अलग प्रयोग करते रहते हैं। वैसा करना ही पड़ता है। एक की औषधि योजना दूसरे को गुणकारी होगी ही इसका कोई भरोसा नहीं।

मैंने पूछा "डाक्टर साहब एक शंका है।"

"पूछो।"

"फिर ये पेटंट दवाओं का क्या?"

"तुम्हारा प्रश्न सही है एक सीमा तक ही उन औषधियों का उपयोग होता है।"

ऐसी बातचीत होती रही फिर बोले आज इतना ही बहुत है।

कुछ बीमार ऐसे कि इसी डाक्टर के सिवाय किसी दूसरे से दवाई लेते ही नहीं। उनका

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

कहना था सद्वैद्य के हाथों मरना असदवैद्य के हाथों जीने से भला।

बीमारों की परीक्षा के समय डाक्टर मुझे पास ही खड़ा रखते। रोगी साशंक होता। डाक्टर कहते इसके वेश की तरफ मत देखो यह मेरा विद्यार्थी है।

रोग की नाड़ी, सांस, तापमान आँखों का रंग, चर्या को देख रोग का अनुमान लगाने की कई बातें समझाने की खटपट डाक्टर ने की।

एक युवती पेट दर्द की शिकायत लेकर आई डाक्टर ने उसका पेट हाथ से दबा-दबा देखा मुझे कहा

"इधर आ यह दबाकर देख।"

संकोच से छोटा हो गया, डाक्टर बोले

"देख लड़के यह इस लड़की का पेट नहीं है रोग का घर है। इसपर गौर कर। फिर तुम्हें संकोच नहीं होगा। आ। देख।"

इस तरह डाक्टर ने मुझे बहुत कुछ सिखाया। सिख़ाने का प्रयास किया मैं अपात्र निकला कुछ भी ले नहीं सका।

आठ एक दिन इस तरह उनसे सीखने का प्रयास किया। उन्होंने अंतिम सीख दी। प्राथमिक उपचार ही तू किया कर उसके बाद रोगी को डाक्टर के यहाँ ही भेजा कर। पेटंट दवाईयाँ, घाव बांधने की सामग्री तुम्हारे लिये काफी है।

डाक्टर को नमस्कार किया और ऐसा मैं सफेद मिसरी, सालं मिसरी छाप बैदू होकर पंढरपुर चल दिया।

ऐसा सोचा कि औषधि योजना का खर्च बाबा से नहीं लूँ। कीर्तन के अंत में इसलिये वह योजना समझाकर लोगों को कही। यह भी कहा कि उनके हर पैसे का पंढरपुर जाते वारकरियों के रोग निवारण के लिए उपयोग किया जायेगा।

सौ पांचसौ रुपये इकट्ठा हुए। सोचा कि आलंदी से पंढरी जो पालखी जाती है उसके साथ हजारो वारकरी होते हैं। बीमार पड़ने पर औषध उपचार की कोई व्यवस्था नहीं रहती। इसलिए एक औषधि पेटी उस यात्रा के साथ जाती एक बैलगाड़ी में रखने की योजना बनाई।

उस समय कुछ औषधि कंपनियों की पेटियाँ बाजार में मिलती थी। दो एक खरीद ली। सिवाय पोटेशियम परमैंग्नेट, व्हेसलिन, बोरिक पावडर, आयोडिन, बेंजीन, कपास, कपड़ा, पट्टियाँ ऐसी सारी सामग्री भी खरीदी।

एक पटल भी बनवाया-विज्ञापन के लिये और वह उस बैलगाड़ी पर लगाया। जिसमें पेटी रखी थी। और जिसके साथ मैं चल रहा था। इस डागदरी व्यवसाय में मेरा अशोभनीय वेश बाधक हैं इसपर कभी गौर ही नहीं किया। इसलिये रोगियों ने स्वाभाविक सोचा लंगोटीवाले वैदू की दवाई से हरिनाम पर भरोसा करना ज्यादा अच्छा।काम कुछ बना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

नहीं। चोट-चपेट लगे कुछ एक लोगों की मलम पट्टी की पर उनको दी हुई आराम करने की सलाह पर वे बिगड़ गये।

पट्टी खोलकर फेंक दी। आँखे तरेरकर बोले "अरे नासमिटे वारी बंद करने को कहता है- चूल्हे में डाल वह ड़िब्बा दवाखाना।"

बाबा की धर्मशालाओं में लूले अंधे महारोगियों के लिए सदावर्त चला करते। वहीं मेरा सम्बन्ध महारोगियों से हुआ।

शुरुवात में महारोगी रास्ते पर भीक माँगने कभी नहीं आते। एक तो उनको अपने रोग की पूरी कल्पना ही नहीं होती।वह कल्पना हो जाने पर वह शरम से अधमरा हो जाता हैं। यहाँ वहाँ की दवादारु करने लगता है। गंवार नीमहकीम झाड़फूक वालों को शरण जाता है।

शायद ही कोई ठीक होता है। अधिकतर लोगों का रोग सही उपचार के अभाव में बढ़ने लगता है। अंगुलियाँ झड़ने लगती हैं। चलना फिरना कठिन हो जाता है। रिश्तेदार घर से निकाल देते हैं। फिर वह आलंदी पंढरपुर के रास्ते चल पड़ता है। अपना रोग वह वहाँ उदारता से बांटता है। बाबा के सदावर्त में भोजन के लिए आनेवाले सब लोग इसी श्रेणी के होते हैं। उन्हें हाथ से पकड़ना पड़ता।भोजन की पंगत में ठीक बैठाना पड़ता। आँखे बुझ जाने के कारण इधर-उधर देखते उनके हाथ ठीक अन्नतक पहुँचाने पड़ते। भोजन हो जाने के बाद उन्हें पंगत में से उठाकर रास्ते पर कर देना पड़ता।

इस काम की घृणा लगती। मैं तो टालता ही था। उलटी सी होने को होती। फिर यह भी एक परीक्षा ही थी और परीक्षक बहुत कड़ा था। उत्तम गुणों से उत्तीर्ण होना पड़ता नहीं तो वाक्ताड़न मिलता।

एक बार स्वयं बाबा ने यह कांटा समूल निकाल ड़ाला।

यूँ ही बाबा के संग कोई बात करते इन्द्रायणी के किनारे-किनारे घूम रहा था। बाबा की नजर में एक महारोगी दिखा। झाड़ी झुरमुट में अपने को छिपाये था वह। बाबा उसके सामने जा खड़े हो गये। बुझी आँखें और झडी अंगुलियों का वह महारोगी अंगलियों के खूँट से शरीर खुजला रहा था। बाबा ने पूछा

"क्या कर रहे हो?"

बाबा का भारी स्वर उसने पहचाना। मुँह घुमा विगलित स्वर में बोला "कुछ नहीं बाबा।"

"भोजन हुआ।"

"हाँ।"

उसके शरीर से आती दुर्गन्धि को सूँघकर बाबा ने पूछा

"क्यों जी नहाते नहीं हो क्या?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

असहायता से हाथ उपर उठाकर उसने कहा

"कैसे करुँ बाबा ?"

"हम नहलाते हैं आते हो।"

"हाँ।" जी वह तुरन्त बोला।

बाबा ने उसको हाथ से पकड़ा और धीरे-धीरे उसे नदी की ओर ले चले। मैं स्तब्ध होकर एक टक देखता रहा। क्या करुँ कुछ भी न सूझे। महारोगी के लिए मेरे मन में घृणा थी पर यहाँ तो मेरा गुरु ही एक महारोगी को नहलाने के लिए इन्द्रायणी की ओर ले जा रहा था। मैं भी पीछे हो लिया। विचार शून्य हुआ। बाबा उसे संभाले हुए थे। कह रहे थे।

"आहिस्ते, संभलकर चलिये जी।"

वे प्रवाह तक पहुँचे। बाबा ने उसे एक पत्थर पर बैठाया। उसके क्या वस्त्र थे वे उतारे फिर मेरी ओर देखकर बोले

"सुनते हो साधू बाबा।"

"जी बाबा।"

"तुम नदी का पानी न ड़ालो इनपर - मैं इसे धो लूँ जिससे।"

नदी में जाकर खड़ा हो गया और दोनो हाथों से उलीचने लगा पानी। भैंसपर ड़ालते हैं वैसे। बाबा ने उसका शरीर मुलायम हाथों से रगड़ा। केवल एक पैर छोड़ दिया। वह मजे में बैठा था। हाथ आगे करो कहते ही हाथ आगे करता। मुंडी नीचे करने को कहते ही वह मुंडी नीचे करता। एक देव दुर्लभ अवसर उसे मिला था और वह उसका मनभर उपभोग ले रहा था।

थोड़ी देर बाद बाबा ठहर गये। कमर पर दोनों हाथ रखकर बोले-

"सुनते हो साधू बाबा।"

"जी बाबा।"

"इतना तो हमने किया अब एक पैर रह गया वह आप न धोओ।"

आगे आना ही पड़ा। बाबा ने कहा

"आप धोवो हम पानी ड़ालते जी।"

बाबा ने दोनो हाथों से पानी ड़ाला। मैंने अपनी सांस रोककर ही पैर को हाथ लगाया।

और बात बूझ गई कि इतनी घृणा करने की जरुरत नहीं है अपना शरीर वैसा ही उसका शरीर

फोड़ा हो जाये उसको दबाकर उसका मवाद निकाल देने के बाद जैसा उसका मुँह रहता है वैसा है इसका शरीर। उसी रंग का। दुर्गन्ध थी वह उसके न नहाने की। लेकिन नहाने के बाद वह भी नहीं रही। रोग ने इसके शरीर को पकड़ा अवयव गल गये जरुर पर इसमें इसका कोई दोष नहीं। अपने मन में घृणा इतने देर से थी उसका कोई कारण

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नहीं था।

विदर्भ के मूर्तिजापूर तहसील में बहती है पूर्णा। एक स्थानपर वह अर्धचन्द्राकार घूमकर विरुद्ध दिशा की ओर बहती है। वहाँ उस घूम पर अनादिकाल से एक तीरथ है। ऋणमोचन तीरथ उसका नाम है। पूस माह में वहाँ बड़ी यात्रा होती है। हजारो यात्री आते हैं। पूर्णा में नहाते हैं। उपर तीरपर महादेव हैं। उनपर गीले ही जाकर जल चढ़ाते हैं। ऋणमुक्त होते हैं।

पूर्णा ने ठीक जहाँ मोड़ लिया है उस मोड़ के मैदान में बाबा का पड़ाव पड़ा रहता है। महिनाभर वही मंडप में वीणा का सतत पहरा रहता है। सदावर्त चलता है। अंधों-लूलों के लिए।

पूर्णा तीर की मिट्टी चिकनी काली। यात्री गीले ही उसपर से चलते और भदभद गिरते। बड़ों-बड़ों की फजीहत वहाँ हो जाती थी। बाबा ने वहाँ घाट बनवाया।

एक बात और बाबा भी मूर्तिजापूर तहसील के ही वासी पर उनकी स्थिति घर का जोगी जोगड़ा जैसी नहीं। इसलिए महादेव पर जल चढ़ाने के बाद बाबा का दर्शन, हर यात्री का नियम होता। बाबा का कीर्तन सुने बिना यात्रा पूरी नहीं मानी जाती।

पौष लगता और चारों दिशाओं से पंछी जैसे पके खेत पर उतरें वैसे हम बाबा के चेले चपाटे चारों ओर से यात्रा में आ मिलते। पड़ाव पर हमारे लिये बहुत काम थे।

मैदान साफ करना। रोज उसे झाड़ना, पीने के पानी की टंकिया भरना। रात के लिये प्रेट्रोमेक्स की बत्तियाँ पोछना। उसमें मिट्टी का तेल भरना। उसे सुलगाना। सदावर्त के लिए सब्जियाँ छीलना, काटना। आटा गूँथना। रसोई के लिये लकड़ियाँ काटना, पहरा देना।

सदावर्त में रोज तीन सौ अंधे, लूले, कोढी भोजन करते। यह संख्या बढ़ती रहती। इन सब को पाँत में ला लाकर बैठाना। भोजन पूर्व उनसे भजन करवाना भी काम होते।

अच्युतराव देशपांडे यहाँ नाशिक से आ गये थे। उनकी निगरानी में सारे काम चुपचाप होते रहते। रोज रात को किसी न किसी का कीर्तन होता। यह कीर्तन कौन करेगा यह हम आपस में तय करते थे। बाबा आनेतक बिना झंझट यह सब चलने देना होता था। वैसा चल भी रहा था।

मैं झाडू लगाने में माहिर। इसलिए मैदान की सफाई मैंने अपने जिम्मे ले रखी थी। कितने ही महार, मांग, चमार हमारे गुरुबंधु थे। उनकी सहायता से मैं वह काम करता था। मेरे सिवाय अन्य भी गुरुबंधू वहाँ थे। संपतराव पाटील, रामचन्द्र शेलार, लक्ष्मण धनगर, अभिमान बुवा सारे जटायू बैरागी। उन्हीं का यह सम्मेलन हो जैसे।

बाबा के शुरुवाती चेलों में से थे संपतराव। हमसे वे इसलिए अलग थे कि धोती पहनते, कुर्ता पहनते सिरपर साफी बांधते। बड़ा मिट्ठा आदमी। अव्वल भजन गानेवाला।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विदर्भ में भजन ढोलक पर गाते हैं। भजन मंडली के साथ एक बाँसुरी वादक भी रहता उसे 'पिलमपोवा' कहते हैं। पूरी भजनमंडली खड़ी होकर ही भजन करती। आधा गोल बनाते और फिर तूफान भजन चलता उनका।

विदर्भ का ये भजन प्रकार हमारे लिये हँसी मजाक का विषय होता था। उसमें संपतराव की शैली पर तो हम हंसते-हंसते दोहरे हो जाते। उन्हें परेशान करने में भी बड़ा मजा आता। वे फिर झूठमूठ चिल्लाते-

"काहून हसता बे पोट्टे हो?"

कभी-कभी बे बड़े रंग में आकर भजन करते

बकरी देवपूजा के लिये गई - बकरी देवपूजा के लिये गई

वहाँ से तुलसी खाकर आई - वहाँ से तुलसी खाकर आई

ऊँट देव पूजा के लिये गया - ऊँट देवपूजा के लिये गया

बेलपत्ती चटकर आया - बेलपत्ती चटकर आया।

खूब काम करना, रात को भजन कीर्तन करना, एक दूसरे से मजाक करना ऐसा समय बड़े मजे से कट रहा था।

रोज दो तीन सौ अंधे लूले महारोगी को भोजन कराया जाता रात को कीर्तन होता।

सदावर्त में अंतिम सप्ताह बाबा उन अंधे लूले महारोगियों को कपड़े बरतन बाँटते। इसलिये भीड़ बढ़ती जाती।

एक दिन एक मारवाड़ी ने सदावर्त में बाँटने के लिये बूँदी के लड्डू लाकर दिये। गाय के घी में बने ये बड़े-बड़े।

उस दिन सुबह से ही काम का जोर था। नाश्ता भी नहीं मिला। भागम भाग मची हुई थी। मारवाड़ी की घरवाली अपने हाथ से लड्डू परोस रही थी। वह बीमार थी इसलिये धीरे-धीरे लड्डू परोसे जा रहे थे। टोकरी में लड्डू लिये उसके पीछे लिये मैं बेहद थक गया। उसमें भी लड्डू की मस्त सुगंध ने मुझे विचलित कर दिया।

सबकी पांत हो जाने के बाद हम साधू बैरागियों की पाँत बैठने का नबर आया। ढ़ाई तीन बज गये थे। बाबा उस मारवाड़ी को उसकी गाड़ी तक छोड़ने उसके साथ गये हुए।

अब हम सब एक दूसरे के सामने बैठे हुए। बाबा के लौटने के इन्तजार में। उधर देव मंडप में रखे लड्डूओं की सुगंध लगी भूख की आग में जैसे घी का काम कर रही थी। टोकरी में रखे लड्डूओं को मुँह में ड़ालने के इन्तजार में लड्डूओं पर चर्चा होने लगी। होते-होते एक बिन्दूपर एक साथी ने मुझ से कहा

"गोपाल बुवा सुनो तो।"

"बोलो।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"मैं कहता हूँ कोई चीज अपने हाथ से उठाकर अपने मुँह में ड़ालना पाप है, चोरी है, हैना ?"

"हाँ वह चोरी ही है तुम्हे क्या कहना है ?"

"मैं कह रहा हूँ कि अपने हाथ से उठाकर दूसरे के हाथ में रखने में तो कोई पाप नहीं - चोरी नहीं।"

बिकट बुद्धि की यह बात सुन हम सब सजग हो गये।

"मैंने कहा तुम्हें कहना क्या है साफ-साफ कहो।"

"उसमें कहना ही क्या है - आप मुझे लड्डू दान करो मैं आपको दान करता हूँ।"

युक्ति निर्दोप लगी। सभी उठकर टोकरी के पास गये। एक बार लगा नहीं ये लड्डू नहीं अंगार हैं हाथ लगाओंगे तो हाथ जल जायेंगे। पर भूख से जल चले पेट ने बुद्धि को अलग ही तरह से घुमाया। एक लड्डू उठाकर साथी के हाथपर रखा। उसने दूसरा उठाकर मेरे हाथ पर रखा।

मेरे द्वारा उद्घाटन किये जाने की देर थी शेष सभी लड्डूओं पर टूट पड़े सब ने दान का भोग का आनंद लिया। टोकनी खाली हो गयी।

चार बजे बाबा लौटे आते ही बोले

"चलो जल्दी पांत परोसो भूख लगी है।"

पांतू परोसी गयी बाबा ने पूछा "क्यों जी लड्डू बचे हैं ना"

कोई बोले नहीं सब चुप सन्नाटे में

बाबा ने फिर कहा

"अरे भई लड्डू लावो जल्दी शुरु करें।"

हिम्मत कर किसी ने कहा

"लड्डू खतम हो गये बाबा।"

"-खतम !खतम ! कैसे हो गये ?"

"खाने से खतम हो गये।"

शेर गरज उठा - "किसने खाये ?"

घूम घमाकर कहा गया "अपने आप किसी ने नहीं लिये एक ने दूसरे को दिये।"

"किसने पहले हाथ लगाया ?"

कोई बोला नहीं फिर बाबा ने पूछा "कौन है वह ?"

बकरा कटने को जाये वैसा पैर घसीटते बाबा के सामने जा खड़ा हुआ कान में जैसे उबलता धातु रस ड़ाला जाने लगा

"का जी माहेराज। आपके विरक्ति के जय-जय घोष से तो सारा आसमान भरा जाता

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

था। टाट की लंगोटी, मूँज की करधनी। छल्ला - बेड़ी के बाद भी अकल - बेअकल ही रही। हम तो आ ही रहे थे। हमने भी तो सुबह से कुछ खाया नहीं। तुम्हारे पेट में ऐसी कौनसी आग सुलग रही थी एक लड्डू के लिये ललचा गये।"

नीचे मुंडी किये आँसू बहाता वैसे ही खड़ा रहा। आँसू पोछने का भी होश नहीं रहा। सुनाई दिया-

"चलो निकलो। हमें मुँह मत दिखाओ।"

निकला। देवमंडप में आया। वहाँ देवता के सामने नीचे मुंडी किये बैठा रहा। सब चुप होकर खा रहे थे। कोई भी शब्द नहीं बोल रहा था।

एक साथी मृदंगवादक थे। उनके सामान में चाकू था। धारदार। मुझे मालूम था। उनके सामने में से वह चाकू खोजा। वह लेकर नशा किये आदमी जैसा झूलता चल दिया।

नदी पार कर खेतों में चला गया। चारो ओर अच्छी झाडी, बीच में एक नीम का बड़ा सा पेड़ था उसके नीचे बैठ गया। सोच रहा था चाकू बहुत छोटा है इससे जान तो जायेगी नहीं सीने में अंदर तक जा ही नहीं पायेगा यह फिर-

याद आया कलाई की धमनी काट रक्त बहा सीधे निजधाम पहुँचा जा सकता है और धमनी काटने के लिये यह चाकू बढ़िया है।

नीम की एक बाहर उपर निकली जड़ पर बाँयी कलाई रखी। चाकू घुसाया और घुमाया। पर धमनी नहीं कटी। खून बहने लगा। गुस्सा आ गया। नहीं धमनी काटनी होगी पूरे जोर से। फिर दायाँ हाथ उपर उठाया जोर से घाव करने-तो वह उपर ही किसी ने पकड़ लिया। गुस्से से पीछे मुड़कर देखा तो मेरा साथी लक्ष्मण बुवा।

मुझसे उसका बड़ा लगाव था। पांत छोड़ उठा तबसे वह मुझपर नजर रखे था। मैं चाकू लेकर नदी की ओर चला और उसे कुशंका ने घेरा सब छोड़ वह मेरे पीछे आ गया। मेरे पीछे नदी पार कर आया। झाड़ियों में मुझे खोजता रहा और अंत में उसने मुझे खोज लिया और बचा भी लिया।

हाथ पकड़ मुझे उठाया।मैं अपने को रोकता रहा पर वह मुझे खींच नदी पार ले आया। बाबा के सामने खड़ा कर दिया। मेरे खून से वह भी रंग गया था।

बाबा ने देखा उठकर मेरे पास आये-सीने लगा बोले-

"मूर्ख है क्या रे तू बाबू।"

लक्ष्मण ने बाबा को चाकू दिखाया। मेरे मूर्खता का प्रमाण। बाबा स्नेह भरे बोले

"क्या कर रहे थे बाबू चाकू से।"

-धुमसते हुए कहा- "धमनी काट रहा था।"

"किसलिये ?"

"लड्डू इसी हाथ ने उठाया था।"

मेरे हाथ अपने हाथ में लिये बाबा बोले

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"शरीर को दंड देने से कुछ नहीं होता। मनपर नियंत्रण करना होता है रे।"

तबतक दवाई पट्टी आ गई थी। बाबा ने मुझे मूर्ख कहा। हमारे साथ कई आनंद थे महानंद, निजानंद, भजनानंद

मैंने अपना नाम बदल लिया - उस दिन से स्वयं को मूर्खानंद कहने लगा।

विदर्भ मेरी जन्मभूमि। बालवय के नौ दस वर्ष वहाँ की काली मिट्टी में खेलते कूदते बीते थे। वहाँ की गर्मी, बरसात मेरे लिये परिचित।

अपना जन्मगाँव देखने की इच्छा से एक बार परतवाड़ा के पास से हो आया। परन्तु गाँव के अंदर जाने की हिम्मत नहीं हुई। घर से भागा तब तेरह वर्ष का था अब उसे छह साल हो गये थे। घर में क्या-क्या हुआ इसकी मुझे कोई जानकारी नहीं थी।

पिताजी क्या करते हैं। छोटाभाई किस कक्षा में है? माई का क्या चल रहा है। सारी सारी बातें मन में आ गई पर सबको मन से निकाल बाहर कर दिया।

विदर्भ में कितने ही क्षेत्र। वह सारे देखते ड़टकर पैदल घूमा। पूर्णा अमृत वाहिनी। उसके दोनों किनारे सम्पन्न सधन। लोग उदार। दरवाजे पर आये अतिथि को भूखा न जाने दे। पेट की चिंता न रहती। पेड़ तले दिन निकल जाता रात में कीर्तन दूसरे दिन अगला गाँव।

पर एक दिन अपने शरीर की तरफ विशेष ध्यान गया। उसका भी कारण हुआ। हाथ पैर में बहुत खुजली मचने लगी थी। खुजाने पर घाव हो जाता वह घाव ठीक ही नहीं हो पाता कि दूसरा, तीसरा हो जाता। ऐसे में देखा अपने आप को। ऐसा लगा कि एक सूखी लकड़ी भद्दी कई जगह से कटी छीली देख रहा हूँ।

कुछ करना चाहिये मन में आया -गया।

एक गँवई गाँव । कसबे गव्हाण। जिला अमरावती तहसील दर्यापुर का। वहाँ के एक लोहार। अति सुजन। दिलदार। कुछ थोड़ी दाढ़ी रक्खे हुए। उनने कहीं मेरा कीर्तन सुना। पास आये कहा-

"हमरे गाँव बलिराम भौ माष्टर हैं। मृदंग वादक हैं। घर में अखाड़ा, पांच दस लड़के आखाड़ा गोड़ते हैं। कुस्तियाँ करते हैं। रात में भजन। आपका कीर्तन उन्हें पसंद आयेगा।

कहा 'तथास्तु।'

गव्हाण गाँव गया। उस गाँव का गत जन्म का कोई ऋण होगा। लंबा मुकाम वहाँ, नहीं तो नहीं होता।

बलिरामजी कुछ अर्सा माष्टर रहे थे। पंढरपुर की वारी करते थे। माला पहिनतें थे। अखाड़े का शौक था ही। नामदेव, रुपराव, महादेव बेलदार ऐसे दस बारह चेले थे। उनको

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अखाड़े में उतारते। पेंच सिखाते। एक ठठेरे-गंगाधर उनके दोस्त थे।

भौ का गाँव में दबदबा था। फावड़े से दाँत, गोरा बदन, नीली सी आँखें देह के भौ कभी-कभी कीर्तन करते। किसी का काम अधूरा न रहने देते थे। गाँव के ब्याह आदि सम्बन्ध उनके सामने तय होते थे। उनके रहते दूसरा पक्ष गरम न करता।

गाँव पड़ोस की किसी लड़की को ससुराल में कष्ट होते तो भौं उसके ससुराल जाते कहते-

देखोजी इतना ध्यान राखियो ये मेरी लड़की है।

फिर क्या किसी की बिसात। उसे कष्ट देने की।

भौं के भजनमंडल के लड़के 'छोड़ खाना पीना' उन्हीं के यहाँ पड़े रहते। मेरे कीर्तन में साथ देते। इधर उधर कीर्तन कार्यक्रम होने लगे। भौं पारमार्थिक। उनके साथ मेरा ध्यान ज्ञानेश्वरी की ओर अधिक जाने लगा।

बदन में खुजली उठती और खुजली के बाद फोडे।

भौ ने एक दिन कहा

"गोपाल बाबा यहाँ एक चान्दमियाँ हैं बड़े वैद्य हैं। उनके पास जाकर आपकी तबीयत दिखायें।"

चान्दमियाँ के छोटे भाई एक बढ़िया मुसलमान आदमी। कांग्रेस के सत्याग्रह में जेल में जाकर आये हुए। बड़े शांत और साफ सुथरे। भौं की बैठक में आनेवालों मे से एक। उन्होंने भी बड़ा आग्रह किया।

इसलिये फिर एक दिन सुबह मैं और भौ दोनों चान्दमियाँ के यहाँ गये। पाच पचास थैलियाँ झुकी छपरी की छत से लटक रही थी। चांदमियाँ रोगी को देखते जा रहे थे। थैलियों में हाथ ड़ाल काष्ठ औषधी निकालते पुड़ियाँ बनाते। काढा बनाने के लिए कहते। कड़ा पथ्य करने को कहते। चमकदार दाढी। धोती, कुर्ता ऐसा ऋषितुल्य व्यक्तित्व। भाषा शुद्ध मराठी। उनको देखते ही रोगी आश्वस्त हो जाता।

उन्होंने हमारी आवभगत की। बैठक पर बिठाया। आँखे मूँद मेरी नाड़ी देखी। दिन चर्या पूछी।

कठिन प्रश्न था।

मैंने कहा - "मियाँजी जब अन्नयोग होता है तब अन्न मिलता है। जब वह मिले वह भोजन बेला। करीबन रोज रात को कीर्तन होता है तीन-तीन बजे तक जगार होती है। दूसरे दिन उठ दूसरा गाँव। ऐसे रमते राम हम। रोज आकाश के नीचे सोता हूँ। हाथ भोजन पात्र हैं। दिशा ओढ़ता हूँ। ऐसे में दिनचर्या क्या कहूँ।"

"देखिये एक माह आप को यहाँ रहना होगा। गाँव के बाहर कुटिया बाँधकर। पश्चिम दिशा की ओर। नीम के नीचे। तेल के बघार की खुशबू भी नहीं आनी चाहिये। पथ्य

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

कड़ाई से करना होगा। ज्वार की रोटी, अरहर की दाल, बिना बघार बिना नमक की। गाय का दूध। इसके सिवाय कुछ खाना नहीं। इतनी सारी बातें जम जायें तो मैं तुम्हें चंगा कर दूँ।

न नौ मन तेल होगा न राधा नाचेगी - कहावत मेरे मन में नाच उठी।

पर उसी समय भौ आगे आये बोले

मैं यह सब करवा लेता हूँ। भोजन दूध सब। पश्चिम की ओर नीम के नीचे कुटिया बनवाता हूँ आज ही। आप दवाई शुरु कीजिये।

"ठीक हैं। मै जड़ी देता हूँ। रोज उसका काढा बनाना। सुबह शाम लेना। इसके सिवाय एक दवाई और दूँगा। शतधौत मक्खन में फेंट कर वह मलम देह पर लगाना।"

बालाबाला सब काम तय हो गये। मेरे लिये शेष रहा केवल उपचार करवाना।

गव्हाण के पश्चिम से एक छुटकी नदी बहती भयी। बारामासी। बहुत तेज गर्मी पड़े तो सूखे, नहीं तो कलकल बारामास चालू। नदी पार कर टेसन की ओर जानेवाली राह है। उस राह नदी से तीन चार सौ कदम दूर सफेदसी मिट्टी पुते डेढ़ मंजिल घर हैं गाँव के।

नदी तीर से एक पच्चीस हाथ दूर विशाल नीम पेड़। उसके बाद और थोड़ा दूर मसान। वह जगह मेरी कुटी के लिये आदर्श थी। मसान का मुझे कोई डर नहीं था। फिर इसीलिए वही जगह मैंने पसंद की। वहाँ भौ के लड़कों ने देखते-देखते कुटी बना दी। उसी दिन शाम काढा शुरु किया भौ ने। इसलिये उस कुटी में मैं रहने चला गया। तुकाराम गाथा और ज्ञानेश्वरी ये दो ग्रंथ भौ के घर से साथ लिये। पहिले दिन कोई एक छोरा अपनी गुदडी लिये मेरे साथ सोने आया था।

दूसरे दिन से दिनक्रम शुरु हुआ।

बड़ी भोर जग जाना। दिशा शौच हो आना। नदी पर जाकर नहा लेना। कुटिया में आकर ज्ञानेश्वरी खोल बैठना। सौ पाँच सौ दोहे पढ़ना। बिलकुल ही कुछ पल्ले न पड़ता हो ऐसी बात नहीं थी। थोड़ा बहुत समझता था। पर पूरा स्पष्ट नहीं होता था। कभी तुकारामजी की गाथा पढ़ता। तब तक भौ के घर से गाय का दूध लेकर कोई लड़का आ जाता। उसके साथ पहिले कुछ देर बतियाना। दूध पी जाता। वह अपने काम चला जाता और मैं रह जाता अकेला।

पहिले दिन भौ ने मक्खन भेजा कोई सेर भर। उसे नदी पर ले जाकर सौ बार धोया। बरतन पानी में डुबाता। ऊँगलियाँ मक्खन में डालकर उपर नीचे करता। मट्ठा अंश उपर आता। वह पानी फेंक देता। फिर पानी लेना। फिर अंगुलियाँ डाल खंगारना। ऐसा सौ बार किया। शतधौत मक्खन सिद्ध किया।

चान्दमियाँ ने भेजा चूरण उसमें मिलाया। रात सोने के पहिले देह पर उसे मलना था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कुटिया में लौटा। भोजन बेला हो गई थी। भौ के यहाँ से अरहर की बिना नमक दाल और ज्वार की रोटी लेकर आदमी आया था।वह भोजन किया। फिर शाम तक अकेला।

कभी शाम को गंगाधर ठठेरे आते। कभी भी आते। कभी कोई और आता तो उनसे बातें करते। कुछ समय अच्छा कट जाता।

फुरसत होने पर रात कोई साथ सोने आता। नहीं तो भोजन देकर वह चला जाता और फिर जैसे खाने को आता सारा परिसर।

अकेला रात बिरात कहीं भी ठहरने की आदत थी। पर इस भरोसे में कि भोर उठते ही चल देना है। और यहाँ माह भर रहना था।

कुटिया में पडे-पडे समय, निकलते निकलता नहीं था।

मन समझाता। पडे लेटे। महान देशभक्तों ने कैसी-कैसी एकान्तवास कैद भोगी। उनके कोठडी के दरवाजे तो इतने बंद रहते कि एक प्रकाश किरण भी अंदर न आने पाती। खुली हवा उन्हें मिलती नहीं थी। हाथ पैर में बेडियाँ रहती। उस बन्दीवास से कब मुक्ति मिलेगी। इसका कोई छोर न रहता। उनने वह एकांत किस भरोसे सहन किया।

यहाँ तुम्हें नीम की शीतल छाया है। पंछी आते हैं पेड़पर। कितने-कितने उनके भाव-विभाव। नटखटपन और क्रिया कलाप। कौवे कांव कावते हैं। चिडिया चहचहाती है। कभी कोई उलूक आकर पेड़ पर चुपचाप बैठता। अपनी बडी-बडी आँखों से सारा परिसर टकटक निहारता। दिनभर वह बोलता नहीं। रात उस शांति में अपना घूत्कार छोड़ देता। वह घूत्कार पूरे आकाश में घूमता। उस वीरानी में वह कंपित होता रहता। ध्वनि बडा लगता। सच में तो उल्लू चिंतन करता रहता है। कभी अपने मित्र को बुलाता है। इस पेड पर एक, दूसरे पेड़ पर दूसरा। नदी पार। फिर शुरु होती उनकी जुगलबंदी। प्रेमालाप। उसमें डरने जैसा क्या होता है जी।

कभी लोग रात की गाड़ी से उतरते। उनके छकडे गाडियाँ ठंडक से ठंड पडे रास्ते पर खड-खड दौड़ आकर नदी में उतर जाते। गाडीवानों की हरकाई सुनाई देती। समझ पड जाती। गाड़ियाँ उनने ठहराली हैं। बैल पानी पी रहे हैं।फिर चल पडी हैं वह।चढाईपर उनके श्रम इतने दूर से भी समझ पड जाते। ऐसा लगता जैसे मैं खुद गाडी खींच रहा हूँ और वह खच्च से पीठ में घुसी अरिया। मेरे ही पीठ में घुसी है। फिर छकडा गाडी पास के रास्ते से गाँव की ओर बढती। नवागत का बतियाव कुटिया तक साफ-साफ सुनाई देता। कोई पूछता- "झुपडिया किसकी है? कौनं है इसमें?"

गाडीवाला कहता

"कोई साधू है। अपने चान्दमियॉ की दवाई ले रहा है। वह टिका है। साले साधु गिधू भी बीमार होते हैं यह तो कभी ना सुनी।"

"क्यों उसमें क्या है?"

"अरे फोकट का खाते हैं। पेट बिगड़ जाता होगा।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"क्यों कभी खिलाया किसी साधू को क्या?"

"मैं साले को दरवाजे न खड़ा करूँ।"

सूरज उगता। पूरब की ओर गाँव है उसके पीछे से। गाँव पर पैर जमाते वह उपर चढते तप-तप जाता। दसों दिशा बढते वह आकाश के ठीक बीच आता। उसके झक्क प्रकाश में दिखते नदी किनारे। चूने के कगार। कोई गांववाला आता। नदी किनारे कपडे उतारता पानी में घुसता। कोई ठीकरा लेकर शरीर रगड-रगड धोता। बडे उमंग से पानी उछालता। फिर पानी बाहर आता। धोती बांधता, करधनी अंगुली से ठीक कर धोती पर चढाता । कुर्ते में शरीर घुसाता। चाँद पर टोपी रखता। पैर चमरोधे में डाल चला जाता।

चरवाहे ढोर लेकर आते। ढोर शांति से पानी पीते। मुँह से पानी के बूँद टपकाते वे पानी में ही खडे रहते। वह ठंडक पेट में पहुँच जाते ही उन्हें मूत फूट पडता। फिर वे वही खडे-खडे मूत देते। धीरे-धीरे पीछे मुडते। नदी पास के नीम के नीचे आकर घुटने मोड बैठ जाते।

तबतक चरवाहे सारे कपड़े उतारते। कोई देख नहीं रहा है यह समझ पडते ही नंगे ही पानी में घुस जाते। एक दूसरे पर छीटा बाजी करते। चिल्लाते। शोर मचाते। फिर बाहर आते देह पोछते नहीं। वैसे ही लपेट लेते कपडे।पुटरियाँ खोल रोटी खाते फिर ढोरों को जगा उठा जंगल पास करते।

सूरज ढलने लगता। खेतो में काम करने गई लुगाईयाँ घर के खिचाव से लग-लग लौटती। नदी पार जाने वे साडी का छोर उपर उठा लेती। नदी के पानी की ठंडक देह में घुसती उनके। सिहरन आती उन्हें। पार निकल घर की ओर चलती जाती। शुरुवात में उनको कुटिया का कौतुहल। पर अब वह कुटिया और उसके दरवाजे, तलवे पर ठोडी रखे मैं, दोनो ही परिचय के हो गये हैं।

पूरब से धीरे-धीरे अंधियारा उपर उठता है । सूरज चला जाने से खाली पश्चिम पर वह हमला करता है। सारा अंतराल अपनी गोद में ले लेता है। आकाश में तारे चमकने लगते हैं।

मैं रोटी लाने वाले लडके की राह निरखने लग जाता हूँ।

कभी-कभी इस बिकट अकेलेपन का, सच कहूँ तो एक खूँटे से बांध लेने का गुस्सा आ जाता। किसने जोर दिया है ये उपचार करने को। ये उपचार भी किसके लिये इस तुच्छ शरीर के लिये। जिसके लिये ज्ञानदेव ने कहा-

देह तव पांचाचे झाले। हे कर्माचे गुणीं गुंतले
भंवतसे चाकीं सूदले। जन्ममृत्युच्या

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हे काळानळाचे कुंडी घातली लोणियाची उंडी
माशी पांख पाखडी तव हे सरे
हे विपाये आगीत पडे तरी भस्मचि होऊनी उडे
जाहले श्वाना वरपडे। तरी ते विष्ठा

पंचभूत का शरीर कर्मरेषा घुमाये वैसा घूमना। जन्म मृत्यु के चरखे पर बैठे जैसा। कालरुपी भडाग्नी में फेंका मक्खन का गोला। जैसे मक्खी पैर फडफडाये इतने में उसका अंत। जलाया तो मुट्ठीभर राख सियार कुत्तों ने खाया तो उनका गू बन बाहर निकलता।

फिर कौतुक क्यों? लाड क्यों? किसलिये?

कोई उपचार की जरुरी नहीं। फटा है, फटता है, फटने दो। खुजाते-खुजाते रक्ताया है रक्ताने दो।

न कोई आगे न पीछे। बहुत ही दुख होने पर किसी अपरिचित देश चले जायें। भीख मिले तबतक भीख माँगे न मिले तो किसी नदी किनारे पडे रहें ठंडक लेते। सहन सीमा टूट जाये। तो एक पत्थर पेट से बांध धीरे से नदी में घुसा जाये। अंजुलीभर पानी पेट में जायेगा। यातनाओं का अंत हो जायेगा।

या फिर रेल पटरी पर गाडी के नीचे शरीर फेंक दे एक क्षण में मुक्तता रात का अकेलापन लेकिन अब सहन नहीं होता।

एक रात उल्लू इसी नीम पर बैठा । लगा घू-घू करने। उस ओर स्मशान। सिहर गया। उल्लू की हर घू घू पर छाती की धडकन बढने लगी। बाहर साफ चांदनी। कुटी के बाहर आकर देखा। कहीं कुछ भी नहीं था।

कहा मन से देख ले और देखने नदी तट गया। कुछ नहीं। कल-कल पानी बह रहा केवल। उस दिन शाम को एक बच्चे का शव स्मशान में गाडा गया था। ढाक ढूँक कर उदासे आदमी अपने-अपने घर लौटे थे। मन पक्का कर स्मशान की ओर गया। शव गाडे थे वही मिट्टी का ढेर सा बनाया हुआ। कहीं पहचान के लिए खडा पत्थर भी गाडा हुआ। कहीं काडी तिनके खोंसे हुए। उनपर चिंदिया लपेटी हुई। उदासी कंटीली झाडियाँ स्मशान पर उगी हुई। उस बच्चे की शवस्थली ताजी थी। और लेकिन कुछ भी नहीं।

बिलकुल कुछ नहीं था यह सच नहीं। एक लोमडी अपनी झाडूसी पूछ संवारती एक तरफ से आयी और दूसरी तरफ चली गई। उसने शायद मुझे देखा हो।

लेकिन इससे अधिक भयसूचक गंध भी नहीं। बिलकुल खात्री कर ली और कुटिया में लौट आया।

औषधि बिकट कडवी थी।

इतनी कडवी कि उसकी कडवाहट छह सात घंटे बनी रहती। उपर पिया दूध भी कडवा ही लगता। बाद-बाद में तो वह घीना लगने लगा। आँखों के सामने आते ही घिन आती।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भोजन भी अलोना। नमक मना। इसलिए उसकी भी अनिच्छा होती।

एक दिन निश्चय किया। भोर उठना। ग्रंथ यही सामने रख देना। सामान और कुछ है नहीं बस एकदम चले जाना। जिधर रास्ता फूटे उधर।

कु टि या के बाहर भी आया।

लेकिन तभी दो निर्मल मन व्यक्ति जैसे सामने आये रास्ता रोक खडे हुए भो और चान्दभाई

भौ बडी निष्ठा से दोनो वक्त काढा पकाते थे। गाय का दूध और भोजन मेरे लिये भेज रहे थे। इसके लिए उन्हें कुछ भी मिलना नहीं था। यह उनकी सत्कृति केवल निर्हेतुक थी।

चान्दभाई भी पाई भी न लेते उपचार कर रहे थे। अर्थलाभ की उम्मीद उनको सुदूर भविष्य में भी नहीं थी। दोनों ने एक दूसरे को वचन दिया था एक ने कहा था मैं पथ्य देखूँगा तो दूसरे ने कहा था मैं औषधि देखूँगा।

इसलिए भाग कर जाया नहीं जा सकता। तेरा शरीर तेरा नहीं है वह एक प्रयोगभूमि है। उसपर तुम्हारा रत्तीभर भी अधिकार नहीं इसके सिवाय तुमने भी तो शब्द दिया है। ऐसे में भाग जाना कायरता की चरम सीमा होगी।

ऐसे ही स्थिर बने रहो। एक माह माने कोई बडी अवधि नहीं होती एक कृष्ण पक्ष और दूसरा शुक्ल पक्ष। और उसमें भी कुछ दिन तो निकल ही गये हैं। बाकी भी देखते-देखते बीत जायेंगे। छोड कर चले जाओगे तो दोनो थोडा सा मुस्कराकर चुप हो जायेंगे। उनका कुछ नहीं जायेगा।

ऐसा बहुत-बहुत सोचा और रुक गया।

आश्चर्य ऐसा कि दोनो के प्रयासों को फल आने लगे।

धीरे-धीरे फोडे घटने लगे। कांति सतेज दिखने लगी। काया राखिया भूरी सी दिखती थी बिलकूल किसी घूरे के उपरी सतह जैसी । वह अब पलटने लगी।

माह बीता। बलिराम भौ आये, बोले

"चालोजी, चान्दभाई के यहाँ जाना पडेगा।"

झोपडी छोड़ते ऐसे लगा जैसे आजीवन कारा से मुक्त हो रहा हूँ। गाँव गया। चान्दमियाँ के घर गया। बडे स्नेह से उनने स्वागत किया। बहुत पास बिठाया। नाडी देखी। पेट, त्वचा का रंग फोडे के निशान सब सब देखा।

संतुष्ट होकर बोले

"भौ तबीयत एकदम बढ़िया हो गई है। रोग बिलकुल नहीं है।"

फिर मेरी तरफ देखकर बोले

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"महाराज माफ करना पर मैने समझा था इतना कडा पथ्य आप झेल नही पाओगे।"

मैने साश्चर्य पूछा "क्यों ? किस कारण ?"

"हजार जगह घूमता जीव हजार घर के हजार तरह के अन्न का स्वाद मुँह में लगा हुआ। ऐसे में इतना बडा पथ्य निबाहना। मुझे शंका ही थी" फिर भौ की और घूमते बोले

"इतने रोगी मेरे पास आते हैं पर इतना कठोर पथ्य संभालने वाला कोई और मिला नहीं।"

भौ ने हँसते हुए कहा

"प्रमाणपत्र लिखकर दे दो एक"

"उसका कहीं उपयोग हो तो देऊँ लिखकर। मैं तो महराज को मान गया भई।

ये उनका बार-बार धन्योद्गार निकालना हजार प्रमाणपत्र से बढ़कर था।

बाबूराव यादव नामके एक टैक्सी ड्राइवर हमारे "खाते" में थे। हम गाड़गेबाबा के लोग आपस में यही शब्द प्रयोग करते थे। खाते में माने चेलावर्ग में। हाँ तो वे बडे कुशल ड्राइवर। वे कहा करते तुम अंगुली पर चूना लगाकर खडे रहो। मैं तेजी से टैक्सी तुम्हारे बगल से निकाल ले जाऊँगा तुम्हारे अंगुली का चूना टैक्सी को लग जायेगा तुम्हें रत्तीभर भी धक्का नहीं लगेगा।

बाबूराव का एक नियम था । महिनाभर टैक्सी चलाना और उस आमदनी से सालभर का खर्च चलाना। फिर ग्यारह माह भजन कीर्तन करना। किसी का दिया भोजन भी वे फोकट नहीं लेते थे।

इस बाबूराव की मुझ पर बडी कृपा। बडा स्नेह।

रत्नागिरी (कोंकण) के एक गाँव खवटी के थे वे। वहाँ सप्ताह करने की योजना उन्होंने बनाई। मुझे बडे आग्रह से अपने साथ ले गये। मुख्यतः कीर्तन करने के लिए।

खवटी पहुँच गये। गाँव बाहर मंदिर था खपरैल का। नदी मंदिर से सटकर बहती थी। नदी किनारे आईन और सागौन के ऊँचे पेड। करौंदे की झाडियाँ।

कोंकण में ऐसा ही होता है। गाँव बाहर फैले हुए घर। चारो और खूप खुली जगह। आम कटहल के पेड। गाँव समाप्त होते ही ठिंगनी टेकरियाँ झाडी से ढकी। नीचे की इस सृष्टीपर दिनभर सूरज तपता।

खवअी में बाबूराव का अपना घर था। वहाँ उन्होंने बडी श्रद्धा से सप्ते का आयोजन किया था। पर वे ठहरे गाँव के जोगडे आनगाँव के सिद्ध नहीं। इसलिये गाँववालों ने बाबूराव की तरफ विशेष ध्यान नहीं दिया। पहरे के लिए खींचतान कर आदमी इकट्ठा हो पाये।

रात में अधिकतर कीर्तन मेरा ही होता। भीड मामूली। लेकिन एक स्नान संध्याशील

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

ब्राह्मण हाथ में साफ पोछ कांच वाला लालटेन लेकर कीर्तन को रोज ही आते थे । दूसरे हाथ में डंडा होता। एक दिन कीर्तन के बाद मुझ से बोले- "कल मेरे घर आने की कृपा करेंगे।"

"किसलिए ?"

"गरीब के घर का गुड चिवडा खाने।"

स्वर में इतना आग्रह। मैं नाहीं नहीं कह सका। दूसरे दिन उनका घर खोज कर दरवाजे में खड़ा हो गया। वहाँ की सफाई देख चकित भी हो गया।

करीने से लिपा आँगन। दरवाजे के सामने रंगोली। सामने एक चम्पा उसके तली में गिरा एक फूल। ऐसा ही सहन । दरवाजे पर लटकती धान की बालियाँ। खूँटी पर टंगा कुछ सामान शोभा बढ़ाता। सारा करीने से सजाया, सुहावना बड़ा वैभव सा दिखता।

आंगन के झूले पर चड्डी पहने एक गोरा गठीला लड़का स्लेट पर कुछ लिखता। मुझे देखते ही वह उठा, अंदर गया। उसके पीछे-पीछे वे सज्जन बाहर आये। उपर खोंसी हुई धोती नीचे छोड़ते हुए बोले - 'आ इ ये !'

भस्म चर्चित देह। मुद्रा शांत सौम्य। उन्होंने 'आइये' कहा पर मेरा स्वांग बैठ सके ऐसी एक भी जगह मुझे उस सुहाने स्वच्छ घर में नहीं दिख रही थी।

मुझे पेंच में पड़ा जान उन्होंने आगे बढ़ मेरा हाथ पकड़ा और बोले ऐसे आईये झूले पर बैठिये।

मेरे साथ वे बैठ गये फिर बोले-

"कीर्तन करते कितने साल्ल हो गये ?"

संकोच से मैंने कहा -

"हुए कोई तीन चार साल !"

"आपकी वाणी साफ है। कीर्तन में आप बहुत मगन हो जाते हो। आपका कीत्रन इसीलिये मुझे बहुत पसंद आता है। देखो गुस्सा न करना एक बात पूछ रहा हूँ।"

"पूछिये।"

"आप ब्राह्मण हैं ?"

कुछ मुरझाकर बोला - "हाँ।"

लगा मुझे ऐसा ही था। "नाम क्या है ?"

निग्रह से कहा - "वह सब मैंने धो पोछ दिया है।"

"कुछ गलत नहीं किया। निसंग पुरुष को वे सब पाश तोड़ने ही पड़ते हैं पर ऋषि ऋण ? वह तो मानते होंगे।"

मैं एक टक देखता रहा। उन्होंने कहा

"बुद्धिमान हैं आप। मैं जो कह रहा हूँ वह समझ में आ ही गया होगा आपके। जिन्होंने अपार कष्ट कर अपना गोत्र इकट्ठा किया उनके सम्बन्ध में मन में कृतज्ञता तो होगी ही।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मैं कुछ बोल न पाया - वे ही बोलते रहे।

"अपनी शाखा का जिन्होंने विस्तार किया। क्या कह रहा हूँ मैं कुलनाम न बताओ गोत्र तो कहो।"

मैं बुदबुदाया - 'वासिष्ठ।'

'शाखा'? 'शाकल'

उत्तम। आपके गले में जनेऊ नहीं दिख रहा। क्योंकर फेंक दिया वह। मैंने उत्तर देने की चेष्टा की। "बहुत साल से. . . . ."

"मुझे मालूम है। आप वैष्णव हो। भिक्षा माँगकर भोजन करते हो। यें भी मुझे दिख रहा है। परन्तु अपने महान पूर्वजों का स्मृति चिह्न यज्ञोपवीत उसपर क्यों गुस्सा?"

इतने में मेरे बराबर आयु की एक ठीक ठाक लड़की दो तश्तरियों में पोहे लेकर आई। उन्होंने उसे कहा -

" यहीं रख। पानी ले आ।"

लड़की पानी लेकर आई। उन्होंने कहा

"जमुना नमस्कार करो - साधुपुरूष है।"

उसने झुककर नमस्कार किया। मुंडी नीचे किये मैंने कुछ मंगल पर बुदबुदाया। उन्होंने कहा

'लीजिये।'

इतने सौजन्य से वे बरत रहे थे कि मेरे आँखों की कोर पनिआ गई। मैंने उसे पोंछ ड़ाला। तश्तरी उठाई पोहे खाने लगा वे आगे कहने लगे। मैंने भी थोड़ा बहुत संत साहित्य पढ़ा हैं। ज्ञानेश्वर महाराज ने कहा है,

वह सर्वात्मक ईश्वर
स्वकर्म कुसुमों से अर्जुन
पूजा किये से अपार
संतोषे है।

'सच है ना।' मैंने मुंडी हिलाई। वे बोले

'ब्राह्मण पर ऐसा रूठो नहीं। यह बोझा सभी को भारी हो रहा है आप भी उसे फेंक देने का प्रयास करो।'

मुझे वह सहन करना कठिन हो गया। मैंने कहा - मैंने सात आठ साल से संध्या वंदन भी नहीं किया।

और फिर मैंने संक्षेप में अपनी कर्मकथा उन्हें सुनायी। उनकी आँखे भी भर आयी। वे बोले,

"बहुत सहन किया और थोड़ा बोझा कंधेपर ले लीजिये। जनेऊ पहनिए और रोज गायत्री जप किया किजिये। उससे हुआ तो लाभ ही होगा। सूर्य देवता के पवित्र तेज का आवाहन है गायत्री। हमारी बुद्धि को प्रेरणा दे ऐसा उसका अर्थ है।"

मैं चुप रहा। वे आग्रहपूर्वक बोले -

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"व्रतलोप हो गया है आपका। कहें तो मैं आपका फिर से उपनयन कर दूँ।"

'हाँ' कहने का धीरज न हुआ। मेरे गुरुबंधू मेरा मजाक बनायेंगे यह ड़र भी मुझे था। पर एक ब्राह्मण का पवित्र आश्रमतुल्य वह घर मन में घर कर गया।

बाबूराव यादव ने अपने गाँव जाकर सप्ता करवाया यह देख मेरे भी मन में भूत भरा कि जहाँ जीवन के दो साल निकाले वहाँ अकोला में सप्ता योजित करूँ।

बाबा से तारीख ली और सीधे अकोला आ गया। वहाँ के लोगों को मेरा यह नया वेश और मूरत देख आश्चर्य हुआ लेकिन उन्होंने मेरी तरफ कोई ध्यान नहीं दिया।

उनका ठीक भी था। जहाँ मैं दो साल रहा। ढ़ोर चराये। खेती की। घासफूस लादा-ढ़ोया। कृष्णाबाई के साथ गोरक्षण की भीख मांगते दरदर भटका। बच्चों से झगड़ा। मारपीट की। नाटक में काम किया। वहाँ मैं लंगोटी पहन आया तीन चार साल बाद और ब्रह्मज्ञान की बातें बधारने लगा तो मेरी कौन सुनेगा?

पहले दिन जब कीर्तन के लिये खड़ा हुआ सौ पचास आदमी जमा थे। केवल कुतुहल वश। उस उपेक्षा से चिढ़ मैंने बहुत खरीखरी बातें कीर्तन में कही।

पत्थर की मूर्ति पर बकरे की बलि चढ़ाते है और घर की जनानी को घर में पत्थर बनाते हैं घर से निकलने नहीं देते। दूध देनेवाली गाय को लाठी मारते हैं और 'घोड़ा' उसकी मालिश करते हैं। मालिश करते लात भी मारे तो प्यार से खाते हैं।

ऐसा अंटसंट बकता गया। मेरा भाग्य अच्छा कि लोगों ने मुझे पीटा नहीं लेकिन दूसरे दिन कीर्तन में एक भी प्राणी आता दिखा नहीं।

वास्तव में बाबूराव यादव का उदाहरण मेरे सामने था। गांव का जोगी जोगड़ा ही कहलाता है। गांव उसका मजाक ही बनाता है। फिर भी वाहियात बातें कह बैठा था। और बड़ी कठिनाई से मिलने वाली बाबा की तारीख भी ले ली थी।

यहाँ तो कोई भी मुझपर विश्वास करने को तैयार ही नहीं था। बाबा आयेंगे इस बात का भी वे सब मजाक की करते रहे। अंत में मैंने तय किया जो होना होगा सो होगा। प्रवरा नदी को पारकर अगस्ती तीर्थ जाकर वहाँ भजन प्रेमियों की सहायता से सात दिन का पहरा शुरु करवाना। सुबह छह से शाम छह बारह घंटे पहरा खुद ही देना।

सोचा परभणी की तरह यहाँ सुभीता नहीं बनेगा। यहाँ तो उपेक्षा का राज है पर ठीक है कोई दिन चना कोई दिन वह भी मना। निश्चय पक्का रहे। बाबा आने पर वे सब जान ही जायेंगे अपने आप।

अगस्ति तीर्थ गया और दूसरे दिन भोर छह बजे से गले में वीणा लटका खड़ा हो गया। रामकृष्ण हरी जै-जै रामकृष्ण हरी का अखंड कीर्तन शुरु।

अगस्ति पंचक्रोशी का दैवत था। पांच पचास गांव के लोग वहाँ दर्शनों को आते थे। उन्होंने देखा एक मरियल लंगोटी वाला सुबह छह बजे से गले में वीणा लटकाये भजन कर रहा है। दोपहर बीत रही है फिर भी वह नीचे बैठ नहीं रहा। उसका तो रामकृष्ण हरी अपना चालू ही है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वे पास आये कुछ ने मुझे पहचाना।

"अरे ये छोरा गणपतराव के साथ टट्टू पर बैठ हमारे यहाँ आता था।"

"हाँ रे हाँ।"

शाम छह बजे तक मैं किसी से बोला नहीं। कुछ खाने पीने का प्रश्न ही नहीं था। केवल भजन करता रहा।

चमत्कार को नमस्कार यह जगरीत है। दूसरे दिन लोग झांज लेकर मेरे पीछे खड़े हो गये। भजन में सहयोगी हो गये।

शाम छह बजे और मैंने गले से वीणा उतारी। तुरन्त किसी ने आगे बढ़कर वह अपने गले में ड़ाल ली। फिर मैं बैठा लोग भी बैठे।

पूछताछ करने लगे। अगस्ति क्षेत्र में मारवाड़ का एक बैरागी रहता था। वह भी मेरी कृति से प्रभावित हो गया था। बोला -

"पूछ क्या रहे हो? पता है? सुबह से ये फक्कड़ राम-राम करता खड़ा है बिचारा। अबतक न कोई आया न किसी ने पूछा कि क्या कर रहे हो? कि भई कहाँ के हो?"

उन्हें बहुत शर्मिन्दा न करते हुए मैंने कहा - "बाबा यहाँ आनेवाले हैं और उसके पहिले सात दिन पहरा कीर्तन होने का है।"

बैरागी ने पूछा -

"गाड़गे बाबा? कोई साधू महात्मा हैं क्या?"

"हाँ-हाँ म्हंजी बहुत बड़ा महात्मा। कीर्तन हो गया का लगेच गुपित होते हैं। हाऊर ऐसा कीर्तन कि पुछुच नहीं। एक बार क्या हुआ कि मैं गया था आलंदी, अपनी आलंदी। ज्ञानुब्बाकी।"

मुझे कुछ कहना नहीं पड़ा बातें चल पड़ी थी। बैरागी ने कहा

"हाँ-हाँ आलंदी हम भी गये थे।"

फिर उसने गाड़गे बाबा गुप्त कैसे हुए यह बात जाने किस-किस की कसमें ले लेकर कही। बैरागी आँखें फाड़ते हुए बोला

"वे बाबा यहाँ आयेंगे क्या?"

मैंने हामी भरी बैरागी ने मुझसे कहा

"तब तुम उन्हीं के चेले हो।"

"जी हाँ।"

अब बैरागी ने मन में ताना बना बुना। जो महात्मा गुप्त हो सकता है उसका चेला बारह घंटे वीणा लेकर खड़ा रहे इसमें कुछ ताज्जुब नहीं। बाबा गुप्त हो नहीं सकते यह बात उसे कह ड़ालने की इच्छा हुई पर फिर सोचा - इतना सच बोलने की कोई जरूरत

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नहीं है।

बैरागी अपना चिमटा लेकर उठा नदी पार गया। अकोला मे मारवाड़ियों के बहुत घर थे। उन्हीं के कारण वह यहाँ आया था और जमा था। मारवाड़ियों के घर वह गया। इतने बड़े महात्मा यहाँ आनेवाले हैं और सब लोग इतने उदास रहे यह बिल्कुल ठीक नहीं यह बात उसने कही।

सभी मारवाड़ी मुझे पहचानते थे।

"अरे देवता वो लड़का कहता हैं ना बाबा आवेंगे करके। अरे वो अपने गणपराव बाबा के यहाँ था दो साल तक। हप्ते के हप्ते भीख मोंगने आता था अपनी दुकानपर-किसनाबाई के साथ। वो किसनाबाई मालूम है ना। हाँ उनके साथ उसपर तुम विश्वास करते हो। लेकिन मै। बारह घंटे खड़ा था। यह बैरागी ने समक्ष देखा था। वह मानने को तैयार नहीं हुआ। अंत में बैरागी को टालने के लिए उन मारवाड़ियों ने उसे शिधा सामग्री दी। वह बोझा लेकर रात को लौटा। हमारा सप्ता शुरु हो गया।

पहारे की व्यवस्था हो गई। सीधे भी आने लगे। परन्तु सप्ते के बाद के भंडारे का कोई हिसाब किताब नहीं बन रहा था। मैं सप्ते का स्थान छोड़ कहीं और नहीं जा सकता था। अन्यथा अकोला के लोगों ने यद्यपि मुझे महत्त्व नहीं दिया था फिर भी परिसर के गांव थे जहाँ के चार छह बोरे अनाज ला सकता था मैं।

रोज रात को कीर्तन करता। सौ चार सौ गांववाले भी इकट्ठा हो जाते थे। परन्तु सारे गाँव अगस्ति क्षेत्र से तीन चार मील से कम दूर नहीं थे। इसके कारण उन्हें क्षेत्र तक आने में देरी हो जाती थी। खेती बारी के काम समेट कर उन्हें आना पड़ता था। कभी-कभी रात के बारह भी बज जाते थे। मैं अपना दस बीस लोगों के सामने कीर्तन करता खड़ा रहता। कभी गांववाले आते और दस बीस मिनट में ही ओढ़ी चादर बिछाकर सो जाते। ऐसा सारा आनंद था।

दिन निकल रहे थे। बाबा के आने का दिन आगे बढ़ता चला आ रहा था। मैं कभी हताशा से भर जाता। कभी अपने पर ही गुस्सा करता था। कभी ऐसा लगता कि गढ्ढे में जाये सप्ता। छोड़ छाड़ भाग लिया जाये। बाबा के पास जाकर मुंडी नीचे कर अपनी फजिती कही जाये। उनकी तारीख रद्द करवायी जाये।

परन्तु पांचवे या छटे दिन धामणगाँव के पूर्वपरिचित हरिभाऊ भाटे आये। उन्हें देखते ही फूटकर रोने की इच्छा हुई पर मैंने अपने आपको बहुत रोका।

गणपतबाबा के घनिष्ट स्नेही थे हरिभाऊ। गणपतबाबा के यहाँ था तब कईयों बार उनके यहाँ धामणगाँव गया था। वे मुझे अच्छी तरह पहचानते थे। दूसरे मुझपर अविश्वास करें यह एक बार सही मानू पर हरिभाऊ भी इतने दिन तक मेरी उपेक्षा कर सप्ते पर न आये यह बात मुझे खल रही थी।

पर हरिभाऊ अव्वल आदमी। पहले वे मुझे 'अबे! तु रे' कहा करते थे। परन्तु इस

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सयम का मेरा वेश देखकर आदरार्थी संबोधन से ही उन्होंने शुरुवात की यह बात मैंने पकड़ी।

मैं गाड़गे महाराज सम्प्रदाय में सम्मिलित हो जाने की बात निवृत्ति बुवा धनगर ने उन्हें बताई थी यह मुझे मालूम था।

"गाड़गेबाबा सच में आ रहे हैं।" उन्होंने पूछा।

"मैं झूठ किसलिये बोलूँ। वे अगर न आये तो लोग मेरी कैसी ठुकाई करेंगे यह क्या मुझे मालूम नहीं।"

फिर हरिभाऊ गंभीर हो गये - बोले,

"क्या-क्या हुआ? क्या-क्या रहा।"

सभी कुछ होने का है। बाबा के कीर्तन की बात दूर गाँव तक पहुँच चुकी है। पांच दस हजार आदमी इकट्ठा होगा। उन्हें भूखा तो भेजा नहीं जा सकता वापस।

"अच्छा फिर।"

अनाज इकट्ठा करना है। रसाई की तैयारी करनी है। बाबा इतने दूर से आयेंगे उनको खर्चा देना होगा।

फिर हरिभाऊ भागदौड करने लगे। पहले उन्होंने ही कुछ चावल दिये। दालभात की बात ठहरी। बरतनों के पीछे वे पड़ गये। हरिभाऊ जैसा साहूकार खड़ा रहने पर बहुतों ने कंधा बढ़ाया। परभणी उतनी नहीं फिर भी सामान्य व्यवस्था हो ही गई।

पर जैसे मेरी परीक्षा बहुतों को लेनी थी। बाबा को अकोला लानेवाली मोटर को भी मेरी कड़ी परीक्षा लेनी थी नहीं तो वह रास्ते में ही खराब क्यों होती?

बाबा दोपहर तक आयेंगे यह बात तय थी। सुबह ही अंतिम भजन कर मैंने वीणा नीचे रख दी थी। रसोई की व्यवस्था वहीं के लोगों ने संभाली हुई थी। जो कुछ करें वे जाने मैंने सोच लिया था। मैंने बाबा के कीर्तन का स्थान तैयार करवाने का काम संभाला था।

दो बल्लियाँ गाड़ उनपर एक बाड़ी बल्ली बंधवाई। उसपर गैसबत्ती बांधने की व्यवस्था करने को कह दिया। जितनी हो सकी उतनी तोरण झंड़ियाँ लगवा ली।

फिर नदी पार कर हम दस बीस आदमी झांज मृदंग के साथ बाबा की बाट जोहते जम गये।

समय गुजरने लगा मैं अधीर होने लगा। बाबा के आने का कोई संकेत नहीं मिल रहा था। गाँव के कुछ खाली दिमाग लोग हमारे चारों ओर इकट्ठे हो गये थे। जैसे-जैसे बाबा को आने में देर होती गई वैसे-वैसे उनकी बकवास बढ़ती गई।

"अरे हम तो शुरू से कह रहे थे।"

"लफंगो के कहने पर क्या बाबा आते हैं।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"और ये तो खूब जाना पहचाना. . . . ।"

"यहाँ से तभी तो यह भाग गया था।"

"ऐसा नहीं यार।"

"ऐसा वैसा नहीं, भुरता बनना चाहिये ऐसे लोगों का।"

मैं सहम गया। सोचा, आ गई अब अपनी शामत। उधर अगस्ति क्षेत्र पर भी गांववाले इकट्ठा होने लग गये होंगे क्या कहूँ उनसे।

बाबा नहीं आये।

रोने को हो गया। सोचा साला फूटा भाग्य बचपन से ही पीछा किये हुए है। कभी भी उसने सुख नहीं लगने दिया।

जो-जो बुरा हुआ था वह सब भर-भरा कर याद आता गया। अच्छे की याद ही नहीं आती ऐसा समय था वह।

भजनी लोगों में कुछ गंजेड़ी थे। बाबा का आना नहीं हो रहा यह जान उन्होंने चट चिलम जमायी। कुछ लोग झांझे, मृदंग मेरे पास छोड़ इधर-उधर भटकने चले गये। मुझे वहीं रहना था चाहे कुछ भी हो जाये। दूसरों के लिए बाबा का आना सामयिक महत्त्व की बात थी। मेरे लिए तो वह जीवन मरण का प्रश्न था। इधर के लोग भी भड़काऊ दिमाग के। जो तहसीलदार खान को दिन दहाड़े मार कर टांगे में ड़ाल जला सकते थे वे मुझ जैसे की क्या गत बना सकते थे।

बाबा आयेंगे इस भरोसे वे दूर-दूर से रात बेरात चलकर यहाँ आये थे। यह आदमी झूठ बोल रहा था यह उनके समझ में आ जाये तो मेरी हड्डी भी न मिले यह मैं जानता रहा।

आखिर पक्का निश्चय कर में कीर्तन स्थानपर लौट आया। बत्तियाँ सुलगाई। बाबा का कीर्तन जहाँ होना था वहाँ टांग दी। वहीं जाकर खड़ा हो गया। चारो तरफ लोग जमा थे। बड़े गुस्से में। उनके सामने बोला।

"देखिये बाबा अभीतक नहीं आये। वे दूर से आनेवाले थे। शायद मोटर खराब हो गयी होगी।"

"उन्होंने हामी भीर और वे नहीं आये ऐसा कभी हुआ नहीं।"

"आज ही ऐसा क्यों हुआ कुछ समझ नहीं पड़ता।"

"मैं आप लोगों से माफी मांगता हूँ।"

सामने से आवाज आई।

"साले झूठे अभी तुम्हारी हड्डी पसली नरम करता हूँ। बाबा आयेंगे यह कसम खा तुमने कहा ही क्यों?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"मेरी हड्डी पसली नरम करके आपका संतोष हो रहा हो तो मैं तैयार हूँ।"

हाथ सीनेपर बाँध मैं खड़ा था।

सामने वह गुस्से में भरा समाज। और इधर खड़ा मैं लंगोटीबाज। अस्थिपंजर।

हाथ बांध खड़ा रहा। पर ब्रह्माण्ड जैसे घूम रहा था। पिताजी ने एक बार पीटा था आगे भी कई बार मारपीट हुई थी मेरे साथ। वे सब प्रसंग अलग थे फिर भी. . . .। और यह अलग था।

तब अकेले दूकेले हाथ का मार खाया था। इस समय सौ पांचसौ लोग मेरे सामने थे। एक-एक चपत भी सब लोग मारते तब भी मेरी चटनी हो जाती। यह बात पक्की।

मेरा उनके सामने खड़ा रहना लेकिन बहुत ठीक रहा। शायद इसी कारण उन्होंने सोचा ये भाग तो नहीं गया। पक्का खंबा बन खड़ा है। उसके साथ ही किसी से उसने मुठ्ठिभर दाना और गुड के सिवाय कुछ लिया नहीं है। इसलिए हो सकता है उसने झूठ न कहा हो।

बाबा के आने में मोटर के कारण गड़बड़ी हुई होगी। कुछ ही देर बाद किसीने कहा,

"अरे ऐसे खड़े-खड़े क्या कर रहे हैं, हम लोग भजन ही कर लें।"

झांजे झनझना उठी। भजन शुरु हो गया था। उस समुदाय के आगे खड़े-खड़े कीर्तन करने की हिम्मत उस दिन मेरी नहीं थी। फिर भी खड़ा रहा। बेबस, लगता रहा अब गिरा तब गिरा, बेहोश होकर।

दूसरा दिन हुआ। हरिभाऊ भाटे मेरे पास आये। मैं मरासा उनके सामने खड़ा हो गया। ढ़लना चाहते आँसूओं को बड़ी कठिनाई से रोक रहा था मैं। हरिभाऊ बोले,

"इकट्ठा हुआ अनाज पका खिला दें। जो लोग आये हैं बेचारे भोजन करके ही जायेंगे।"

मैंने मुंडी हिलाई केवल, हरिभाऊ ने कहा -

"आप चलो रसोड़े तक"

मैंने कहा "मुझमें इतनी हिम्मत नहीं है आज।"

कितने ही मुझे भलाबुरा कहते अपने गाँव लौअने लगे-रसोड़ा चेता देख कितने ही फिर रूक गये।

केवड़ा बन के पास आमराई थी। वहीं पड़ा था। मेरे पास कोई आ जा नहीं रहा था। हरिभाऊ रसोड़े के पास खड़े थे। बड़ी-बड़ी देगचियों में भात और दाल चुर रही थी। किसी का होश नहीं था। मानो किसी अंधकूप में डूबा था। अच्छे की न थी बुरे की। ऐसा ही पड़ा रहा बहुत समय तक उठा ही नहीं। कितना समय निकल गया पता नहीं। पागल की तरह दौड़ता एक आदमी अंदर आया बोला,

"गाड़गेबाबा आ गये।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रथम मुझे कुछ बोध न हुआ। लगा यह होश बेहोशी का ए पार वो पार है।

लेकिन फिर मैंने पूछा -

"क्या हुआ?"

"गाड़गेबाबा आ गया।"

तो अंत में बाबा आये थे। उन्होंने अपना वचन खरा किया था। देखिए बाबा कल मै। कितनी असहाय स्थिति में था। मन में आया बाबा से कहूँ।

उठा उतने में हरिभाऊ आये बोले-

"सुना आपने, आ गये बाबा।"

वैसे ही दस बीस लोग नहदी की ओर दौड़े तो देखा बाबा और उनके पीछे-पीछे बड़ी भरी भीड़ नदी उतर इस पार आ यगे थे।

बाबा के पास गया। भावना का प्रदर्शन करना उनको नापसंत था। यह मालूम था। नमस्कार किया और उनके पीछे-पीछे शंकरराव संभूस थे उनके साथ चलने लगा। वे बोले-

क्या करें। मोटर फेल हो गयी। आखिर में टैक्सी से आना पड़ा। यहाँ मुझपर कल्प-कल्प गुजर गया वह बताने में कोई लाभ न था। बाबा रसोड़े के पास पहुँचे। सब अपने हाथ में लिया मैदान चूने सें खीचा, पांत बैठायी। रसोड़े में जो पका था वह परोसवाया। फिर दिन में आमराई में कीर्तन के लिए खड़े हो गये। चारो ओर दो चार हजार की भीड़। स्त्री पुरुष, अकोला के मारवाड़ी, उनकी घरवालियाँ सफेदपोश सब-सब थे।

बाबा ने कहा।

"तुकाराम की कही बात है।"

"कई भोज्य नाना परी कई सूखी रोटियाँ" कैसा-कैसा समय आता है। रात आपने मेरा इन्तजार किया होगा। हमारा ये बाबू ये महाराज इसने फंसाया कह-कह इसपर गुस्सा किया होगा। और उसी समय संगमनेर के पास जंगल में मोटर खराब हो जाने से रुके पड़े थे हम। सारी रात वहाँ जंगल में गुजारनी पड़ी। आप हमारे बच्चे पर यहाँ आँखे निकाल रहे थे। और हम वहाँ हाथ पर हाथ धरे मोटर ठीक होने का इंतजार कर रहे थे।

मन का सारा मैल धुल गया। आखिर में बाबा आये थे। सप्ता मैंने किया था। उन्होंने अपने मुँह से मुझे बच्चा कहा था। उस गाँव में जहाँ मैंने एक बदनाम औरत के साथ भीख माँगी थी।

यह मुसीबत कभी तो आयेगी ही यह मैं जानता था। बहुत पहिले से ही। परन्तु बाबा का मुझपर अनुग्रह था इसलिए उसको मैं टालता रहा। कई बार कहता था कि मुसलमान का धर्मपरिवर्तन कर जैसे हिन्दू कर लिया जात है वैसे ही किसी एक विधि से मुझे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

अब्राह्मण कर लें। ब्राह्मणवंश में जन्म हुआ यह कोई मेरा अपराध नहीं। फिर मुझे हर बार क्यों जलील करते हो।

बाबा के पत्र अधिकतर मैं ही लिखा करता था। ये बात तो पहले ही कही है। स्वयं उनकी और से ये पत्र जाते थे इसलिए मायना मैं इस तरह लिखता था

श्री कर्णसमान उदार, दानशूर, अमुक साहेब को

गाड़गेबुवा के अनंत कोटि नमस्कार। पत्र लिखने का कारण है कि. . . . .

चिनगारी पड़ी वह इसी मायने पर से। मुझ से ज्येष्ठ एक गुरु बंधु नाराज होकर मुझसे बोले

"ऐसा मायना लिख तू बाबा की कीमत कम करता है।"

साश्चर्य मैंने पूछा - 'कैसे?'

"गाड़गेबुवा की जगह सदगुरु गाड़गे महाराज ऐसा लिखना चाहिये। भौंचक मैंने कहा।

"देखिये वह पत्र स्वयं बाबा की तरफ से लिखा जाता है। जैसे कि उन्होंने ही खुद लिखा हो। फिर वे खुद को ही सदगुरु गाड़गे महाराज कैसे लिखेंगे?"

गुस्से में वे बोले

"जिवाजी कलमदाने की तरह तू बाबा का कभी गला काटे बगैर रहेगा नहीं।"

मैं लड़खड़ा गया। बाबा का गला काटना ये कल्पना ही इतनी ड़रावनी थी कि मेरा लड़खड़ाना सहज था।

बात थी पंढरपुर की। बाबा धर्मशाला के पीछे एक बबूर के नीचे खड़े थे। मैं उठ उनके पास गया। मेरी तरफ नजर जाते ही वे बोले -

"क्या हुआ माहेराज - यह बाबू ऐसा है कि इसको हमेशा कुछ न कुछ होता रहता है।"

मेरे पीछे वे गुरुबंधु भी आ गये। उनके साथ और चार पांच साथी। आते ही बाबा से बोले

"बाबा ये लड़का बदमाश पालिटिक्स वाला है। यह कभी न कभी आपको गड्ढे में ड़ालेगा।"

बाबा ने आश्चर्य से पूछा

"क्या हुआ?"

"अजी ये हर बार चिठ्ठी लिखते समय आपका अपमान करता है।"

"वो कैसे। हमारे गनपतराव कोठी हैं उन्हें बुलाव।"

"थोड़ी देर में गनपतराव आ गये। आते ही बाबा ने उनसे कहा -

"ये क्या कहते हैं देखना जरा।"

उन गुरुबंधू ने मुझपर वह आरोप फिर से गनपतराव के सामने दुहराया। गनपतराव ने आश्चर्य से पूछा -

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"अपमान करता है कैसे क्या?"

"अजी ये बामण है ना। ये बाल से गला काटेगा ही।"

"फिर-फिर वही-वही क्या कह रहे हैं। क्या हुआ क्यों नहीं कहते?"

"सदगुरु श्री गाड़गे महाराज ऐसा मायना लिखने की जगह मैं केवल गाड़गेबुवा लिखता हूँ" ये आरोप वे फिर-फिर करते रहे। बाबा ने मेरी तरफ देखकर पूछा - तुम्हें क्या कहना है रे बाबू

संयत स्वर में मैंने कहा -

"ये कह रहे हैं वह ठीक है बाबा। परन्तु मुझे लगता है कि कोई भी आदमी खुद को ही श्री सदगुरू और महाराज नहीं कहेगा।"

गुरुबंधु भड़ककर बोले

"भटुरडे तुम बाबा को क्या सामान्य आदमी समझते हो। कोई भी रास्ते का राहगीर और बाबा ये समान ऐसा तुम्हें कहना है।" उस गुरुबंधू के साथ आये जवान कहने लगे

"इसे तो बताना ही पड़ेगा। बामणभट कढ़ी आंबट।"

और ये सब बाबा के सामने शुरू था। आखिर में मैंने बाबा से कहा

"बाबा अब आगे से मैं आपकी चिट्ठियाँ नहीं लिखा करूँगा।"

बाबा बोले

"तुम्हें कौन क्या कहता रे बाबू- मैंने तुम्हें कुछ कहा क्या?"

बहुत बुरा लगा। मेरे जाति का अभिमान मैंने कभी पाला नहीं। अमुक एक कुल में जन्मा इसलिए किसी का अपमान नहीं किया। स्पृश्य, अस्पृश्य का भार कभी ढ़ोया नहीं। इसके हाथ का खाना, उसका नहीं ऐसा कोई बंधन नहीं पाला। उलटे यह सब खतम करने के लिए ही प्रयास करता रहा। इसके लिए बहुतों की गालियाँ भी मैंने खाई चुपचाप।

ऐसा होते हुए भी किसी एक कुल का हूँ इसलिए मैं मेरे लिए अति आदरणीय गुरुदेव का गला कभी बाल से काटने का प्रयास करूँगा यह आरोप असह्य हो गया।

यह विरोध अधिक-अधिक उग्र होता गया। अब यहाँ रहना धीरे-धीरे कठिन होता जायेगा यह मन में समाया। नाना प्रकार के आरोपों की धूल उड़ाई जाने लगी। गंदे और बीभत्स।

अंत में मैंने मन में ठान ली। अब ये रमते जोगी और जगत उद्धार का पागलपन कोने में रख देना होगा। कुछ थोड़ा अध्ययन करना होगा।

आलंदी की यात्रा लौटने लगी। मैंने बाबा के दर्शन किये। मेरी बेचैन मनस्थिती देख उन्होंने मेरा मन जैसे जान लिया - बोले

"क्या है रे बाबू?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मैंने कहा - मैं चार पांच माह देहू रहने की सोच रहा हूँ।

"वहाँ रहकर क्या करोगे?"

"धर्मशाला में जो होगा वह काम करुँगा और अभंग याद करुँगा।"

"काम का रहने दो जी। तुम जाओ देहू। मुझसे पत्र लेकर। तुम्हारे खानेपीने की व्यवस्था वही हो जायेगी।"

बाबा का पत्र लिया माने मैंने ही लिखा। वह लिया और तुरन्त देहू के लिए रवाना हो गया। वह मैंने लिखा हुआ बाबा का अंतिम पत्र।

देहू तो गया पर वहाँ भी रहा न जाये। मन उदास हो गया था। वह उपरी उदासीनता झटक ड़ालने का प्रयास करने लगा। आलंदी में 'वारकरी शिक्षण संस्था' इस नाम की संस्था गुरुवर्य जोग महोदय ने स्थापित की ीी। उस संस्था में विद्यार्थी रहते हैं और ज्ञानेश्वरी का अध्ययन करते हैं यह मुझे मालूम था। एक दिन वहाँ गया भी था। वेदमूर्ति मारुतीबुवा गुरव नाम के शिक्षक छात्रों को ज्ञानेश्वरी पढ़ा रहे थे। वह सब सुना देखा था। मन वहीं अटक के रह गया था।

मेरा अध्ययन अकटो बिकट था। कीर्तन में अच्छे जानकार श्रोता देख मेरा मन संकोच से भर जाता। ज्ञानेश्वरी पढ़ लेता था इतना ही। बहुत सामान्य अर्थ समझ में आता था। यह बिलकुल ठीक नहीं ऐसा तीव्रता से लगता था। बहुत पंड़िताई नहीं पर ज्ञानेश्वरी समझ न पा सकूँ माने कुछ भी नहीं। ऐसा प्रश्न मेरा मन अपने से ही पूछने लगा।

अंत में तय किया। देहू के पास के भंड़ारा पहाड़ी पर जाकर रहना और वहाँ ज्ञानेश्वरी के अध्ययन की पूर्व तैयारी करना। अभंग कंठस्थ करना और ज्ञानेश्वरी के कुछ पारायण करना।

देहू से पूणें गया। कुछ थोड़ा परिचय था। बाबा के कारण हुआ। उन परिचितों के पास जाकर दो-दो चार-चार आने मांगे। उस पैसे से ज्ञानेश्वरी और तुकाराम गाथा दो ग्रंथ खरीदे। रेल में बैठा। चिंचवड़ से अगला स्टेशन शेलारवाड़ी। वहाँ उतरा और भंड़ारा पहाड़ी की राह पकड़ ली।

राजाराम परीट नाम का मुझसे दो साल छोटा लड़का बाबा की संस्था में था। अध्ययन करने की उसकी बड़ी बच्छा थी। मैं और वह अध्ययन की बातें किया करते।

मैं देहू अध्ययन के लिये गया हूँ यह सुनते ही वह देहू आया। वहाँ उसे मालूम हुआ मैं भड़ारा गया हूँ। वह मेरे पीछे-पीछे भड़ारा आ गया। उसे देखते ही साश्चर्य मैंने पूछा

"अरे राजाराम यहाँ कहाँ?"

"आपको खोजते हुए।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"लेकिन मैंने तो अकेले रहना तय किया है।"

"मेरे कारण कोई भी कष्ट तुम्हें नहीं होगा। दोनों मिलकर मधुकरी मागेंगे और पढ़ेंगे।"

"लेकिन।"

"अब आप मेरे निश्चय में बाधा मत बनिये मैंने पक्का विचार किया है।"

कहना ही पड़ा 'तथास्तु।'

भंड़ारा पहाड़ी देहू के उत्तर पश्चिम में है। शिखरपर पांडुरंग का मन्दिर है। आगे उससे अलग एक सभामंड़प है। उससे जुड़ा एक दालान एक कुवाँ। पचास एक कदम दूर बंबई के किसी व्यापारी ने बंधवाया हुआ।

ऐसा यह स्थान अति एकान्त। अब उपर झाड़ी झुरमुट नहीं है। पहिले होगी। शान्ति जैसे वहीं की होकर रहने आयी हुई है। ज्ञानेश्वर माँ ने तपश्चर्या का स्थान कैसा हो लिखा है।

जो संती बसविला ठावो
संतोषासि सावावो
मना होय उत्सावो
धैर्याचा जेथ।

वह स्थान संतो द्वारा बसाया हुआ हो। संतोष के लिए वह सहायक हो। मन धीरज से वहाँ भरभर जाये।

आणीकही एक पहावें
जे साधकी वसतें हो आवे
आणि जनाचेनि पायरवें
मैळेचिना

उस जगह पर साधक आकर साधना करें पर अन्य लोगों के पगड़ंडी से वह दूर ही हो। उनके पैरधुली से वह मैला न हो।

हा आतपुही अळूमाळू
जाणिजे तरी शीतलू
पवनु अति निश्चळू
मंद झुळके

वहाँ पर धूप कष्टकरी न हो। मुलायम हो। शीतल वायु की मंद-मंद लहरें वहाँ नित्य बहती रहें।

बहुत करोति निशब्द
दाट न रिगे श्वापद
शुक हन षटपद
तेउते नाहीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वहाँ शेर न हो। वन्य पशू का भी वहाँ जाना आना न हो। वहाँ तोते भी आकर शोर न करते हों वैसे ही भौंरे

भंड़ारा इन सारे लक्षणों से युक्त था। विशेष यह कि यह स्थान संतोने बसाया था। महापुरूष तुकाराम बाबा इस पहाड़ी पर बार-बार आकर बैठते थे। बाबा को जहाँ साक्षात्कार हुवा वह भामचन्द्र पहाड़ भी यहाँ से बिलकुल पास ही है।

भंड़ारा के पश्चिम रास्तेपर दो तीन बुद्ध कालीन गुफाएँ है। उसमें से एक करीब चालस फूट लंबी चौड़ी है। सामने पानी के हौज हैं। बाँये हाथ की ओर एक स्तूप भी खुदा हुआ है।

उस गुफा में किसी भक्त ने उत्तरकाल में पांडुरंग की मूर्ती की स्थापना की। गुफा के बाहर बाबा के एक शिष्य राजाराम बुवा वैश्यवाणी ने एक टीन छप्पर ड़ाला हुआ। चंपा के दो एक पेड़ बस। ऐसा वह शांत निर्मल स्थान।

मैं और राजाराम परीट दोनों एक दो दिन उपर के मंदिर में रहे। हमारे पास ओढ़ने बिछाने को कुछ भी नहीं। उपर जाड़ा बहुत। दालान में एक बुढ़िया काफी रहती थी। मंदिर में एक पुजारी। उनके पास ओढ़ने बिछाने के लिये इतना उतना ही। अन्यत्र घूमते घामते किसी लकड़ी का जुगाड़ कर लेते थे। जाड़े की रात कट जाती थी। वहाँ पहाड़ पर वह भी संभव न था।

फिर यह तय किया कि गुफा में जाकर रहें।

तय करते ही टालाटुली करने के लिए फुरसत कहाँ थी। जो होना करना है वह तत्काल करना। तुरन्त उठे और जाकर गुफा पर कब्जा बनाया।

अब यहाँ कुछ समय रहना है तो कुछ जोड़ना पड़ेगा। मरे पास वे दो ग्रंथ और टमरैल और एक लठिया। पहिरने के लिए लंगोटी का एक महावस्त्र। उसके सिवाय खुला आकाश।

मधुकरी की भिक्षा माँगने के लिए एक छाटी तो चाहिये ही। फिर राजाराम की लपेटने की एक साफी फाड़ी, उसकी झोली बनाई।

गुफा में सामान कुछ भी नहीं था। फूटी बालटी मिली जरुर। उसके छेदों में चिंदिया फंसा काम लायक बनाया। हम दोनों के पास टमरेल थे। उसमें से एक सुबह शौच और नहाने के लिए रखा। दूसरा भिक्षा के लिए।

कसबे गव्हाण में चांदभाई से इलाज करवाते समय तेल, नमक, मिर्च, खटाई, मिठाई पांचों रस वर्ज थे। एक माह में आदत ही गई थी वही व्रत आगे चलाया था। भिक्षा में मेरी ये सब चतुराई कोई चलने नहीं देता था। मैंने उसपर भी एक उपाय खोज लिया था। जो अन्न मधुकरी में मिलता उसमें से भात, रोटी अलग निकालना। बचा हुआ अन्न पानी में से निकालना। षड़रस धुल जाते रह जाता केवल अन्न। ब्रह्मभाव से उसे ग्रहण करता।

यह हुआ मेरा। राजाराम का ऐसा कोई व्रत नहीं था। चरपरा उसे अधिक चाहिए। एक दिन बाद मैं मधुकरी के लिए जाता तो उसके लिए चटनी मिर्च जरुर मांगकर लाता। उमर में उससे बड़ा था इसलिए उसकी व्यवस्था करना मानो मेरा कर्तव्य ही था। इससे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अधिक लाड़ मैं उसके कर हीं सकता था। इसलिए इतना करना तो जरुरी ही था।

गुफा में लगा लकड़ी का दरवाजा बंद कर लेने बाद जाड़ा लगता नहीं था। पहाड़ में खोदी हुई गुफाएँ गरमी में ठंड़ी और जाड़े में गरम होती है। समस्या मिट गई। राजाराम चबुतरे पर सोता, मैं नीचे पांडुरंग के सामने पसर जाता।

ऐसी सारी व्यवस्था एक दो दिन में लग पायी। तीसरे दिन से हमारा दिनक्रम शुरु हो गया।

बड़े भोर झुरमुटे में ही जग जाता। उठ बैठता। उस दिन तक याद किये अभंगों आदि की मन में आवृत्ति करता। रातभर आराम हो जाने के कारण बुद्धि ताजी होती। सोने के पहिले एक बार तबतक याद किये हुए को पढ़ लेता। नियम से। तुरन्त सो जाता।

भोर उठते ही पहला काम रात को पढ़ा याद करना। पुस्तक के बिना पंक्तियाँ सामने आती जाती।

आवृत्ति हो जाने के बाद बाहर हो आता। जाड़ा था। कार्यक्रम निपट फिर अंदर के गरम वातावरण में लौट आता। फिर होती भजनों की शुरूवात। पहले रूप अभंग।

ज्ञानेश्वर माँ का "रुप देखते लोचनी. . . . . .।" यह अभंग प्रारंभ में कहने की वारकरी लोगों की पद्धति है। वहीं से गाना शुरू करता। उसे गा लेने के बाद अन्य संतो के रुप विषयक अभंग। रुप अभंग माने जिसमें परमात्मा के सगुण रुप का वर्णन है। कितने ही रुप-अभंग अप्रतिम है। शब्द लालित्य मानो स्वर्गीय है। रुप अभंग हो जाने के बाद भूपाली गाना प्रारंभ करता। ये भूपालियाँ अतिशय भावगर्भ हैं। इनमें तुकाराम बाबा की रचित ही अधिक हैं -

चित्त मेरा चरणों में तेरे
ऐसा कुछ करो बना रहे
बाँह मेरी पकड़ के
भव सागर पार उतारे ॥१॥

चतुरों की शिरोमणी तू
गुण सुंदरता की खान तू
मुगटो का मणि तू
धन्य विठोबा तू ॥२॥

तिमिर को कर इस
उदय होकर प्रकाश
तोड़ आशापाश
कर हृदय वास ॥३॥

मूढ मैं व्यस्त कहीं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चिंता मेरी कर
तुका कहे चरण सिर
रखूँ मुझे अब राखना ॥४॥

ये इतना होते करते बाहर साफ प्रकाश फैल जाता। ओस की झीनी चादर सब ओर ब्रिछी रहती। पीछे से आता प्रकाश उस चादर पर पड़ प्यारासा चमकता। गुफा के बाहर निकलता। जाड़े के दिनों में पत्थर के हौज का पानी मुलायम गरम होता। चार बालटी पानी शरीरपर ड़ाल नहाता। टमरेलभर पानी गुफा में ल जाता। वहाँ गोपीचन्दन का बड़ा सा गोला रखा मिला था। वह तलवे पर घिसता माथोपर लगता। मूर्ति के चरण धोताा उसे पोछने के लिए कोई वस्त्र नहीं था। फिर बाहर से सफेद चंपा के दो फूल लाकर मूर्ति के मस्तक पर रखता। और फिर सकलोपचारार्थ नमस्कार समर्पयामि।

पहिनने की एक लंगोटी स्नानके समय उतार दूसरी टाट की पहनता। पहली फिर चुबुक चुबुक धोता। शरीर पोछने का प्रश्न ही नहीं था। पहिले तो वह कोई सलोना शरीर रहा ही नहीं था और दूसरी महत्त्व की बात यह कि पोछने के लिये आकाश के सिवाय मेरे पास कुछ था ही नहीं।

इस तरह राजा गोपीचन्द का स्नान निपटने के बाद दोनो ही गाथा उठाते और गुफा के बाहर झुरमुट था उसके नीचे जाकर बैठ जाते। तुकाराम गाथा में करीबन साढ़ेचार हजार अभंग हैं। मैंने तय किया उसमें से उनके भक्तिपर सारे अभंग याद करना। मैं राजाराम को अभंग चुनकर देता याद करने, यही मेरी हेड़मास्टरी थी।

गुफा के सिरपर कोई पच्चीस कदमपर एक काँड़ेसावरी की बड़ी सी झाड़ी थी। उसके पेट में अच्छी सी जगह थी। पालथी मारकर बैठ सके या फिर थोड़ा लुढ़क सके इतनी बड़ी। वह जगह साफ कर ली। कांटा तिनका दूर किया। कांडेसांवारी का फैलाव उपर छाया किये था एक दो ही टहनियाँ आगे आयी हुई। उनको केवल तोड़ ड़ाला बहुत सुंदर खोह बन गई।

वहाँ बैठते। तुकाराम के अभंग याद करते। बचपन में बिना अर्थ समझे शब्द के आगे शब्द स्मरण रह जाते हैं। बढ़ते वय में उन्हीं शब्दों का अर्थ समझ में आने पर जो आनंद आता है वह कहा नहीं जाता। तुकाराम की भाषा की सम्पन्नता तो इतनी मनमोहिनी कि समय कब निकल जाता पता ही नहीं लगता।

नाम लेते मन बुझे
जिव्हा से अमृत झरे
ऐसे सारे लाभ के सगुन
होते जाते ॥

मन रंगा-रंगा
तेरे चरणों स्थिर हुआ
कृपा ऐसी हुई
विठ्ठल कारण ॥

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

सुख से मिलने सुख आया
मुख को खजाना मिला
आनंद का अब
तुका कहे लेखा नहीं॥

ऐसा एक-एक अभंग सामने आ जाता कि जिसके अर्थ चिंतन में घंटो समय निकल जाता। ऐसा लगता जैसे जीभ पर मिसरी की ड़ली रखी है। नीचे की चट्टान गड़ती नहीं। कांटा चुभता नहीं। मन निरुपमये सुख से भर-भर जाता।

तबतक दोपहर हो जाती। फिर मधुकरी के लिए निकलते। बारी-बारी। इंदुरी गाँव सामने था। जांबुर्ड, सुदुंबर ये दो गाँव पहाड़ के पीछे थे। पहाड़ चढ़कर फिर उतरना पड़ता। रोटी के लिये कपड़ा, सालन के लिये टिनपाट और एक लाठी। कुत्तों से बचाव के लिये। गाँव में जाना दरवाजे पर खड़ा रहना किसी भी घर के । कहना वारकरी को मधुकरी

माँ बहनें रोटी लेकर आती - पूछती

"किसका रे बच्चा तू?"

हम कहते - हम गाड़गेबाबा के आदमी

"किसके यहाँ से आये हो?"

"पहाड़ पर रह रहे हैं।"

"पढ़ाई वढ़ाई कर रहे हो?"

"हाँ।"

ऐसा उन गाँवों से परिचय हो गया। फिर-फिर तो लोग हमारे लिये रोटी अलग निकाल रखने लगे। रोटी के साथ कढ़ी, दाल, लाल सुर्ख सब्जी, लहसुन या ऐसी ही किसी की चटनी। कुछ भी न हो - चुक गया हो फिर नमक या गुड की ड़ली।

रोटी भात के सिवास के सारे उपांगो से मुझे कोई सरोकार न था। परन्तु राजाराम के लिये उसे ले आना पड़ता। गदबद ड़ग भरते पहाड़ चढ़ गुफा पकड़ता।

पांडुरंग को भोग लगाना। फिर रोटी अलग और सालन अलग। कभी कभाद कोई मूँगफली के दाने देता वे मैं अलग रखता उसके साथ रोटी खाने।

राजाराम रोटी खाते सकुच जाता। कहता "आप सालन लेते नहीं मुझे आपके सामने कढ़ी पीते शरम लगती है।"

मैं बड़े दिल से कहता - "अरे मेरा व्रत जो है उसके लिये तू क्या करेगा?"

फिर वह शाम के समय पहाड़ उतर जाता। खेतों में घुसकर मिले वह फूल पत्ती फली मेरे लिये तोड़ लाता। मैं उसे कहता "अरे ऐसा करना चोरी ही कहलाता है।"

वह कहता "बहुत तोड़ा तो पाप। एक अकेले के लिये तोड़ा तो उसका कुछ नहीं।"

राजाराम ठिंगना, कालासांवला, नाक नक्श वाला था। मुझपर उसकी बड़ी श्रद्धा थी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उस अध्ययन काल में मुझे सुख लगे इसके लिये वह मेरा ध्यान रखता।

परन्तु मैं उतना ही कठोर था। बाबा के साथ रहते जो सहन करना पड़ा उससे मैं अपने पर ही बड़ा क्षुब्ध था जैसे। भंड़ारा पहाड़ी पर आकर मैंने एक नियम बना ड़ाला।

दिन में एक बार भोजन करना। दूसरी बार केवल पानी पीना। चौबीस घंटे की चाबी एक बार देना।

राजाराम को इससे बड़ी अलसेट होने लगी। रात का भोजन वह गुफा के बाहर जाकर करता। टुरटुराता भी।

"मेरे लिये ही सही एखाद कौर तो खा लिया करो" वह कहता मैं मुस्कराकर कहता - "उससे क्या होगा?"

"मैं पेटभर बिना संकोच खा सकूँगा।"

"अरे मैंने नियम किया मैं उसे तोड़ूँ?"

क्या उत्तर देता बेचारा।

कई बार दोनों को एक बार ही पूरा पड़े इतना ही अन्न मिलता। उसे रात को उपासा रहना पड़ता। भूख का वह कच्चा था। भूख उससे सहन नहीं होती थी। उसका वह रात को भूखा रहना मुझसे भी देखा न जाता। परन्तु मेरे पास उसका कोई इलाज नहीं था।

एक दिन वह बोला

"मैं घूमने जाता हूँ। कहं से मन दो मन बाजरा लाता हूँ। पीसकर रखें और रात की एखाद भाकरी ठोक लिया करें।"

"न जाओ" - ऐसा कह न सका। बड़े दुखी मन से वह पहाड़ उतरकर कहीं से अनाज लाने गया। जाते उसके पैर उठ नहीं रहे थे।

हम दोनों बहुत हिलमिल गये थे। वह मुझसे पूछ कर फिर अध्ययन करता। अभंग का मुझे सूझता अर्थ मैं उसे बता देता। पर मैंने कभी उसपर बड़प्पन नहीं चलाया। उसे मेरा लगाव हो गया था।

भंड़ारा रहने आये उसके दूसरे दिन की बात। हमने तबतक गुफा में रहने का निर्णय नहीं लिया था सभी कुछ सोचना, करना था। पहिले तो अन्न प्राप्त करना था।

सोचा इसीलिये कि पहिले कहीं से भाकरी माँगकर लाये; दो दिन चले इतनी। शाम को हम उत्तर दिशा से पहाड़ी उतरने लगे। भाकरी लाने।

एक दूसरे से बतियाते हम पगडंड़ी उतर रहे थे। आधी पहाड़ी उतर आये तो उपर से पुकार सुनाई दी। राजाराम रुककर बोला -

"कोई पुकार रहा है।"

"पुकारने दे। भोजन के लिये रुकने को कह रहे होंगे। कोई भक्त आया होगा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

वारकरियों को जिमानेवाला। आज जिमा देना। कल. . . . ." मैंने कहा।

"चलो भाकरी जुटा लाये। आज उपर भोजन लाभ हो गया तो वह कल परसों काम आयेंगी ही।"

भूख के नशे में अपनी धुन में हम तेजी से टीले और गड्ढे उतर रहे थे। यहाँ, वहां कहीं भी हमारा ध्यान नहीं था। तबतक उपर से आ रही पुकार में ड़र बढ़ गया। दोनों ही ठहरकर उपर देखने लगे। क्या है क्या? क्या उपर ड़ाकू आये हैं। ध्यान दिया तो उपर से गर्गशा सुनाई पड़ा -

"पीछे मुडो- पीछे मुडो।"

"हम मुँह पर दोनो तलवों की पोंगी बनाकर चिल्लाये।"

"किसलिये?"

"अरे आगे देखो तुम्हारे नीचे तली में।"

देखा।

ड़र के मारे तुरन्त बोलती बंद हो गई।

एक बाघ नीचे हमसे तीस पैंतीस हाथ दूर मुँह जमीन की ओर किये जा रहा था।

क्षणभर रक्त शरीर में जम गया जैसे। जीभ तालू से चिपक गई। आँखों के सामने सारा चक्करघिन्री हो गया।

दूसरे ही क्षण स्वरक्षण की बुद्धि जागी। हम दोनों ही एक दूसरे को पीछे खींचते उपर दौड़ने लगे। जी जान से। पैर के नीचे क्या है इसका जरा भी सोच न करते हुए। कांटा, कंकड न देखते हुए। सांस धप-धप देह में रहना न चाहती जैसे।

मैं राजाराम के आगे दौड़ रहा था। राजाराम मेरी आगे। जाने कैसे उपर पहुँचे और वहीं गिर पड़े बेसुध। क्या हुआ यह कहने सुनने की मनस्थिति में दोनों ही नहीं थे। पुजारी ने पानी लाकर मुँह में ड़ाला। वह भी श्वास नली में चला गया। फिर खाँसते-खाँसते जान जाने को हो गयी।

बाघ नर नहीं मादी थी। भामचन्द्र पहाड़ पर बिआई थी। कोई शिकारी उसके बच्चे उठाकर ले गया था। इसलिए पगला गई थी। गये चार पांच दिन से ऐसे ही दिन दहाड़े जंगल में वह घूम रही थी। उसका हमारी ओर ध्यान नहीं था। वह अपने ही दुख में दुखी थी।'

हम लेकिन मृत्यु दरवाजे से लौटे आये थे। लज्जा की बात यह कि बैरागीपन का इतना ढोंग जताता मैं मृत्यु दरवाजे में राजाराम को धकेल देने के प्रयास में था। बाघ खाये तो उसे खाये मुझे छोड़ दे। रात दोनों सोये।

बीच में उठकर राजाराम मुझसे बोला -

"गोपालजी मैं लज्जित हूँ।"

"किस बात से रे?"

"मैं आपकी टांग खींच रहा था।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शर्मिन्दगी से मैंने कहा - "अरे मैं भी तो तेरी।"

"नहीं आप जीकर चार लोगों का भला तो भी करेंगे। मेरा कुछ भी उपयोग नहीं।"

और ऐसा वह राजाराम भूख सहन न होने के कारण अनाज लाने पहाड़ी से नीचे उतर गया था।

राजाराम के चले जाने बाद मैं अकेला रह गया। मामला सरल हो गया। दो के भोजन की चिंता करनी पड़ती थी अब मेरे अकेली की रह गई।

मैं सब सब्ज़ी, चटनी मना करने लगा तब मधुकरी परोसते गाँववलों ने कुतुहल से पूछा-

"क्यों नहीं लेते आप यह?"

"मैं यह सब खाता नहीं।"

आश्चर्य से वे पूछते - "फिर क्या सूखी रोटी?"

मेरे हाँ कहने पर उन्हें आश्चर्य होता। फिर भाकरी के साथ मेथी आदि जो भी सब्जी मिलती कच्ची ही वे दे देते। कभी दूध, कभी मूँगफली के दाने ऐसा भी कुछ। अब वे मेरी बाट जोहते थे। लौटते मेरी झोली कच्ची सब्जी और भाकरी से वे भर देते।

हिसाब किताब ठीक बैठ गया। गाड़ी लैन पर लग गई।

कसबे गव्हाण में भी अकेला रहना पड़ा था। यहाँ पहाड़ में भी अकेला। पर यहाँ का अकेलापन अधिक निर्भय था। मैं उस गुफा में रहनेवाला कोई पहला नहीं था।

इससे पूर्व कितने ही साधक यहाँ रह गये होंगे। उनने सालोंसाल इस स्थानपर तपश्चर्या की होगी। मैं तो चार दो माह का ही मेहमान हूँ।

यहाँ तथागत के वचन दोहराते बौद्ध रहे होंगे। उन्होंने ही तो यह गुफा खोदी होगी। महाराष्ट्र से उनका निर्वंश हो जाने के बाद जाने कौन-कौन तापसी यहाँ रह गये होंगे। मेरा कोई नवल नहीं।

दोनों ग्रंथ पास में थे। अभंग याद करना। याद किये अभंगों की आवृत्ति करना। ज्ञानेश्वरी खोल उसका अर्थ सुलझाने का प्रयास करना बहुत ही अकेलापन लगने पर गुफा के बाहर निकल पहाड़ीपर भटकना। हजार तरह की वन औषधि दिखती पहाड़पर। उनका निरीक्षण करना उनसे पहचान बढ़ाना चलता रहता।

चीटियाँ कैसी चमत्कारी जीव। हर जगह मिलती हैं। पहाड़ी पर भी इधर से उधर भागती मिलती हैं। गाँव बस्ती की सादी या दौड़ती चीटियाँ पहाड़ी पर नहीं मिलती। ये कुछ अलग ही हैं। इनके सिर बड़े और चपटे हैं। सहज ध्यान में आ जाये ऐसे। भाकरी लाकर रखूँ तो उससे चिपक जाती थी। फिर उन्हें निरखता रहता।

जंगल में गिरगिट बहुत दौड़ते सिर ऊँचा उठा प्रकृति का गंभीर निरीक्षण करते और फिर जैसे पीछे शेर लगा-भागते तेज। कभी गोह। कभी लोमड़ियाँ। एक बार भंड़ारा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

पहाड़ी के नीचे पठारपर हिरन भी मैंने देखे थे।

वनस्पति, कीटक, पशु की संगत में ऐसे मजे में दिन कट रहे थे। मधुकरी मांगकर मस्त भोजन करना। अभंग याद करना। भजन गाना मुक्त कंठ से, रात दरवाजा लगा सुख से सो जाना।

एक दिन मधुकरी माँगकर लौट रहा था। उस समय मन में चमका - कि ये लंगोटी मैं किसलिए पहिरता हूँ?

सच! किसके लिए है यह लंगोटी? लज्जारक्षणार्थ!

लेकिन यहाँ पहाड़ पर किसकी लाज सम्हारना है। यहाँ तो कोई नहीं होता। कसम खाने के लिए भी कोई नहीं होता। क्वचित किसी भूले भटके के सिवाय मानवगंध भी नहीं आती। निर्विवाद अकेलापन। फिर किससे लज्जारक्षण किसका लज्जारक्षण।

बस्स। बहुत हो गया। अब तो इसे भी छोड़ देना। भिक्षांदेही के लिए जाते समय उतनी देर केवल उसे पहिरना बाद बाकी मस्त दिगंबर।

गुफा में पहुँचते ही वह जूट की लंगोटी उतार खूँटी पर टांग दी। कितना खुला लगा। क्या बताऊँ? बाहर आया गुफा से। अब मैं नंगे बदन आकाश से मिल रहा था। सारे परदे छोड़ हवा का आलिंगन कर रहा था। धरती पर लेटता तो लंगोटी का बीच में अंतराय था। अब मैं शरीर की मिट्टी सीधे मिट्टी से मिला सकता था।

यहाँ-वहाँ भटका। भोजन किया। दिनभर झाड़ी की छाया में अभंग याद किये। दिन डूबे गुफा के भूमिपर अँधियारे में मस्त भजन गाये और उसके बाद वहीं पड़ रहा। देहपर सूत का जर्रा भी नहीं ऐसी अवस्था में।

पर कभी चमत्कारिक प्रसंग आ जाता है। एक बार दोपहर गुफा में मधुकरी से लौटकर खुला नंगा खाने बैठा। कोई सफेद पोश परिवार बिना बतियाये अचानक गुफा के दरवाजे आकर खड़ा हो गया। पति, पत्नी, बीस एक की लड़की, दस बारह का लड़का।

ऐसा सहमा कि क्या कहूँ। कर्मभोग ऐसा कि महिला ही सबसे पहिले गुफा के सामने आयी। झांककर अंदर देखने लगी। भूमि में जैसे गड़ते दोनों हाथों से लाज छिपाते उठ खड़ा हुआ।

महिला स्यानी थी तुरन्त पीछे मुड़ें गई। मौका मिलते ही खूंटी की ओर लपक मैंने लंगोटी हथियाई और उसे पहन ड़ाला। कुछ देर बार मैंने बाहर झांका। महिला ने ही फिर देखा। शरम के मारे मैंने नजर नीचे की। पर वह मेरी तरफ देखते ही मुस्कराई। उसे मुस्कराहट में हल्का कौतुक छिपा था।

इतने दिनों तक तुकाराम बाबा के केवल उपदेशपर अभंग ही पढ़ता रहा। यहाँ रह

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उनके अन्य अभंग भी पढ़े तो पाया कि उनके चिंतनपर अभंग-उपदेशपर अभंगों से कहीं अधिक सरस हैं।

गाथा के प्रकाशक ने अभंगों की वर्गवारी की है। आत्मस्थितिपर या आत्मस्थिति खेद दर्शक ऐसे वर्गों में उन्हें बाट कर छापा है।

जैसे

संसार ताप से तप्त मैं हुवा
कर रहा सेवा-परिवार की

कभी यह वेदना व्यक्त हुई है कि मुझे गृहस्थी के जंजाल में ड़ालाही क्यों

क्यों कर भेजा मुझे संसार में

कभी ऐसी व्यथा है कि मन की ऊँच नीच किसे कहूँ

का से कहूँ मैं उनकी उठापटक
कब ये खटपट-ठहरे रे
प्राण फूटना चाहते दुख से
जो समझते-सुखी हैं

कहीं मन स्थिर नहीं रहता असकी वेदना प्रगट हुई है

मन मोरा चंचल न रहे निश्चल
घड़ी एक पल-स्थिर नहीं

कभी मन का ईश्वर के प्रति लगाव की असहायता प्रगट हुई है। चरणों में पड़े रहना चाहते हैं पर मन नहीं मानता इसलिये तू ही इसे समझा मेरा तो यह मानता ही नहीं।

मेरे अवगुण समझे मुझे
मन न रुके-क्या करुँ
क्यों छिपे खड़े मेरे देवता
दया सिंधुता-प्रगट करे
बोलता हूँ पर करना कठिन
इन्द्रियाधीन-में हुअवा
तुका कहे कैसा भी हूँ दास
न कर उदास-मायबाप

बाबा के मानसिक स्थिती का गूढ़ समझ पड़ने लगा। लगा कि उपदेशपर अभंग तो महाप्रवाह पर बहनेवाला तेलंग है वास्तविक रसमय अमृतप्रवाह तो अंदर ही है। उपदेश पर अभंगो की सरलता पर आज तक लट्टू रहना, कैसी मूर्खता थी अपनी, यह अब समझ आने लगा।

आत्मस्थिति का वर्ण करते-करते कभी तुकाराम बाबा भावभक्तिप्रेम का विवेचन करने लगते हैं। कभी श्रीहरि से मिलने को उत्सुकता से वे विठ्ठल हो जाते हैं। कभी कहते हैं

ऐसा भाग्य मैं पाऊँ कब
जन जन देखू जब-ब्रह्मरुप

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

या फिर अपने आराध्य से समरस हो कहते हैं

तुझे रुप नहीं- तो मेरा ले ले
तू सच्चा या झूठा-वैसा ही मैं तुका बोले
तू सच तो मैं सच तू झूठ तो मैं भी झूठ

ऐसा बड़ा आनंद उफनने लगा। घंटो ऐसे गुजरने लगे। विक्षेप करने कोई और था ही नहीं।

कभी कभार कोई वारकरी आता। गुफा में ही मुकाम करता। मैं उसे या वह मुझे क्या देता। दोनो ही परमहंस। मैं अपने में मस्त रहता वह अपने उद्योग में।

राजाराम बुवा वैश्यवाणी ने गुफा के सामने एक पाटोर बांधी थी। एक बार वे आये। आठ दस दिन थे। उनका कुछ थोड़ा काम कर देता परन्तु अब मेरे मन की स्थिति अलग थी। तुकाराम बाबा के अंतर के दरवाजे की झिरी मेरे लिये खुली हो गई थी। उसमें से अन्दर झांक रहा था मैं और ठगा साहो गया था। बाहरी खटपट से इसीलिये मन पीछे फिरने लगा था।

भंड़ारा पहाड़ी से कोई चार पांच मील पर भामचन्द्र पहाड़ आड़ा फैला हुआ है। भंड़ारा अपना पूरा व्यक्तित्व प्रगट किये बैठा है तो भामचन्द्र गूढ़ है। एक विलक्षण रहस्य है वहाँ। भंड़ारा खूब खुला सब समझ में आनेवाला। भामचन्द्र के परिसर में पहुँचते ही समझ में आ जाता है कि किसी महान साधना स्थली में आये हैं।

तुकाराम बाबा वहाँ जाया करते थे। साधना उन्होंने वहीं की। साधना में क्या कैसे हुआ वह बाबा ने लिख रखा है -

पंधरह दिन में साक्षात्कार हुवा
विठोबा मिला निराकार
भांबगिरी पठारपर बस्तीकी जानकर
वृत्ती स्थिर की परब्रह्म पर
निर्वाण मान आसन जमा
ध्यान प्रारंभ किया देवाजी का
सर्प, बिच्छू, बाघ शरीर से लिपटे
सभी ने दिये कष्ट, सभी के कष्ट सहे
ज्योत में कर्पूर जैसा लुप्त
तुका बोले वैसी देह हुई॥

वे कहते हैं कि पंधरह दिन तक भांबगिरी पर्वत पर निश्चक्र उपोषण किया। निर्वाण तक का संकल्प कर बैठा। लक्ष श्री. हरि के चरणों में स्थिर किया। उस काल में सांप आये, बिच्छू आये, बाघ आये वे मुझसे लिपटे फिर भी मैंने आसन नहीं छोड़ा। फिर कर्पूर, ज्योत कली से भिड़ते ही उसके रुप का होता है वैसा हुआ। श्रीहरि का साक्षात्कार हुआ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तुकाराम बाबा के अध्यात्म साधना में इस प्रसंग का बड़ा महत्व है। भांबगिरी पर (भामचन्द्र का दूसरा नाम) बाबा की साधना यही बड़ा मूल्यवान प्रसंग है।

वह भामचन्द्र एक बार दिल खोलकर देखने की इच्छा थी। बहुत दिनों से मन में था वहाँ एक दो दिन जाकर रहें।

इंदुरी गाँव मधुकरी के लिये गया था। वहाँ पता लगा। भामचन्द्र के महादेव की पिंडीपर चांदी का नाग बैठाना है। वह नाग लेकर इंदुरी, तलेगाँव की भजनमंडली कल वहाँ जा रहीं हैं। इंदूरीवाले बोले - बाबा आप भी आइये।

दूसरे दिन उन लोगों को पहाड़ के नीचे के रास्ते से जाते गुफा से ही देखा और मैं उतरा। उनमें मिल गया। रास्ते में छोटासा गाँव है शिंद। उसमें होकर भामचन्द्र के लिये रास्ता है।

पहाड़ अच्छा ऊँचा है। महादेव का गुफा मंन्दिर बीच की एक चोटी के पेट में है। मूलतः वह बौद्ध गुफा होगी। अभी लेकिन महादेव जी विराजे हैं वहाँ।

उस गुफा में कोई दक्षिणी बैरागी जमे थे। बैरागी तरुण था। नाक सीधी, केश लंबे, रंग काला अन्नग्रहण वे करते नहीं थे। उनके लिये दूध और मूँगफली के दाने शिंद गाँव से जाते थे। बैरागी ने मौन रखा हुआ था। उसी की प्रेरणा से शिवलिंग पर चांदी का नाग बैठाया जा रहा था।

मुझे नाग बैठाये जाने में कोई विशेष रस नहीं था। उत्सुकता थी तुकाराम बाबा का तपश्चर्या स्थल कहाँ हैं वह खोजने में।

पूछताछ करते ही वह मिल भी गया।

खड़ी चोटी कोई हजार फूट नीचे उतरी है और फिर एक जगह डेढ़ सौ अंश का कोण बनाकर पूरब की ओर बढ़ गई है। इसी में महादेवजी के मंदिर की गुफा है। बिलकुल कोने में दूसरी तरफ माने पश्चिम दिशा में तल से कोई सौ डेढ़ सौ फूट ऊँचाई पर निसर्ग निर्मित एक दूसरी गुफा है। वहाँ तक पहुँचने के लिये सीढ़ियाँ खोदी हुई हैं। अगहन पूस के माह में भी वहाँ पानी झर रहा था सीढ़ियाँ पर काई चिकनाहट और उसमें भी सीढ़ियाँ बहुत कम चौड़ी।

सीढ़ियाँ चढ़ गुफा में पहुँचा। मुश्किल से आदमी खड़ा रह सकता है इतनी ऊँचाई। प्रारंभ से गुफा का माथा उतरता होता चला गया और करीब पच्चीस फूट पर आदमी घुटरहूँ जा सके इतना रह गया था।

दक्षिण दीवार पर उत्तराभिमुख ऐसी तुकाराम बाबा की पत्थर में खोदी पूर्णाकृति मूर्ति है। उसके कंधे पर बिच्छू उकेरे है। मूर्ति यूँ ही उबड़खाबड़ पर चारों ओर की मुग्धता से मेल खाती। उसके सामने बैठा रहा।

निवांत एकांत इतना कि छाती की धड़कन भी सुनाई दे।

कदाचित उस एकांत के कारण ही हो पर ऐसा लगा कि मन अंतर्मुख हो रहा है। वृत्ति अपने में ही डूब रहा है। चित्त की चिंतनात्मक दौड़ रुक रही है। एक गूढ़ तृप्तता में डूब

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रहा हूँ।

चांदी के नाग की प्रतिष्ठापना करने आये लोग फिसलनी सीढ़ियाँ चढ़ बाबा के दर्शन के लिये आये। दर्शन ले लेने पर उन्होंने मुझसे पूछा कब लौटेंगे। कुछ न बोला। फिर वे धीरे-धीरे सीढ़ियाँ उतर, आये रास्ते से चले गये। उन्हें जाते मैंने गुफा के द्वार से देखा।

एक बड़ी सांस लेकर वहीं बैठा रहा।

दो हजार फूट ऊँचाई की चोटी मानो बाह फैलाये दो तरफ फैली। तलहटी में घनी झाड़ी वहीं एक पोच पचास छप्परों का गाँव शिंद। उसके पार भंड़ारा। भंड़ारा के दाहिनी ओर क्षीण इंद्रायणी (नदी) नीचे खेत। कहीं दूर पशु चर रहे। धान के खेत पर मनुष्य बस्ती के ये चिह्न यहाँ से दूर हैं। यहाँ नीचे महादेव मंदिर में वह दक्षिणी बैरागी और उपर मैं।

इसके सिवाय कुछ भी नहीं।

झाड़ी में पंछियों की क्षीण आवाजें आ रही हैं। लेकिन वे भी यहाँ से दूर। यहाँ तो अकलंक शांति है।

अकेला हूँ। कोई मेरी राह तकने वाला नहीं। किसी का कौर मेरे लिए अटकने वाला नहीं। यहाँ से मैं न लौंटा तो कोई भी दुखी होनेवाली नहीं। सब प्रकार की उपाधि से अलग होकर बाबा के दहकते बैराग से सनी उबड़खाबड़ मूर्ति के चरणों से लगा बैठा हूँ।

मुझे कहीं जाना नहीं। कहीं से कोई मेरे पास आने का नहीं।

बहुत अच्छा लगा। और फिर मैं मूर्ति के चरणों में सिर रख सोया। दिन दहाड़े ही। नींद भी लगी अच्छी। जगा। आधी रात हुई थी शायद। फिर वैसा ही पड़ा रहा। मन चारो दिशा भटका-भटका और फिर वह भी शरीर के साथ विश्राम करता रहा।

भंड़ारा लौट आया। नित्यक्रम शुरु हुआ। बाबा के अभंगो का पाठ शुरु था। लेकिन ज्ञानेश्वरी समझनी चाहिये। ज्ञानेश्वरी न समझ पायी तो कुछ भी नहीं किया यह विचार मन में तेजी से बढ़ता गया।

ज्ञानेश्वरी पढ़ता ही था। पर जैसे-जैसे उस अद्वितीय ग्रंथराज के पारायण करने लगा वैसे-वैसे मेरे ज्ञान का अज्ञान मुझे समझने लगा। भावार्थ दीपिका (ज्ञानेश्वरी टीका) का भावार्थ जब समझ में आवे तब आवे; कम से कम शब्दार्थ तो आकलन होना ही चाहिये; यह मन में बार-बार आता।

क्या करूँ?

आलंदी के वारकरी शिक्षण संस्था में जाऊँ?

वहाँ के छात्र मैंने देखे थे।

सफेद कुर्ता, धोती, खादी टोपी, गोपी चंदन का तिलक यह उस संस्था का स्वीकृत

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गणवेश था। मेरा वेश उससे बिलकुल ही मेल न खाता था।

वहाँ के आचार्य मुझे उनके पास बैठने देंगे? ज्ञानेश्वर का सांगोपांग अध्ययन करने देंगे।

यह एक ही विचार मन में प्रबल होता गया। उसके सिवाय गाड़गे बाबा की अनुमति का प्रश्न था। कुछ भी हुआ तो भी मैं उनका अनुग्रहित था। उनका मुझपर प्रेम था। उन्हें पूछना चाहिये। कम से कम ज्ञानेश्वरी का अध्ययन करने आलंदी में रहूँगा यह बात उन्हें मालूम होनी ही चाहिये।

करते कराते फागुन आ गया। भंड़ारा यात्रा आने लगी। भंड़ारा पर वारकरी आने लगे। कुछ उनमें से गुफा में भी आते जाते। उतना एकान्त न रहा। इस यात्रा के लिए बाबा भी देहू आते थे। उन्हें पूछने की बात पक्की सोची। पहाड़ उतर देहू आ गया।

छोटासा गाँव देहू। वैसे वह शांत रहता है। तुकाराम बाबा के मंदिर से दूर आदमियों की अधिक चहल पहल न होती थी। पर यात्रा पास आते ही उस गाँव में चैतन्य भर जाता। सारा गाँव ताजा-ताजा हो उठ जाता।

तुकारामबाबा का कुलनाम मोरे इसलिये बहुत सारे घर मोरे कुल के वहाँ। उनके घर की दीवारें लीप पुत झकाझक हो जाती। घर के बरतन भांडे वैसे गंदे रहते पर अब माँज माँजकर चमचमाये जाते। लाख डेए लाख यात्रा आती है। उसकी व्यवस्था तो करनी ही पड़ती है गाँव को ही। यात्रा वैसे एक दिन की ही फिर भी कुछ यात्रा शांति से दो एक दिन ठहरही जाते। उन सबको ठहरने के लिए स्थान माने मोरे परिवार के घर उनके साफ सफाई में सारा गाँव इसीलिये जुट जाता।

गाड़गेबाबा की धर्मशाला वैसे भी साफ रखी जाती पर गाड़गे बाबा आनेपर कुछ न कुछ नुक्स निकालेंगे ही इसलिए सब बड़ी मिहनत से सफाई मंजाईकरते।

होली हो गई और बाबा आ गये। देहू में वैसे कोई बड़ा मैदान नहीं हैं। इंद्रायणी तीर पर ही बाबा के धर्मशाला के सामने उनका कीर्तन होता। दिनभर पैरों पड़ने वाले लोगों के कारण होती पीड़ा को टालने बाबा कहीं दूर ठहर जाते। वैसे वे जहाँ ठहर थे मैं वहाँ पहुँचा।

गाड़गेबाबा एक पेड़ तले बैठे थे। मैंने पास जाकर नमस्कार किया।

"कैसे हो साधूबोआ?"

"ठीक हूँ बाबा।"

"कहाँ थे इतने दिन?"

"भंड़ारा पहाड़ी पर।"

"क्या किया वहाँ?"

"अभंग याद किये।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"कितने किये ?"

"किये हजार एक।"

"क्या होगा याद करके। इतनी पढ़ाई तो हमने भी नहीं की।"

मैं जो कहना चाहता था, सोचा था कहूँगा वह सब टूट रहा था अब क्या कहूँ।

कोई न कोई आता रहा। बाबा उनसे क्या-क्या बातें करते रहे। मैं वहाँ वैसे ही बैठा रहा। आखिर में बड़ी हिम्मत जुआई और कहा-

"बाबा।"

"क्या है रे बाबू ?"

"मैं आलंदी रहूँगा।"

"आलंदी रहोगे-ये क्या निकाला ?"

सारी ताकद जुटाकर कहा

"ज्ञानेश्वरी सीखनी है।"

बाबा गंभीर हो गये। उठे जंगल में निकल पड़े। मुझे साथ लिया, कंधे पर हाथ रक्खा।

"बाबू रे विद्वत्ता एक चीज है बैराग दूसरी चीज। बड़े विद्वानको भी बैराग न हो तो सब बेकार। इतने दिन तुम भंडारा पर रहे खाने पीने का क्या करते रहे।"

"नीचे गाँव है मुधकरी माँगता वहाँ।"

"और वह नमक मिर्च नहीं खाना।"

"शुरु है अभी।"

"क्यों जी फिर मधुकरी माँगकर क्या करते थे ?"

"खाली रोटी माँगता। फिर कच्चा साग खेत से लाता माँगकर। उसके साथ रोटी खाता एक बार दिन में।"

"और रात में।"

"कुछ नहीं।"

स्नेह से मेरी ओर देखते हुए बोले "ले आओ कोई दूसरा तुम्हारे जैसा। कोई और विद्वान कर सकता है भला ऐसा।"

"बाबू रे ईश्वर की रची इतनी बड़ी पुस्तक है यह पृथ्वी, यह आकाश। इस पुस्तक को पढ़ना और मस्त घूमना। बिना किसी आस। तुम सरीखा बैराग साधन तो बड़े-बड़े नहीं कर पाये। और ज्ञानेश्वरी सीखने की क्या जरूरत है ?"

मैं चुप था। बाबा मेरी तरफ देखते रहे, फिर लंबी सांस लेकर बोले

"बड़ा जिद्दी है रे तू बाबू।"

"आलंदी रहते हो रहो। वहाँ की धर्मशाला में।"

"आँसू भर आये। एक किया। उनके पैरों गिर पड़ा। उन्होंने उठा पेट से लगाया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

बोले-

"कहीं रहो पर एक ध्यान में रखना निर्लोभ बैराग यह बड़ी बात है।"

वहाँ से गोपालपुरा आया। वारकरी शिक्षण संस्था के लड़के वहाँ उतरते थे। उसमें से एक को पकड़ा, पूछा-

"तुम्हारे गुरुजी कहाँ हैं?"

मेरी तरफ आश्चर्य से देखते वो बोला

"कौन मारुती बुवा?"

"हाँ।"

"वे उस कमरे में बैठे हैं।"

वहाँ गया।

सीधी लंबी नाक। निर्भय प्रसन्न स्मित मुद्रा। माथेपर खड़ा चंदन। बदन पर बाराबंदी। सिरपर पगड़ी। ऐसे मारुतीबुवा कमरे में बैठे थे। उनके आसपास और भी कई। सीधे जाकर उनके चरणों में सिर रखा। मेरा वेष देख उन्होंने मुझे पहचाना बोले-

"गाड़गे बाबा के शिष्य हैं क्या?"

"हाँ, मुझे ज्ञानेश्वरी पढ़नी है।"

मेरी ओर मजे से देखते वे बोले-

"ज्ञानेश्वरी पढ़नी है। लेकिन यह स्वांग। यह जूट की लंगोटी ये सब।"

"आप जैसा कहेंगे वैसा रहूँगा मैं।"

"यह सब फेंक सीधा सादा रहना पड़ेगा।"

"रहूँगा।"

"फिर आवो आलंदी में।"

एक नये जीवन के प्रारंभ का संकल्प करते बाहर निकला।

फिर एक बार आलंदी। आलंदी के कारण इस तुच्छ जीवन में कितनी उठापटक हुई। पर इस बार केवल छू कर छू नहीं होना था। दो तीन साल रहना था।

बाबा ने धर्मशाला में रहने को कहा था। ज्ञानेश्वरी और गाथा पास में थी। आलंदी जाते ही दूसरे दिन इंद्रायणी में जाकर नहाया। बहुत दिनों बाद पंचा लपेटा। दूसरा एक बदन पर लिया। बगल में ज्ञानेश्वरी दबाई। पुल पर से पार पहुँच ज्ञानेश्वर माऊली के मंदिर में जाकर जीभरकर दर्शन किये। बोला - "आपके ग्रंथ कौतुक का अध्ययन करने आपके चरणों के पास रहनेवाला हूँ। अनुमति दें।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

महाद्वार से बाहर निकल एक गली में घुसा। एक भवन पर छोटासा पटल देखा।

'वारकरी शिक्षण संस्था'

सीढ़ी उतर आंगन में उतरा। एक साधक मिला उससे पूछा-

"मारुतिबुवा कहाँ हैं?"

उसका मौन था। उसने अंगुली से सीढ़ी दिखलाई। उस पर चढ़ उपर पहुँचा।

एक अच्छा लंबा चौड़ा सभागृह। दीवार पर ज्ञानेश्वर महाराज और गुरुवर्य विष्णुबुवा जोग का पूर्णाकृति तैलचित्र। उसके नीचे आसन पर बैठे हुए गुरुजी। सामने व्यासपीठ उसपर ज्ञानेश्वरी। सामने और दोनों बाजू कतार से छात्र पालथी मारे बैठे हुए। हर एक के सामने ज्ञानेश्वरी। कापियाँ, पेन्सिलें।

छात्रों की सामने की पंक्ति के पीछे अलग पंक्ति बना उस रंगरुप के और दो छात्र। हरेक छात्र चप्पीवाला। चंदन लगाया हुआ। गले में माला। धोती पहने। उघाडा बदन-उपवस्त्र से ढंका। करीबन सभी युवा।

ज्ञानेश्वरी का बारहवाँ अध्याय चल रहा था।

सर्व ऋतु में समान। जैसा कि गगन
वैसे एक ही मान। शीतोष्ण जैसा॥

गुरुजी की वाणी स्पष्ट थी। छात्रों को समझे ऐसा स्नेह उनकी मुद्रापर स्पष्ट दिख रहा था। बदन पर ओढ़ी हुई खादी की चादर बार-बार खींचते, वे बड़े स्नेह से छात्रों को समझा रहे थे। छात्र तेजी से लिख रहे थे। उस ओवी से मिलती दूसरी ओवी। अभंग का चरण। संस्कृत श्लोक प्रवचन मानो प्रवाह बह रहा हो।

मैं दिग्मूढ़ था। दीवार से लगा खड़ा रहा। गुरुजी या छात्र किसी की मेरी ओर नजर न गई। कुछ देर बाद में पिछली पंक्ति के छात्रों के बीच जाकर बैठा गया। बारहवाँ अध्याय निकाला। निष्ठापूर्वक सुनने लगा।

आधे पौने घंटे बाद पाठ समाप्त हुआ। सारे छात्र जगह से उठे। गुरुजी के चरणों पड़े। पड़ोस के बरामदे में गये। मेरे पड़ोस में जो दो छात्र थे वे भी उठे। उसमें से एक ने मुझ से धीमी आवाज में पूछा-

"कौन गाँव?"

मैंने गाँव न बताते हुए सीधे मुद्दे की बात कही-

"ज्ञानेश्वरी सीखने आया हूँ।"

"वह हो गया पर 'दूद' कौन?"

बात मेरे पल्ले पड़ी ही नहीं। दूसरे ने उतने में कहा-

"हम चोखामेला हैं।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बात समझ में आ गई। वे चोखा के जाति के माने महार हैं।

तबतक अन्य सब छात्र निकल गये थे।

गुरुजी ने पूछा- "कौन है जी?"

तुरन्त आगे बढ़ा। झुककर नमस्कार किया। बोला

"मैं गोपाल-देहू में मिला था।"

गुरुजी स्मरण करते हुए बोले - देहू में

"मैं गाड़गेबाबा का शिष्य।"

"अरे हाँ-हाँ। तुमने कपड़े बदल लिये हैं ना। अच्छे आये। उतरे कहाँ हो?"

"कल ही आया - बाबा की धर्मशाला में ठहरा हूँ।"

"ठीक है। आओ कल से। लेकिन ये सिरपर का बोझा।"

"उसका क्या करूँ?"

"उतार ड़ाल। सुन माताजी ने कहा - "अलौकिक नोहावे लोकांप्रति," अपना एक अलग झंडा नहीं रखना चाहिये। जैसे सब का वैसा अपना गुण से चमकना चाहिये। वेष से नहीं।

सुनता रहा - अंत में गुरुजी बोले -

"गाड़गेबाबा के पास कितने साल रहे।"

"यही कोई चार साल।"

"कीर्तन करते होगे।"

"हाँ।"

"सप्ते।"

"हाँ।"

"यह देख। अब यहाँ छात्र बनकर आये हो। एकनाथजी ने कहा है "जाणीव शाहणीव ओझे. सांडुनिया दूरी।" सारे जाने हुए का बोझा दूर छोड़कर छात्र जैसा रहना चाहिये। समझ गये ना। वहाँ का सारा किया कराया भूल जाओ नहीं तो कहते फिरोगे -मैंने ऐसा किया मैंने वैसा किया।"

"नहीं कहूँगा।"

गुरुजी उठते हुए बोले -

"ठीक है। फिर कल से।"

नाई पकड़ा। उसके आगे बैठा। कितने साल से सिर को उस्तरा लग रहा था। कभी तेल नहीं, कंघी नहीं। सिर में जाने क्या-क्या था। सारा सिर जैसे समरांगण हो गया था। खून-खून बहा। जलन मची रही। वैसा ही जाकर नदी में पड़ा रहा। बहुत देर गोते खाये

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

तब वह जलन कम हुई।

एक रुपया पास में था। दो आने नाई को दिये। एक आने का गोपीचन्दन लिया। माथे पर सुंदरसी नाम मुद्रा बनाई। फिर तिलक लगाया। सज के धर्मशाला में पहुँचा। व्यवस्थापकों ने पहचाना ही नहीं। संस्था से लौटते अध्ययन क्रम की जानकारी ले ली थी। भोर चार बजे छात्र उठ जाते अधिकतर सब वहीं रहते। उठते ही प्रातर्विधि कर कोई इन्द्रायणी पर स्नान को जाते, तो कुछ संस्था भवन के पीछे ही भागीरथी कुंड में नहाते। नहाने के बाद नित्यपाठ कहते हुए ही वे लौटते। नित्यपाठ में ज्ञानेश्वरजी का हरिपाठ मुख्य था। वारकरियों की वह संध्योपासना। फिर गीता का एखाद-दूसरा अध्याय। कुछ अभंग। मुकाम पर आते ही चंदन लगाते। कोई चंदन के साथ मुद्रा भी। कोई चंदन के उपर बीचोबीच गोपीचंदन का तिलक। और उसपर अष्टचंदन भी लगाता। दिनभर वे सब उपवस्त्र ओढ़ते।

ठीक साढ़ेपाच को घंटा होती। सब सभागृह में जमा होते। गुरुजी के गुरुबंधू लक्ष्मण इगतपुरीकर। भोर का भजन उनके नेतृत्व में होता था।

सब पंक्तियों में खड़े होते। गले में झांज। मृदंग ठनकता हुआ। लक्ष्मणबुवा सुर लगाकर कहते -

"सा ss "

सब अनुवाद करते

"सा sss "

फिर सारी सरगम। फिर षड़ज, मध्यम, पंचम, निषाद ऐसा कुछ देर गला गरम करके फिर शुरु होता-

साग साग साग मगरेसा

नीरे नीरे नीरे गरेसानी

साग साग सारेगमप

मगरे सा गरेसानि सासासा

बराबर सम पर सारी झांजे बज उठती और फिर जय जय राम कृष्ण हरि जय जय जय

बड़े अनुशासन में, ताल में, सुर में शुरु हो जाता। भजन में लक्ष्मण बुवा का अनुशासन बड़ा कड़ा था। दूसरी बातों में वे ध्यान नहीं देते थे पर भजन ढंग से होना ही चाहिये यह उनका आग्रह था। उसमें जरा भी इधर उधर होना नहीं चाहिये।

एक घंटा भजन हो जाने के बाद आधे घंटे की छुट्टी होती। उस आधे घंटे में छात्र और शिक्षक ज्ञानेश्वर माऊली के दर्शन कर आते। फिर शुरु होता ज्ञानेश्वरी का पाठ। वह नौ बजे तक चलता। ज्ञानेश्वरी के सिवाय विचार सागर, गीता, संस्कृत ऐसे अलग-अलग पाठ चलते रहते। उन पाठों को लेकिन सब ही छात्र उपस्थित न होते थे।

बारह बजे सब मधुकरी के लिए एक हाथ में झोली दूसरे में लोटा लिये बाहर निकलते। झोली में थाली कटोरी रहती। सबसे पहिले माऊली के मंदिर की मधुकरी लेनी होती।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

फिर दूसरे घर। घासवाले की धर्मशाला आदि। एक समय का भरपेट भोजन मधुकरी में मिल जाता। अधिकतर बाजरे की भाकरी, दाल, कढ़ी, ऐसा कुछ सालन मिलता। संस्था में लौटकर भोजन कर थाली, लोटा मांजकर रख देने के बाद आधा घंटे विश्रांति होती। फिर अध्ययन चक्र शुरु होता। प्रातः के पाठ की ली हुई कच्ची टीप को पक्की करना। संस्कृत या गीता का अभ्यास। आदि। शाम पांच बजे फिर सार्वजनिक ज्ञानेश्वरी प्रवचन होता। इस समय कोई भी उसे सुनने के लिये आ सकता था।

सार्वजनिक प्रवचन के बाद सभी साधक नगर प्रदक्षिणा को निकलते। माउली का दर्शन लेकर महाद्वार से बाहर निकलना और पश्चिम की ओर के घाट पर पहुँचना। वहाँ वेदमूर्ति जोग महाराज की समाधि है। उसका दर्शन लेकर उपर आना। घासवाली धर्मशाला, गोरोबा का मंदिर से होते उस दीवार का दर्शन करना जिसे ज्ञानदेव ने चलाई थी। फिर जनाबाई की धर्मशाला पर से इंद्रायणी नदी पर आना। पुंडलिक दर्शन के बाद प्रदक्षिण पूरी समझी जाती।

प्रदक्षिणा से लौटने के बाद सभागृह में ही भजनों का फड बैठता। छात्रों में चार छह अच्छे मृदूंग वादक होते ही हैं। चार छह गानेवाले। हर छात्र फिर अभंग कहता। इस तरह से भजनों का, संगीत का, शिक्षण सहज ही होता जाता।

नौ बजे तक भजन चलता। फिर हर छात्र को संस्था की ओर से एक भाकरी और छोले मिलते। उसे खाने के बाद फिर चिंतन। दस बजे सोने की घंटी होती। दस बजे से पहिले कोई सो नहीं सकता था।

हर माह की बदी ग्यारस, अषाढ़ और कार्तिक के मेले और जोग महाराज की पुण्यतिथि को इस नियमित कार्यक्रम में परिवर्तन होता अन्यथा सालभर यही कार्यक्रम बड़ी निष्ठा से चलाया जाता।

गुरुवर्य जोग महाराज ब्रह्मचारी तपस्वी थे। लोकमान्य तिलक के समकालीन। उच्च कोटि के अधिकारी। निस्पृह श्रेष्ठ आचार्य थे। उनके बड़े भाई अच्छे मल्ल थे। एक व्यायामशाला के खलीफा थे। जोग महाराज का शरीर भी अखाडे की लाल मिट्टी में तयार हुआ था। वे भीमकाय थे। ज्ञानेश्वरी के वे बेजोड प्रवचनकार थे। बहुत बडी योग्यता के शिष्य उन्होंने तैयार किये। सुविख्यात कीर्तनकार बंकटस्वामी, नैष्ठिक ब्रह्मचारी बेजोड तत्वचिंतक गुरुवर्य सोनुमामा दांडेकर, लक्ष्मणबुवा इगतपुरीकर, मारुती बुवा गुरव, पांडुरंग शर्मा। ये उनके शिष्य मंडली के कुछ अतिरथी महारथी।

वारकरी सम्प्रदाय के प्रवचन शैली को अनुशासित करने, ज्ञानेश्वरी, भागवत जैसे अद्वितीय ग्रंथों के सशास्त्र अध्ययन की व्यवस्था करने स्वयं का धन व्ययकर आलंदी में वारकरी शिक्षण संस्था उन्होंने स्थापित की। नियम बनाये-चलाये। कठोरता से पालन करवाये। सारा जीवन ज्ञानेश्वरी के प्रसार के लिए व्यय किया और अंतिम सांस भी आलंदी में आकर माउली के चरणों का तीर्थ प्राशन करने बाद छोड़ी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पुणे में वे बीमार पड़े। अंतिम समय दिखने लगा। उठने बैठने में भी बड़े कष्ट होते। उन्होंने घोषणा की। मैं आलंदी जाऊँगा। शरीर का जो कुछ होना है वहीं होगा। यहाँ नहीं।

उस जमाने में पुणें आलंदी रास्ता बहुत खराब था। मोटर की कोई अच्छी व्यवस्था नहीं थी। घोडागाडी से जाना पड़ता था। सोनूमामा दांडेकर, जोग महाराज के भानजे थे उन्होंने उनको कहा "सोन्या, भोर ही आलंदी चलेंगे-घोडा गाड़ी ठीक कर ले।"

डाक्टर की सलाह बिलकुल उलटी थी। उन्हें जरा भी हिलाये डुलाये नहीं। परन्तु सोन्या केवल जोग महाराज के भानजे नहीं थे। वे उनके शिष्य भी थे। उन्होंने अपने गुरु की बात माननी तय की। भोर ही घोडागाडी आ गई। एक तरफ लक्ष्मण इगतपुरीकर और दूसरी तरफ सोनूमामा। बीच में जोग महाराज।

यात्रा शुरु हो गई।

रास्ते की उबडखाबड से जानलेवा यातना होती रही।उन सबको सहन करते हुए जोग महाराज ने वह तेरह मील की यात्रा की। निकलना चाहते प्राणों को जनमभर किये व्रतों की सौगंध देते हुए।

आलंदी का पुल आ गया। शिखर दिखने लगा। होश के इस पार उस पार हो रहे जोग महाराज ने पूछा

"सोन्या आ गई आलंदी।"

"हाँ जी।"

दौड़ते भागते गाडी संस्था के दरवाजे आकर खड़ी हुई। किसी ने माउली का तीर्थ लाया। वह प्राशन किया। माउली के दिशा की ओर मुँह किया। आसन लगाया और बोले

"सोनू मैं चला।"

और उस अद्वितीय निग्रही पुरुष ने प्राण त्यागा। ऐसे जोग महाराज के संस्था में ढ़ाई वर्ष रहकर ज्ञानेश्वरी का अध्ययन करने का सौभाग्य मिला।

दूसरे दिन से दिनक्रम शुरु हुआ।

भोजन का मेरा नियम था। मिर्च, खटाई, नमक, तेल और मीठा ये रस बहुत दिनों से मैंने छोड़ रखे थे।आलंदी में किस तरह रहना इसका कुछ विचार किया।

धर्मशाला के व्यवस्थापक सुजन थे। मुझपर उनकी कृपा थी।उनसे बात करके एक नया उपक्रम शुरू किया। दो मुट्ठी गेहू, एक मुट्ठी चना, आधी मुट्ठी सींगदाना भिगो देना। दूसरे दिन उसका पानी बदलना। तीसरे दिन उसमें अंकुर आ जाते।फिर उसे आराम से चबा चबा खाना।अनाज व्यवस्थापक ने दिया।उन्होंने ही एक बोरा दिया। उसे उधेड़ बिछावन बनाया। एक ऐसे ही कृपालु सज्जन यात्रा के लिए आये। मैं ज्ञानेश्वरी सीखने यहाँ रह रहा हूँ यह जान बड़े खुश हुए उन्होंने अपनी पुरानी कामरी मुझे देदी। और कुछ चाहिये उन्होंने पूछा-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"दूसरा तीसरा नहीं एक कॉंपिग पेन्सिल चाहिये है" मैंने कहा। उन्होंने वह ला दी। फिर कापिंग पेन्सिल और ज्ञानेश्वरी ग्रंथ लेकर मैं संस्था में आया। भोर प्रार्थना से लेकर दोपहर मधुकरी तक। स्वर मुझे था। भजन भी आते ही थे। लक्ष्मण बुवा की सरगम और भजन पद्धति मैंने बहुत जल्द सीख ली। उन्हें बहुत जल्द प्रसन्न कर लिया।

छात्र ज्ञानेश्वरी के लिए पंक्ति में बैठते। मैं भी उसमें बैठने लगा। पहिले दिन का पाठ हो जाने के बाद गुरुजी बोले

"क्यों? कुछ समझा।"

"एक दिन में क्या कहूँ गुरुजी।"

मुस्कराकर वे बोले

"लुच्चे हो। तुम्हें सब समझा है। खैर न समझे तो पूछ लिया करना।"

"पर गुरुजी। पहिले के अध्याय। मैं तो बारहवें से आया हूँ।"

"रहने दे। अभी ऐसा ही चलने दे। अगले सत्र में फिर एक से बारह कर लेंगे। ठीक हैं ना।"

बारहवाँ अध्याय जल्दी समाप्त हुआ। वह अधिक सरल भी था। कसोटी का था फिर अगला। जहाँ शंका होती मैं पूछता। पहली ही ओवी थी:

आत्मरुप गणेशु केलिया स्मरण
होय सकल विद्यांचे अधिकरण
तेचि वंदू श्रीचरण
श्रीगुरुचे ॥

आत्मरूप गणेश का स्मरण करने से सारी विद्या पर अधिकार हो जाता है इसलिये उसी गुरुके चरणों की वंदना करें।

गुरुजी ऐसा उसका सीधा अर्थ बताकर आगे बढ़ने लगे

मैं अटक गया पूछा

"गुरूजी एक शंका है।"

"पूछो।"

""आत्मा और ब्रह्म एकरूप है।"

"हाँ है।"

"वह ब्रह्म निरंजन, तरंगशून्य अप्रमेय है।"

"हाँ है।"

"उसका स्मरण होते ही मन का "मैल" धुल जाता है।"

"हाँ।"

"फिर ऐसी स्थिती में मन में विद्या का प्रकाश कैसा पड़ जाता है?"

अपने बहुत सुंदर नेत्र फ़ैलाकर गुरुजी मेरी ओर देखने लगे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

मेरे छात्र साथियों की तुलना में मैं बिलकुल नगण्य था। लगातार चारवर्ष जाड़े, बरसात से संघर्ष करते रहने के कारण शरीर चिरा फटा था किसी पुराने लट्ठे जैसा। चेहरा खिंचा हुआ। सीने की पसलियाँ साफ गिनी जा सके ऐसी। साबुन का स्पर्श भी नहीं ऐसा आधा अधूरा पंचा मैं पहने था। एक ओढ़े था। वे सब मुझसे कहीं बेहतर थे। तिलक मुद्रा से सुंदर थे। युवोचित आभा उनके चेहरे पर थी। वे सब निष्ठावान श्रोता थे। गुरुजी की कही हर बात वे तुरत फुरत लिख लेते। कोई भी प्रतिप्रश्न न पूछता था। मेरी यह प्रश्न मालिका सुन उन सबकी साश्चर्य सरोष मुद्रा मुझे घूरने लगी।

यह ऐसा आजतक किसी ने किया नहीं था। ऐसी यहाँ की रीत नहीं थी। सम्प्रदाय नहीं था। यह सारे संकेतो के विपरीत था। कुछ देर शांति रही।

फिर गुरुजी बोले

"ब्रह्म सकल सामर्थ्य सम्पन्न है।"

"हाँ है।"

फिर स्मरण होते ही मन में सब विद्याओं का प्रकाश निर्माण करने की शक्ति भी उसमें है ही।

पाठ आगे बढ़ा। लेकिन एक हुआ। ऐसे प्रसंग बार बार उत्पन्न होने लगे। मुझे डर था। गुरुजी की अप्रसन्नता का। पर अनुभव उलटा आया। मैं उनके प्रीति का विषय हो गया।

दोपहर ग्यारह साढ़े ग्यारह तक पाठशाला का कार्यक्रम पूरा कर फिर वहाँ से धूप में झुलसते करीबन आधा मील दूर गाड़गेमहाराज की धर्मशाला में जाना पड़ता। पैर में कुछ नहीं। वहाँ पहुँचते लाल पीला हो जाता। पांच एक मिनट ठहर अनाज पानी से निकालता। नया भींगने ड़ालता। नौ पात्र ही रख छोड़े थे इसके लिये मैंने। फिर वह अनाज चबा चबा खाता। देर लगती। करीब आधा घंटा। क्षुधा शांत कर पांच मिनट आराम कर भी नहीं पाता कि लौटने का समय हो जाता।

संस्था में कुछ बढ़िया लड़के थे। गोपाल नागरगोजे। औंध के पास का रणनवरे। उनके पास बैठता उनका लिखा पढ़ता। गोपाल संस्कृत का जानकार था। मैंने बचपन में कुछ थोड़ा संस्कृत सीखा था। पर वे संस्कार धुलपुछ गये थे। इसलिए दोपहर में उसके पास बैठ भांडारकर (संस्कृत परिचय) पढ़ने लगा। फिर से अइउण ऋलृक के प्रदेश में चला। शिक्षक नये उत्साह से पढ़ाने लगा। शिष्य नई उम्मीद से सीखने लगा।

शाम को नगरप्रदक्षिणा के लिये निकलता शांताराम बुवा कामळी के साथ। यह व्यक्ति बड़ा ही सतशील, बुद्धिमान, ब्रह्मचारी था। शांताराम को सब छात्र गुरुजी कहते। इन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गुरुजी सें मैंने सीखा क्वचित ही पर उनसे खुलकर बहस होती थी। अन्यथा मैं लकीर का फकीर ही रह जाता। लेकिन शान्ताराम गुरुजी से बहस बाजी करते मेरा आचार्य के मायावाद से परिचय हुआ। ज्ञानेश्वर के चिद्विलास वाद की पहचान हुई। मैं चाहे जैसे उटपटांग प्रश्न उससे पूछता था। शान्ताराम गुरुजी शांति से उसके उत्तर देने का प्रयास करते। उस गहरे आदमी का मुझपर ऋण है।

मैं चार साल तक कीर्तन करते घूमा था। पांच-पांच हजार के समूह को रात-रात तल्लीन रखता। कुछ एक व्रत संकल्प वाला। इस सब कारणों से मुझे थोड़ा टाला भी जाता। मेरा चटपट आचरण मेरा दोष नहीं था। गुरुजी की मुझपर कृपा यह भी मेरा अपराध नहीं था पर बाद में आया और आगे बढ़ा ऐसा कुछ आरोप इस उस बहाने सुनायी पड़ जाता। कभी-कभी मन उदास हो जाता। शान्ताराम गुरुजी की कृपा यह उस उदासी पर रसायन का काम करती।

नगरप्रदक्षिणा से लौटते ही भजनों का समय हो जाता। एक साथी था बन्सी। वह अब एक स्थान का महन्त है। इस सौजन्यशील स्वभाव के छात्र की आवाज अति मधुर थी। उससे मैंने उसे न मालूम ऐसे भजनों की वारकरी पद्धति की तर्जे चुरायी। पैंतीस चालीस झांझे झनझना रही है साथ में मृदंग का स्वर है ऐसा वह वारकरी पद्धति का भजन केवल सुनना-सुनते रहना भी एक उत्कट आनंद था।

रोज सुबह, दोपहर और रात हर बार आधे-आधे मील का आना जाना होता। धर्मशाला से पाठशाला तक का। वह कष्ट चुपचाप सहन कर रहा था।

एक दिन सुबह के पाठ समाप्ति के बाद गुरुजी अपने कमरे मे चले गये। वहाँ से उन्होंने मुझे बुलाया

"गोपाल।"

मैं कमरे में जाकर दीवार से सट खड़ा हुआ। तो बोले

"क्यों महाराज कैसे हैं अध्ययन के कष्ट?"

ऐसे प्रश्न की कल्पना नहीं थी। मैंने केवल मुंडी हिलाई। मंद मुस्कराते गुरुजी मेरी तरफ देखते रहे। मन में आया गुरुजी युवावस्था में बहुत आकर्षक रहे होंगे।

"तू क्या रोज भोजन को अपने उस धर्मशाला में जाता है?" उन्होंने पूछा

"हाँ।"

"कष्ट नहीं होते।"

मैंने फिर मुंडी हिलाई। गुरुजी बोले

"अरे तू यहाँ क्यों नहीं रहने आ जाता।"

कुछ नहीं बोला

"ठीक है! अब समझा! आप कैसे आओगे यहाँ कीर्तनकार महन्त।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"नहीं वैसा कुछ नहीं है" मैंने कहा "मैं तो उस सबको भुला देने के प्रयास में हूँ।"

"फिर आज से ही यहाँ रहने लगो। सामान क्या है?"

"एक बोरा बिछाने को एक कामरी, ज्ञानेश्वरी, गाथा और पंचा।"

"ले आओ यहाँ तुरन्त।"

मेरे सामने पर दूसरा ही प्रश्न था। मुझे यहाँ गेहूँ , चना, सींगदाना कौन देगा? गुरुजी आगे बोले

"अच्छे ब्राह्मण हो। चार ब्राह्मणों को कह देता हूँ। वहाँ से मधुकरी लाया करो।क्या समझे?"

अपने नियम की बात कहने की इच्छा थी। यह भी कहना चाहता था कि मुझे किसी के भी यहाँ का भोजन चलेगा। पर कह नहीं पाया। गुरुजी ही बोलते रहे।

"आ रहे हो ना।"

"हाँ!"

सामान ले आया। थाली नहीं थी। लोटा नहीं था। मधुकरी की थाली रखने के लिये कपड़ा भी नहीं था। सब कुछ गुरुजी ने दिया।

दूसरे दिन उन्होंने बताये उन घरों में जाकर खड़ा हो गया और बोला- "ओम भवति भिक्षां देंहि।"

प्रतिदिन गीला पंचा लपेट मधुकरी की झोली लेकर पहिले माउली मंदिर जाता। वहाँ का अन्न माउली का महाप्रसाद। वहाँ से फिर पिछवाड़े के राममंदिर। वहाँ से फिर महाद्वार के सामने आकर अन्य गृहस्थों के यहाँ।

प्रश्न था मुझे षड्रस वर्ज थे उसका

पहिले हर जगह कह कर देखा

"एक प्रार्थना है।"

"क्या है बाबा अब और?"

"और कुछ नहीं मैं मिर्च नमक खाता नहीं।"

"फिर।"

"नहीं मुझे अलोनी दाल और भाकरी रोटी।"

"ऐसा। बड़े लाड़ले दिखते हो।"

"देखिये हो सके तो।"

"जब हो सकेगा तब अलोनी दाल रखेंगे पर रोज नहीं हो सकती।"

और वह कभी हुआ नहीं। एकाद अपवाद छोड़ हर घर से दाल साग परोसा ही जाता।

उनका भी ठीक था। मधुकरी मागनेवाले ब्राह्मणों के लड़के कोई एक दो थोड़े ही थे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इंद्रायणी पार के साखरे महाराज के साधकाश्रम में सातआठ ब्राह्मण छात्र अध्ययन के लिए रहते थे। उन्हें भी मधुकरी परोसी जाती। एक बड़ी थाली में आठ दस हिस्से ऐसे बनाकर रखे जाते। 'भवति' सुनते ही उसमें का एक एक हिस्सा परोसा जाता।

पहिले ही थाली में जो मधुकरी आई वह षड़रस से भरपूर थी। फिर उसपर एक उपाय खोजा। मधुकरी से भरी थाली लेकर इन्द्रायणी के उपरी प्रवाह पर गया। यहाँ पानी साफ रहता था। वहाँ बहते पानी में झोली डुबोता। झोली में से होकर अन्न बाहर न जाता पर मसलने पर षड़रस बह जाते। झोली बाहर निकालता पानी निथार देता। वहीं वृक्ष तली में प्राण को दिन में एक बार आहुती दे देता। फिर थाली माँज संस्था में लौट आता।

एक जगह पर मेरी बड़ी आस्था से पूछताछ हुई।

घासवाली धर्मशाला में रसोई बनाने का काम एक प्रौढ़ विधवा विकेशा महिला किया करती थी। उनके चेहरे पर एक अजीब उदासी हमेशा बनी रहती थी। मेरा नियम उनको भी बताया तो विस्मय से बोली

"क्यों बच्चे-क्यों नहीं खाता तू षड़रस?"

"खास कारण नहीं है। पर एक बार मैं बहुत बीमार हुआ। वैद्यराज ने पथ्य में ये सब छोड़ देने को कहा था। फिर चंगा हो गया। फिर भी वह व्रत चालू रखा।"

"कितने दिन हो गये बच्चे?"

"दो साल हो गये।"

"अरे मेरी अम्मा। कैसे निभता है रे तेरा। हमें तो एक दिन भी चटनी, अचार, सब्जी न हो तो सिर चकराने लगता है।"

"आदत हो गई है अब।"

"अच्छा बच्चे कल से मैं अलोनी दाल तेरे लिए रखा करुँगी।"

आलंदी में जबतक था उस प्रौढ़ा ने अपनी बात रक्खी।

डेढ़ दो माह मेरा यह व्रत निष्ठापूर्वक चला। उसमें खंड न हुआ। रात में मैं खाता नहीं था। दोपहर तेज भूख लग जाती तब वह रुचिहीन अन्न भी गपागप खा जाता।

अकारण कुतूहल नामका एक भावना प्रकार होता है। संस्था के कुछ छात्र उस सद्‌भावना से प्रेरित न हुए होते तो मेरा वह नियम अंत तक चलने में कोई परेशानी नहीं थी।

पर मैं था बाद में आया, आगे बढ़ा। अतः मैं खाता क्या हूँ? जाता कहाँ हूँ? दोस्ती किससे है? ऐसी सारी बातों पर नजर रखी जाती। जासूस ही लगे हुए थे।

इन्द्रायणी पर अन्न धोता था वह देखकर आश्चर्य से किनारे पर के लोग पूछते

"क्या करते हैं आप?"

"कुछ नहीं मधुकरी धोता हूँ।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

साश्चर्य पूछा जाता

"क्यों भई कोई छूआछूत की बात है क्या?"

"नहीं, नहीं वैसा कुछ नहीं है। मैं मिर्च मसाले खाता नहीं इसलिये।"

साश्चर्य मेरा वह अकृत्य देखते लोग खड़े होते।

एक दिन एक जासूस ने मेरा यह अपराध पकड़ा। चार दो दिन उसके साथियों ने मुझपर नजर रखी। फिर एक दिन जैसे बम फटा।

गुरुजी ज्ञानेश्वरी की विवेचना करते सम्बद्ध प्रमाण, अन्य संतो के वचन आदि देते वह सब लिख लेने के लिए मेरे पास बही नहीं थी। फिर मैं वह सब कापिंग पेन्सिल से बारीक अक्षरों में पुस्तक के ही चारो ओर की कोरी जगह पर लिख लेता।

सभागृह से सटा बरामदा था। वहाँ एक कोने की जगह गुरुजी ने मुझे दी थी। वहाँ मैंने अपना बोरे का बिछावन बिछाया था। सिरहाने कम्बल की तह। बोरे पर बैठ दोपहर ज्ञानेश्वरी का चिंतन कर रहा था। पड़ोस के कमरे से गुरुजी की गुस्से से भरी आवाज आयी

"गोप्या।"

गुरुजी की गुस्से से भरी आवाज सुन चौंका। ड़र गया। एक दो क्षण में मैंने संस्था में रहते हुए किये कामों की खोज की। गुरुजी मुझपर गुस्सा हो जायें ऐसा कोई अपराध मेरे हाथों हुआ स्मरण न आया। कड़ी जाँच की। कोई सूत्र हाथ न आया।

"ऐ गोप्या।"

फिर से गुरुजी ने बुलाया। उठा और गुरुजी के कमरे में जाकर दीवार से लग खड़ा हो गया। गुरुजी आसन पर बैठे थे। और दूसरी तरफ खड़े थे मेरे पापकृत्य के साक्षीदार।

गुरुजी ने बाहर की ओर अंगुली दिखाते हुए मुझे भरे गुस्से में कहा

"गद्धे, गधे चल निकल जा एक क्षण भी यहाँ रहने की जरुरत नहीं। उठा तेरा बोरिया बिस्तर और निकल जा. . . जा।"

आश्चर्य से मैंने पूछा

"लेकिन गुरुजी मेरा अपराध।"

"बात नहीं निकल यहाँ से इसका बिस्तरा फिस्तरा फेंक दो जी जाकर।"

"लेकिन क्यों?"

"मुझपर ब्रह्महत्या का पातक ड़ाल रहे हो। अरे मर जाओगे। वह कुछ नहीं। तू अपना वह थोबडा मुझे मत दिखाओ। जा कहता हूँ जा यहाँ से।"

यह आगी अकारण मेरे उपर ड़ाली जाने से दुखी हुआ पर बोला

"गुरुजी आपने मुझपर कृपा कर यहाँ बुलाया इसलिये मैं आया। आपकी इच्छा के बाहर मैं यहाँ एक मिनट भी न ठहरुँगा। परन्तु मेरा अपराध जाने बगैर मैं यहाँ से न जाऊँगा।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गुरुजी ने पूछा

"गधे गद्धे तू मधुकरी का क्या करता है?"

बहुत आश्चर्य से मैंने कहा

"आपने बताये घरों से माँग लाता हूँ।"

"वह नहीं पूछ रहा-मधुकरी मिल जाने के बाद क्या करता है?"

"उसे ग्रहण करता हूँ।"

वे साक्षीदार आगे आये, बोले ये वह मधुकरी पहिले इन्द्रायणी में

"चुपाओ। हाँ तो मधुकरी इन्द्रायणी में धोते हो।"

"हाँ रोज ही।"

"गधे क्योकर धोते हो।"

हँसी आयी वह दबाकर बोला

"गुरुजी मैं कुछ सालों से मिर्च, नमक, तेल, खटाई नहीं खाता।"

"मरेगा रे। क्या तेरी देह है, सीने की सारी पसलियाँ गिनी जा सकती है। ऐसे पागलपन से तू पैर घिसते मर जायेगा और हत्या मुझे लगेगी।"

भडभडा गया। गुरुजी के पास बैठा उनके पैरों पर सिर रखा। थोड़ा शांत होकर कहा

"गुरुजी कई सालों से मैं ऐसा ही हूँ। मुझे कुछ भी बीमारी नहीं है। मैं एकदम चंगा हूँ। जो ये खड़े हैं उनसे भी अच्छा। ये मेरे बराबर चल नहीं सकते। हम्माली कर नहीं सकते।"

मेरे लिये अपार स्नेह उनके चेहरे पर झलक आया। उन्होंने कहा

"वह कुछ नहीं आज से सब खाना।"

"लेकिन गुरुजी।"

"मेरे पैर पर हाथ रख कसम ले नहीं तो चला जा यहाँ से।"

मुस्कराकर मैंने कहा

"खाऊँगा।"

"नहीं वैसा नहीं मेरे पैर पर हाथ रख।"

वैसा ही किया जैसा गुरुजी ने कहा

"अरे बेटा कैसी साफ सुथरी बुद्धि पायी है तूने। वह बुद्धि जिस शरीर के आश्रय से रह रही है। उसे ऐसा तलवार की धार पर धरे रहना ठीक नहीं। तुकाराम बाबा ने कहा है।"

शरीर नश्वर न दे भोग
शरीर स्वस्थ न कर त्याग
तुका कहे वेग करो हरिभजन

शरीर के अधिक लाड न करो। पर आवश्यक उतना तो उसे दोगे या नहीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

मारुतिबुवा गुरुजी ने वास्तविक पुत्रवत प्रेम किया मुझपर।

मैं ब्राह्मण मधुकरी को जाते समय पीला पंचा पहनता था। उसकी जगह मैं रेशम या अर्धरेशम का कुछ पहना करुँ ऐसा उन्हें बहुत लगता पर मेरी मजबूरी थी वह वे जानते थे।

वै॰ गुरुवर्य सोनूमामा हर बदी दशमी को आलंदी की वारी करते थे। उनके साथ ही पुणें के एक संस्कार सम्पन्न गृहस्थ बापट आलंदी आया करते थे। गुरुजी ने उन्हें एक बार धीरे से अपने कमरे में बुलवा लिया और बड़े संकोच से कहा

"आप से एक चीज माँगना चाहता हूँ।"

आश्चर्य से वे बोले- "माँगिये इतना संकोच न कीजिए कृपाकर।"

"ऐसा नहीं थोड़ा अलग तरह का है।"

"कहिये क्या सेवा करुँ?"

"मुझे एक रेशमी या तत्सम पीतांबर चाहिये है।"

"किसके लिये?"

"हमारा एक लड़का है ब्राह्मण है - दांडेकर कुल नाम का।"

"अच्छा दांडेकर।"

"हाँ सोनोपंत का उसका कुल नाम एक ही है।"

"अरे वह मरीयल सा।"

"दिखने की बात पर न जाओ आप। बहुत होशियार है। उसे ही चाहिये।"

"ठीक है अगली बार ले आऊंगा।"

अगली बारी में बापटजी मेरे लिये मुगटा (पीतांबर) लाये। जामुनी रंग का। गुरुजी बड़े स्नेह से वह मेरे पास लाये। पहनाया फिर बोले

"अब कैसे अच्छे दिखते हो।"

हर ग्यारस को उपवास रहता। उस दिन संस्था में ही फलाहार मिलता। वह अन्यों के साथ मुझे भी मिलता। पर रात को न मिलता। गुरुजी मुझे चुपचाप अपने कमरे में बुलाते। दस बीस पिंड खजूर-रामदाने का लड्डू मेरे हाथ में देते। दरवाजा बंद कर देते कहते

"खा ले चुपचाप।"

"गुरुजी रहने दीजिये।"

अपनी सुंदर आँखे मुझ पर तरेरते वे कहते

"गद्धे गधे खा ले।"

गद्धे गधे यह संबोधन गुरुजी का विशेष था सबके भाग्य में वह न आता।

उस समय आलंदी में एक बडा तात्विक संघर्ष शुरु था। दो पक्ष तैयार हो गये थे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तटस्थ पक्ष एकदम क्षीण था।

श्रीमद शंकराचार्य जगत को मायाकार्य मानते हैं। उनका एक प्रसिद्ध श्लोक है

श्लोकार्धेन प्रवक्ष्यामि यदुक्तं ग्रंथ कोटिभि :
ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापर : ॥

जो करोड़ो ग्रंथो में विस्तार से कहा गया है उसे मैं केवल आधे श्लोक में कहता हूँ ब्रह्म यही एकमेव सत्य है। जगत मिथ्या है। जीव ब्रह्मरुप ही है अलग नहीं।

आचार्य के तत्वज्ञान का सार यही है। ज्ञानेश्वर महाराज ने गीता पर भाष्य लिखा। गीता में माया शब्द का उपयोग किया हुआ है इसलिये ज्ञानेश्वर को भी उसका उपयोग करना पड़ा। गीता का अर्थ कहते हुए ज्ञानेश्वर बार-बार इसलिये आचार्य का अनुसरण करते हैं। लेकिन अधिकतर विभिन्न पदों का अर्थ विशद करते हुए इससे कुछ अलग भाव उनके मन में होगा ऐसा भी मानने के लिए उपयुक्त प्रमाण ज्ञानेश्वरी में उपलब्ध हैं।

उदाहरण के लिये तेरहवें अध्याय में क्षेत्र ज्ञान और ज्ञेय पर विवरण देते हुए माउली ने कहा है-

एऱ्हवी अवघेचि आत्मा
हे सांगो जरी वीरोत्तमा
तरी तुझिया मनोधर्मा
मानेल ना।

यह संपूर्ण विश्व माने केवल आत्मा है यह तथ्य अगर तुझे कहने लगूँ तो तेरा मन इसे मानेगा नहीं।

यह सारा विश्व मायाकार्य है ऐसा शंकराचार्य का सिद्धान्त है तो वह आत्मरुप है यह ज्ञानेश्वर का प्रतिपादन है।

अनुभवामृत-अमृतानुभव यह माउली का स्वतंत्र दूसरा ग्रंथ। वह वेदान्त ग्रंथों का मुकुटमणि। अद्वितीय। केवल निरुपम। उस ग्रंथ में ज्ञानेश्वर ने मायावाद झटक दिया है। इतना ही नहीं तो यह जगत उस प्रकाशमय वस्तु की प्रभा है जिसकी रची चन्द्रमा और चांदनी है, रत्न और उसकी आभा है वैसा ही चिदवस्तु और प्रकाश का अन्योन्य संबंध है ऐसा उन्होंने बड़े आग्रह से प्रतिपादन किया हुआ है। इस ग्रंथ में चिद्विलास यह एक नया तत्वज्ञान उन्होंने प्रतिपादित किया है ऐसा एक पक्ष कहता। हमारी संस्था में कितने ही तत्वज्ञानी इस मत के समर्थक।

परन्तु उसी के साथ उनकी एक ओवी है

तैसा व्यासाचा मागोवा घेवु
भाष्यकाराते वाट पुसतु

अब इस ओवी में ज्ञानेश्वर कह रहे हैं कि मैं तो केवल भाष्यकार शंकराचार्य का अनुकरण कर रहा हूँ। इतना ही नहीं अमृतानुभव ग्रंथ में भी वे आचार्य द्वारा खींची रेखा के पास नहीं गये हैं ऐसा भी एक पक्ष है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऐसे इन दोनों पक्षों के प्रबल युद्ध चलते। दोनो ही अपने-अपने मत के आग्रही। बार-बार इस सारी चर्चा की खूप धूल उड़ती।

हर ग्यारस सुदी को हमारी दिंडी देहू को जाती थी। देहू आलंदी से करीब दस मील। मारुतिबुवा सहित सब लोग भजन करते भोर छह साढ़े छह बजे आलंदी से निकलते। सारे रास्ते भर भजन होता रहता।

वासुदेव नामक एक अभंग प्रकार है। सुबह की बेला में अधिकतर ये वासुदेव गाये जाते। ज्ञानेश्वरी माउली का एक वासुदेव तो तेरह छंदो का है। ओम नमो वासुदेवाय मंत्र के हर एक अक्षर से एक-एक छंद प्रारंभ होता है। हर एक छंद के फिर चार चरण हैं उस वासुदेव का प्रारंभ का छंद है-

ओम नमो वासुदेवाया
ओडियाणा बंध घालुनी देहुडा लागसी लपाओ।
ओतप्रोत सांडुनि मना धरिसी अहंभावो।
ओंकार बिंदुचा तूं न पवसी ठाओ
ओळगे ओळगे कृष्ण द्वारावतीये राओ ॥१ ॥

ऐसा खूप बड़ा अभंग वह बहुत देर तक चलता रहता। मैंने भंडारा पहाड़पर तुकाराम बाबा के अभंग याद किये थे। करीबन बारह सौ। मुझे बड़ा गर्व था की मेरा इतना याद किया हुआ है। परन्तु आलंदी आया तो देखा ऐसे-ऐसे दिग्गज कि मेरा सारा गर्व बह गया। साधारण दिखते वे लड़के परन्तु उन्हें सारी ज्ञानेश्वरी याद। 'ओम नमो जी आद्या' से लेकर 'लेखकु जाहला' तक। आठ-आठ, दस-दस साल तक उन्होंने कुछ किया ही नहीं सिवाय ज्ञानेश्वरी पारायण के। सारी नौ हजार ओवियाँ मुखोदगत।

ऐसी कठिन तपस्या। सारा कुछ मुखाग्र। परन्तु बहुतों का एक मजा था। वे जो चाहिये वह एक अकेली ओवी कह न पाते थे। फटाकों की लड़ जैसी स्थिति। एक तरफ से सुलगादो अंत तक फटाफट होकर ही दम लेगी। वैसे होता उनका। एक ओवी शुरु कर दीजिये उसके आगे की सारी ओवियाँ वे कहते जायेंगे। अर्थात अर्थ की तरफ कतई कोई ध्यान नहीं।

दिंडी में ऐसे लड़के होते ही थे। इसलिए खूप सुनने को मिलता था। एक-एक अभंग रसपूर्ण। ज्ञानेश्वर के मदालसा नाम के अभंग हैं। वे तो बहुत लंबे है। मदालसा नामक रानी द्वारा अपने बच्चे को पालने में सुलाने के लिए गाये उपदेश हैं वे। उसमें के चरण सुनते मन हर्ष से उफन उठता है। एक छंद ऐसा-

अठरा भार वनस्पती फुलीं फळिया वोळती
बावी त्या पोखरिणी नदी गंगा वाहाती
ज्या घरीं कुळस्त्रिया राज्य राणी व संपत्ती
ऐसें सुख सांडुनी योग कासया सेविती।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इस तरह के बड़े-बड़े अभंग गाये जाने के बाद फिर अभंगो के अन्य प्रकार जैसे गौळणी (ग्वालिनें), विरहिणी जैसे अभंगो का क्रम शुरु होता। ज्ञानदेव जैसी रसोत्कट विरहिणी किसी ने रची नहीं ऐसा कहा जाता है। या यूँ कहा जाता है कि विरहिणी के क्षेत्र में ज्ञानदेव आखिरी शब्द है। कितने ही उदाहरण दिये जा सकते हैं-

आपुलेनि भारे श्रीरंगीं डोलतु गेले
तंव अवचित पाचारिलें पाठीमोरें ॥१ ॥

घनु वाजे घुणघुणा वारा वाहे रुणझुणा
भवतारकु हा कान्हा वेगीं भेटवा कां ॥२ ॥

पडिलें दूरदेशी मज आठवे मानसीं
नको नको हा वियोग कष्ट होताती जिवासी ॥३ ॥

तुजवीण एकली रे कृष्णा न गमे राती
तंव तुवां वेणु घेवोनी नवल केलें हाती ॥४ ॥

जीवींचिया जिवा प्रेमभावाचिया भावा
तुजवांचोनि केशवा अणु नावडे वो ॥५ ॥

ऐसी कितनी? उन्हें कहते सुनते दस मील कब पूरे हो जाते मालूम भी न पड़ता मंदिर दिखने लगते ही ज्ञानोबा माउली का हरिपाठ शुरु हो जाता। हरिपाठ में कुछ पाठभेद हैं। उन पाठभेद का उच्चारण जोर-जोर से करना। सब छात्रोंको सुनाई दे ऐसा। गले में वीणा लटकाये हमारे गुरुजी हमारा वह अट्टाहास देख मुस्कराते।

देहू में दिंडी सीधे मंदिर में जाती। पंक्ति में खड़े होकर एक आध अभंग गाया जाता और फिर दिंडी तात्कालिक रुप से विलग हो जाती फिर इन्द्रायणी पर जाना। हाथपैर धोकर आना यहाँ-वहाँ घूमना तब-तक फलाहार के लिये बुलाया जाता।

देहू के एक इनामदार हम दिंडीवालों को फलाहार दिया करते थे। जिसमें पिंड खजूर और रामदाने के लड्डू होते थे। फलाहार के बाद फिर इन्द्रायणी पर जाकर पानी पी आना। दो घंटे बाद फिर भजन का समय होने तक छुट्टी रहती।

दोपहर के भजन के बाद ज्ञानेश्वरी पठन होता और उसके बाद नगर प्रदक्षिणा। धीरे धीरे रात के कीर्तन का समय हो जाता। स्वयं गुरुजी कीर्तन के लिये खड़े रहते वारकरी कीर्तन का एक विशेष है उसमें कोई कथा नहीं कही जाती। कीर्तन के लिये कोई अभंग लिया जाता उसका भावार्थ पूर्वार्ध में बताया जाता। उत्तरार्ध में उस अभंगपर ही कीर्तनकार दो पक्ष खड़े करता। पूर्व पक्ष उपस्थित कर उसका समाधान उत्तरपक्ष में दिया जाता।

स्वयं गुरुजी कीर्तन के लिये खड़े रहते।उनके पीछे हम झांजे लिये झांजकरी। गुरुजी जिस विषय का निरुपण कर रहे हैं उस विषय को पूरक ऐसा प्रमाण सूझते ही अनुमति लेकर हम कह देते। गुरुजी बहुत प्रसन्न हो जाते। वास्तविक ये कीर्तन होते ही इसलिए कि छात्र आगे बढ़े। ऐसे दुर्लभ अवसर को कोई खोना न चाहता। कुछ नया सूझते ही कह ड़ालता। इससे कभी-कभी ऐसा भी होता कि छात्र संदर्भ को ठीक तरह से न समझ और ही कुछ कह ड़ालता और मजाक का पात्र बनता।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

दूसरे दिन उठते ही दिंडी लौट पड़ती। फिर से वैसे ही भजन करते हुए आलंदी की ओर। नित्यक्रम में यह एक परिवर्तन बड़ा मजेका होता इसलिए ग्यारस सुदी की हम सब याद करते रहते।

संस्था में बहुत सारे काम थे। उसमें से दियाबत्ती का काम मैंने अपने लिये माँग लिया था। सारे भवन में छह सात लालटेन लगते थे। सभागृह में गैसबत्ती रहती। इन लालटेनों के काँच साफ करना, बत्ती काटना, उन्हें बदलना। लालटेनों को सुलगाना उनको नियत स्थान पर रख आना। सुबह फिर वे वहाँ से उठाकर कोठी में लाकर रखना ये सारे काम मैं बड़े जतन से करता। मेरे पोछे लालटेन के काँच एकदम साफ रहते। बत्ती ठीक काटी हुई होती। इसलिये काँच भी काली नहीं होती थी।

गुरुजी कहते-इस लड़के के बहाने संस्था में साफ प्रकाश ने प्रवेश किया है।

मैं बत्तीवाला होने से एक सुभीता था। सभी कीर्तनकारों के कीर्तन कोई सुखद न होते। कोई-कोई तो यूँ ही हनुमानजी की पूँछ की तरह बेकार कीर्तन बढ़ाता रहता। जम्हुआई छिपाते मुश्किल हो जाती। कीर्तनकार के पीछे झांजे लिये खड़े लड़कों की तो मुसीबत हो जाती। फिर एक बार इस पैर पर फिर उस पैर पर ऐसा करना पड़ता। समय खाने को दौड़ता जैसे।

इस मुसीबत से बत्तीवाले को छुट्टी मिल जाती। कीर्तन अरुचि कर होते ही बत्ती में हवा ड़ालने के बहाने झांजे नीचे रख देता। फिर एक बार नीचे रखी झांजे कौन उठाता।

संस्था में आने के बाद गाड़गेबाबा के दो शिष्य मेरे पीछे-पीछे संस्था में अध्ययन के लिये आये। एक रामदास आमटे दूसरा मेरा दोस्त लक्ष्मण धनगर। लक्ष्मण का हस्ताक्षर अच्छा था। सभागृह के दीवारों को फिर से रंग करना जरुरी था। गुरुजी को पूछकर वह दे दिया। फिर ऐसा सोचा कि दीवारों पर अहंब्रह्मास्मि, तत्वमसि, प्रज्ञानं ब्रह्म और अध्यात्मा ब्रह्म ये चार महावाक्य और कुछ बोध वचन लिखे जायें।

बड़े हौसले से रंग लाये। सारी दीवारों पर बीच में नक्काशी और उपर बोधवाक्य लिख ड़ाले। सब पूर्वग्रह मुक्त होकर स्तुति करने लगे।

शाम को अचानक ही गुरुवर्य सोनूमामा आये। बड़ी नम्रता से उन्हें नमस्कार किया और कहा

सभागृह के दीवारों पर कुछ बोधवाक्य लिखे हैं। एक नजर ड़ाल देवें तो. . .

वे उपर आये। घूम फिर कर उन्होंने देखा।सुंदर-बहुत सुंदर कहा। हम आनंद मगन हो गये। फिर उन्होंने पूछा-

ये इतना बढिया अक्षर किसने निकाले है? आगे बढ़कर कहा

"मैंने-मैंने और लक्ष्मण ने।"

थोड़ा मुस्कराकर मामा बोले - "छोटीसी गलती हो गई है।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हम प्रश्नार्थक मुद्रा में देखने लगे

ब्रह्म में जो ह्‌म लिखा है वह हर जगह गलत है। म्‌ में ह को जोड़ दिया है जबकि ह्‌ में म को जोड़ना है।

ऐसा लगा धरती फट जाये जल्दी।

बदी ग्यारस के एक हप्ते पहिले सब छात्रों का मुंडण कार्यक्रम होता था। उसके लिये माउली मंदिर के शहनाई वादक एक नापितराज तय थे। उस दिन वे भोर चार बजे सान, उस्तरा, कटोरी, दर्पण और गले में पहनाने का महावस्त्र लेकर आ जाते।

संस्था में अध्ययन के लिए रहने का जिस दिन सबसे अधिक पछतावा होता था वह हजामत का दिन ही था। नापितराज निष्काम कर्मयोगी थे। हर सिर के लिए उन्हें दो आने मिलते थे। हर एक सिर को मूडने के पहिले सानपर वे यूँ ही उस्तरा छुआते और सामने बैठे छात्र की मुंडी पकड़ नीचे झुका चोटी से जो पट्टी पकड़ते वह माथे तक। एक पट्टी में बेड़ा पार। रास्ते की किसी बाधा का वे विचार नहीं करते थे। उस दिन छात्र के सिरपर उसीके खून से होली होती। फिर भी नापितराज के सामने बैठना ही पड़ता। फिर जी बहुत कड़ा करके आँखे बंद करके होष्णमाण के सामने जाने के सिवाय कोई चारा नहीं था। अच्छा, उस महात्मा के मन में यह अपना यह पराया ऐसा भेदभाव नहीं था। सर्वत्र समदर्शन का वह श्रेष्ठ नमूना था।

उस दिन सिर ऐसा जलता मानो आग रखी हो सिरपर। दो तीन दिन तक वह आगी होती रहती। लेकिन बदी ग्यारस के पास आ जाने से वह दुःख कम हो जाता। बदी ग्यारस आलंदी यात्रा होती थी। दशमी से यात्रियों के स्वागत के लिए आलंदी सज्जित होने लगती।

वैसे भी सालभर माउली के मंदिर की गली में फूलपत्ती, अबीरबुक्का, पेढा, चिरोंजीदाना ऐसे वस्तुओं की दूकानें लगी रहती हैं। परन्तु बदी ग्यारस पास आते ही हलवाइयों की भट्टियाँ रात-रात तपती। पानफूल वाले सारा जंगल भटक फूल पत्ती जमा कर लाते। तिरपाल का छप्पर ड़ाल छोटी छोटी दुकानें मंदिर के चारों ओर एक दिन पहिले से लग जाती।

संस्था का वातावरण भी बदल जाता। गुरुवर्य सोनूमामा दशमी को ही आलंदी पहुँच जाते। उनके साथ और कुछ हमेशा के वारकरी।

सोनूमामा का स्वभाव विरक्त, अलिप्त, कुछ उदासीन। आलंदी आने पर भी वे नीचे के एक कमरे में बैठे होते। अपने समय पर आकर ज्ञानेश्वरी पर प्रवचन करते। कीर्तन भी करते। लेकिन उनके पास जाकर सुख दुख की कोई बात करे ऐसा साहस किसी का न होता।

लेकिन उनके साथ जो अन्य वारकरी आते उनके खुली बातचीत से संस्था भर जाती। वैसे संस्था में एक तरह का गंभीर विरक्त वातावरण हमेशा ही बना रहता। जोर से हँसना,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

विनोद, मजाक इन बातों पर वहाँ बंदिश ही थी मानो। कुछ लोग तो ऐसा चेहरा बनाये रहते जैसे सुतक में है। हर माह लेकिन ग्यारस के आसपास यह उदासीनता छँट जाती।

ग्यारस के दिन सुबह शाम मामा के ही प्रवचन होते। रात को उन्हीं का कीर्तन। सोनूमामा का विषय प्रतिपादन और दूसरों का निरुपण इसमें कहे या न कहें फिर भी बहुत अंतर रहता।

सोनूमामा फिलासफी के एम. ए. थे। महाविद्यालयों में सारा जीवन उन्होंने यही पढ़ाया भी। इसलिए उनकी टिप्पणियाँ तर्कसंगत ही होती। निरपण अधिक युक्ति संगत रहते। मामा के कीर्तन के समय मैं बत्ती में हवा पहिले ही अच्छी भर देता। उनके कीर्तन में झांज नीचे रखना पुसानेवाली बात नहीं थी।

एकादशी ऐसी धूम धड़ाके से गुजरती और उदय होती द्वादशी। द्वादशी के बहाने दूरगाँव से आये वारकरी भंडारे करते। इस भड़ारे के लिए पहला निमंत्रण संस्था के छात्रों को होता था। उस दिन कोई छात्र मधुकरी के लिये नहीं जाता था।

ये निमंत्रण स्वीकार कर जगह-जगह छात्रों को भेजने का काम एक वरिष्ठ छात्र के जिम्मे रहता। बढ़िया पकवान वाली जगह पर अपने खास और पतली दाल कढ़ी वाले स्थान पर इतरे जनों को भेजने का दायाँ-बायाँ वह वरिष्ठ करता ही।

वै. गु. जोगमहाराज की पुण्यतिथि माघ बदी प्रतिपदा को होती।वह उत्सव जोरशोर से मनाया जाता। समाधी के पास शामियाना लगाया जाता। सातदिन वहाँ भजन कीर्तन का बड़ा ही शोरगुल होता रहता। बड़े-बड़े कीर्तनकार उस समय हाजिरी लगाने अवश्य आते। बढ़िया-बढ़िया मृदंग वादक और भजन गायक उन दिनों सुनने को मिलते। विशेषकर बड़े भोर ही भूपाली, बिराणी, वासुदेव का भजनरस वहाँ उमड़ पड़ता मानों। बंकटस्वामी का भजन सुनने की बड़ी इच्छा थी।

उनका भजन सुनने एक दिन तीन बजे उठा। माघ माह था। जाड़ा तो पूछो नहीं। कुड़कुड़ाता इन्द्रायणीपर गया। गोता लगाया पानी में। नदी के बहते पानी का एक बहुत अच्छा रहता है। डुबकी लगाने के पहिले जो कुछ जाड़ा लगे वह लगे। डुबकी के बाद शरीर गरमा जाता है।

पंचा लपेटा। पहना हुआ खंगार, निचोड कंधेपर ड़ाला। और फिर ठिठुरते रास्ते के कंकड़ों पर पैर रखते और चुभन से टेढ़ामेढ़ा होते संस्था की ओर लौटा।

रास्ते में महाद्वार के सामने हरिपाठाश्रम है। वहाँ कई वर्षो से अखंड वीणा बजाई जाती थी। महाद्वार के पास आया तो ऐसा कुछ चुभता स्वर उस आश्रम से आता सुना कि वहीं ठिठक गया। नहीं; गड़ गया।

कोई एक प्रौढ वारकरी गले में वीणा लटकाये भूपाली गा रहा था

क्योंकर किया दयनीय दीनों से दीन
कितना शक्तिहीन तू हुआ दिखे रे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लज्जा आती है मन में तेरा कहते दास
न रस न मधुरता रही वाणी में
लज्जित किया संतों के उत्तरों ने
समझ पड़ी बात दूसरी एक पर से
तुका कहे मेरी वाणी कौन बुलवाये
बिना तेरे प्रसाद विठ्ठलजी

उनके स्वर में विलक्षण आर्तता थी। शब्दों से वे ऐसे कुछ समरस हो गये थे कि पूछो नहीं। जैसे कि वे स्वयं का ही वैकल्य गा रहे हों स्वर जैसे शहद का जानलेवा छत्ता।

हरिपाठाश्रम की ओर पैर मुड़ गये। उनके भजन में बाधा न हो इसलिए रास्ते पर ही खड़ा रहा। कंधे पर गीला गच्च पंचा। भोर के कुडकुडाते जाड़े में मैं गीला सा। परन्तु उस आर्तता से इतना तद्रूप हो गया मैं कि मुझे शरीर स्थिति का होश ही नहीं रहा।

भूपाली के बाद उन्होंने बिराणी शुरु की-

घनु बाजे घुणघुणा, हवा बहे रुणझुणा

नया नहीं था ये भजन मेरे लिये पर शब्द और सूर इतने एक रस हुए कभी न सुने थे।

वह केवल श्रीहरी के लिए गा रहा था। उस जान लेवा जाड़े में उसका भजन सुनने के लिए मेरे से दुसरा कोई उपस्थित नहीं था। आगे ईट पर खड़े कमरपर हाथ रखे उसके इष्ट पांडुरंग और पीछे रास्ते पर मैं। उन्हें मेरा होना न होने के बराबर था। उस बिराणी के बाद वे गाने लगे दूसरी बिराणी

पड़ा हूँ दूरदेश मेरे याद आये मनमें
न हो न हो यह व़ियोग कष्ट होते जी में

जीव को होते कष्ट यथार्थता से अभिव्यक्त करनेवाला वह स्वर सुन आँखो से आँसू बहने लगे। मेरा हुमसना शुरु हो गया। लगा कि घुडीमुडी होकर वहीं भूमि पर पड़ा रहूँ।

उस भोर बंकटस्वामी का भजन न सुन सका। बत्ती जला शामियाने में लगानी थी उसका भी होश न रहा। गाली खानी पडी। बोला नहीं कुछ सब सहा मजे में।उस भोर प्राप्त हुआ श्रवण सुख केवल निरुपमेय था।

ऐसा ही शब्द और स्वर का संगम एक बार और कार्तिक बारी में सुना। आषाढ़ बारी में पंढरपुर का जैसा महत्व वैसा कार्तिक बारी में आलंदी का। कार्तिक बदी ग्यारस ज्ञानेश्वर ने माँगली हुई तिथि तो बदी तेरस उनकी समाधी तिथि। अन्यथा खाली-खाली लगता आलंदी गाँव उस समय भीड़भरा हो जाता। दुकानें, भोजनालय, उपहारगृह, मिठाई भंडार के साथ ही भागवत वाचक, कीर्तनकार, बारी में हाजिरी लगाने अवश्य आते। इन सब का सब कुछ तो सुनना कठिन होता। संस्था के कार्यक्रम का बंधन होता, बत्तियों की व्यवस्था ठीक से रखनी होती।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

फिर भी उस भीड़ में दौड़ते भागते जो कान में पड़ जाता उतने में ही मैं ठगासा रह जाता। तुकाराम बाबा के, उपर से सीधे सादे लगते अभंग इतने सार गर्भित होंगे इसकी बिलकुल कल्पना न होती। कभी-कभी इसलिए ही एक शंका मन मे आ जाती कि यह जो इतने बारीकी से बाल की खाल निकालने अभंग की चीरफाड़ की जाती है और फिर जो इत्र निकाला जाता है वह सबका सब जगतगुरु तुकाराम बाबा के भी मन में था क्या? पर पंडिताइ के एक के बाद दूसरे, शरीर पर गिरते प्रपात से मन उन पंडितों के लिए आदर से भर जाता यह तो मानना ही पड़ेगा।

एक दिन समाचार आया कि आज सुबह सब छात्रों को धुंडा महाराज के कीर्तन में साथ देने जाना है। नाम सुना था, कीर्तन नहीं। इसलिए समाचार सुनते ही मन हर्षभरित हो गया।

इन्द्रायणी पार बाबा की धर्मशाला के सामने एक चौक में कीर्तन होना था। सब के साथ वहाँ गया। झांज लेकर खड़ा हो गया। रामकृष्ण हरि और पहला 'रुप' अभंग हो गया। फिर जो सज्जन गले में वीणा लटकाये कीर्तन के लिए खड़े हुए उनका सुंदर रुप देखकर ही मन प्रसन्न हो गया। गोल चेहरा, मुस्काती मुद्रा, सीधा नाक, गोरा बदन। सुघट शरीर ऐसे धुंडा महाराज कीर्तन को खड़े रहते ही श्रोताओं को जीत लेते थे। पर उनकी ही मानो प्रतिकृति उनके ही भाई बंडा महाराज के स्वर ने जो मोहिनी ड़ाली उसका वर्णन करना बिलकुल असंभव है।

युक्तिवाद, प्रसन्न निरुपण, भावों को छूता विवेचन, खिलखिलाकर हँसानेवाला विनोद, पंडिताई, संगीत सारे-सारे गुणों से ओतप्रोत वह कीर्तन ध्यान में रह ही गया।

नयी-नयी कल्पना करने और उसको अमल में लाने मैं हमारे मारुतिबाबा आगे थे। एक दिन उन्होंने घोषणा की-

अगले सोमवार से सब सिद्धबेट में सप्ता करेंगे।

सिद्धबेट अर्थात ज्ञानेश्वरजी की तपोभूमि। बेट माने टापू। यह आलंदी के पश्चिम में है। एक छोटा प्रवाह इन्द्रायणी को मिलता है उसके पार यह स्थान है। विलक्षण शांत। कामुक का भी मन स्थिर हो जाये इतनी शांति वहाँ रहती है।

इन्द्रायणी के पार है साधकाश्रम। हरित तृण, भद्राक्ष, करंज ऐसे पेड़ों से सजा सिद्धबेट। ज्ञानेश्वर, निवृत्ती, सोपान, मुक्ता ये चारो प्यारे बालक अपने बहिष्कृत माँ बाप के साथ यही छोटे से बड़े हुए। नामदेव ने कहा है-

चौरासी सिद्धों का सिद्धबेट पर मेला
वहाँ का उत्सव क्या कहूँ
नामा कहे देवा चले वहीं ठौरा
विश्रांति लेने कल्पकल्प

चौतरा बंधा एक पीपल। इन्द्रायणी तीर पर बनी किसी साधक की समाधि और उसके नीचे का पांडुरंग का छोटासा मंदिर इसके सिवाय वहाँ कोई भी वास्तु नहीं। सुबह से

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शाम कभी भी वहाँ जायें एक अपूर्व भाव वहाँ भरा रहता है।

उस सिद्धबेट पर सप्ता करने की कल्पना ही बड़ी रोमांचक थी। पहिली आवश्यकता थी पीपल के पास एक अच्छा सा मंडप बनाने की। हम सब काम में लग गये। हर साल जोग महाराज के समाधी के आगे मंडप बनाना पड़ता था इसलिये बाँस बल्ली आदि सारा सामान संस्था में था ही। बैलगाडी में सारा सामान भरा और सिद्धबेट की ओर चल दिये सब।

भूमि साफ करना, गड्ढे खोदना आदि काम में मैं तैयार था। मंडप के लिए यह सब किया ही साथ में एक और योजना बनाई। सातो दिन सिद्धबेट में ही रहने की इच्छा थी। इसलिये कंजी की दो शाखाएँ एक दूसरे में गूथ और कुछ टहनियाँ पत्ते लेकर एक झोपड़ासी बना ड़ाली।

वे सात ही दिन बहुत आनंद में गुजरे। मैंने गुरुजी से एक बारी माँग ली थी। ज्ञानेश्वरी, भजन और रात के कीर्तन छोड़ शेष समय उसी भद्राक्ष झोपड़ी में बिताता। कभी ज्ञानेश्वरी का मनन करता कभी याद किये हुए अभंगों की आवृत्ति करता।

जब से आलंदी आया ध्यान के लिए बैठने लगा था। पद्मासन लगाता। रीढ़ सीधी कर दोनो हथेलियाँ घुटने पर रखता। दृष्टि नासाग्र मध्य स्थिर करता। मन में उठनेवाली विश्रांतिहीन आवर्त धीरे-धीरे कम करने का प्रयास करता। उसके लिए पांडुरंग मूर्ति मन में स्थिर करता।

वह उसका मुखकमल, वे कमलाकृति नेत्र वह चंपाकली नाक, गले का वह तुलसीहार कटी में पीतांबर वे चरन कमल, सारा दिव्य रुप वह तेजोवलय अनेकानेक के ध्यान का केन्द्र मेरा भी ध्यान केन्द्र बनाता।

क्या यही विश्व का उत्पत्तिस्थान है? इस संपूर्ण विश्व का। यह सूर्यमंडल, वह ग्रह गोल, यह चारो ओर असीमता से फैला आकाश मर्यादाशून्य काल, इस सबका निर्माता क्या यही है? यह ऐसा होगा ही कैसा? इस सबका स्वामी एक छोटीसी ईट पर कर कमर पर रखकर खड़ा है यह कल्पना क्या कुछ ज्यादा ही साहसी नहीं है।

पर साहसी क्यों? विशाल वटवृक्ष का बीज कितना सूक्ष्म ज्ञानोबा ने ही कहा है :

सत्य ज्ञान अनंत गगन का प्रावर्ण।
नहीं रुप वर्ण गुण यहाँ
वही श्रीपति देखा भरदृष्टी
देखते देखता दूरी दूर करके
ज्ञानदेव कहे ज्योतीकी निजज्योति
वही यह मूर्ती खड़ी ईट उपरी

ज्ञानोबा तुकाराम ने निर्गुण निराकारित्व को समझने के बाद भी जब उसकी उपासना इसी रुप में करना ठीक समझा तो हम भी उनका ही अनुसरण करें।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उन महापुरुषों के नखाग्र इतनी भी लायकी हममें नहीं। फिर वृथा बुद्धी को कष्ट देना ठीक नहीं। वे गये उसी रास्ते से हम भी चले समझ में आये तो, न समझ में आये तो। हानि कुछ भी नहीं है।

कभी किसी एक मंत्रपर ध्यान केन्द्रित करता। कभी 'नमो भगवते वासुदेवाय' कभी 'श्रीकृष्णाय नमः' कभी 'रामाय नमः' कभी 'शिवाय नमः' जिस सम्प्रदाय की माला पहनी थी केवल उसी का अभिनिवेश नहीं था। सर्वदेव नमस्कारम केशवम् प्रति गच्छति यह याद था।

ध्यान जप ये सारे उपाय चित्त स्थिर करने के लिए है यह ज्ञात था। उसी के लिए तो सारा अट्टाहास था। इन्द्रिय जय उसी के लिये, व्रतवैकल्य उसी के लिये। चित्तवृत्ति संयत रहे इसी के लिए तो प्रयत्नशील था।

समझ में आ जाता था कि यह रास्ता बहुत लंबा है। जिस महासमुद्र में ये महामस्य लीलया विहार कर गये उसमें अपनी शफरी फुर-फरा भी नहीं पा रही थी।

ज्ञानेश्वरी का एक आवर्तन पूरा हो चुका था। अंतरंग की वार्ता से अभी भी अपरिचित था। फिर भी बर्हिरंग पर मन मुग्ध था। ज्ञानेश्वरी फिर पहिले अध्याय से प्रारंभ हुई थी। सात आठ अध्याय हो चुके थे। एक दिन सुना कि दूसरे गुरुजी लक्ष्मणबुवा ज्ञानेश्वर महाराज का दूसरा ग्रंथ अमृतानुभव शुरु कर रहे हैं।

गुरुजी से पूछा उनसे अनुमति ली और लक्ष्मणबुवा के कमरे में जाकर उन्हें नमस्कार कर खड़ा रहा।

वे एकमार्गी निस्पृह पुरुष अपने ही चिंतन में डुबे हुए थे। मैं कमरे में आया यह उनके ध्यानमें आया ही नहीं। कुछ देर दीवार से सट खड़ा रहा फिर थोड़ा खकारा। तब कहीं उन्होंने मेरी तरफ देखा।

"क्या है?"

"कुछ नहीं। आप अमृतानुभव शुरु कर रहे हैं।"

"हाँ।"

"फिर मैं बैठूँ सुनने के लिये।"

लक्ष्मणबुवा भी मुझपर बहुत स्नेह रखते थे उन्होंने ज्ञानेश्वरी कहाँ तक पढ़ी यह पूछा और फिर बोले

"ठीक है बैठा करो।"

"लेकिन।"

"अब क्या?"

ढ़ाढस बांध बोला- "हमें समझ में आये ऐसा कहियेगा।"

उनने बहुत गंभीरता से मेरी ओर देखा बोले

"ठीक है प्रयास करुँगा मैं; मेरी तरफ से।"

दूसरे दिन से पाठ शुरु हुआ हम पंधरह एक छात्र सुनने को बैठने लगे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गुरुजी ने प्रारंभ किया। ज्ञानोबा ने इस ग्रंथ में विश्व निर्मिती का रहस्य खोलकर जैसे सबके हाथ में रख दिया है। उसे समझाने में पहिले दो तीन दिन निकल गये। फिर पहले पाँच संस्कृत श्लोक समझाये। और फिर अमृतानुभव वास्तव में प्रारंभ हुआ

ऐसी इये निरुपाधिके। जगाचीं जियें जनकें।
तियें वंदिली मियाँ मुळिकें। देवोदेवी ॥

मैं पहिले ही शब्द पर अड़ गया

"गुरुजी एक शंका है।"

"पूछो बेटा।"

"ऐसी माने क्या?"

"ऐसी माने निरुपाधिक इस धर्म से युक्त।"

"मुझे ऐसा लगता है कि ऐसी का सम्बन्ध इस श्लोक के पहिले श्लोक से होगा।"

"कौन से?"

अद्वैतमात्मनस्तत्त्वं दर्शयन्तो मिथस्तराम्
तो वन्दे जगतामाद्यौ तयोस्तत्वाभिपत्तये ॥

अनुभवामृत इस ग्रंथ का चिंतन मनन करते लक्ष्मणबुवा गुरुजी का पूरा जीवन बीता जा रहा था। मैंने तत्वज्ञान के क्षेत्र में अभी प्रवेश भी नहीं किया था। बुवा हिमालय थे और मैं रेत का कण भी नहीं। परंतु अपने कण बराबर क्षीण बुद्धि के भरोसे मैं उनसे प्रश्न करने का प्रयास कर रहा था।

गुरुजी के सहन शक्ति की परीक्षा लेते मैं उन्हें हर कदम पर प्रश्न करता रहा। गुरुजी बिना उत्तेजित हुए मेरा समाधान करने का प्रयास करते रहे।

तीन दिन हो गये अमृतानुभव की गाड़ी आगे बढ़ने का नाम नहीं ले। मेरे साथ पाठ लेने के लिए बैठे मेरे सहपाठी गुस्सा हो गये।

पहिले ही मैं छात्रों में बहुत प्रिय नहीं था। उनके कितने ही बाद आकर दोनो गुरुओं का स्नेह मैंने संपादन किया था। उनके अनुसार मैं कुछ ज्यादा ही बनता था। अब तो मेरे कारण उनका पाठ ही रुक गया था।

भोर ही इंद्रायणी से नहाकर संस्था में लौटा था। हरिपाठ करते चंदन लगा रहा था। मेरे कारण दुखी सहपाठियों के एक बुजुर्ग प्रतिनिधि मेरे पास आये-बोले-

"आपसे कुछ बात करनी है।"

"करिये।"

"आप पाठ चलते गुरुजी को टोकाटोकी न किया करें।"

"सब समझ में तो आना चाहिये।"

"गुरुजी का कहा सुन लीजिए फिर चिंतन किया कीजिए।"

"और शंका आ जाये तो?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"हमारी बुद्धि में भी वे आती हैं। आपही कोई हाथी के कान से गिरे हुए नहीं हो।"

"बिना ठीक समझे, खंबा बने बैठे रहे।"

"आपका ठीक है आगा ना पीछा। हमें तो अमृतानुभव पूरा करना है।"

कुछ न बोला। क्षुब्ध हो गया।एक निर्णय मन ने तत्काल ले लिया। अगर इनको मेरा न होना ठीक लगता है तो आज से पाठ पर बैठे ही नहीं।

"पाठ को नहीं बैठना तो क्या करना?"

यहाँ रहना ही नहीं। संस्था का एक खेत था। उसमें बाजरा खड़ा था। उस की रखवाली करने किसी न किसी छात्र को जाना पड़ता। आज से वह काम मैं ही करुँ।

गाथा उठाई और खेत की ओर चल दिया। वहाँ रखाई कर रहे छात्र ने देखकर पूछा

"गोपालजी इधर कहाँ?"

"तुम्हारी सहायता करने।"

"लेकिन आपका तो अमृतानुभव चल रहा है।"

"हाँ!"

"फिर?"

उसके आगे दुखड़ा रोने का कोई लाभ नहीं था। अतः चुप रहा।

दिनभर अभंग याद करते बंधिया पर बैठा रहा। बिना खाये। अभंग की पंक्तियों पर से दृष्टि आगे बढ़ती रही पर मन बहुत अस्वस्थ था।

क्या करुँ? अध्ययन करते अगर लाख-लाख शंका उपस्थित होती हैं तो क्या उन्हें वैसे ही दबाता रहूँ। मूर्ति की तरह केवल कान खुले रख श्रवण करता रहूँ।

जिस श्रवण से मन निःशंक न हो जाये उस श्रवण का क्या उपयोग 'अल्ला को कष्ट मसूद को भी कष्ट'।

फिर क्या किया जाये?

कुछ समझ में न आया? सूरज ढ़लने को हुआ। दियाबत्ती का समय हो गया। नियत काम करना ही था, संस्था में लौट आया। दीये पोछे। तेल भरा। जहाँ तहाँ जाकर रखे। देखा गुरुजी नगर प्रदक्षिणा को गये हुए हैं। अपने बिछावन पर आकर बैठ गया।

थोड़ी देर बाद गुरुजी लौट आये हैं यह जान गया। उन्होंने कुछ गुस्से में ही पूछा

"यह लालटेन किसने लगाया?"

मेरे अमृतानुभव के सहपाठी गुरुजी का गुस्सा स्वर सुन खुश हो गये दौड़कर जाकर एक ने कहा।

"गोपाल ने।"

"कहाँ है वह?"

"वो क्या बैठा है।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"बुलावो उसे।"

उनने तुरन्त आकर मुझे कहा

"गुरुजी बुला रहे हैं, लक्ष्मणगुरुजी।"

उठा गुरुजी के कमरे में जा नमस्कार कर खड़ा हो गया

"कहाँ थे दिनभर?"

"खेतपर।"

"क्या कर रहे थे?"

"रखवाली।"

"किसने भेजा था।"

"मैं मन से गया था।"

"पाठ को क्यों नहीं बैठे?"

अब कहना जरुरी था। उस देवता से क्या छिपाता? यह भी जान गया गुरुजी मुझे झाड़ते सुनने बाहर सहपाठी जमा थे।

"गुरुजी मन में शंकाओं के बादल उठते हैं। वे वैसे ही दबाकर जडमूढ जैसा आप जो कहते हैं वह श्रद्धा से सुनना मुझसे नहीं होगा।"

"मैंने तुम्हें शंकाएँ न पूछने को कहा।"

"आपने नहीं कहा।"

"फिर किसने?"

मुँह से कह पाना कठिन था फिर भी अंत में कहा ही

"गुरुजी अभी अमृतानुभव की एक ओवी से आगे न बढ़ सके हैं हमलोग इस गति से ग्रंथ कबतक पूरा हो पायेगा?"

"उसकी चिंता करने का काम तुम्हें किसने सौंपा?"

"ऐसा नहीं पर मैं प्रश्न पर प्रश्न पूछता हूँ वह पसंद नहीं पड़ता।"

"किसे।"

"किसी एक को नहीं सभी सहपाठियों को।"

ओर वे बिगड़ पड़े

"उन बैलों को। उन्हें क्या समझता है। मैं अमृतानुभव तुम्हारे लिये पढ़ा रहा हूँ। तुम नाना शंका निकालते हो। उस कारण नया-नया चिंतन होता है। सूझता जाता है। तुम क्या पूछोगे पूछ सकते हो इस सोच से नया विचार आता है। रोज शाम को मैं टिप्पण निकालता हूँ। यह सब तेरे लिए केवल।

"अबे गधे रोते क्यों हो? क्या मैंने तुम्हें मारा पीटा जो आँसू बहा रहे हो?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मेरी आँखों से आँसू क्यों बह रहे है यह बात उन सरल चित्त व्यक्ति को कभी समझ में नहीं आयी।

संस्था में हप्ते में दो बार लोकमान्य तिलक का समाचार पत्र "केसरी" आता था। वह पढ़ कर एक बात समझ में आयी कि जिस मराठवाडा में लोगों ने मुझपर बहुत ज्यादा प्रेम किया वहाँ आन्दोलन की आग धधक रही है।

दबे रहने की, अत्याचार सहन करने की मुगलाई जनता को बहुत वर्षों की आदत थी। परन्तु वहाँ जो एक नया अलीगढ़ी वातावरण जोर से इधर पनपा था उससे सामान्य जनता का जीवन बिलकुल असंभव बना दिया था।

इस उपद्रव के विरुद्ध आंदोलन कर टक्कर देने का इतिहास अगर किसी ने बनाया होगा तो आर्य समाजियों ने। समाज की अनेक शाखाएँ उस मुगलाई में बरसों से कार्यरत थी। जूझ रही थीं। घाव जखम सहे जा रहे थे। उसी को जोर देने निजाम स्टेट कांग्रेस ने भी आंदोलन शुरु किया हुआ था। उसी में हिन्दूमहासभा के अधीन बहुत सारे सत्याग्रही मुगलाई में प्रवेश कर अत्याचारी शासन से लड़ रहे थे।

केसरी पढ़ते रहते मैं अस्वस्थ होता गया। मराठवाडा में प्रचार करते घूमते वाणी खूब थकाई थी। उसमें कोई कसर नहीं की थी। परन्तु कुछ करने का वास्तव समय तो अब आया था। इतने दिन तो यूँ ही बकबक की थी।

अपना धर्म कर्तव्य करते हुए अगर कोई बाधा बने तो तनकर खड़ा होना चाहिये झुकना गिरना नहीं चाहिये ऐसी बडबड तो बहुत की थी। परीक्षा देने का समय तो अब आया दिख रहा था। अन्याय चरम हो गये थे। शहर में ही नहीं गाँव खेडे में भी मुसलमान राजकर्ता के अत्याचारों ने अति कर दी थी।

कुछ सूझ नहीं रहा था। जिससे इस सम्बन्ध में बात करूँ ऐसा समान धर्मा कोई नजर नहीं आ रहा था। सहपाठियों से बोलने का प्रयास किया। उन्होंने विचित्र उत्तर दिये। एक बोले तो उसमें इतना व्याकुल होने का क्या कारण है?

मराठवाडा में हो रहे अत्याचार अनाचार का उल्लेख करते ही करुणा से भीगी दृष्टि से मेरी ओर देखते वे बोले

"गोपालजी इतने दिन वेदांत श्रवण किया सब बेकार गया।"

"वो कैसे?"

"ऐसे कि आपके निजामी अधिकारी उनके अत्याचार उससे नष्ट होती प्रजा यह सब मिथ्या है। मायाकार्य है। प्रातिभासिक सत्ता का केवल एक आभास मात्र है। जगत ही एक बड़ा भ्रम है। एक ब्रह्म केवल सत्य है। उसीका चिंतन करना छोड़ ये क्या फालतू की बातें आप सोचने लग पड़े।

ये मेरा साथी द्वादशी के भंडारे के निमंत्रण स्वीकार करता था। छात्रों को भोजन के

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लिए भेजने का काम भी यही करता था। जहाँ खीरपूडी हो वहाँ अपने खास साथियों को भेजना और जहाँ मामूली दालभात हो वहाँ ऐरेगैरे को भेजना। यह उसकी करनी सब को मालूम थी। ऐसे के द्वारा ब्रह्म चिंतन का उपदेश सुन दिमाग चकरा गया।

अर्थात सब ही ऐसे मायावादी नहीं थे। दो सहपाठी मराठवाडा के ही मिले। उन्होंने मुझे अनुकूल प्रतिसाद दिया। इसी समय मराठवाडा जाना चाहिये और यथासंभव कुछ करना चाहिये इस मेरी बात से भी वे सहमत थे। हमारी इस विषय पर चर्चाएँ शुरु हो गयी थी और एक घटना ऐसी घटी कि जिससे हमारे विचार को कार्यदिशा दी।

धुलिया के एक सज्जन अनंतराव क्षीरे।सामाजिक कार्यकर्ता। हिन्दूओं पर होनेवाले अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठानेवाले। वे पच्चीस जवानों को साथ लेकर प्रचार करते हुए आलंदी आये। एक सभा उन्होंने ली। सभा में घोषणा की कि आठ दिन बाद निझामी अत्याचारों के विरुद्ध कार्यवाही करने वे मराठावाडा में प्रवेश करेंगे। जिनकी इच्छा हो वे साथ आयें।

सभा से लौटा। मारुतीगुरु के कमरे में गया। गुरुजी ध्यान के लिए बैठने की तैयारी में थे। बोले

"गोप्या अब क्या लेकर आया है तू? तू जब भी बेवक्त मेरे पास आता है मैं सहम जाता हूँ। लगता है ले आया यह कोई नयी झंझट।"

बोला। झंझट तो है ही पर आपके लिए नहीं। जिनके लिये है उनको बचाने दौड़कर जाने की जरुरत हो गयी है। समाचार पत्रों में जो छपता था उसे वे भी पढ़ते ही थे। वे भी कुछ बेचैन से थे। मैंने उन्हें सारी बातें बतलायी और कहा

"कि उस जत्थे के साथ जाकर सत्याग्रह में शामिल होना चाहता हूँ।"

"फिर जाओ। कुछ भी करो। मेरे पास क्यों आये? बड़े हो गये हो। सींग निकल आये। चाहे जो करो कौन रोक सकता है।"

"कृपाकर इस तरह बिगड़िये नही।"

"गधे, गद्धे। बिगडू नहीं तो क्या करुँ।"

लगा कि गुरुजी प्रसन्न हैं। इसलिए कहा-चाहे जो करना होता तो अनुमति माँगने क्यों आता?"

"मैंने अनुमति नहीं दी तो।"

"नहीं जायेंगे। गुरु की आज्ञा का उल्लंघन किया ही कैसे जा सकता है?" गुरुजी आँखें छोटी करते हुए मेरी तरफ देख मुस्करा दिये। बोले

"लुच्चे हो!"

"हाँ वो तो हूँ पर जाने देंगे क्या?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"कौनकौन साथ है ?"

दौड़कर अपने साथियों को बुला लाया।

उनसे उन्होंने पूछा

"क्यों जी इसके कहने पर जा रहे हो या स्वयं निर्णय कर।"

"नहीं हम अपने आप ही जाना चाहते हैं।"

गुरुजी ने हम तीनों को पास बिठाया

"पागल की तरह बिना सोचे विचारे न जाना। वह खूनी निजामशाही है। मसल ड़ालेगी। कहीं पता भी न लगेगा। जो कुछ करना है वह सोच समझ कर करना और यह देखो कल सोनोपंतजी आ रहे हैं उनसे बात कर फिर तय करना समझें।"

सोनूमामा के सामने खड़ा रह 'हम सत्याग्रह करने जा रहे हैं' ऐसा कहने की हमारी हिम्मत नहीं थी। गुरुजी को अनुनय की। आप ही कह दीजिये-

"अच्छा !"

सोनूमामा आ गये। हमें बुलाया गया। जान मुठ्ठिमें लिये हम गये। चरण छूकर एक तरफ खड़े हो गये सीधे शब्दों में उन्होंने पूछा।

सत्याग्रह के लिये जाना चाहते हो

"आपकी अनुज्ञा होगी तो।"

"निजामशाही के अत्याचारों की कल्पना है।"

"उस क्षेत्र में मैं घूमा हूँ।"

"सत्याग्रह करने पर पकड़े जाओगे। जेल में बंद किये जाओगे। तुम पर वे जुल्म ढ़ायेंगे। माफी माँगकर वापस तो नहीं आ जाओगे।"

"नहीं सब सहन करेंगे माफी नहीं माँगेगे।"

फिर जो सोचा भी नहीं था वह हुआ। सोनुमामा उठ सभागृह में आये सब छात्रों आदि को वहाँ बुलवाया। स्वयं व्यासपीठ पर बैठे।ज्ञानेश्वर मंदिर से माउली के प्रसाद रुप में तीन मालाएँ मंगवाई। प्रवचन शुरु किया।

"स्वधर्ममपि चावेक्ष्य न विकम्पितुमर्हसि" इस श्लोक पर। मर्मस्पर्शी निरुपण किया। तुकाराम बाबा की बात भी कही-

झगड़ा ही हो गया फिर जान का क्या
आगे आकर बता ड़र से पीछे न जा
करले इकट्ठा शक्ति कुछ रहे न मन में
तुका कहे शूर फिर जैसे को तैसा

एक बार झगड़ा मोल ले लिया तो फिर पीछे मुड़कर नहीं देखना। किसी से ड़रना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नहीं। अंतिम छोर तक प्रयास करना। ऐसी बहादुरी से लड़ना कि देखनेवाले बहुत अवधि तक उसे याद रखे।

तुम तीनों जिस रास्ते जा रहे हो उस रास्ते में फूल बिछे हुए नहीं है। काँटों से भरी राह है। फिर भी पीछे मुड़कर देखना नहीं। वारकरी हो अपनी निष्ठा को ढ़का लगे ऐसा कुछ भी न करना।

मन भर आया। तब तो गला भी भर आया था जब सोनूमामा ने स्वयं के हाथों से माउली के प्रसाद रुप में मँगवाये वे हार हमें पहनाये।

क्षीरेजी के साथ मनमाड पहुँचे। वहाँ एक मन्दिर में सबको इकट्ठा कर क्षीरेजी ने कहा हम सब को औरंगाबाद जाना है। वहाँ सत्याग्रह करना है। लेकिन सब एक साथ गये तो स्टेशनपर ही पकड़ लिये जायेंगे। इसलिए हर व्यक्ति अलर्गअलग जाकर औरंगाबाद में घुस जाये। वहाँ के नाथ मंदिर में सबको फिर इकट्ठा होना है।

उन्होंने इस तरह अकेला छोड़ दिया। गुरुजी ने कुछ यात्रा खर्च दिया था। सोचा कि अगर पंचा पहन उघाड़ा ही गया तो तुरन्त पकड़ लिया जाऊँगा। हर हिन्दू को निजामी पुलिस बड़ी संशय की दृष्टि से देखती थी और यदि निजामी किसान के वेश में गया तो किसी को शंका न होगी शायद।

मेरे दोनो साथियों से पूछा तो वे बोले हम वारकरी हैं यह कह कर स्टेशन के बाहर निकलेंगे। किसी ने पूछा तो बतायेंगे हम पैठण जा रहे हैं। हमारी आप कतई चिंता न करो हम नाथ मंदिर में सुरक्षित पहुँच रहे हैं।

अपने बारे में मुझे सोचना था। बाजार गया। एक रुपये का एक शर्ट लिया नीली खड़ी धारियों का। जंजीर लगे सीसे के बटन खरीदे। एक मोटी धोती ली। पीछे लंबा फरारा निकाल एकलांग धोती पहनी। निजामी किसान पहनते हैं वैसी। उसका दूसरा छोर बाहर निकाल सिर में साफे जैसा बांधा। कमीज पहनी। जंजीरोंवाले बटन लगाये हनुमान मंदिर गया। नख से थोड़ा सिंदूर कुरेदा फिर उसे एक पानवाले के दुकान के आइने में देख दोनो आँखों के बीच माथे पर लगाया। स्वांग ठीक सजा या नहीं वह भी उसी आईने में देखा। बिलकुल निजामी दद्दू। रत्ती मात्र भी अंतर नहीं।

क्षीरे महोदय ने सबके टिकट एक साथ निकाले। टिकट खिड़की पर निजामी गुप्तचर खड़ा ही था। उसने तुरन्त रेल्वे स्टेशन से तार कर औरंगाबादमें सूचित किया कि पच्चीस एक बकरे आ रहे हैं। यह सब खुल्लम खुल्ला। हमारे सामने ही।

क्षीरे महोदय से टिकट लिया और सबसे अलग आखिरी ड़िब्बे में जाकर सो रहा। गाड़ी रात आठ नौ बजे मनमाड़ से चलती थी और कोई दस बजे सुबह औरंगाबाद पहुँचती थी।

जैसी वह पहुँची। धीरे से गाड़ी से उतरा। मैं ऐंचाताना बन सकता था। वह बना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

लंगड़ाकर चलने लगा। लोटा और हरिपाठ पुस्तक की पोटली थी। वह सीने से लगा ली। धीरे-धीरे बाहर जाने के दरवाजे पर आया।

निजामी पुलिस अधिकारी हमारे जत्थे से अधिक चतुर था। उसने प्लेटफार्म के दरवाजे के बाहर पुलिस खड़ी कर रखी थी। हमारे साथी एक-एक बहाना बता रहे थे। हमारे वारकरी साथी कसमें खा खाकर पैठण जाने की बात कह रहे थे। पर किसी की बात उन्होंने नहीं मानी। पूरी गिनती की। दो कम थे।

उनका हिसाब नहीं मिल रहा था। वह कैसे मिलता? एक गाड़ी से उतरा ही नहीं दूसरा मैं। यह सब देखता दूर खड़ा था। सीना धड़क रहा था। पर चेहरे पर कुछ भी आने न दिया। भीड़ छट गई तब धोती के छोर से बंधा टिकट खोलता एकदम टिकिट कलेक्टर से ही भिड़ गया।

टिकिट कलेक्टर बिगड़ा

"अब साले निकाल टिकट जल्दी।"

बावला बनते हुए कहा

"निकाल तो रह्या हूँ साब।"

आखिर में गांठ खुली। लाख रुपये मोल की कोई चीज हो ऐसा वह टिकट मैंने उसके हाथपर रक्खा वह चिल्लाया

"चल हट।"

गँवारों की तरह लंगड़ते धीरे धीरे निकल गया। पुलिस दो सत्याग्रहियों को खोज रही थी। मेरी तरफ, पर उन्होंने ढूँकककर भी न देखा।

आगे नाका था नाकेदार ने टोका

"क्यों बे पुटरी में क्या है?"

दीनता से कहा

"कुछ नहीं मियाँ। पूजापाठ की किताब है हाउर लोटा है।"

कुछ आगे रास्ता घूम गया था। वहाँ तक लंगड़ते गया। हमारे सत्याग्रही मित्रों को लेकर थाने जा रही मोटर मेरे रास्ते गुजर गयी।

गाँव में पहुँचा। एक भरोसे का सफेद पोश देख उसे नाथ मंदिर का रास्ता पूछा। उसने दिखाये मार्ग से नाथ मंदिर पहुँचा।

बाहर से ऐसा लग रहा था कि गैरमुलकी लोगों द्वारा चलाये जा रहे इस आन्दोलन से मुल्की माने खुद्द निजाम शाही के नागरिक दूर हैं या वे अपने को इस तकलीफ से दूर रखना चाह रहे हैं।

पर ये बात सत्य से परे थी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नाथ मंदिर पहुँचने के बाद किसी ने एक प्रतिष्ठित वकील का नाम बताया। उनके घर पहुँचा। उनसे कहा

"आपसे थोड़ी बात करना है।"

वेष से असंगत बात सुनकर वे चौके अंदर ले गये। मैंने कहा

"मैं आलंदी से आया हूँ। सत्याग्रह करने। इस वेष के कारण पुलिस पकड़ न सकी। अब क्या करुँ वह कहिये।"

उन्होंने कहा

"पहिले एक काम करिये। भोजन कर लीजिये।"

घर में ले गये। बड़े प्रेम से भोजन कराया। भोजन करते अपने पूर्वायुष्य की कुछ झलक उन्हें बताई। साश्चर्य बोले

"सत्याग्रह माने आप क्या करोगे?"

"कीर्तन करने पर यहाँ बंदी है ना?"

"प्रगट कुछ भी करने की यहाँ बंदी है। मरने की भी।"

"फिर मैं किसी चौक में कीर्तन करुँगा।"

"साथीदार।"

"उनकी कोई आवश्यकता नहीं। एक जोड़ी झांज आप दिलवा दे। मैं अकेला ही पहिले भजन करुँगा फिर बोलूँगा।"

"ठीक है। मैं आपके कीर्तन का प्रचार करने की व्यवस्था करता हूँ। कल शाम को यहाँ सुपारी चौक में आप का कीर्तन होगा।"

"मैं एक बार चौक देख लूँ।"

"शाम को एक लड़का आपको चौक दिखाकर लायेगा? केवल उसके पीछे थोड़ा अंतर रखकर आपको जाना होगा।"

चौक देख आया। वहाँ हमारा जत्था छूटकर आया हुआ मैंने देखा। पूछा तो बताया गया कि बिना अपराध पकड़े जाने पर क्षीरे महोदय ने चौकी पर हल्लागुल्ला किया। गवर्नर, वाइसराय, आला हजरत सबको तार से सूचित करुँगा यह कहा। पुलिस ने सोचा होगा अब जाते भी कहाँ हैं? सत्याग्रह के बाद तो अपनी ही कालकोठरी के सिवाय इनको कोई जगह नहीं है। उन्होंने सब को छोड़ दिया।

शाम को सुपारी चौक में सामान्य भीड़ थी। उसमें भी अधिक पुलिस कर्मी ही थे। लोगों ने सत्याग्रह देखे हुए होने के कारण उत्सुकता घटी हुई थी। सिवाय निजामी पुलिस का डर। केवल कीर्तन सत्याग्रह लोगों ने आजतक नहीं देखा था। इसलिए उसे देखने दुकानों की पाटियों पर यहाँ वहाँ आदमी बैठे थे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

हमारे जत्थे में से नंदुवार के वासुदेव मेंडकी और गोविंदराव जोशी ये दोनो भी उसी दिन सभाबंदी का आदेश तोड़कर सत्याग्रह करने वाले थे। वे और हम तीनों वारकरी तयशुदा समय के आधे घंटे पहले ही चौक में पहुँच गये। और भीड़ में घुस खड़े हो गये। कपड़ो में कुछ भी अलगाव न होने के कारण हम सत्याग्रह का समय होने तक पहचाने नहीं गये।

सत्याग्रह का क्षण ज्यों-ज्यों पास आने लगा पुलिस का अनुशासन तंग होने लगा। हनुमान मंदिर के सामने वे किसी को भी खड़ा न होने देते थे। सब आदमियों को वहाँ से उन्होंने भगाया।

वंदे मातरम् कहना निजामी राज्य में बड़ा भारी अपराध था। कीर्तन में उसी का अर्थ बतलाने की बात मैंने तय की थी।

ठीक समय हो गया और हाथो में झांजे लिये हम तीनों हनुमान के सामने प्रगट हो गये। रामकृष्ण हरि भजन गाया फिर मैं बोलने लगा

ज्ञानेश्वर महाराज ने माँ को अंबे श्रीमंते कहा हैं। निजजनकल्पलते ऐसा कहा है।

"ज्ञानेश्वर लेकिन बहुत बड़े उनकी भाषा भी ऊँची।"

"हम ठहरे कंगाल। हम केवल माँ को प्रमाण करते है। माँ तुझे नमस्कार।"

"मुसलमान होता है वह कहता है अम्माजान सलाम।"

"हिन्दू कहता है वंदे मातरम्।"

"इसमें कौन सा पाप है? इसमें कौनसा अपराध है?"

"इसलिए आप भी कहिये, सब कहिये, जोर से कहिये

वंदेमातरम् - वंदेमातरम्!!

पुलिस और अधिकारी सब सुन रहे थे। मैं बार-बार वंदेमातरम् कहने लगा। सब इन्स्पेक्टर आगे बढ़ा बोला

"समझ गये, आ गया ख्याल में! बस अब चलो।"

उसने मेरी बाँह पकड़ी। दो जवानों ने मुझे कब्जे में ले लिया। मेरे दोनों साथीदार कुछ बोलने लगे उन्हें भी पुलिस ने पकड़ा। और मोटर की तरफ ले चले। मेंडकी और जोशी भी आगे आये। सज्जनों और ऐसा कुछ वे बोल भी नहीं पाये कि पुलिस ने उन्हें खींच गाड़ी में बैठाया। गाड़ी पुलिस थाने की ओर चली।

मुकदमा दूसरे दिन ही पेश हुआ।

हम सबको लंबे चौडे कचहरी में ले गये। जज के सामने खड़ा किया। जज साहब बंबई के पारसी पहनते हैं वैसी ऊँची गोल टोपी पहने थे।

सब काम उर्दू में चल रहा था। हमने अमुक-अमुक दफा को भंग किया है। तकरीर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

की है। लोगों को भड़काया आदि अपराध कोर्ट के सामने कहे गये। गवाह के नाम पर जो शख्स लाया गया उसका थोबड़ा भी हमने देखा नहीं था।

उसे कोर्ट ने पूछा-

"तुमने गुनहगारों को देखा?"

"जी हाँ हुजूर।"

"ये वे ही शख्स हैं!"

"जी हाँ जनाब।"

"इन्होंने ये सब किया है!"

"जी हाँ जी!"

मुकदमा खतम हुआ। कोर्ट ने गंभीर होकर फरमाया

"तीन माह की कड़ी कैद। सौ रुपिया जुर्माना। न देने पर इक्कीस दिन की कड़ी कैद।"

"चलो बचे। सुना था साल से कम की सजा नहीं होती।"

मुकदमा खत्म हुआ। गाड़ी हमें लेकर शहर बाहर चली। घूम घुमाव करते एक गढ़ी के सामने आकर खड़ी हो गई। गढ़ी की खिड़की खुली। हाथ में संगीन पकड़े पुलिस ने हमें गिनकर अपने कब्जे में लिया। खिड़की बंद हो गई।

अंदर जाने पर देखा। बीचोबीच मैदान और चारों ओर बराके ऐसी वह एक मंजिला इमारत थी। पहिले घोडो की पायगा थी। उसका बनाया था कैम्पजैल। मुख्य जेल आगे एक फर्लांग पर था। उसका दर्शन भी यथाकाल हुआ।

अंदर जाते ही पहले तलाशी ली गई। शरीर के चिह्न देखे गये। कपड़े उतरवाये गये। जेल के कपड़े दिये गये। एक लंगोटी, एक सुथना, एक कुर्ता, एक टोपी। सब कपड़ो का रंग भगवा उसपर एक-एक काली पट्टी।

कैद भुगत छूटने पर कैदी की वर्दी वापस ली जाती और उसे एक बार पानी में से निकाल गोदाम में रख दिया जाता। नया कैदी आते ही उसे वह वर्दी दी जाती। नाप दो थे। एक मोटे कैदी का दूसरा दुबले कैदी का। ज्यादा नाप लेने का कोई झंझट नहीं।

हमने वर्दी पहनी और एक दूसरे की ओर देखकर हँसने लगे। एक-एक लोहे की थाली, कटोरा और कम्बल दिया गया। वह सारा वैभव लेकर हमारे लिये तय कोठडी में हम आये। जमीन खुदी हुई थी। गड्ढे थे उसमें। मेंडकी और जोशी बोले

"क्या जगह है? क्या इंतजाम है?"

मैंने कहा

"बड़े घर के लड़के होने के कारण आपको ये जगह ऐसी लग रही है हमें खेत के

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

ढ़ेलों में सोने की आदत है।"

कम्बलों से झाड जगह साफ की। बाहर से मिट्टी लाकर गड्ढे भरे। रहने लायक बन जाने पर कम्बल बिछाये। तकिये के लिये थालियाँ। मन में आया यहाँ अब पौने चार माह रहना है।

शाम को भोजन आया। अपनी-अपनी कोठडी के सामने बैठ जाने का हुकुम हुआ। बैठ गये। दो-दो भाकरी और कटोरा भर दाल। एक समय के लिये ठीक था। शिकायत करने की गुंजाइश नहीं थी।

भोजन किया। पूरी भाकरी न खा सका। बची वह खिडकी में सूखने को रख दी।

शाम हुई और कोठडी में जाने का हुकुम हुआ। मैदान में बीचोबीच पानी का हौज था। दौड़कर जाकर कटोरे में पानी भर लाये। और कोठडी बंद हो गये। दीया बत्ती का प्रश्न ही नहीं था। हरिस्मरण करते सो गये।

हमारे कैम्प जेल में करीबन सभी स्थानीय आर्यसमाजी कैदी थे।

सख्त मजूरी की सजा थी पर काम ऐसा कुछ नहीं था। मैदान झाड़ना पड़ता। झाड़ने की मुझे बहुत आदत थी। झाड़ने के लिये यहाँ खजूरी के गीले पत्ते उपलब्ध थे। पत्ती फाड़कर दो में चिरी हुई। उसे हाथ में लेना और आड़ीकर झाड़ते जाना। बाकी को आदत नहीं थी। मैं एकदम साफ झाड़ता। वार्ड़र कहता

"देखो तो बम्मन कैसा झाड़ता है?"

मेडकी कहते "वार्ड़र साब उस आदमी को आदत है हमको नहीं है।"

कभी पाच पचास कैदी गिनकर वार्डर के सुपुर्द किये जाते। बड़ा दरवाजा खोल उन सबको दो-दो की पंक्ति में बाहर ले जाते। वहाँ भी महत्त्व का काम नहीं था। गड्ढे खोदना उसमें कंकड पत्थर भरना दूसरे दिन उन्हें बाहर निकालना यही काम।

काम मैं लगन से करता। उसमें मक्कारी मुझसे होती नहीं। इसलिये वार्डर मेरे लिये कुछ उदार रहता। मेरे साथीदार कहते

"आपकी यह बात समझ में नहीं आती।"

"कौनसी बात?"

"आप जेल अधिकारियों को संतुष्ट करने का प्रयास करते हैं।"

गुस्सा आ जाता मुझे। मैं कहता

"देखिये सत्याग्रह करते मैंने कोई कोर कसर रखी थी?"

"नहीं। लेकिन?"

"फिर उसके लिये जो दंड मुझे दिया गया उसे मुझे ईमानदारी से भुगतना चाहिये। काम में मक्कारी ठीक नहीं। वे अपने को खिलाते तो है ना?"

"वह उनका कर्तव्य है।"

"फिर सौंपा गया काम लगन से करना यह भी तो अपना कर्तव्य है।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

काम के बाद भी बहुत समय खाली रहता। मेरे साथ के गोविंद शास्त्री जोशी धुलिया के सरस्वती पाठशाला के छात्र थे। उनकी संस्कृत बहुत अच्छी थी। उनसे कौमुदी सीखने लगा। वासुदेवराव मेंडकी शतरंज खेला करते। निंबोरी, कोयला और चूने की कंकरी से मोहरे प्यादे बना उनसे शतरंज के पाठ याद किये। कौमुदी के सूत्र याद करने उन्हें दीवारपर कोयले से लिखता। आते जाते वह याद करता।

रोज शाम को ध्यान के लिए बैठता। मेरे कोठडी के अन्य जवान राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के स्वयंसेवक थे। हर दिन शाम को वे प्रार्थना करते।

मेरा महात्मा गांधी और उनके आंदोलन पर विश्वास था। उसी कारण तो घर से भागा ही था। ये सहकारी गांधी मार्ग और चिंतन की चीरफाड करते। वह मुझे पसंद नही था। इस कारण मैं उनके प्रार्थना में कभी सम्मिलित नहीं हुआ। इतनी एक बात छोड़ उनका मेरा प्रेम-सद्भाव बना रहा।

जेल अधिकारियों की शिकायत करने लायक वैसा कुछ नहीं था। कहने को एक फिर भी था। हमें कपड़ों की जोड़ी दी जानी चाहिये थी। उन्होंने एक ही दी थी। नल में पानी काफी होते हुए भी रोज नही नहा सकते थे। कपड़े मिले वे गीले उनपर जुएँ रेंगती हुई। वे वैसे ही पहनने पड़े। तो हमारे बदनपर भी जुएँ हो गई। फिर दो चार दिन बाद से हम जुएँ परेड़ करने लगे। माने लंगोटी पहन सब लोग अंगूठे से टपटप जुएँ मारते बैठ जाते।

जेल का डाक्टर सदय था। कोई मद्रासी था। लेकिन वह भी क्या करे? दवाईयाँ थी ही नहीं। दो तीन बड़े बोतलों में मिश्रण बनाकर रखे थे। हर रोगपर उलट पलट वही दिया जाता।

जेलर भी सुजन था। जान बूझकर उसने कोई कष्ट नहीं दिया। वार्डर जरुर खूँसट थे। कैदियों के लिये जो भोजन घर से आता उसकी रोटियों को वे हाथ में लेकर तौलते। दाल की देग में झांकते। मेरे पास आकर कहते-

"क्यों बे पण्डत तू तो अब मुसलमाँ बन गया।"

"क्यों क्या हुआ?"

"हमने तेरी दाल रोटी को छू लिया। उस को तू खा गया।" मैं हंसकर कहता

"देखो मियाँ मैं ऐसा वैसा हिन्दू थोड़े ही हूँ।"

"तब।"

"मैं तो हिन्दू इ पहाड़ हूँ।"

"मतलब।"

"मैं तुम्हारे थाले में बैठकर तुम्हारे साथ दो-दो निवाले खा लूँगा। यहाँ तक की अगरचे तुम किसी मुसलमाँ को काट कर भी मुझे खिला दोगे तो भी खा लूँगा। फिर भी हिन्दू का हिन्दू ही बना रहूँगा। कोई फर्क नही पड़ सकता।"

इसपर वे वार्डर मुस्कराकर कहते- "साला पण्डत चालाक है।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एक माह इस तरह गुजरा। मजे में। निजामशाही बाहर जितनी भयानक कही जाती है उतनी वह जेल के अंदर नहीं है। ऐसा समझ में आ गया।

हर हप्ते हमें सींगदाना और गुड दिया जाता। उसको हम रख देते और फिर रोज सुबह सुखाई गई रोटी के टुकडों के साथ तीन सींगदाने और चिया बराबर गुड का हम नाश्ता करते। कभी कोई बाहर जाता काम के लिए तो कपडे में छिपाकर लहसन लाता। एक एक कली सबके हिस्से में आती थी वह वास्तव में कस्तुरी जैसी लगती।

अचानक एक दिन जेल का बड़ा दरवाजा खुला। वार्डर दौड़े। उन्होंने हम सबको कोठडियों में बंद किया। मजाक आदि बंद हो गया। पूछताछ के बाद सूचना मिली कि अलीगढ़ से एक नया जेल सुपरिन्टेन्डेन्ट आया है। वह कठोर लीगी है। महाभयानक आदमी है। वह कैम्पजेल देखने आया है।

वह उस दिन बाहर के बाहर ही चला गया। लेकिन सारे नियम कठोर हो गये। रोज दो-दो, तीन-तीन की पंक्तियों में खडा कर गिनती की जाती। वह एक उपचार था। उपचार के तौर पर किया जाता। अब पड़ोस की जेल से काले कलूटे मोटे और क्रूर वार्डर गिनती के लिये आते। मुंडी ऊँची भी कर देखते तो सिरपर डंडा पडता। संघ की शाखा लगती थी वह बंद हो गयी। शाम सूरज डूबते ही कोठडियों में बंद कर दिये जाने लगे।

एक दिन जेल का बड़ा दरवाजा फिर खुला और करीबन डेढ़ हजार पंजाबी सत्याग्रही अंदर ढकेले गये। लाहौर के दैनिक प्रताप के संपादक महाशय कृष्ण और बुद्धदेव विद्यालंकार के नेतृत्व में उन सबने औरंगाबाद में एक ही दिन सत्याग्रह किया था।

उस क्षण से जेल मुक्ति तक निजामी डंडा कैसा होता है यह पूरे विस्तार से अनुभव हुआ।

पहला झटका लगा भोजन का। इतने सत्याग्रहियों को एकसाथ भोजन की व्यवस्था करना सरकार के लिए असंभव था। फिर वे करीबन पांचसौ आदमियों का खाना खिडकी से अंदर ढकेल देते। बाटो खाओ कुछ भी करो।

पंजाबी सभी ऊंचे पूरे और सशक्त। वे डेढ़ हजार और हम पांचसौ। दो हजार के लिये पांचसौ का भोजन। वे सब भोजन आते ही उसपर टूट पड़ते। उस धमाचौकडी में भोजन देखने को मिलना भी कठिन हो गया।

दो तीन दिन भाकरी के सूखे टुकडों पर यथातथा निकाले। फिर सब महाशय कृष्ण से मिले। उन्हें सब परिस्थिति बतलाई अन्त में कहा

अपने ही बांधवों के विरुद्ध जेल के अधिकारियों के पास आरोप पत्र दाखिल करने की अपेक्षा आप ही हमें अपने हाथो से जहर दे दीजिये।

तब कहीं जाकर कुछ अन्न हम तक पहुँचने लगा।

कुल मिलाकर मामला बिगड़ गया जो अंततक ठीक नहीं हुआ।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आर्य समाजियों ने धूम धड़ाके से अपने कार्यक्रम शुरु किये। वे अधिकारियों के विरोध को न मानते हुए अपने हवन और सामुहिक संध्या बड़े उत्साह से करने लगे। भजन, कीर्तन, संस्कृत वर्ग, प्रवचन आदि कार्यक्रमों को उन्होंने जोर जोश से करना शुरु किया। शाम को बीच के आंगन में बढ़िया कबड्डी भी होने लगी। अधिकारियों को यह सब देखकर आग लगती। वे चिल्लाते, खिसियाते, पर तगडे पंजाबी उनकी एक न मानते।

वे सामुहिक संध्या को बैठते और गायत्रीमंत्र का उच्चार करते समय मंत्र को जिस तरह कहते उसे सुनकर मेरा बड़ा मनोरंजन होता। लेकिन उस अशुद्ध उच्चारण के पीछे भी उनका उत्साह अवर्णनीय था।

एक दिन अधिकारियों ने झगडे की शुरुवात की।

पांच पचास वार्डर लाठियाँ फटकारते परिसर में घुस आये। और जिनके सिरपर बड़े बाल थे सबको मुंडन करने वे ले जाने लगे। जेल का बड़ा दरवाजा और आंगन के बीच एक बंद जगह थी वहाँ तब लोगों को ठूँसा गया। सब के साथ मुझे भी।

हम सब बड़े कठिनाई से बैठे। नाई सपाटे से मुंडन करता जा रहा था।इतने में आंगन की तरफ का दरवाजा खुला और एक सुंदर, गोराफक्क अच्छा तगडा लंबे बालों वाला पंजाबी जवान वार्डरों ने अंदर धकेला।

वह अंदर आने तक पूरी ताकत से प्रतिकार करता रहा। उसे अंदर धकेलते ही दरवाजा बंद किया गया और आठदस वार्डर जैसे उसपर टूट पड़े। उसे नीचे गिरा वे उसपर नाचने लगे। लाठियों से मारने लगे। मैं ड़र के मारे जैसे ठंडा पड़ गया। कांपने लगा। फिर अंदर के दरवाजे पर जोर-जोर से पीटा जाने लगा। कोई जोर-जोर से कह रहा था दरवाजा खोलो।

अंत में वह जवान बेहोश हो गया। यह देख वार्डर रुक गये। उन्होंने दरवाजा खोला तीर की तरह बुद्धदेव विद्यालंकार अन्दर आये। आते ही उन्होंने उस जवान की हालत देखी। गुस्से में पूछने लगे।

"इसे क्या हुवा है ?"

मुखिया वार्डर बोला

"कुछ नहीं यूँ ही पडा है।"

"क्या मतलब ये क्या लेटे पड़े मजाक कर रहा है।" वार्डरों ने कंधे मटकाये। बुद्धदेव हम सबकी ओर देखने लगे। सब चुप थे। वार्डर किस छोर तक मारपीट कर सकते हैं यह हमने देखा था।

बुद्धदेव ने कहा

"क्या किसी में इतनी हिम्मत नहीं कि क्या कुछ हुवा वह बताये ?"

बदन में आग लग गई। जैसे मैंने अपने पर ही थूका। उसी गुस्से में उठा और कहा

"मुझसे पूछिये इन सबने इतना पीटा है कि सुध खोये पड़ा है यह जवान।"

"किस किसने पीटा ?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"क्या बताऊँ सबने।"

बुद्धदेव उन सब वार्डरों को जैसे कच्चा चबा जाना चाहते हो देखने लगे।

पर मेरी हालत खराब होने लगी। कह तो गया पर अब खड़ा न रहा जाये। पानी पड़े मिट्टी के ढ़ेले की तरह बैठ गया। मेरा भविष्य मुझे साफ दिखने लगा।

पर भाग्य जोर पर था। बड़ा दरवाजा खुलवा हमारा पहिले का जेलर अंदर आया। बुद्धदेव ने गरजकर उससे पूछा

"शस्त्रहीन सत्याग्रहियों से बरतने का तुम लोगो का यही तरीका है।"

नम्रता से उनसे उसने कहा

"मैं सब ठीक कर देता हूँ।"

उस बेहोश जवान को उस जेलर ने जैसे ही उठाने के लिए उसके नीचे हाथ ड़ाला वैसे और भी हाथ मदद करने आगे बढ़े। उसे उठा अंदर ले गये।

दूसरे दिन इससे अधिक होना था।

उस जवान को मारपीट बहुत ज्यादा हो गई। शाम तक वह होश में नहीं आया था।

हम सब बेचैन थे। कोई भी खाना न खा पाया। रात भी बेचैनी से कटी। सुबह हुई। हम सब प्रातर्विधि से निपट आंगन झाड़ने की तैयारी में थे। बड़े दरवाजे पर लगी बड़ी घंटा जोर-जोर से बजने लगी धड़ाम से दरवाजा खुला। और हाथ में लाठियाँ लिये हुए सौ दो सौ वार्डर ललकारते अंदर घुस आये। आते ही चिल्लाने लगे।

अपनी अपनी कोठडी में चले जाओ।

उनके पीछे-पीछे सुपरिन्टेन्डेन्ट और दूसरे अधिकारी पिस्तौले ताने अंदर दौड़ते हुए आये। वह सारा माजरा देख ब्रह्मांड ही याद आया।

हम सब अपनी-अपनी कोठरियों में तुरन्त ही चले गये। बाहर से सांकले लगाने की आवाज आयी। फिर पीटने पाटने की आवाजें और चित्कार सुनाई पड़ने लगे। हम सबके सीने की घड़ियाँ धकधक करने लगी। तेज चलने लगी। समय जैसे रुक गया। क्षण-क्षण युग से भी लंबा हो गया। मैं मन ही मन अभंग याद करने लगा।

सांकल खोलने और मारपीट क़ी आवाज पास-पास आती गयी। मन पक्का कर क्या कुछ होगा उसे सहन करने की तैयारी कर ली। मन समझाया। आघात सहन करने का यह पहला ही मौका नहीं है। तुम्हें तो ऐसा सब सहन करने की क्षमता है। सीधे खड़े रहो। तने रहो झुकना नहीं।

हमारे कोठडी की सांकल भी खुली। खटाखट बूट बजाते जैसे राक्षस सुपरिन्टेन्डेन्ट अंदर आया। चार छह वार्डर साथ में। एक हाथ में भरी हुई पिस्तौल और दूसरे हाथ में छड़ी। हम खडबड करते उठ खड़े हुए। वार्डर चिल्लाया

एक कतार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कतार बनी। सुपरिन्टेन्डेन्ट की दृष्टि कोठरी में इधरउधर कुछ देख रही थी। उसे दीवार पर लिखे संस्कृत सूक्त दिखाई दिये वह गरज पड़ा

"ये क्या है ?"

कोई बोला नहीं - मैं बोला

"संस्कृत का सबक है।"

मेरे सिरपर छड़ी मारते हुए उसने कहा

"ये क्या मदरसा है कमीनो ?"

कम्बल से मैंने उसे पोछा जबतक-तबतक पीठ पर छड़ी की मार पड़ती ही रही।

तकदीर अच्छी कि बात उतने परही रह गयी। बाहर निकल सांकल चढा वे यमदूत अगली कोठडी में चले गये।

एक बोझा कम हुआ। हम सब उसी घटना की चर्चा करने लगे। कोई आधा घंटा बीता होगा। बाहर की सांकल खुली और हाथ में लाठी लिये आया वार्डर चिल्लाया

"सब दरवाजे के पास आके बैठो।"

बैठ गये। देखा तो चौक में यम ने अपना यातनागृह सजाया था।

बेंत लगाने की तिपाही खड़ी की गई थी। कक्षा में श्यामपट रखने के लिये जैसे घोडी होती है वैसी घोडी। दो पैर उपर एक में ठोके हुए और पीछे सहारे के लिये तीसरा पैर। नीचे से दो फूटपर फैलाये पैरों के बीच फंसाने का बेंडा। कमर ऊँचाई पर आडी पट्टी । इस घोडी के पास भींगे हुए बेतों का बड़ासा गट्ठर। उसमें का एक लपलपाता बेत हाथ में लिये एक बड़ा तगडा कालास्याह वार्डर खड़ा। पूरे मैदान में लाठीधारी वार्डर और हर-कोठडी बाहर भी एक-एक वार्डर लाठी सम्हाले खड़ा।

तिपाही के सामने कुर्सी। उसमें यमदूत सुपरिन्टेन्डेन्ट बैठा हुआ। पड़ोस में दूसरे अधिकारी खड़े। उसमें जेल का डाक्टर भी।

और करीबन पच्चीस तीस पंजाबी सत्याग्रही पंक्ति में बैठे हुए। दंड की राह देखते हुए। वे उस यमदूत द्वारा सारे जेल से छांटे हुए।

क्या अपराध था उनका ?

कुछ भी नहीं। कुछ होगा तो इतना ही कि वे सब पंजाब के भले घरों में से दूरतक सत्याग्रह के लिए आये थे और जेल को मनमौज का स्थान समझते थे।

सुपरिन्टन्डेन्ट जैसे कसम खाये था। सब दरवाजे खुल जाने के बाद चारों ओर देखकर वह दहाड़ा

"सब देखो बदतमीजी का मजा क्या होता है ?"

एक वार्डर ने सत्याग्रहियों में से एक को उठाया। उसके कपड़े उतार नंगा किया। दो

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वार्डरों ने पकड़ उसे घोडी पर चढ़ाया। शास्त्र के लिए डाक्टर ने उसकी नाडी देखी नीचे की बेडी में उसके पैर फँसाये। हाथ उपर ले जाकर तिपाही के ऊपरी सिरेपर नीवार से बाँधे। उसकी कमर बीच की आड़ी पट्टी पर टिक गई।

बेंतवाला सिपाही बेंत लपलपाता खड़ा था उसकी तरफ देखकर यम चिल्लाया - चलाओ

वह पाँच कदम पीछे आया। बोलिंग करते स्टार्ट लेते हैं वैसा। और फिर तेज चलते बेंत को अपने चारों ओर घुमाते सट्ट से कैदी के चूतड पर मारा। सत्याग्रही वहाँ के वहाँ सिकुडता हुआ सबने देखा। मारे ड़र के हम जैसे जम गये। आँखे बार-बार मंद करते खोलते वह सब देखते रहे।

हमारे में का एक तो बेहोश होकर दूसरे पर गिर पड़ा।

सभी कोठडियों से चित्कार उठे और वहीं दब गये।

बेंतवाला वार्डर फिर पीछे आया। अवसान लेकर उसने दूसरा बेंत मारा। फिर तीसरा। चौथा। कैदी का चूतड लाल नीला हो गया। खून के बारीक बूँदों की कतारें उसपर उठ आयीं। दोन तीन बेंत सहन करने के बाद कैदी तड़पने लगा। हर फटकार पर ढ़ोरों की तरह चिल्लाने लगा। उसकी वह तड़पती चिल्लाहट पूरे परिसर को कंपकंपा जाने लगी। पच्चीस बेंत लगाने के बाद उस सत्याग्रही के हाथ छोड़े गये। पैर बेड़ी में से बाहर निकाले। दो तीन ने पकड़ उस लुंजपुंज को एक तरफ औंध लिटाया। डाक्टर उसके चूतड पर उपचार करने लगा। तबतक दूसरे को घोडे पर चढ़ाया गया।

कुछ पंजाबी सूरमा थे। वार्डर के हाथ झटककर खुद ही घोडी पर चढ़ गये वार्डर की कोई सहायता नहीं ली। बेंत की मार को भी उन्होंने धैर्य से सहन किया चीखे चिल्लाये नहीं।

एक कमसीन छोकरे की बारी आयी। वह ढ़ोरों की तरह चिल्लाने लगा। सुपरिन्टेन्डेन्ट साहब अब नहीं करुँगा। मुझे मत मारो। छोड़ दो।

हम सब के दिल पसीजे। पर उस कृतान्त को दया न आयी। उसने उसे भी घोडी पर चढ़ा दस बेंत लगवाये ही।

पर उस क्रूरकर्मा की उतारनेवाला भी मिला। साधारण कद काठी का एक संन्यासी। उसका अनुक्रम आते ही वह अपने आप उठा। कपड़े उसने उतार फेंक दिये। घोडी की तरफ मजबूत कदत बढ़ाये। बेडी में पैर फंसाते गरज उठा वह

"जो बोले सो अभय वैदिक धर्म की जय।"

सुपरिन्टेन्डेन्ट बहुत चिढ़ गया। बेत लगानेवाले वार्डर को उसने हटा दिया। दूसरे ताजादम को बुलाया।उसपर चिल्लाया।

"खूब कसकर जी जान लगाकर।"

उस वार्डर ने भी कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी। पहिले ही बेतमार के साथ संन्यासी के चूतड से खून निकल पड़ा। पर उस बहादुर ने टूँ टाँ कुछ भी नहीं किया। करता भी कैसे उसने प्राणायाम कर श्वास को हृदय कपाट में बंद कर लिया था। शरीर का जो होना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

है होवे।

सारी ताकत लगाकर वार्डर ने पचास बेंत मारे। वह बुरी तरह हाँपने लगा। पर संन्यासी पत्थर बना रहा। बेंत पूरे होते ही वह फिर गरज उठा।

"जो बोले सो अभय. . . . . .।"

पैर पटकते सुपरिन्टेन्डेन्ट चिल्लाया

"और पचास मारो कमीना मुँह से चीखता नहीं।"

वार्डर लौटा तो आश्चर्य हुआ। मद्रासी डाक्टर आगे आया।

बोला- "सर मैं अलाऊ नहीं कर सकता।"

आँखे तरेरते सुपरिन्टेन्डेन्ट ने पूछा

"क्यों?"

"मुझे शक है कैदी वहीपर मर जायेगा। आप उसके मुँह से चीं नहीं निकलवा सकते।"

"जो हो देख लेंगे।"

"अच्छा तब मैं चला। मेरी आँखो के सामने मैं ज्यादा बरर्दास्त नहीं कर सकता।"

डाक्टर उठ जाने लगा।

यम झुक गया। उसने इशारे से वार्डर को रोका। निशस्त्र प्रतिकार की ताकत क्या होती है यह सबने देखा।

उस संन्यासी ने सब का मन जीत लिया था अपने पराक्रम से। उसके बाद वह आठ दस दिन सोया पड़ा रहा। डाक्टर रोज आता सबकी ड्रेसिंग करता। लेकिन उस संन्यासी की पूछताछ बड़े आदर से करता। हम सब भी उसकी कोठरी के पास दिन में चार पाँच बार जाते।

उसने अहिंसा पक्ष की शान बढ़ाई थी। जब-जब हमारे कोठडी में इस विषयपर चर्चा होती तब-तब निरुपाय से ही क्यों न सही उपद्रवों का सामना करने की उसकी शक्ति की सब सराहना करते।

दिन किसी के ठहरते नहीं। उगा सूर्य अस्ताचल को जाता ही है। उसके बाद सुपरिन्टेन्डेन्ट फिर से जेल में नहीं आया। हम एक-एक दिन गिन रहे थे। तीन माह हो गये और एक दिन दरवाजा खुला और पहलेवाला जेलर अंदर आया। उसने हमारे नाम पढ़े। सबको बाहर पंक्ति में खड़ा किया। अपनी-अपनी थाली कटोरा कम्बल उठाने को कहा। एक खुशी की लहर दौड़ गई।

हम एक पंक्ति में चले। दरवाजा पार किया। उत्सुक मन सोचने लगे चलो अब मुक्तता होगी पर जब हमारी पलटन बड़ी जेल की ओर चली तब मन बैठ गया। अब इधर किसलिये? दंड अवधि पूरी हो जाने के बाद।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एक मन बैठा था निराश तो दूसरा सेन्ट्रल जेल की उग्रता निरख रहा था। बाहर की ओर बहुत मजबूत दीवार। उसपर चक्कर लगाते बंदूकधारी सिपाही। किसी किले का हो ऐसा बड़ा बुलंद दरवाजा। बहुत मजबूत। उसके बाहर बंदूकधारी जवानों का पहरा। दरवाजे के पास एक के पीछे एक ऐसे कैदी घुटनों पर बैठे। सब के हाथ पैर में बेड़ियाँ। सब कुछ ड़रावना।

खिड़की खुली। हम को अंदर लिया गया। जेल के परिसर में प्रवेश होने के पहिले दोनों तरफ तलाशी आदि आवश्यक कर्म करते सिपाही बैठे हुए। उनके पीछे दीवारों पर टंगी बहुत भारी दंडा बेडी। आडी बेडी आदि भयानक प्रकार।

अंदर का दरवाजा खुला। हम सबको अंदर के एक बैरक में धकेला। दरवाजा बंद किया।

देखा तो उस बैरक में कितने ही कैदियों के कम्बल लपेटे रक्खे हुए हैं। पास उनके थाली कटोरे। हमें वहाँ क्यों लाया समझ में न आया। किस से पूछना। वहाँ का ड़रावना वातावरण देख मन वैसे ही सिकुड़ गया था। शाम तक हाथ सीने से बांधे बैठे रहे।

शाम को बेरक के जागीरदार कैदी लौटे। उन्होंने अपनी अपनी जगह घेर ली। बिलकुल पीछे रात के लिए मुत्रालय था। वहाँ थोड़ी खुली जगह थी। निरुपाय हम सब वहीं एक दूसरे से भिड़े थाली कटोरे लिये बैठे रहे। रातभर कैदी लघुशंका करते रहे। हम पर अभिषेक होता रहा।

नर्क था वह। बदबू के मारे नाक फटी जा रही थी। सिर भन्नाता रहा। रात का खाना दो कैदी ले आये। मेरे हलक के नीचे कुछ जा पाने का प्रश्न ही नहीं था। कम्बल में सिर छिपाये मैं रातभर बैठा रहा। इतनी लंबी रात अबतक के जीवन में कभी नहीं आयी थी।

सबेरा हुआ। जागीरदार कैदी चले गये। हमने चटपट उनकी जगहें घेरी तब कहीं जाकर खुलकर साँस ले सके।

यहाँ हमें क्यों लाया गया कुछ समझ में न आता। यहाँ वहाँ पूछा ताछा किसी को कुछ पता नहीं। बड़ी अजीब थी बात।

दिन चढ़ा। और दरवाजा खुला। हमें बाहर आने का हुकुम हुआ। मैदान में बैठाया। एक कैदी बाबू हमारे पास आया। कौन किस गाँव का लिखने लगा। फिर बात समझ में आ गई। हमें छोड़े जाने की कारगुजारी हो रही है। छोड़े जाने की कल्पना से मन फूल गया। धीरे-धीरे यह भी मालूम हुआ कि आज आला हजरत का जनम दिन है। मीठा खाना है आज।

शाम सबको दफ्तर में ले जाया गया। कपड़े बदले। जेल की लंगोटी पर मेरी नीयत थी पर सालों ने सारे कपड़े उतरवा लिये।

दरवाजे पर मोटरे खड़ी थी। उसमें बैठाया। स्टेशन पर ले गये। गाड़ी आयी। जिसके उसके टिकट हाथ में दिये गये। मेंडकी टुरटुराये

"यात्रा भत्ता दिया नहीं खायेंगे क्या रास्ते में।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मैं बोला- "मेरा काफी मार खाया हुआ है आप अपना देखो।"

गाड़ी औरंगाबाद से चली। तब पक्का लगा कि कल आलंदी पहुँच रहे हैं।

पुणें से पैदल आलंदी पहुँचा। संस्था में जाकर खड़ा हुआ। गुरुजी ने अचंबे से पूछा "कब आये?"

-औरंगाबाद से परसों छूटे। पुणें से भोर चला।"

गुरुजी ने पहिले नहाने को कहा। मंदिर गया। माउली का दर्शन ले लौटा। सारे छात्र इकट्ठा थे। सारी आपबीती उन्हें सुनाई। अंत में कहा- "गुरुजी-मामाजी ने कहा था वैसा ही व्यवहार किया वारकरी निष्ठा को आँच नहीं आने दी।"

"शाब्बास। लड़कों। संस्था का नाम रखा। सब कुछ पाया।" गुरुजी ने कहा।

एक कर्तव्य सिद्ध किया था। भाव बढ़ा था। आलंदीवाले अंगुली दिखा-दिखा कहते ये हैं सत्याग्रही।

एक दिन गुरुजी के कमरे में गया। नमस्कार कर बोला

"गुरुजी !"

"कहो अब क्या है? निजाम हो गया अब्र क्या दिल्ली के पाच्छा को जीतना है।"

"नहीं ऐसा नहीं।" मुस्कराकर कहा

"फिर?"

"ज्ञानेश्वरी पारायण का विचार है।"

"फिर करो। अजानवृक्ष के नीचे।"

"सिद्ध बेट में करने की सोच रहा हूँ।"

बड़े उत्साह से गुरुजी उठ बैठे - बोले

"क्या कहा। सिद्धबेट में। वहाँ कहाँ करोगे?"

"जहाँ सप्ता किया था हम लोगो नें। वहीं उसी चबुतरे पर।"

"कर जरुर कर। भोजन का क्या करोगे?"

"उपवास !"

"ठीक है मैं फलाहार की व्यवस्था कर दूँगा।"

दूसरे दिन भोर उठा माउली का दर्शन कर संस्था में आया।

गुरुजी के चरणों में सिर नवाया। ज्ञानेश्वरी उठायी। पानी का लोटा लिया। सिद्धबेट पहुँचा। चबुतरे पर आसन लगाया। व्यास पीठ पर ज्ञानेश्वरी रक्खी। माउली का स्मरण किया और शुरू किया।

ॐ नमो जी आद्या

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

दिनभर पारायण चालू रखा। केवल पंक्तियों पर से आँखें नहीं घुमाई। पहिले दूसरे दिन प्रगति मंद थी। तीसरे दिन से वह बढ़ गई। शाम को गुरुजी के कमरे में बैठकर गुडदानी, खजूर, सींगदाना, केले आदि का फलाहार करता। उस दिन क्या-क्या पढ़ा सब गुरुजी को बताता। गुरुजी प्रोत्साहन देते कहते

"बृहस्पति हो तुम। पर यह शरीर। इस तरफ भी तो देखो।"

फिर दूसरे दिन पारायण। ज्ञानदेव के बुद्धि वैभव से मति चकित थकित रह जाती। कैसे है यह?

इतने दिन से ज्ञानेश्वरी ग्रंथ पढ़ डालने का प्रवृत्ति थी उसके अर्थ सौन्दर्य पर पूरी नजर नहीं जाती थी। अब उसे धीरे-धीरे पढ़ रहा था। आश्चर्य के समुद्र तल पर बार-बार जा भींग-भींग आता जैसे। इस महापुरूष की प्रज्ञा ने तत्वचिंतन के कितने दुष्कर विस्तृत स्थानों पर सहज विचार-विहार किया।

और आयु कितनी केवल पंधरह वर्ष!

मानों बालपन में ही सर्वज्ञता ने उनका वरण किया हो।

अनेकानेक अनुभवों का वे मूर्तिमंत रुप थे। वैदिक तत्वज्ञान, औपनिषद तत्वचर्चा, साही दर्शन, नास्तिकवाद, वे जिस संप्रदाय के अनुग्रहित वह शैव सम्प्रदाय सारे मानो उनके यहाँ पानी भरते थे। योगशास्त्र के वे आचार्य। भक्ति प्रधान कर्मयोग के वे प्रवर्तक। ज्ञानियों के शिरोमणी।

अनेक शास्त्रों के कहीं स्पष्ट तो कहीं अस्पष्ट उल्लेख ज्ञानेश्वर महाराज ने किये हैं। यह जब दिखता है तब शास्त्रचिंतन का "लाहो" निर्माण हो जाता है।

उन्होंने अपने चिद्विलास वाद को अपने अनुभवामृत ग्रंथ में ही नहीं ज्ञानेश्वरी में भी सूत्ररुप में प्रगट किया है यह जब समझ पड़ा तो कुछ अस्वस्थ हुआ। आगे की पंक्तियाँ आँखों से आगे निकलने लगी। वही ठिठक गया।

म्हणोनि वन्हि आणि जाळ
दोन्ही वन्हीचि केवळ
तेंवी मी गा सकळ
संबंधु वावो

वन्हि और ज्वाला दोनो मिलकर वन्ही ही। वैसा सर्वत्र मैं ही हूँ। इस विश्वप्रयल से मैं ढ़ाँका कैसे जा सकता हूँ। रत्नप्रभा से रत्न कहीं ढ़ँक जाता है? सोने के अलंकार बनाये तो क्या सोना छिप गया। कमल पंखुडी खिल जाने के बाद क्या कमलत्व का लोप हो गया? मुझे देखना है मिलना है तो जग का विस्तार एक तरफ करने की जरुरत नहीं। यह जो कुछ दृष्टी के सामने प्रगट है, अप्रगट है, फूलता है, मुरझाता है, जन्मता है, मरता है वह जैसा है वैसा मैं ही हूँ।

कितना अलग विचार। अबतक के तत्वज्ञान के प्रवाह से कितना अलग। शंकराचार्य प्रणीत तत्वज्ञान से भी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

यहीं मैं रुक गया। मन में विचार चमका। आचार्य का तत्वज्ञान भी मुझे कहाँ मालूम है। केवल उसका सामान्य सारांश ही तो मैंने सुना है। उसमें कुछ पारंगतता प्राप्त किये बिना ज्ञानदेव के तत्वज्ञान की अलग पहचान कैसे समझ में आ सकती है।

लेकिन आचार्य का तत्वज्ञान मुझे कौन समझायेगा?

मारुति गुरुजी के कमरे में वे और मैं बातचीत कर रहे थे।

"गुरुजी गुस्सा न हो तो एक बात पूछूँ आपके गुस्से से डर लगता है इसलिये कह रहा हूँ।"

"नखरे न करो। क्या है वह कहो।"

"ये कि अगर मैं कहीं जाकर आचार्य के ग्रंथो का अध्ययन करुँ तो?" गुरुजी उठ खड़े हो गये। अपनी सुंदर आँखें मुझपर गड़ाते हुए बोले

"क्या? क्या कहा?"

"कुछ गलत बोला क्या?"

"नहीं रे।" गुरुजी कुछ क्षण चुप रहे। फिर बोले-

"गोपाल। तू धुलिया जा।"

"और।"

"वहाँ श्रीधर शास्त्री पाठक हैं। सोनोपंत के गुरुजी। वे तुझे सिखायेंगे।"

गुरुजी के मन में कोई बात बैठ जाये तो उसका पीछा वे करते ही रहते। मामाजी आलंदी आते ही उनके पास उन्होंने बात निकाली। तुरन्त बुलावा आया। जा। नमस्कार कर। खड़ा हो गया।

"शास्त्रीजी के यहाँ जाना है?"

"आप भेजो तो।"

सत्याग्रह में हो आने के बाद मामाजी के नजर में मेरा मूल्य बढ़ा हुआ हो गया था। उन्होंने शास्त्रीजी के नाम चिट्ठी दी। किराया दिया।

पहना हुआ एक पंचा। एक जोड़ा पंचा और एक कंबल, ज्ञानेश्वरी इतना सामान लेकर आलंदी से पुणें पहुँचा और धुलिया जाने की गाड़ी में बैठा।

फिर से अज्ञात में कूदा था मैं।

स्टेशनपर उतरा और 'खोल गली' को खोजता निकला। नया और पुराना ऐसा बढ़ा है धुलिया। पुराना आड़ा टेढ़ा है तो नया सीधा समांतर। उसमें ही है एक 'खोल गली।' शास्त्रीजी का मकान खोजना सरल था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सामने एक मकान का निर्माण शुरु था। वहाँ शास्त्रीजी सड़कपर खड़े थे। उस घर के मालिक से मकान सम्बन्धी बात कर रहे थे। उन्हें पहचानना बिलकुल कठिन नहीं था।

सामान्य स्थूल शरीर, मुंडित, गोल, सौम्य मुद्रा। गले में रूद्राक्षमाला उघाडे बदन भस्म लगा, पंचा पहना हुआ नंगे पाँव और आँखपर चष्मा।

शास्त्रीजी सहज समझ आ गये। वे चर्चा में मग्न थे उन्हें झुक कर नमस्कार किया। और एक तरफ खड़ा हो गया।

उन्होंने पूछा- "क्या है? कहाँ से आय?"

"आलंदी से आया हूँ"-कहा। मामाजी का पत्र उन्हें दिया। पत्र में लिखा था :

हमारी पाठशाला का छात्र गोपाल नीलकंठ दांडेकर आपके पास आ रहा है। ज्ञानेश्वरी आदि प्राकृत वेदान्त का इसने अध्ययन कर लिया है। शांकर वेदान्त पढ़ने की उसकी इच्छा है। इसलिये वह धुलिया आ रहा है। आप उसके अध्ययन की व्यवस्था कृपाकर करें यह निवेदन है।

पत्र पढ़ा। स्नेह दृष्टि से मेरी ओर देखते शास्त्रीजी ने प्रश्न किया "कब उतरे?"

"यह अभी। स्टेशन से आपका पता पूछते आपके यहाँ आ रहा हूँ।"

"स्नान भोजन?"

मैंने उत्तर न दिया। वे तुरन्त घर की ओर निकले बोले

"आइये मेरे पीछे।"

शास्त्रीजी को दो पुत्र। बड़े वकील छोटे वैद्य। वैद्य पास की ही गली में अलग रहते हैं। हम दोनो वकील के घर गये। शास्त्रीजी ने बहू को बुलाकर कहा

"देखो इन्हें स्नानगृह दिखलाओ। स्नान करेंगे। बाद इन्हें भोजन कराना। आलंदी से आये हैं।"

स्नान किया। भोजन के लिए बैठा। शास्त्रीजी भी वहीं पीढ़े पर बैठ गये - कहने लगे

"पुणें में था तब सोनोपंत मेरे पास पढ़ने आते रहे। उन्होंने वेदान्त पढ़ा और वैसा ही आचरण किया। बहुत योग्य पुरूष। उनकी संस्था में कैसे आये। कौन गाँव अपना?"

दस बीस मिनट में सूत्र रुप में अपनी कथा कह ड़ाली। रोकी हुई सांस छोड़ते शास्त्रीजी ने पूछा

"अब घर में कौन-कौन हैं?"

"क्या मालूम?"

"सन एकतीस के बाद घर की तरफ गये ही नहीं क्या?"

"आज नौ साल होने को आये। घर से कोई संबंध ही न रहा।"

शास्त्रीजी मेरी तरफ देखते रहे फिर पूछा

"व्याकरण पढ़ा है।"

बात का रुख मैं समझ गया - बोला

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"भांडारकर की दो पुस्तकें पढ़ी है। कामलायक मुझे आता है।"

"अमरकोश, धातुरुपावली, शब्दरुपावली, लघुकौमुदी"

मैं उनकी तरफ देखता ही रहा। वे बोले-

चिट देता हूँ। यहाँ चालीसगाँव मार्ग पर हमारी पाठशाला है। सरस्वती पाठशाला। वहाँ वैयाकरणी हैं। वे तुम्हे प्रारंभिक व्याकरण सिखायेंगे। वह होने के बाद फिर वेदांत प्रारंभ।

शास्त्रीजी की चिट लेकर सरस्वती पाठशाला गया।

नगर बाहर चालीसगाँव के लिये रास्ता है। उसपर शास्त्रीजी के प्रयत्नों से स्थापित सरस्वती पाठशाला संस्था थी। बाँयी तरफ गायत्री मंदिर। उसके सामने अच्छा खुला सभा मंडप। मंदिर के नीचे तलघर। शास्त्रीजी जब संस्था में आते तब तलघर में ही ठहरते।

दाहिनी तरफ दो मंजिला भवन। वहाँ पठनपाठन चलता। उसके पीछे एक छोटा भवन। उसमें भोजनगृह था। मुख्याध्यापक का नाम गाडगील शास्त्री था। संस्था में उस समय तीस पैंतीस छात्र थे। अधिकतर छात्र पुरोहिती सीखने आये हुए। कुछ काव्य पढ़ रहे थे। कुछ व्याकरण। कुछ साहित्य के भी छात्र थे। एखाद कोई न्याय भी पढ़ रहा होगा।

मैंने शास्त्रीजी की चिट्ठी मुख्याध्यापक को दी। उन्होंने वह पढ़ी चार दो प्रश्न किये। एक छात्र को बुलाया। उसे कहा

"यह तुम्हारा शिष्य। कल से इसे अमर और रुपावली पढ़ाना।"

सब छात्र उपर मंजिल पर रहते थे। उस छात्र के पीछे-पीछे गया। उसने बताये स्थान पर मैंने अपना सामान सजाया। थाली मेरे पास नहीं थी। वह उसने कोठी से लाकर दी। शाम सब छात्रों के साथ भोजन के लिए बैठा।

पदार्थ माँगने के लिए संस्कृत का ही उपयोग करना ऐसा वहाँ का नियम था जैसे

चन्द्रकन्या अपेक्ष्यते मया माने मुझे रोटी चाहिये

सूर्यकन्या अपेक्ष्यते-माने भाकरी चाहिये

उपसेचनं माने सालन। पानीवाले से कहना उदक आनीयताम्

ऐसा बड़ा मजा था। अधिकतर ऐसा ही संस्कृत का व्यवहार चलता। उस व्यवहार से परिचित होने में मुझे देर नहीं लगी। जल्दी ही उनमें से एक हो गया।

दूसरे दिन से अध्ययन प्रारंभ हुआ। भोर ही उठना। नित्यकर्म से निवृत्त होना। संध्यावंदन करना। फिर मंदिर के सामने के मंडप में सूर्यनमस्कार लगाना। समंत्रक। फिर अपने अध्यापक से अमर कोश सीखना।

अमर बौद्ध पंडित था। उसने अपने विद्वत्ता की धाक पूरे भारत पर जमाई है। उसने रचा कोष कण्ठस्थ किये बिना संस्कृत व्याकरण का अध्ययन किया ही नहीं जा सकता। इस कोष की मजा ऐसी की हर विशेषनाम के जितने पर्यायी शब्द हैं वे सब एक श्लोक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

में दिये हैं। जैसे रमा शब्द का प्रारंभ होते ही अमर कहता है।

इन्दिरा लोकमाता मा क्षीरोदतनया रमा
भार्गवी लोकजननी क्षीरसागर कन्यका

संस्कृत के सारे नामो को अलग-अलग वर्गों में बाँट उस-उस वर्ग का एक-एक अध्याय अमर ने अपने ग्रंथ में दिया है।

अध्ययन-अध्ययन था। वेदान्त समझने व्याकरण आना जरुरी था। और व्याकरण के लिये अमर कोश का अध्ययन जरुरी था। परंतु जब मदन के नामावली तक आया तब बौराया

कन्दर्पो दर्पको नंगः कामः पंचशरः स्मरः

काम की यह नामावली याद करते जीभ गडबडाने लगी। मन बेचैन हो गया। क्या करुँ यह समझ नहीं आया।

मैं वेदान्त का छात्र शांकर वेदान्त सीखने धुलिया आया। पाठशाला में रहने लगा और यहाँ याद करने पड़ रहे हैं मदन के नाम।

क्योंकर मैं अपना समय इस निरुपयोगी काम में खर्च करुँ। करता रहूँ। आयुष्य कितना है मालूम नहीं। परन्तु जितना है उतना सत्कार्य में लगाना चाहिये। एक बार डूबा दिन फिर किसी भी प्रयास से उपलब्ध होनेवाला नहीं।

तुकाराम ने कहा

तुका कहे घडी घडीसे साधो।

एक-एक दिन जा रहा है। तो जीवन लिये जा रहा है। एक शाम आती है और दिनभर की धूप चट कर जाती है। मन दुखी है। प्रश्न करता हूँ अपने आप से तो फिर मैं क्यों ऐसा जलताडन करता रहूँ।

भाग्य चेता हुआ था। इसलिए उसी दिन शाम शास्त्रीजी पाठशाला में मुकाम के लिए आये। अन्य छात्र उन्हें मिल पादस्पर्श कर आये। अंत में मै। नमस्कार कर खड़ा हो गया।

पाठशाला के पीछे एक नीम वृक्ष। उसके चारो ओर चबुतरा सुंदर सा। सामने फैला हुआ लता मंडप। शास्त्रीजी उन्हें छात्र काका कहते यह ध्यान में आ गया था - चबुतरे पर बैठे थे। मुझे देखकर बोले

"क्या हुआ जी आपका ?"

असमंजस में मैंने कहा

"काका मुझे आप न कहें।"

मुस्कराकर काका बोले

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"अच्छा नहीं कहूँगा। शुरु हो गया तेरा अध्ययन?"

"हाँ हो गया पर!"

"क्यों कोई बाधा?"

हिम्मत कर बोला

"काका मैं आपके पास आया शांकर वेदान्त पढ़ने। मुझे कोई परीक्षा देनी नहीं है। किसी के सामने अध्ययन का प्रदर्शन करना नहीं है। ज्ञानेश्वरी माउली का तत्वज्ञान सीखते हुए शांकर वेदान्त के सम्बन्ध में कुतुहल निर्माण हुआ। इसलिए आपके पास दौड़ा आया।"

"ठीक तो है इसलिए मैने तुम्हें व्याकरण पढ़ाना जरुरी समझा। उसको बिना जाने शास्त्रीय परिभाषा कैसे जान पाओगे।"

लेकिन उसके लिये कामः पंचशरः स्मरः ये याद करने की क्या गरज काका बोले-

"तुमने भांडारकर की दोनो पुस्तकें पढ़ ली हैं।"

"हाँ परीक्षा में मुझे अठ्ठानबे अंक आये थे। दो अंक तो काटने के लिए काटे गये।"

"अच्छा तू ऐसा कर। कल से मैं यहाँ गीताभाष्य पढ़ाने वाला हूँ।"

"तू पाठ को बैठ। वह समझ आ गया तो देखेंगे आगे क्या करना?"

दूसरे दिन प्रातः पाठ शुरु हुआ।

नीम नीचे के चबुतरे पर काका बैठे। सामने दोनो तरफ पंधरह बीस छात्र। अधिकतर सब शहर से आये हुए। नोकर चाकर। अपने-अपने सामने व्यासपीठ पर गीता भाष्य लेकर बैठे हुए। स्नान संध्या कर रेशमी वस्त्र पहिरे ओढे। सधन परिवार के लोग। सबसे अंत में मैं बैठा। खाली। मेरे पास ग्रंथ नहीं था।

ठीक समय काका ने श्लोक पढ़ा

वेदान्तार्थविभासकाय गुरवे शान्ताय संन्यासिने।
नानावादिनगेन्द्रसंघपवये योगीन्द्रवंद्याय च॥
मोहध्वान्तदिवाकराय भगवत् पादाभिधां बिभृते।
तस्मै भाष्यकृते नमो ऽ स्तु सततं पूर्णाय बोधात्मने॥
ईश्वरो गुरुरात्मेति मूर्तिभेदात् विभागिने।
व्योमवत् व्याप्तदेहाय दक्षिणामूर्तये नमः॥

और फिर काकाने सबको भाष्य खोलने के लिए कहा। एक को भाष्य का पहला श्लोक पढ़ने को कहा-वो पढ़ने लगा

नारायण परो ऽ व्यक्तात् अण्डमव्यक्तसंभवं।
अण्डस्यान्तस्त्विमे लोकाः सप्तद्वीपा च मेदिनी॥

सबके सामने ग्रंथ थे। काका के सामने नहीं था। उन्हें ग्रंथ की आवश्यकता भी नहीं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

थी। वेदान्त उन्हें हथेली पर रखे आंवले की तरह स्पष्ट था। वे बोलने लगे। शांत संयत स्वर में। आग्रह नहीं अभिनिवेश नहीं। अत्यंत उच्च कोटि का वह व्याख्यान था। उन्होंने कहा

हम सब को धरती मालूम है। हमारा उससे नित्य सम्बन्ध है। इसके चारो ओर अनेक लोक हैं। ग्रह हैं सूर्यमालाएँ हैं। यह सारा ब्रह्मांड अव्यक्त से निर्माण हुआ है। इस अव्यक्त का जो साक्षी वह पार खड़ा है उसका इस फैलाव से कोई सम्बन्ध नहीं है।

भाष्य को प्रारंभ करने के पूर्व आचार्य ने जो प्रस्ताव किया है उसे पूर्ण भाष्य कहना चाहिये। इस भाष्य से आचार्य छात्रों को गीता तक ले जाते हैं।

एक घंटे तक काका बोलते रहे। वाणी का अखंड प्रवाह गंगाप्रवाह की तरह चलता रहा। रुकना नहीं। कोई अविरोध नहीं।

काका ठहर गये। उस अद्वितीय प्रवचन की स्तुति करते सारे छात्र उन्हें नमस्कार कर उठे। मैं अपनी जगह बैठा रहा।

काका ने पूछा

"अरे कुछ समझा!"

"हाँ काका!"

"क्या समझा?"

"समझा नारायण पार खड़ा है। इस नामरुपात्मक जगत से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है किसी अर्थ में भी।"

"अरे वाह तुम्हें तो समझा!"

"पर एक शंका है काका।"

"पूछ तो।"

"यह कि यदि इस वस्तु का नामरुप से यत्किंचित भी सम्बन्ध नहीं है तो उसे नारायाण क्यों कर कहा गया? यह वदतोव्याघात हो जाता है।"

काका मेरी तरफ देखते रहे बड़े प्यार से। फिर बोले एकाएक

"अरे तुम्हारा सामान कहाँ है?"

"सामान अधिक है ही नहीं। जो है वह उपर रक्खा है।"

"ले आ। आज से तू मेरे पास रहा कर। मैं तुझे वेदान्त कहूँगा।"

काका को बार-बार नमस्कार किया और सामान लेने उपर दौड़ा।

काका तलघर में रहते थे। दिन में दो बार चाय वे पिया करते। वात रोगी होने के कारण बीच-बीच में वे नींबू सोडा लिया करते। भोजन एक बार ही करते। रसोई मूँग की दाल भात और फुलका कोई पथ्य वाली सब्जी बनानी पड़ती।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रसोई बनाना मैंने अकोला में गनपतराव के यहाँ सीखा था। चाय बनाना मैं नहीं जानता था। वह काका ने सिखाया।

काका के पैताने सोना और भोर जग जाना। स्नान संध्या से निपट पाठ के लिए बैठना। फिर रसोई बनाना। पहले काका को परोसना शेष बचा स्वयं पाना। भोजनोपरान्त काका के पाठ का चिंतन करना। कोई शंका आ जाये तो पूछ लेना। दोपहर काका से मिलने कोई न कोई आता ही। कोई शास्त्र चर्चा करता कोई घर गृहस्थी की समस्या पर सलाह लेता। अपने राम दूर बैठते। शाम को काका को चाय बना देते। सूर्यास्त समय काका स्तोत्र पाठ करते। नर्मदाष्टक, देव्यपराधक्षमापन, महिम्न, दक्षिणामूर्त्यष्टक, ऐसे कितने ही। मैं सुनता। महिम्न मैं ने अवश्य उनसे सीख लिया।

बारह पंधरह दिन हुए होंगे। अचानक पाठ रुक गया। क्या कारण हुआ स्मरण नहीं आ रहा। लेकिन काका अपने घर रहने चले आये। मुझे भी साथ ले आये।

घर में बहुरानी रसोई बनाती। मैंने मधुकरी माँगने का निश्चय किया। काका स्वयं पाँच सात घर गये। दोपहर बारह बजे हमारा लड़का मधुकरी के लिए आया करेगा ऐसा कह आये। दूसरे दिन से मधुकरी व्रत फिर से चालू हुआ।

अन्य घर याद नहीं रहे एक भट वकील का घर स्मरण है।

इतिहासाचार्य राजवाडे जिस घर में रहते थे वही यह घर था। स्वयं भट तब थके बुढऊ थे। फिर भी वे राजवाडे संशोधन मंदिर में जाकर काम करते। उस घर में मुझे बड़े अगत्य से काफी मधुकरी मिलती थी।

एक बार भिक्षान्न माँगता। खाता। थाली मांजकर रख देता। दूसरे दिन बारह बजे ही फिर थाली को छूता।

कभी काका मानो मेरी परीक्षा लेते। मधुकरी लेकर आने के बाद कहते देखुँ तो आज क्या मधुकरी मिली। मैं झोली फैला देता। वे उसमें से खास चीजें उन्हें परोसने को कहते। भोजन में खास चीज। मुझे ऐसे आम और खास में कोई अंतर नहीं रह गया था। कितने ही साल किये व्रतों से जीभ का स्वाद ही जैसे मर गया था।

धुलिया में पानी की बड़ी तंगी। घर के बाहर नलों को पंप बैठाये थे। उन्हें चलाते तब पानी आता। शाम को एक तरफ वह काम करता दूसरी ओर काका के नाती पोतों को कहानियाँ सुनाता। सूर्यास्त के समय काका के पीछे-पीछे कमंडलू ले चल पड़ता। राजवाडे संशोधन मंदिर से होते पांझरा नदी किनारे रेत में जाकर हम बैठते। वहाँ काका के साथ ही संध्यावंदन हो जाता।

धुलिया में उस समय कई विद्वान रहते थे। समर्थ भक्त देवजी, धुलिया से निकलते एक साप्तहिक के संपादक तिलकजी, पांझरा नदी पार देवपुरा में रहते एक शास्त्रीजी कट्टर सनातनी थे। धर्मविषय में तिनके बराबर का परिवर्तन करने का किसी को भी अधिकार नहीं यह मानने वाले। व्यासपीठ पर इस कारण तूफानी बहसे होती। पर अन्यथा ये सारे अंतरंग मित्र थे। रोज शाम वे सब नदीपर मिल जाते। एक दूसरे के स्वास्थ्य की पूछताछ होती। हँसीमजाक होता बहुत ऊँचे सांस्कृतिक स्तर के ये लोग एक दूसरे से कितने सम्मान

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

से बातें करते। बरतते। यह तुरन्त ध्यान में आ जाता। अंधियारा हो जाने पर हम गुरु शिष्य लौट पड़ते।

घर में काका ने मुझे अकेले के लिए गीताभाष्य का पाठ चालू रखा था।

महामहोपाध्याय, वेदान्त वागीश, ऐसी दो-दो उच्च उपाधी धारण किये काका मेरे अकेले के लिए गीताभाष्य खोल बैठते इससे बड़ा भाग्य और क्या हो सकता था।

गत कुछ दिनों से काका के मन को जैसे कुछ चुभ रहा था। एक दिन वह बात आखिर में निकली ही। मैं ड़र रहा था जिससे। वह सामने खड़ा हो गया। अटल रुप में।

हम दोनों संध्यावंदन से निपट नदी किनारे थे। उस दिन मिलने जुलने कोई एखाद ही नदी आया था।

काका ने पूछा

"गोपाल तेरे घर कोई नहीं!"

जान गया बोला

"मुझे मालूम नहीं काका।"

"घर छोड़ा तब कौन कौन था?"

"सब थे। पिता माता भाई बहन।"

"तुमने कभी पूछताछ नहीं की।"

"एक बार भाग आने पर लौटने को शरम लगने लगी।"

"अरे घर लौट जाने में कैसी शरम। अच्छा फिर।"

"आगे कुछ नहीं काका। मुझे एक घर था यह भी मैं भूल गया हूँ। वे भी मुझे भूल गये होंगे। पेड़ से टूटा फल अब जोड़ने में कोई अर्थ नहीं।"

"कैसे निष्ठुर हो रे।"

"निष्ठुर नहीं काका। मैं घर से भागने के बाद पढ़ा नहीं। पढ़ना माने स्कूली पढ़ाई। वह वही ठहर गई। इसलिये अब मैं घर लौटूँ तो भी उन्हें मेरा कुछ लाभ नहीं। कोई मुझे नोकरी देनेवाला नहीं।"

"मिली तो वह भी मैं कर नहीं पाऊँगा। इतने अपराध अब तक हो गये हैं कि फिर से घर से जुड़ पाने में मैं बिलकुल बेकार हो गया हूँ।"

"ऐसा तुम सोचते हो।"

"हाँ, परन्तु घर के लोगों के दृष्टिकोण से ही सोचता हूँ। ऐसा देखो काका। घमंड करता नहीं। पर जनसेवक के रुप में निरिच्छ मन से मैं चारो ओर घूमा। एक पाई भी ली नहीं। खुले आकाश के नीचे सालों गुजारे। कीर्तन करता था तब पाँच-पाँच हजार लोग इकट्ठे होते थे। ऐसी स्थिति में घर लौटकर मैं क्या कर सकता हूँ। किसी की नोकरी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

असंभव। वह कल्पना भी मैं सहन नहीं कर सकता।"

काका बहुत देर तक चुप रहे। फिर निश्चय स्वर से बोले।

"देखा गोपाल! मैंने सब तरह से विचार किया। तुम घर जाकर रहो यह मैं तुम्हें कह नहीं सकता। पर तुम जीवित हो और सत्कर्म करते जी रहे हो, इतना उनको ज्ञात होना चाहिये। तू चार दिन के लिए ही एक बार घर जाओ। सबसे मिलो और लौट आओ। मैं तुझे पढ़ाऊँगा।"

बड़ी मुश्किल में पड़ बोला

"लेकिन काका?"

"अब क्या?"

"नहीं अब आठ नौ बरसों में वे कहाँ होंगे?"

"खोजो।"

"और ये सब न किया तो" - जी कड़ा कर पूछा

"फिर मैं अपने पास तुझे नहीं रखूँगा। जहाँ चाहे वहाँ जाओ। कुछ भी करो।"

मुरझाकर बोला

"पर काका घर जाकर आना माने किराया खर्चा।"

"मैं दूँगा।"

काका ने हर तरफ से सोचकर ही मुझे आदेश दिया था। कहीं से भी छूट भागने का कोई रास्ता नहीं था।

सुबह अनुमान से नागपुर के महाल क्षेत्र में दर्जी की दुकान रखे मेरे चचेरे भाई के नाम एक पत्र लिखा। कोई आठ दिन में उत्तर आया। आबा मेरे छोटे भाई के अक्षरों में दो पंक्तियाँ-

"तुरन्त निकल आओ। हम सब बाट जोह रहे हैं।"

नागपूर स्टेशन से निकला और पैदल ही धनतोली गया। जहाँ हम रहा करते थे उस व्यंकट्या के घर जाकर खड़ा हो गया। मुझे किसी ने पहचाना नहीं। पहचाने भी कैसे? एक पंचा पहने एक ओढे चप्पी किये पीछे चोटी उड़ती हुई। कोई गरीब बेचारा तेलंगी बामन दिखे वैसा दिखता हूँगा।

नागपूर भी इन दस वर्षों में बदल गया था। बहुत। हम रहते थे वहाँ कोई और रह रहा था। पूछताछ की किसी ने ठीकठाक उत्तर भी न दिया।

लेकिन आखिर ढूँढ ही लिया। उसी गली में मारिस कालेज के मैदान के पास डाँगे के मकान में माँ का भोजनालय है यह मालूम हुआ। आँखों के सामने अंधेरा सा छाया। माने पिताजी नहीं रहे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जाकर उस घर के सामने खड़ा हो गया। बोर्ड नहीं था। मालूम हुआ कि भोजनालय उपरी मंजिल पर है। बहुत देर वहाँ खड़ा रहा। पैर जैसे सुन्न हो गये। सीढ़ी पर पैर रखने की हिम्मत बटोर ही नहीं पाता था। बड़ी कठिनाई से हिम्मत कर उपर चढ़ गया।

और दरवाजे बाहर बैठ गया पालथी मारे

अगले प्रसंग का सामना कैसे करुँ वह समझ में न आ रहा था।

अंधियारा सा हो रहा था। ऐसा लगा बेहोशी आ जायेगी पर बेहोश न हुआ।

कुछ देर बाद बाहर जाने के लिये आबा दरवाजे पर आया। उसने मुझे देखा। पहचाना नहीं। कितना बड़ा हो गया था वह।कैसा सुंदर भी। वह मेरा ही भाई है इसपर मेरा ही विश्वास न होता, उसने पूछा-

"कौन चाहिये?"

सूखे गले से बोला - "कोई नहीं।"

"फिर यहाँ क्यों बैठे हो?"

एक बार मन में चमका कहूँ तुने ही तो बुलाया। वह अंदर मुडा। माँ को आवाज देते हुए बोला- "आई! तुमने किसी को काम के लिए बुलाया है क्या?" इतने साल बाद माँ का शब्द सुना - 'नहीं।'

"फिर ये कौन बैठा है? देखो तो।"

माँ बाहर आ गयी। हम दोनों ने एक दूसरे को देखा उसके माथे पर बिन्दी नहीं थी। उठ उसके पैरों पर सिर रखा। और जैसा था बैठ गया।

उसने पहचाना। आँसू सम्हालते, अंदर मुडते बोली-

"अरे आबा-आप्पा है वह।"

फिर रात्रीरेवं व्यरंसीत्। माँ-बेटे का बतियाव होता रहा। हमारे पास यातना के सिवाय कुछ नहीं था कहने।

मैं भागा उस दिन से पिताजी हार गये कहने लगे

"मैने गुस्से में मार-मार अपना लड़का खोया।"

फिर उन्होंने किसी को चपत भी नहीं लगाई। आबा और बायडी लड़ते। वे उसे सुनते। दीनता से कहते -

"अरे मत हल्ला करो रे।"

बस इतना ही।

और एक दिन मेरे भागने के काँटे को सहन न कर पा वे अफीम ले आये। घोलकर पी गये। भोर तक किसी को कुछ ज्ञात न हो सका।

एक अतिशय बुद्‌िमान, दुराग्रही, गुस्सैल, सतशील जीवन इस तरह समाप्त हुआ।

मेरे एक चाचा थे। नागपुर में उनके तीन चित्रपट गृह थे। उन्होंने हमारे गिरते घर को सम्हालने का बहुत प्रयास किया। पर माँ ने जिद की। उनसे बोली-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"मैं अपना देख लूँगी। जिसने पैदा किया उसने कुछ व्यवस्था भी की ही होगी।"

मेरे भागने के दो साल बाद माई चल बसी। पिताजी चार साल बाद। आई, भाई और तीन बहनें रह गयी थी।

रहते मकान को माँ ने छोड़ दिया। एक छोटा कमरा माँ ने किराये पर लिया। वहाँ प्रपंच चलाने वह चार छात्रों का भोजन बनाती थी। आबा को पढ़ाया। मॅट्रिक हुआ वह। नोकरी भी मिली। दो बहनों का विवाह कर दिया। धीरे-धीरे प्रपंच का भार हलका हो गया था। भोजनालय के लिए जगह छोटी पडने लगी। फिर डाँगे के मकान में वे आये।

कितने ही बड़े और भले माँ के भोजनालय में भोजन कर गये।

ऐसा था सब-

मैंने भी जो सहा था कहा। गलत रास्ते नहीं गया। हजार बार मौका आया तब भी। सम्हालता सम्हलता रहा। अब चार दिन के लिए आया हूँ। मिल भेट फिर अपने रास्ते निकल जाऊँगा। यह पंछी अब पिंजरे में रहनेवाला नहीं।

उस ठिठुरते जाड़े के दिन भोर ही हम माँ बेटे सिगडी तापते बतिया रहे थे। कल मुझे निकलना था। घर में रहकर तिल बराबर भी मेरा लाभ नहीं यह उन्हें समझाने में मैं सफल हो गया था।

ताप रहे थे तो कहीं शोर सुनाई दिया। माँ ने कहा

"देख तो क्या है?"

दौड़ते सीढ़ी उतर गया। चौक के उस पार दाहिने हाथ एक कुवाँ था। वहाँ भीड जमा थी। आदमी चिल्ला रहे थे।

आगे घुस देखा। सबेरा हो गया था। एक तरुण मद्रासी महिला ने देर रात कुएँ में छलांग लगाई थी। छलांग तो लगाई पर फिर जीने की इच्छा बलवती हो गई। नीचे कंगोरे थे उसे पकड़ ठिठुरा रही थी वह और क्षीण स्वर में चिल्ला रही थी।

लोगों के ध्यान में आते ही लोग दौड़े। एक बहादुर कुएँ में उतरा। कंगोरे सब काई से चिकने थे। उस अकेले से महिला का भार सम्हाला नहीं जा रहा था वह चिल्ला रहा था-

"अरे कोई एक जल्दी उतरो नहीं तो हम दोनों डूब जायेंगे।"

इधर बात समझ आयी उधर मैंने कुएँ में छलांग लगा दी। उपर तक छींटे आये पानी के। तैरते उनतक पहुँचा हम दोनो ने महिला को सम्हाला।

हम दो उसे बचाने आये यह देखते ही जीने की उसकी इच्छा मर गई। ठिठुरते कहने लगी-

"आरे मुजे मरने दो रे।"

मेरा मित्र कहने लगा दाँत पीसते - एक झापड दे दो साली को। हम दोनों एक एक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

हाथ बाँध उसे सम्हाले थे। दुसरे हाथ कंगोरे पकड़े। उसने सारा बोझा हम पर ड़ाला हुआ। दोनो हाथ टूटने को हो गये। किसी भी क्षण महिला और कंगोरा दोनो ही छूटना था जैसे।

उपर से एक खाट डोर बाँध कुएँ में ड़ालने की खट्पट लोग कर रहे थे। पर उसमें होती क्षणक्षण देर हमारे लिये युगान्त हो रही थी।

विकट जाड़ा था। कुएँ का पानी तो ठीक पर उपर उठा शरीर ठिठुर-ठिठुर गया था। हाथ की संवेदना मरने को थी। सारी शक्ति लगाये हम धीरज धरे थे।

आखिर खाट हम तक पहुँची। दोनो ने सिर से ढूँसे दे देकर उस महिला को खाटपर लिटाया। उसे पकड़ रखने मेरा साथीदार भी खाटपर बैठ गया। उपर के लोगो ने खाट धीरे-धीरे उपर खीच ली।

मैं वैसा ही पानी में लटका रह गया। थका माँदा। फिर कंगोरे पकड़पकड़ न जाने किस तरह उपर आ गया और ठिठुरता घर चला गया। सब का ध्यान महिला पर था मेरी तरफ किसी ने नहीं देखा।

माँ ने चार सिगडियाँ सुलगाई और चारों ओर से मुझे सेंक ड़ाला।

लौटने का दिन भी आ गया।

बहनें रोने लगी। माँ की भी आँखे भर आयीं। उन्हें पोछते बोली-

"जाते हो तो जाओ बेटे। बुरे रास्ते पर नहीं गये। परमार्थ रास्ते पर हो। कभी कभार चिट्ठी भेज दिया करो।"

हथेली पर माँ ने रखा दही चाटते हुए एक निर्मोही फिर अपने रास्ते निकल पड़ा।

नर्मदा नाम से बचपन में परिचय हुआ था। पिताजी ने श्लोक याद करवा लिया था।

गंगेच यमुने चैव गोदावरि सरस्वति
नर्मदे सिंधु कावेरि जलेस्मिन सन्निधि कुरु

अन्य नदियाँ वैसी नर्मदा। केवल एक ही नदी है पूरब से पश्चिम की ओर बहती वह भारत की मेखला है। धर्मकृत्य के संकल्प में रेवायाः तीरे ऐसा एक संदर्भ भी ज्ञात था।

पर उसके प्रति विशेष उत्सुकता जागी काका के यहाँ। सामान्यतया रोज एक दो बार नर्मदा का नाम आता ही। काका का वह मर्मबिन्दु था। नर्मदा का नाम आते ही वे खिल जाते। प्रवचन में उसका स्मरण होते ही आँखे बंद कर लेते। क्षण के लिए मौन हो जाते। काका का वह स्वभाव मेरा परिचित हो गया था।

मैं नागपूर से लौटा। पाठ फिर प्रारंभ हुआ। और एक दिन पाठ के प्रारंभ में ही नर्मदा का उल्लेख आया। काका जैसे भरके बोले

"रख दे वह भाष्य।"

"क्यों काका। तेरहवे अध्याय के आखिरी दो-तीन श्लोक रह गये हैं केवल। आज

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पूरा कर ही लें।"

"नहीं आज अब नर्मदास्तवन गाते हैं।" और वे स्वरचित नर्मदा स्तवन गाने लगे।

कदा रेवातीरे प्रणवविषयं मानसजपम्
समालव्य ध्यायन् श्रुतिसिरसिजं ब्रह्म विमलम्
भजंश्चेतः स्वास्थ्यं विगतविषये ऽ तीन्द्रियतनु।
र्लभे यात्मांभोधौ प्रवितत निजानंद लहरीम् ॥

कंठ उनका भर आया। मैं चुप हो गया। बैठा रहा। जैसा था। कुछ देर बाद काकाने आँखे खोली-मुझे कहा

"गीताभाष्य सीखने का क्या हेतु है तेरा?"

असमंजस में पड़ बोला

"शांकर वेदान्त समझने के लिये।'

"तेरहवें अध्याय के दूसरे श्लोक पर जो भाष्य है उसमें सब शांकर वेदान्त आ गया है। खैर तूने तेरह अध्याय पढ़े। तेरे ध्यान में क्या आया रे?"

क्या कहता। फिर काका ही बोले

"बोलो चुप क्यों हो?"

"आप आचार्य के परमभक्त हो इसलिए।"

"मैं अपने को आचार्यचरणरजः शरण मानता हूँ पर तू निर्भयता से अपनी बात बता।"

"मुझे लगता है आचार्य महापंडित है। तर्क में उनकी बराबरी कोई कर नहीं सकता। उन्होंने लिखी जैसी सरल गीर्वाणभाषा कोई भी लिख नहीं सकता। उनके जैसा प्रत्युपन्नमति पुरुष अन्यत्र दुर्लभ। उनकी स्मरण शक्ति अति तरल है। कहाँ-कहाँ के प्रमाण उनके सामने जैसे हाथ जोड़े खड़े हो जाते हैं। उनके अध्ययन की कोई सीमा नहीं है। तत्कालीन सभी शास्त्रों में उनकी प्रज्ञा सहज अवगाहन करती है।"

"बहुत सुंदर बात कह रहे हो कहते चलो।"

"गीता के प्रतिपाद्य विषय के सम्बन्ध में उनके निश्चित मत हैं उन्हें क्या कहना हैं वह उन्हें पक्की तरह ज्ञात है। उसे व्यक्त करते जो निर्भयता लगती है आचार्य उसकी तो प्रतिमूर्ति ही हैं।"

"वाह! आगे!"

किन्तु काका मुझे क्षमा करें। बार-बार ऐसा लगता है सामने बैठे प्रतिवादियों को पराभूत करने उनके मुँह बंद करने का एक सूक्ष्म अहंकार आचार्य के पांडित्य से प्रगट होता है। उनका भाष्य देख मनुष्य मौन हो जाता है इसलिए कि उसे प्रत्युत्तर सूझता नहीं। हर शब्द का अर्थ आचार्य सटीक करते हैं पर भाष्य पढ़ते भावना में तरंग नहीं उठते। उसमें हिलोरे नहीं आती। आँखे भींगती नहीं श्रद्धा को स्पर्श कर जाये ऐसा आजतक मुझे कुछ भी दिखा नहीं। ज्ञानदेव ने व्याख्यान का वर्णन करते हुए कहा है

वाचा बरवे कवित्व। कवित्वीं बरवे रसिकत्व
रसिकत्वी परतत्व स्पर्शु जैसा॥

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

वाचा वह अच्छी जिसमें कवित्व हो। कवित्व वह अच्छा जिसमें रसिकत्व हो और रसिकत्व वह अच्छा जिसमें परतत्व का स्पर्श हो। पर मुझे भाष्य पढ़ते न जाने क्यों उसमें परतत्वस्पर्श है ऐसा कभी कुछ लगा नहीं। हो सकता है मैं ही अक्षम होऊँ। परन्तु ज्ञानेश्वरी पढ़ते सुनते कई बार मैंने वह अनुभव किया था।

काका सुनते रहे। आँखे बंद किये कुछ देर बैठे रहे। फिर बोले "बेटे तू अब आगे भाष्य पढ़ना बंद कर दे।"

घबराकर पूछा- "क्यों कर काका?"

"तू भाष्य सीखने की जमात का नहीं है।"

"पर मेरे मन में आचार्य के लिए आदर है।"

"प्रश्न वह नहीं है। मेरे बेटे। तूने अभी कहा वही ठीक है।"

आचार्य के सामने प्रतिपक्षी बैठे थे। अपने-अपने शास्त्रों में अति प्रवीण। नैय्यायिक थे। पूर्व मीमांसक थे। वैशेषिक थे। पर उन सबमें प्रबल सांख्य थे। उन्हें प्रधान मल्ल मानकर आचार्य को उनके तत्वज्ञान का पराभव करते हुए स्वमत की स्थापना करनी थी। इसलिए गीताभाष्य तर्क प्रधान होना अनिवार्य था।

"जी हाँ।"

"तू सश्रद्ध भक्त की जमात का है। सहृदय साधक की जाति का है।

ये सब भाष्यादिक पढ़ तुझे बहुत अधिक लाभ होनेवाला नहीं।"

"नहीं! जो प्रारंभ किया है उसे पूरा करना ही है। पर इससे भी अच्छा स्थान तेरे लिए कौनसा है मैं कहना चाहूँगा।"

"कहिये।"

"नर्मदा। तू नर्मदा परिकम्मा कर।"

काका मुझे अभंग गाने को कहते। मैं लयकारी से उन्हें गाता। उन्हें मिलने जब कोई विशेष परिचय का आता तब काका कहते

"हमारे गोपाल का गाया भजन आपने सुना कभी?"

"भजन गाता है यह?"

"अरे बहुत सुन्दर एक और बात भी है।"

"क्या?"

"गाओ कहते ही शुरु। खाँ साहब जैसा भी नहीं हैं। आज तबीयत नाशाज है। आज गला खराब है ऐसा कुछ नहीं।"

"कहो तो बेटे।"

काका को दो अभंग बहुत पसंद थे। पहला ज्ञानेश्वर का और दूसरा तुकाराम बाबा का। तुकाराम बाबा का वह अभंग गाया माने जान लो कि काका मन से नर्मदा किनारे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पहुँच गये हैं। आँखे बंद कर वे शांत बैठ जाते और मेरा अभंग समाप्त होते ही शुरू हो जाता उनका नर्मदा स्तवन। या कहते

"अरे ऐसा ही एक आचार्य का श्लोक है।"

"कौनसा काका?"

एकान्ते सुखमास्यतां परतरे चेतः समाधीयताम्।

"दोनों का आशय एक ही है काका लेकिन।"

"बराबर। आशय एक ही है परन्तु यह जो एकान्त सुख की अनुभूति है वह अलग-अलग स्थान पर प्राप्त हुई है। तुकाराम बेचारा कभी महाराष्ट्र पार कर उत्तर में गया नहीं। आचार्य ने नर्मदा किनारे का एकान्त आकण्ठ सेवन किया।"

"नर्मदा किनारे का ऐसा कैसे कहा जायेगा?"

"उनके गुरु-गोविंदयति - उन्हें कहाँ मिले मालूम हैं।"

"कहाँ मिले?"

"नर्मदा के ब्रह्माणी घाट पर। वहाँ एक गुफा में गोविंदयति तपश्चर्या कर रहे थे। आचार्य गुरु को खोजते वहाँ आये। जीवशिव का मिलन हुआ। गुरुने शक्तिपात किया। शिष्य कृतार्थ हो गया उस स्थान के लिये। नर्मदा के लिए आचार्य आजन्म कृतज्ञ ही रहे। उन्होंने नर्मदास्तवन रचा है।"

सबिन्दुसिन्धुसस्खलतरंगभंगरंजितम्।
द्विषत्सुपापजातजातकारि वारिसंयुतम्॥
कृतान्तदूतकालभूतभीतिहारिवर्मदे
त्वदीय पादपंकजं नमामि देवि नर्मदे॥

और फिर काका मेरी ओर देखकर कहते

"अरे बेटे तू नर्मदा जायेगा? परिकम्मा करेगा?"

"मैं कर सकूँगा काका।"

"कोई कर सकता है तो वह तू ही है तू खूप घूमा, भटका है रे कष्ट सहन करने की तुझे आदत है। फिर बोल।"

"परन्तु मैंने तो अभी नर्मदा देखी भी नहीं।"

"देखेगा और देखेगा तब उसके प्रेम में पड़ जायेगा।"

"एक शर्त है काका"

"कौनसी रे?"

"नर्मदा के लिए निकलने के पूर्व गीताभाष्य पूर्ण हो जाना चाहिये।"

"अवश्य।"

वे महर्षि, नर्मदा के दीवाने थे। कितनी ही बार वे नर्मदा तीर पर महिना-महिना रह

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आये थे। बुढ़ापे के कारण परिक्रमा करना उनके लिए कठिन हो गया था पर उनकी निरतिशय इच्छा थी कि उनका वह अधूरा कार्य कोई उनका अपना पूरा करे।

मेरी सक्षमता उनके ध्यान में आ जाने के बाद से वे नर्मदा के सम्बन्ध में बार-बार बतियाने लगे। बच्चे की तरह वे व्याकुल हो जाते कभी-कभी। नर्मदा तीर का नितल एकांत। उसका हरियल झाई वाला जल। नर्मदा तीर पर तपश्चर्या रत रहे तपस्वी। उनके साधना स्थल। नर्मदा तीर पर भटकते मिलता अपार सुख। पशुपक्षी। ऐसे अनेकानेक विषयों की चर्चा वे भर-भर करते।

प्रापंचिक सुख के प्रति उदासीन काका नर्मदा के सम्बन्ध में बारबार आख्यान करते उस कारण बिना नर्मदा देखे मैं उसे प्रत्यक्ष अनुभव करने लगा। भटकना पहिले से ही मेरा स्वभाव। उसमें मेरे गुरुदेव द्वारा दी जाती सतत प्रेरणा। उससे एक हुआ। गीताभाष्य में मेरी रुचि घट गई। केवल दोनो का निश्चय था इसलिए पाठ चलता रहा।

मैं परिकम्मा करुँगा यह तय हो जाने के बाद काका एक तरफ तो सुख भरे और दूसरी तरफ चिंताकुल हो गये। कहते-

"देख किसी भले आदमी का साथ लेकर ही चलना चाहिये।"

"किसलिए काका?"

"नर्मदा मैया का सुख भोगते कोई समानधर्मा होना अच्छा यह एक, दूसरा वहाँ गहन जंगल है एक से दो हमेशा ही भले।"

"आप किसको लेकर गये थे।"

"अरे मेरी बात अलग थी। जीवन के कोई एक भी कर्तव्य बाकी नहीं रहे मेरे। तू अभी बच्चा है। सारा जीवन विस्तार अभी सामने है। हमारा रास्ता खतम होने को है।"

मैं मन में कहता नर्मदा मैय्या सिवाय निर्भयता के मुझे कुछ न दे। कभी काका कहते

"निकलने के पहिले एक अच्छी सी कुरजी बनवा लेना। कंधे पर ड़ाल ली और दोनों ओर सामान रख दिया। हाथ भी खाली रहते हैं।"

"उसका क्या करुँगा?"

"बताया तो। फिर रास्ते में स्थान-स्थान पर सदावर्त रहते हैं। परिक्रमा वासियों को वहाँ आटा दाल जैसी चीजें मिलती हैं मैं तुम्हें यह नहीं कहता कि तुम संग्रह करो। पर कभी मीलों कोई बस्ती नहीं मिलती वहाँ काम आने के लिए। आई ना बात समझ में।"

मैं हाँ कहता पर उसी समय मन में निश्चय करता कि पूरे नास्तिकों के प्रांत में भटकते भी भोजन की चिंता मैंने नहीं की। अब वह नर्मदा के सश्रद्ध तीर पर किसलिए करुँ। जो कुछ मैय्या करे वो होय। तुकाराम बाबा ने कहा है

उग बढ़ते तरु गर्मी में भी
जल उनको कौन डालता है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

किसने बनाया दूध रे बेटे
वह श्रीपति दोनो संग बढ़ाये रे॥

बाबा के इस वचन पर मेरी निरतिशय श्रद्धा है।

गीता भाष्य की समाप्ति हुई। काका के बहू ने उस दिन मीठा बनाया मेरे लिये। मैं मधुकरी माँगने नहीं गया। काका के साथ भोजन पाया। शाम की गाड़ी से मैं नर्मदा के लिए निकलनेवाला था। दोपहर काका मुझसे बतियाने लगे। संभालकर रहो। ऐसा बड़े थरथराये स्वर में कहने लगे। आखिर मैंने उन्हें कह ही ड़ाला।

"काका मैंने कुछ निश्चय किये हैं।"

"कौन से?"

"प्रथम यह कि परिक्रमा केवल चितशुद्धि के लिये करना है।"

मुझे नर्मदा मैय्या से दूसरी कोई चाहना नहीं है इससे एक लाभ यह होगा कि बंधनों से मैं काफी मुक्त रहूँगा।

"सुंदर!"

"दूसरा यह कि कोई साथीदार मिला तो ही मैं उसके साथ यात्रा करुँगा। वैसे भी मुझे किसी के साथ अटकाव पसंद नहीं। मेरी गति अच्छी है मैं स्वच्छंद अकेला ही भटकूँगा।"

"ठीक है।"

"तीसरी बात। मैं अयाचित व्रत के साथ परिक्रमा की सुरुवात करुँगा। कहीं बहुत दिन रहने की बारी आ जायेगी तो मधुकरी माँग लिया करुँगा। किसी सदावर्त के आगे खड़ा रहकर व्यवस्थापक की करुणा पर जीवित रहना मुझे पसंद नहीं।"

"मैं तुम्हें वैसा कुछ कह भी नहीं रहा।"

काका के चरणों पर शीश नवाया। उन्होंने पास लेकर आर्शीर्वाद दिया। मेरे मस्तक का अवघ्राण किया।

मैंने कहा-

"एक और कहूँ काका। आपका शिष्य हूँ यह कभी नहीं भूलूँगा।"

पूजाघर में जाकर देवता को नमस्कार किया। काका के बहू ने हथेली पर दही दिया उसे चाट लिया। दो लंगोटी, गीताभाष्य, एक तुंबा, एक जोडा पंचा इतना सामान बगल में मारा। घर छोड़ा। मुडकर देखा तो काका दरवाजे में खड़े थे।

स्टेशनपर पहुँचकर हरदा का टिकट निकाला।

हरदा से नर्मदा तीर का हंडिया पास है। मोटर से हंडिया गया। जैसे जैसे नर्मदा तीर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

के पास-पास आने लगा वैसे-वेसे मन की अकुलाहट बढ़ती गई। उत्सुकता की तार खींची जाने लगी।

यह माता नर्मदा कैसी होगी?

हंडिया में मोटर से उतरा। पूछते नर्मदातीर की ओर चला। दोनों बाजू के कगार में से रास्ता नर्मदा की ओर उतरने लगा और एक अगले क्षण दाँये बाँये दिशा में फैली नर्मदा मैया दिखाई दी।

अवाक् होकर खड़ा हो गया।

कैसा है यह। कितना विस्तृत। जिधर देखूँ उधरनर्मदा और उसका परिसर दिख रहा है। एक मृदु गंभीर ध्वनि सुनाई दे रही है। वह है नर्मदा के जलप्रवाह की। उसके सिवाय उस भरी दोपहरी अन्य कुछ भी प्रतिध्वनित नहीं है।

अर्जुन को जैसे विश्वरुप देखते ही रोमावली उठ आई थी। वैसा कुछ हो गया। रुक्ष शरीर के रोम खड़े हो गये। आँखो में आँसू भर आये उस असीम दृश्य से ऐसा भर गया कि बहते आँसू पोछने का होश भी नहीं रहा। बार-बार गदगद होकर कहता रहा

ते अग्रतो नमः ते नमः पृष्ठतः

ऐसा कुछ उस पुण्य सलिला ने अर्न्तबाह्य भर दिया। कितनी ही देरतक वैसा ही अपलक नेत्रों से वह अपार-अपार देखता रहा।

दोपहर का चटखता समय। गर्मी का मौसम आखिर पैर जलने लगे।तब होश में आया। मन में आया कि अब तो रेवादर्शन रोज ही होने का है। रात और दिन। भोरऔर दिन डूबे। दूसरा कोई प्रयोजन ही नहीं। कोई और अन्य हेतु नहीं। केवल यही एक परम साध्य है ऐसा सोचते नर्मदा के बहते पानी में जाकर खड़ा हो गया।

किसी का कैसा भी बंधन नहीं। कोई मेरा शासक नहीं। आलंदी और धुलिया दोनों जगह मन से माने कुछ बंधन थे। कुछ अनुशासन था। अब कुछ भी नहीं है। बाबा के खाते में रहते भी सिरपर एक अज्ञात भार था। कुछ पुण्य कार्य कर रहा हूँ ऐसा एक अहंकार भी था। उस पुण्य कार्य की भी कुछ सीमाएँ थी। बंधन थे जिसका पालन अनिवार्य था। पूर्ण मुक्तता का आनंद भोग नहीं सकता था।

अब यहाँ सारी बेड़ियाँ टूटी हैं।अच्छा है मैं नर्मदा परिक्रमा का व्रत नहीं ले रहा हूँ। व्रत के बहुतेरे बंधन हैं उनको छोड़ा नहीं जा सकता।

परिक्रमा में हजामत मना। नख काटना मना। दूसरे के हाथ का भोजन मना। स्वयं पाक सिद्धकर आहुति देनी। पके भोजन से मैय्या के मस्यमीन को एक कौर। तीर की गायों के लिए एक। आकाश के पंछियों के लिये एक। शेष रहे वह अपने लिए।

हमेशा भूमि पर सोना केवल एक कंबल बिछा। किसी चौकी पर, खाटपर बैठना नहीं। किसी भी कारण उस आसन का आश्रय लिया कि परिक्रमा भंग।

परिक्रमा भंग का तो बड़ा हल्ला। नर्मदा जल में किसी भी काम से जाना नहीं। कोई सोचे नदी जल में सजीसी किसी चट्टान पर जाकर बैठे। मुक्त होकर नर्मदा जल अपने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उपर लें या फिर तैरना आता है तो अथाह पानी में चार हाथ तैरे सब खलमल धुल जाये जिससे, शरीर हलका हो जाये तो वह मना है। उससे परिक्रमा भंग हो जाती है।

नर्मदा में कोई टापू है जैसे ओंकार मांधाता। वहाँ भी जाना नहीं। वहाँ के देवताओं का दर्शन वर्ज।दूर से इस पार केवल नमस्कार करना यह नियम कितना खींचा है? होशंगाबाद के पास रेवा नये प्रवाह से बहने लगी है। पुराना रास्ता उसने छोड़ दिया है। वह सूखा पड़ा है केवल मरुभूमि हैं। पर उसमें भी जाना नहीं। नर्मदा पर कई स्थानों पर पुल बने हैं पर उन पुलों पर चढ़ना नहीं। नीचे से जाना। अन्यथा परिक्रमा खंडित हो जाती है।

ऐसा कितना और कितना-कितना। काका ने काफी कुछ कहा था। सुनते समय ही मैंने अपने को जैसे कहा- कि मैं इसमें से एक भी नियम मानूँगा नहीं।

नर्मदा मेरी माता मैं उसका निसंग पुत्र। चाहे जैसा घूमूंगा मन में आये वैसा।

खड़ा था वहाँ का जल अंजुली में भर उठाया। मन में ऐसी प्रतिज्ञा करते उसे छोड दिया बोला माँ मेरी आस अब घरवालों को भी नहीं। दूसरा कोई बंधन नहीं। कैसा भी पाश नहीं। सर्वथा मुक्त हूँ तेरे तीर खड़े एक यति ने कहा था

नाहं मनुष्यो न च देवयक्षो
भिक्षुर्न चाहं निज बोध रुपः

उतनी ऊँची छलांग तो मैं लगा नहीं सकता फिर भी हूँ तो तेरा ही। जैसा हूँ वैसा। पापात्मा, पुण्यात्मा। जो है सो है।

काका ने प्रदक्षिणा का मार्ग बताया था। नेमावर से पूरब चलो। अमरकंटक के पास रेवा का उगम है उसको दाहिने कर दक्षिण तट से सीधे भडोच के पास के रेवासागर संगम के पास आओ। वहाँ नाव से उसे पार करो। फिर उत्तर तीर से फिर नेमावर तक आओ।

हंडिया में नदी पार कर नेमावर पहुँचा। काका के आदेश अनुसार यहाँ से परिक्रमा शुरु करनी थी। नदी तीर पर ऊँचा भव्य कोट। अंदर सिद्धेश्वर का मंदिर। सुना था उसके बारे में पहिले भी पर देखा तो अधिक भव्य था। सारा पत्थर का काम। आगे सभा मंडप चारो ओर छोटे छोटे और मंदिर।

मंदिर पुराना। साध्वी अहिल्याबाई ने उसका जीर्णोद्धार कराया। उस अलौकिका ने कितने-कितने स्थान पर अपना नाम इस तरह लिखवाया।

मंदिर परिसर में कितने ही साधू संन्यासी बैरागी। बैरागी भी भयंकर बैरागी। सिरपर वो बड़ी-बड़ी जटा का टोपा। मुगुटाकार बंधा। पूरी देह पर भस्मी पुती। धुनी रमाये। शिववल्ली का साधन गांजा सेवन करते हुए। मेरी तरफ कौन देखे। कभी कोई फलों आदि का टोकरा लिए कोई धनिक भक्त सामने आये तो उसकी ओर किंचित उन्मीलित

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कृपादृष्टि ड़ालते बैरागी अन्यथा सारा जगत उनके लिए मिथ्या।

मंदिर के पीछे प्रसादी तैयार हो रही थी। एक बैरागी ने फिर भी मुझे देखा। पूछा

"क्यों फक्कड़ कहाँ से आ रहे हो?"

नम्रता से कहाँ

"देवता नर्मदा परिकम्मा शुरु करने जा रहा हूँ।"

उसने मुझे घूरते साश्चर्य पूछा

"अच्छा! गरंथ काहे का है?"

"गीताभास्स है महात्मा"

"पढ़ सकते हो।"

"जी हाँ।"

संतुष्ट होकर परीक्षा न लेते हुए बैरागी ने पूछा

"परशादी पाओगे?"

"मैया की इच्छा हो तो।"

"अच्छा नहा धोकर चले आना।"

उसका आदेश सिरमाथे लिया। सामान उठाये नर्मदापर पहुँचा। घाट पर खूब नहाया संध्या वंदन किया तब तक शाम होने को हो गई।

संध्या समय रेवा मैया का जो रुप दिखता है वह कहा नहीं जा पाये। वह पूरब-पश्चिम बहती है। इसलिये सूर्यबिंब मानो उसी में डूबने जा रहा था। चंचल था। पानी का हर एक टुकड़ा सुनहला नग था और वे शत सहस्त्र नग जैसे एक से एक जुड़े-जड़े थे। जैसे कोई जरीदार महावस्त्र। वह रुप महिमा देख ठगा सा रह गया। सूर्यबिंब रेवाजल में डूब जाने तक अपलक नेत्रों से वह अपूर्व रंगोत्सव देखता रहा। सूर्यास्त बाद अचानक एक सुनहरी आभा उठी और उसने रेवा पात्र, दोनो तीर, मेरे पीछे का सिद्धेश्वर मंदिर सब सबको उजार दिया। वह आभास कुछ क्षण रहा और फिर अंधियारे का परदा सबपर धीरे-धीरे उतरने लगा।

उसी क्षण मंदिर में शंख घंटा का हल्ला शुरु हो गया। आरती प्रारंभ हो गई थी। जल्दी-जल्दी मंदिर की ओर चला।

जय जगदीश हरे
स्वामी जय जगदीश हरे

पूरी हुई और फिर शुरु हुई रेवा मैया की आरती। बड़ी उत्सुकता से शब्द सुनने लगा पहिले स्पष्ट बोध न हुआ। परन्तु बाद में स्पष्ट होता गया :

जय देवी जय देवी जय रेवा माता।
तुम बिन अन्य नहीं या कलियुग मों त्राता॥
जब तुम विंध्याचल से प्रगटी जग हित को

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दौड़े सब सुरदानव निज हित देखन को
सुंदर तनु गति लखि के लागे ढूँढ़न को
बोले प्रभुशिव ये नहिं जानें माता को॥

आरती मायानंद चैतन्य की रची है यह अंतिम छन्द से समझ में आ गया। फिर शुरु हुई दूसरी

जय जय जगदंब मात रेवा भवानी॥
निकली जलधारा जोर। पर्वत पासाण फोर
पश्चिम को बही मात। सिंधु में समानी॥१॥

आरती नाद समाप्त हुआ आरती सबके सामने घुमायी गई। मैंने उसपर से हाथ फेरा। उससे मुखस्पर्श किया। पेट में अग्नि चेती थी परशादी तैयार हो गई थी। फक्कड़ और महात्मा पांत पकड़ने लग गये। मुझे न्यौता था ही चट घुस पाँत में जम गया। बढ़िया देसी घी का हलुवा और कढ़ी बनी थी। पाक सिद्ध कर्ता का मन ही मन आयुरारोग्य बढ़ाता अफर कर पा लिया।

जिसने मुझे न्यौता था वह पांत में घूमा। मुझे देखते ही बोला

देखो फक्कड़ कसर नहीं रखो जो चाहिये सो पालो।

बहुत विनय से कहा

"जी महात्मा।"

"भोजन हो जाये तो मिलना मुझसे।"

"आज्ञा महात्मा।"

हाथ धो आया। पाक गृह का हल्ला बुझ गया। ओसारे में एक बाजू मैंने आसन जमाया। गुसांई को फारिग हो जाने देना था। परन्तु वह स्वयं ही मुझे खोजते आया। जल्दी से बिछाये कम्बलपर उसे बैठने को जगह दी। वह बैठते हुए बोला।

हाँ तो गरंथ का क्या नाम कहा-

"महात्मा इसे गीताभास्स कहते हैं?"

फिर से उसने पूछा

"पढ़ सकते हो।"

"जी हाँ।"

आश्चर्य से उसने कहा

"पढ़ो तो देखूँ कैसा पढ़ते हो।"

आले में रखा दिया उठा लाया और पहला ही पृष्ठ खोल शुरु किया

स भगवान् सृष्टा इदं जगत्
तस्य च स्थितिं चिकीर्षु :
मरीच्यादीन् अग्रे सष्ट्वा प्रजापतीन्
प्रवृत्तिधर्मं ग्राह्यामास वेदोक्तम्

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ततो अन्यांश्र
सनकसनंदादीन् उत्पाद्य
निवृत्तिधर्म ज्ञानवैराग्यलक्षणं ग्राह्यामास्
द्विविधो हि वेदांक्तोधर्म :

"बस बस बहुत भया।" फिर बड़े स्नेह से मेरी तरफ देखते गुसांई ने कहा -

"क्या कलही से परिकम्मा शुरु करने जा रहे हो।"

"जी हाँ।"

"अरे कोई अच्छी तिथि देखकर तब निकलते।"

मुस्कराकर बोला

"देखिये महात्मा-हरिदासों के लिये हर क्षण शुभ ही होता हैं।"

फिर श्लोक बोला

लाभस्तेषां, जयस्तेषां

पर गुसांई बोला

"अच्छा कोई बात नहीं। लेकिन परिकम्मा के नियमों का पता हैं न।"

"जी हाँ यही कि जूता खड़ाऊ बिना पहने चलना।"

मुझे कुछ थोड़े नियम मालूम थे पर गोसाई जी ने जो सूची बताई उसे सुन घबरा गया। प्रारंभ में नर्मदा पूजन करना। फिर कड़ाही प्रसाद बनाना। नर्मदा मेकल कन्या है इसलिए एक कन्या को न्यौतना, संतसज्जनों, कंगालो में प्रसाद वितरण करना।

यात्रा में कठोर ब्रह्मचर्य का पालन करना। असत्य बोलना नहीं। मजाक करना नहीं। दिन में तीन बार नहाना दूसरे तीर्थ क्षेत्रों की महिमा गाना नहीं। भगवान शंकर जी की ही पूजा करना। सब स्त्रियाँ माता भगिनी हैं यह मानना। किसी जीव की हत्या नहीं करना। एक बार भोजन करना। भजन छोड़ दूसरे गीत गाना नहीं। छतरी का उपयोग नहीं करना। गाजर प्याज शहद वर्जित, पत्तल पर खाना थाली में नहीं। बैंगन की सब्जी खाओ तो महापाप। पानसुपारी त्याज्य। लहसुन का नाम भी नहीं लेना। दर्पण देखना नहीं। सुरमा ड़ालना नहीं। दाँत माजने को जली तंबाखू नहीं लेना और अंत में कहा

ऋषि वसिष्ठजी ने कही प्रभूसे जैसी
सेवक यह मायानंद बखाने तैसी

बहस की बात नहीं थी। मेरा गोत्र वशिष्ठ। प्रत्यक्ष गोत्र गुरु का आदेश : सिरमाथे मानना ही था। मन में कहा

इस सबका पालन यथासंभव करुँगा पर चूक हो जाये तो क्षमा करना मैया।

तांबे का पैसा तो क्या टुकड़ा भी नहीं था। भीख माँगकर कड़ाही करना स्वीकार नहीं था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भोर उठ नर्मदा पर गया। स्नान किया हाथ में पानी लेकर खड़ा हुआ बोला

रेवा मैय्या तेरी परिक्रमा प्रारंभ कर रहा हूँ यह अर्ध्य यही मेरी पूजा यही मेरी कड़ाही। श्रीकृष्ण भगवान ने गीता में कहा

पत्र पुष्पं फलं तोयं यो में भक्त्या प्रयच्छति
तदहं भक्त्युपहृतं अश्नामि प्रयतात्मनः

तो तेरे ही जल का अर्ध्य ये मेरा उपचार सर्वस्व। इससे अधिक ज्यादा कम सब तुम्हें मालूम।

बाहर आया फिर एक बार मैया को दंडवत प्रणाम किया ओर किनारे से पूरब की ओर बढ़ता चला।

मील दो मीलपर छोटे-छोटे गाँव। उसमें कलई से पुती एखाद हवेली। शेष सब छोटे छोटे घर। कुछ खपरैल के कुछ फूस के। खेतों में कहीं हल चलते हुए। यहाँ वहाँ स्वच्छन्द फिरते पशु। उनके आसपास मंड़राते बगुले। गोचें भक्षण करने। कहीं किसी पेड़ तले चरवाहे लड़के सोये पड़े औंधे खड़े किये दुबरे पैर हिलाते हुए।

पैर के नीचे पगडंडी। कहीं उसपर गोखरु। कहीं बरसात की बाढ़ में बहकर आया हुआ कूड़ा करकट और उसमें भी काँटे। सम्हलकर पैर रखना बहुत जरुरी।

दाहिने हाथ बड़ी सीधी कगार और उधर गहराई में बहती नर्मदा मैया। कभी इस किनारे को छूती तो कभी उस किनारे को। उसका सफेद झक्क मैदान हलकी-हलकी हवा में उड़ते रेतका।

धूप से आँखे जलती। मैया की तरफ देखते ही ठंड़िया जाती। अच्छा लगता। कहीं चढ़ाई कहीं उतार नर्मदाजल निरंतर देखने की आदत इतनी दृढ हो गई कि वह आँखों से ओझल होते ही जी घबरा जाता।

रास्ते में किसान मिलते नार्मदे गँवार। बड़े-बड़े साफे से सिर ढ़के हुए बड़ी-बड़ी मूँछे हाथ में कान तक ऊँची लाठियाँ। दिनभर बात न करने से मुँह जैसा चिपक जाता। फिर उनसे बोलना ही पड़ता

"नर्मदे हर।"

उत्तर मिलता

"हर नर्मदे-कूण गाँव?"

"परिकम्मा वासी हूँ।"

"अच्छा तब खड़ियावड़िया कहाँ हैं?"

"नहीं है।"

"तब जीमणें का क्या करते हो?"

"मैया की इच्छा।"

साश्चर्य वे देखते खड़े रहते। आप हंसकर चलता रहता

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

पैर मेरे वैसे ही फटे-फटे उसमें गरम धूल में चलना। वे अधिक ही फटे जाते। दिनभर असह्य वेदना होती। शाम को उन्हें खूप साफ धोता मिल जाये उसका दूध उसमें भरता। दोपहर अगिन बरसने लगती। किसी उतार से नर्मदा जल तक पहुँच जाता।डांट पानी पी लेता तुंबा भी भर लेता। फिर किसी पेड़ तले पड़ा रहता। खेतो में से बहता मृगजल निहारता।

नाना तरह के विचार मन आंदोलित करते। कितनी-कितनी बातें स्मरण हो उठती। भला बुरा जग बहुत-बहुत देखा था। सुजन, दुर्जन, फक्कड़, श्रीमंत, नाना रंग और रुप के लोग।

वह सब स्मरण हो उठता। कितने ही बार कहाँ हूँ? यह होश खो जाता।मन विपरीत की तरफ ही दौड़ता।

उस चटोर का ऐसा ही है बेहोश हो जाना, बात न मानना बाबा ने कहा था

क्या न सिखाया मनको मैंने
नारायण पर यह न सुने
चाहिये नहीं करना जो
वही कर वह पतन करे

उसकी चंचलता इतनी प्रबल है कि कही न जाये। इतना तरल है कि कल्पना आने के पूर्व इसका मुँह किसी गंदगी में घुसा हुआ मिले। कितना ही शासन करो सुनता ही नहीं। पूरा लतखोर है। फिर-फिर वही पहुँच जाता है गंदगी में।

कम से कम इस तपोभूमी में तो वह चंचलता छोड़े, अनेक साधकों ने जिस रास्ते को बनाया उसपर से चलते हुए तो वह पगलाये नहीं

परन्तु नहीं वह वाहियात पन करता ही है। अबतक कोई एक उद्योग उसके सामने था आज यह कल वह। अब कोई बंधन नहीं उसे। दसो दिशा खुली, छुट्टा है वह। मुझे मेरा ही यह छुट्टापन बहुत अखर जाता कभी-कभी।

दिनभर भोजन नहीं मिलता यह सच। पर रातको माता नर्मदा भूखा न सोने देती थी। कोई न कोई दाता खड़ा हो जाता कहता-

"हर नर्म्मदे।"

"नर्मदे हर।"

"परिकम्मा कर रहे हो क्या?"

"जी हाँ।"

"अरे फिर कुछ सामान दिख पड़ता नहीं है।"

"है ही नहीं दिखेगा कैसे?"

"अरे उस दूकानपर चले जाना। वहाँ सदाबरत मिलता है। आटा, दाल, रामरस मिर्च कड़ुछी भरघी भी देते हैं बेचारे।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मैं बिना हिले डुले बैठा रहता। साश्चर्य वह पूछता

"नहीं जाओगे?"

"जी मैंने व्रत रखा है न माँगने का," हंसकर कहता

"अच्छा ये बात। तब भोजन का परबंध?"

"जो मैया की इच्छा।"

"हमारे घर जीमोगे?"

"मुझे कोई आपत्ति नहीं।"

"तो फिर चलो।"

सामान्यतया इसी तरह का संवाद रोज होता। इसलिये भोजन की चिंता नहीं थी।

बल्कि कोई चिंता ही नहीं थी। ध्यान साधना करता सुबह शाम दिनभर घूमने के सिवाय कोई काम नहीं था। इसलिये मन ऐसा चारों दिशा घूमता यह स्वाभाविक था।

उसपर भी उपाय खोज निकाला।

दिनभर चलता। देह गिर जाने तक। खूब तेज कदम से। आखिर मन भी तो शरीर के अधीन ही रहता है। उसका निवास स्थान इतना थका देता कि मन भी मुरझाकर उसके आश्रय में पड़ा रहे।

परिक्रमावासियों का एक संकेत यह भी है कि नर्मदातीर का हर एक छोटा बड़ा मंदिर एक क्षेत्र है फिर वह कितना भी पास हो वहाँ रात काटना।

नेमावर छोड़ने के बाद जांबुवंती संगम। वहाँ से दो मील दूर गोनी संगम। वहाँ से छह मील ककेडी संगम। वहाँ से चार मील पर छीपानेर घाट। सीलकण्ठ घाट। कोलार संगम। टिमरनी संगम ऐसा सब पास पास। दो तीन घंटे में ही अगला मुकाम आ जाता।फिर स्नान ध्यान धारणा फिर आगे।

फिर से वही उबाता अंतरयुद्ध।

इसलिये सोचा कि वैसे भी परिक्रमा वासियों के अन्य बंधन अपन मान ही नहीं रहे तब यहाँ वहाँ ठहरने का बंधन भी नहीं मानना। बिवाई फटे पैर लिये तबतक चलना जब तक चक्कर आ गिरने को न हो जाये। दिन में एक बार भोजन करने की आदत पुरानी है अब वह रात को मिलेगा ही। मिले। दिनभर चलते रहना। प्रदक्षिणे पदे पदे।

जंगल कोई बड़ा गहन नहीं था। पर बहुत ही मनोहारि था। सफ़ेद छाल के बहुत मोटे तने के पेड़। उसमें ही कहीं-कहीं चिरौंजी के पेड़। बीच की खाली जगह पलास के ठिंगने पेड़ों ने भरी हुई। गर्मी के दिन। इसलिए पलास फूलों से लदे अंगारसे। उन पलास फूलों से सारे ही वनप्रदेश को निरुपम आभा प्राप्त हो गई थी।

तली के पहाड़ी पात्र में से दोनों बाजू को ठोकरें दे-दे बहता नर्मदा जल और इधर ये वनशोभा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्वच्छंद चल रहा था मर्दाना घाट पीछे छोड़। आंवरी घाट तीरथ पर से तालपुरा घाट के लिए बढ़ रहा था। पगडंडी पर गिरे पत्तों को लतियाते।

अचानक सामने से लाल मुँह के बंदरों की बड़ी भारी टोली चली आयी। कितने बंदर? मैं उनको गिन नहीं सकता था। पर सैकडों थे। उन्होंने मुझे देखा। क्षणभर रुके न रुके और किचकिचाये। मुझे उन्होंने घेर लिया और घेरा छोटा होने लगा।

डर गया। उन अरण्य पशुओं से। जहाँ था वहीं खड़ा रहा। एकटक उन बंदरों की ओर देखता। आगे बंदर पीछे बंदर दाँये बंदर बाँये बंदर नाराज। मेरा ऐसा सामने जाना उन्हें जरा भी पसंद नहीं था।

वह झुंड आगे बढ़ रहा था। अधिकतर सब बंदरिया। पेट से बच्चे चिपकाये। कुछ नर भी थे। कुछ बंदर रुक-रुक दाँत दिखाते। आँखें नचा रहे थे। आगे बढ़ रहे थे।

मूर्तिवत खड़ा हो गया। हाथ पैरों में कंपकंपी भी होने लगी। सांस जोर-जोर से चलने लगी।

अचानक उन बंदरियों में से निकल एक तगडा हुप्पा बंदर छलांगते मेरे सामने आया और कोई पांच सात हाथ दूर दोनो पैरों पर खड़ा हो गया। कैसी थी उसकी मुद्रा?

मुझे ब्रह्मांड याद आ गया। राक्षसों के वर्णन पढ़े थे। वैसा ही कुछ था वह। अपने सफेद झक्क दाँत उसने बिचकाये जैसे दामिनी दमक गई। दोनो हाथ लटकते रक्खे थे उसने और मुँह से भुभुःत्कार वह कर रहा था।

कितना बड़ा था वह। खड़ा था तो मेरे सीने तक था। उसकी कंजी दृष्टि से दृष्टि भिडाये जान हथेली पर लिये मैं खड़ा था। मेरा वह अंदाज ले रहा था। वहीं के वहीं वह उठने बैठने लगा जैसे बैठक लगा रहा हो।

मैं निःशस्त्र और हाथ में लठिया जैसी कोई चीज होती भी तो सौ दो सौ बंदरों से घेरा जाने पर उसका क्या उपयोग होता। वे मुझे फाडके ही खाते। चिदियाँ लटक जाती मेरी।

हुप्पा मेरे सामने खड़ा होकर ड़र दिखा रहा है यह देख दस बीस युवा नर मादा मेरे और भी पास आ गये। हमला करने जैसा करने लगे। किचकिच भौं-भौं बढ़ गई। क्षणभर ऐसा लगा कि अब ये सब बंदर चबा-चबा डालेंगे मुझे।

जाने कैसे पर मैं उस हुप्पा की नजर से नजर भिडाये रहा। शरीर रक्षण की प्राकृतिक शक्ति का जैसा मुझ में संचार हो गया। उसी ने मुझे बचाया। अन्यथा पीछे यात्रा करते परिक्रमा वासियों को मेरी चिंदी-चिंदी ही मिलती।

अचानक वह हुप्पा बंदर पास के पेड़ पर कूदा। उसके हिलते ही सब बंदर दौड़-दौड़ पेड़ों पर चढ़ गये। देखते-देखते वानरदल ओझल हो गया। सारा प्रदेश निर्वानर हो गया।

लंबी सांस लेकर मैंने कदम बढ़ाया। बोल फूट पड़े मैया बस तेरी इच्छा।

कहा तो सच ही था मैंने अपने आपसे कि स्वच्छन्द घूमूँगा पर स्वच्छन्दता से ताजापन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हिराय गया। रोज वही पगडंडी कूटना। वेसी ही धूल वही सफेद रेत उडाते मैयापर जाना। नहाना और फिर चलते जाना। झाडी कांटा बचाते हुए। वही आदमी वही उनके प्रश्न

"अच्छा साततुमडी से आये?"

"जी हाँ।"

"कहते हैं कि सो तो बड़ी दूरी पर है जहाँ से।"

"जी हाँ।"

"बीच में पडाव हैं दूचार। वहाँ पर मुकाम नहीं किया।"

"जी नहीं।"

"क्यों कर? और परिक्रमावासी तो करते हैं।"

"जी हाँ लेकिन!"

लगता यह जग विपरीत करना भी एक वाहियात बात ही है। मौन रखता तो अच्छा होता। इन प्रश्नों को उत्तर नहीं देने पड़ते। वे भोलेभाले ग्रामीण आतिथ्यशील है ऐसे सारे प्रश्नोंपनिपद के बाद खाने की पूछताछ करते हैं इसलिये ठीक है। अन्यथा केवल इस प्रश्नों की गोलीबारी से बचने परिक्रमा आधे पर ही छोड़नी पड़ती।

इस एकसारता से उपजती ग्लानी से बचाया रेवा मैया के प्रतिक्षण नवतामय रुप ने।

उसका प्रवाह एक कूट है। वह दूसरी नदियो जैसा नहीं है। मानो पाताल काटते वह दौड़ रही है। दोनो बाजूकी चट्टाने आडी काटती हुए। इस कटान से उस चट्टान का जो रुप निखर आता अपूर्व-अपूर्व वह देखते ही बनता।

कभी उन चट्टानों का वर्ण चमकता हरा, कभी तोतिया, कभी लाल कभी मोतिया इन नाना रंग चट्टान के कडे पत्थर अपनी जगह बने रहते। आसपास की मुलायम मिट्टी बह जाती। और फिर सश्रद्ध को लगता कि ये सब पाताल में से निकले शिवलिंग हैं।

स्वयंभू।

मन गाने लगता

गणानां पतये नमो नमः

उस दिन कुछ सर्दी सी लग रही थी। भोर उठ नहाया नहीं। सोचा धूप चढ़ आने पर नहा लूँगा। दस ग्यारह का अनुमान था। मैया चट्टानों मे से बह रही थी। उसमें उतरा। तीरपर कुछ दूर साताआठ झोपडे ही थे। चार दो चौपाये पानी तक पहुँचे थे। शांति से पानी पीते वे खडे थे। भरपेट पीने के बाद उन्होंने मुँह उठाये। पानी टपटपा गया उनके मुँह से। फिर वे पीछे मुडे और धीरे-धीरे कगार चढ़ते ओझल हो गये।

स्नान किया। फिर तीरपर नर्मदाष्टक पाठ करते बैठा एक चट्टान की कगार में कुछ साया पकडते। वहाँ से मैया दिखती थी। तीर से मैं शायद दिख नहीं सकता था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

कह रहा था

त्वदम्बुलीन दीनमीन दिव्य संप्रदायकं
कलो मलोघ्रभारहारि सर्वतीर्थनायकं।

एक स्त्री कगार उतरती सी दिखी। सिरपर मिट्टी का पात्र। वस्त्रोंसे वनकन्या जान पड़ती थी। नीचे घाघरा था पीछे बंधी चोली। एक एक वस्त्र। पास आने पर जाना वह प्रौढा नहीं यौवना है।

जलप्रवाह के पास पहुँची। घडा उसने घिस-घिस धोया। उसे औंधा कर तीर पर रख दिया।

फिर ओढनी उतार रख दी। इधर-उधर देखा उसे कोई दिखा नहीं। चट्टान बीच बैठा मैं भी नहीं। उसने पीछे हाथ ले जाकर चोली की गाँठ खोली। वह घडे पर रख दी फिर पानी में वह उतर पड़ी नीचे बैठ घाघरे की गाँठ छोड़ वह भी उसने सिर से उतार लिया और किनारे पर फेंक दिया।

स्वच्छंदता से वह देह रगडने लगी।

मैं उसकी निर्भयता ठगासा देख रहा था। आँखें हटा लेना जरुरी था। बंद तो करनी ही थी। परंतु उसकी निर्भयता में कुछ ऐसा विलक्षण-विलक्षण था कि मन का पाप जल जाने लगा।

कमर तक पानी में वह खड़ी रही। हाथ, छाती, मुँह उसने पानी उडा-उडा साफ किये।

कैसी थी?

जैसे किसी शैल मंदिर में उकेरी पुष्ट नवोढा। दर्पण में रूप देखती। नारी देह का वह अकलंक, निष्पाप दर्शन होते ही मन में उछलते विकार अपनी-अपनी जगह पर बैठ गये। बुझ गये। मुँह से उद्‌गार निकले।

रेवाकन्ये तूने अपने अनावृत्त देह का जो दर्शन कराया उसे देखते ही चित्तवृत्ती अधीर हो उठी थी।

निमिष बाद लज्जित हुआ ऐसा लगा कि अपना काला मुँह दोनो हाथों नोच ड़ालू।

छी छी यह मैं क्या देख रहा हूँ।

लेकिन दृष्टि हिलने को तैयार नहीं थी।

फिर समझ पड़ी कि रे मन इतना दुखी होने को भी उसमें क्या है?

नागर संस्कार हीन एक वनकन्या ने अपने वस्त्र उतारे हैं। उसकी समझ भी है कि कोई उसे देख नहीं रहा।

अजानते उसने मेरी गिनती तरुपाषाण में की है।

ठीक है। तो अब वह पाषाणता का निर्वाह तू कर। उस निर्भयता का आदर कर। स्थिर पत्थर बना रह। उसकी स्नान समाधि भंग न कर। पापी इतना तो कर ही कर।

वह एक वनदेवता ही है। उसके रुप दर्शन से पगलाओ नहीं। उसके निर्भयता की राखी सिर पर मलो। उसे वैसे ही अपने वस्त्र पहन लौट जाने दो।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नीचे बैठ पानी बाहर निकलते उसने घाघरा हाथ में लिया सिर से उतार उसे उसने ओढ लिया। खड़ी रह गाँठ लगायी। वैसे ही चोली पहनी। ओढणी ओढ ली। घडा भरकर सिर पर लिया। मुड़कर रेत उड़ाते वह कगार चढ़ ओझल हो गई।

उसके ओझल होने के बाद उठा और राह चलने लगा बार बार उस अनोखे रुप का स्मरण होता रहा।

ब्रह्माणी घाट पास आने को हुआ तो मन की उत्सुकता दोनों किनार तोड़ बहने लगी।

काका ने कहा था

वह बालयोगी शंकर दक्षिण से निकला।

श्री गुरु को खोजने

इधर गोविन्दयोगी उसकी राह देख रहे थे।

रेवातीर के गुफा में बैठे। जैसे वे इस हृदय का उस हृदय को समर्पित कर शक्तिपात करने को आतुर थे।

एक दिन प्रातः वह गुफा के सामने उपस्थित हो गया। दोनों ने एक दूसरे को पहचाना। निशानी पट गई। बालयोगी उनके चरणों पर गिर पड़ा। उसे उठा सीने से लगाया। गुफा में ले गये।

गुफा में से बालयोगी बाहर आया वह पूर्ण पुरूष होकर। फिर उसने उस शक्ति से त्रिखंड पर सत्ता चलाई।

उच्छन्न हो रहे वैदिक धर्म को उसने फिर से अपनी जगह स्थापित किया।

वह गुफा आँखें भर कर देखने की निरतिशय इच्छा थी। ब्रह्मणी घाट पहुँचते अंधियारा हो गया। इसलिए उस रात किसी तरह मन की इच्छा को दबाये रखा भोर होते ही गुफा की ओर दौड़ा

बहुत निराशा हुई। सोचा था स्थान ऐसा होगा कि उस स्थानपर से हलकी बयार चले तो नास्तिक को भी तपश्चर्या करने की इच्छा हो जाये। चलते ही रहने वाले में ठहरने की आस जगाये। विरक्त की विरक्ति को चेताये। वहाँ साधक रहते होंगे। यूँ ही जाने आने वाले वहाँ नहीं होंगे। अमृतोपम फल और मूल वाले पेड़ होंगे। धूप वहाँ सौम्य होगी।और पशुपक्षी ज्ञानदेव ने जैसे कहा है वैसे

जलजीव हंस
दो चार सारस
कोई एक समय रहे
चाहे हो कोयल

पर क्या? वहाँ तो कुत्ते लोट रहे थे। उसे एकदम अद्यतन रुप दिया गया था।

उदास हो पीछे मुडा रेवातीर जा पहुँचा। वहाँ एक फक्कड मिला। नर्मदेहर, नर्मदेहर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

हो गया। बगल का ग्रंथ देखकर बोला

"पण्डत हो।"

"विद्यार्थी हूँ।"

"ग्रंथ कौन है?"

"श्रीमदाचार्य जी का गीताभाष्य।"

-साश्चर्य उसने कहा

"पढ़ चुके हो?"

"प्रयास किया है।"

फिर वह पास बैठा। उसने भी थोड़ा वेदान्त पढ़ा था। सारी पूछताछ हो जाने बाद बोला

यहाँ गाँव के परे एक बगीचा है। वहाँ एक महात्मा रहते हैं।

"महात्मा। क्या बैरागी हैं?"

-नहीं, हैं तो विरक्त लेकिन पहुँचे हुए हैं। बहुत साल पहले देखा था तब भी बाल पके थे। कल परसों फिर दर्शन किये। कोई फर्क नहीं हुआ है। बड़े शांत हैं चले जाइये कुछ न कुछ लाभ तो होगा ही

उठ बगीचा पहुँचा। बेल के पाँच पच्चीस पेड़। बीचोबीच एक कुटी कितनी साफ। चित्र में दिखती है वैसी। बाग भी उतना ही साफ किसी भी बेल पेड़ के नीचे तिनका पत्ता नहीं। पीछे एक छपरी उसमें घास खाती पुष्ट और सुंदर गाय। ऐसा लगा कि किसी मुनी के आश्रम में प्रवेश कर रहा हूँ।

इतना सुख हुआ। अंतरतम से। जैसे कि वह गोविंद यती का ही तपश्चर्या स्थल हो। केवल स्थान बदल गया हो इतना ही।

बहुत धीरे आहट न करते प्रवेश किया। कुटी के पास आया। सब शांत था। अन्दर झांका। भगवी कफनी पहिरे सिर पर जटाभार बांधे। सारे बाल चांदी से सफेद। रक्तिम गौर वर्ण के महात्माजी अंदर मचिया पर बैठे थे। सामने था रामचरित मानस। तल्लीनता से पाठ चल रहा था। मैं धीरे से कुटिया में गया नमस्कार कर एक कोने में बैठ गया।

आधा कलाक के आसपास तक उन्होंने मुंडी उपर नहीं की। उसके बाद ग्रंथ पर माथा नवाया, वह कपड़े में बांधा। उसे स्थान पर रख कर ही मेरी तरफ देखा।

मैंने ही कहा

"हर नर्मदे महात्माजी।"

"नर्मदे हर। कहो गुसांई क्या परिक्रमावासी हो।"

"जी महात्मा।"

"कहाँ से चल पड़े?"

"नाभिस्थान नेमावर से।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"कै दिन भये?"

"याद नहीं रहा। लेकिन दो या तीन सप्ताह हुए हों।"

साश्चर्य महात्मा बोले

"अरे गुसांई बहुत चलते हो क्या? शायद खडिया-वडिया का झंझट नहीं पाला है।"

"जी नहीं।"

"ग्रंथ है कोई?"

"जी गीताभाष्य है। वेदान्त का विद्यार्थी हूँ।"

महात्माजी थोड़ा आगे सरक आये। पूछा

"किसके पास पढ़ा है? को है तुम्हारे गुरु?"

काका का नाम बताया। उपाधियाँ बताई। वहीं के वहीं हाथ जोड़कर महात्माजी बोले

"बहुत बड़े विद्वान हैं।"

"जी हाँ। महात्मा। आपके बारे में भी बहुत कुछ सुना है।"

"अरे नहीं गुसांई। हम तो श्री रघुनाथ जी के चरणों की रजतक नहीं है

कुछ मजाक सूझा। पानी उथला था छलक रहा था।"

"महात्माजी एक शंका है। अनुज्ञा हो तो पूछूँ?"

"जी हाँ।"

"जे नर्मदातट शिवभूमि है। यहाँ वास्तव्य करने पर भी आप रामचरित मानस को जीवन सर्वस्व मानते हैं।"

महात्मा मंद मुस्कराते कुछ देर चुप रहे।

"देखो जानता हूँ कि परिहास कर रहे हो वेदान्तशास्त्र तो कहता है कि

सर्वविष्णुमयं जगत।"

"शिव और विष्णु ऐसा कोई भेद नहीं करते। सर्वदेव नमस्कारः केशवं प्रति गच्छति।"

फिर पीछे बंधे बिस्तर पर लेटते दोनो हाथों का आधार सिर को देते हुए महात्मा बोले

"देखो गुसांई हम भी इस भेद को प्रश्रय नहीं देते। वेदान्त शास्त्र कहता है कि द्वितीयादंवै भयं भवति। लेकिन 'तवैवाहम' भी तो कहा है। हम तो रघुनाथजी की शरण लेने में जीवन की कृतार्थता मानते हैं।"

फिर उठ बैठते बोले एक प्राचीन कथा सुनोगे

"जी हाँ।"

एक भक्त ने हनुमानजी को श्रीरामनाम का जाप करते हुए देखा उलाहना देकर पूछा

"हे हनुमानजी अब द्वापर युग है। इस युग के देवता तो श्रीकृष्ण हैं उनका स्मरण क्यों नहीं करते?"

हनुमानजी मुस्कराकर बोले

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"हे भक्त जानता हूँ कि तत्वतः दोनो एक ही हैं कोई भेद नहीं है।"

'तब।'

हनुमानजी ने एक श्लोक पढ़ा

श्रीनाथे जानकीनाथे तत्वतः एक रुपता
तथापि मम सर्वस्वं रामः कमललोचनः

"मेरा हृदय बिलकुल संकरी जगह है। वह कमललोचन रघुनाथजी को सौंप दी है। अब वहाँ श्रीकृष्णजी को बिठाऊँगा भी कैसे? कहाँ बिराजेंगे। क्या करेंगे?"

"समझ गये न।"

नीचे झुक नमस्कार किया और कहा

"जी हाँ महात्मा अब कोई शंका नही रही।"

वे मुस्कराये थोड़ी देर बाद बोले

"लो हमने पूछा ही नहीं कि भोजन का प्रबंध क्या किया है?"

विनय से कहा

"सो अब तो मैया की इच्छापर निर्भर हुआ करता है।"

"सदाबरत नहीं जाते!"

"जी नहीं।"

"देखो गुसांई हम कुटिया बांधकर बैठे हैं आपका स्वागत करना हमारा कर्तव्य है। लेकिन एक समस्या है।"

'कहिये।'

"बिल्ववृक्ष के फल और गौ का दूध यही हमारा आहार हुआ करता है।"

"जी महात्मा आप ज़िस आहार को पाकर इतने साल गुजारते आये वह मेरा भी काम एक दो दिनों के लिए जरुर निभायेगा।"

"ये बात। चलो चिन्ता मिट गई। क्या रहोगे दो दिन?"

"अगर आपकी अनुज्ञा हो तो।"

"हाँ-हाँ गुसाई हमें कोई आपत्ति नहीं है।"

दो दिन उस आश्रम में रहा।

उतने शांत, सच्चरित्र, कार्यनिवृत्त, बुझी आग से निरुपद्रवी सत्पुरुष इस जीवन में बहुत कम मिले। बार-बार नाना तरह से प्रयास किया पर उस पुरुष ने स्वयं के लौकिक जीवन के सम्बन्ध में मुख से एक शब्द भी नहीं निकाला। लौकिक जीवन का तो छोड़ो पारमार्थिक जीवन के सम्बन्ध में ही कुछ कहते। नमः शिवाय। कुछ भी पूछूँ। वे रामचरित मानस की ओर अंगुली करते। दिनभर उसका ही पाठ चलता रहता।

सुबह शाम गाय के दो धन का दूध निकालते दो बछिया के लिए छोड़ देते। वह दूध बिना तपाये पीते उसके साथ बेलफल।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बेलफल भी कितने बड़े? छोटे नारियल इतने। पककर नीचे गिरे हुए। उसे फोडना थोड़ा चरपरा मधुर ऐसा उसका स्वाद। अंदर पतला गोंद जैसा रस वह खाना। बीज मैं थूकने लगा तो महात्मा बोले

"ऊँ हूँ गुसांई थूकिये नहीं निगल जाइये।"

"बिना चबाये।"

"जी हाँ उदर शुद्धि का बहुत उत्तम साधन है।"

शाम मेरे देश के संतो की चर्चा निकली। महात्मा ने ज्ञानेश्वर, तुकाराम के सम्बन्ध में सुना था परंतु अभंगो से परिचय नहीं था। कितने ही आशय गर्भ, भक्तिरस से भरे पूरे अभंग अर्थ सहित मैंने गाकर सुनाये।

ज्ञानदेव की बिरानी जब गाकर सुनाई तब जैसे तार से तार मिली। आँखों से आँसू बहाते हाथ जोड़े महात्मा जी बैठे रहे। बार-बार वे राम का स्मरण करते रहे।

मेरे रुक जाने के बाद बोले

"इस भक्ति के अमृत समुद्र को त्यागकर आप वेदान्त की घटपटा में क्योंकर घुस पड़े।"

मुस्कराकर मैंने कहा

"देखिये महात्माजी वेदान्त का अध्ययन इसलिये कर रहा हूँ कि भक्तिशास्त्र में विश्वास दृढ हो जाये। वेदान्त मार्ग को जानकर फिर निश्चय हो जायेगा कि भक्तिरेव गरीयसी।"

"ये निश्चय अभीतक नहीं हुवा?"

"अगर निश्चय न हुआ होता तो रेवा मैया की परिक्रमा करने क्योंकर निकल पड़ता।"

"समझ गये।"

शाम को दो चार गांववारे महात्माजी के दर्शनों को आये रात हम दोनों खुले आकाश नीचे बैठे रहे। मैंने एक शंका पूछी

"महात्माजी एक छोटीसा शंका है आप बुरा न मानिये।"

"जी नहीं पूछियेगा।"

"महाकवि तुलसीदासजी परमभक्त थे। तब फिर आपने भक्तिसुख में तल्लीन रहना त्याग कर रामचरित मानस की सृष्टि क्यों कर की।"

क्षणभर महात्मा चुप रहे फिर बोले -

"देखिये गुसांई तुलसी दासजी के रामकथा व्याख्यान का प्रयोजन मानस के प्रारंभ ही में लिख रखा है। कहा है कि-

स्वान्तःसुखाय तुलसी रघुनाथगाथा
भाषानिबन्धुमति मंजुलमातनोति

समझ गये न। भक्ति का जो अनुपमये सुख अंतर में हिलोरे लेता रहा उसी का पुनः प्रत्यय पाने के लिए आपने मानस की रचना की। बल्कि ये भी कह सकते हैं कि आपका "स्व" जगदाकर हुआ था। मानस रचना का हेतु यही है कि उसे संतोष हो।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दो दिन बहुत आनंद से गुजरे। तीसरे दिन बिदा लेते थोड़ा भारी गया। हाथ जोड़ बोला

"बस अब आज्ञा दीजिये महात्माजी।"

"चल पड़े।"

"जी हाँ जाना जरुरी है। इच्छा तो यह हो रही कि परिक्रमा छोड़ आपके गौ की सेवा करते आपका आंगन बुहारते यह छोटीसी जीवनी समाप्त हो जाये ऐसा करूँ। लेकिन क्षमा किजिये महात्मा बड़ा चंचल हूँ। कह नहीं सकता कि इसी इच्छा को निभाता रहूँगा। अतएव कुछ न कुछ करते रहना पड़ेगा फिर भी जब कभी अस्वस्थ हूँगा तब इन दो दिनों की याद अवश्य करूँगा। अभी तो चलता हूँ।"

महात्माजी मेरे पास आये। मुझसे गले मिलते बोले -

"गुसांई दक्षिण-उत्तर का कितना मधुर मिलन रहा यह। हे प्रभू!" बार-बार पीछे घूमकर देखते आगे बढ़ने लगा।

नर्मदा केवल बहती रही।

उसे ज्ञात भी नहीं कि उसके तीर पर अलाने-फलाने कुछ काल अपना अधिकार कहनेवाले हैं। किनारे का कुछ भाग ब्रिटिश हद में कुछ पर होलकर की सत्ता। कुछ पर भोपाली नबाब का ताबा। कुछ और भी ऐसे ही।

अब अमुक एक रियासत की हद में आ गये हैं यह परिक्रम्मावासी जाने भी कैसे? सम्बन्ध भी क्या? इधर आपका चाहे रामराज्य हो उतनी वह नर्मदा तीर की राह हमारे लिए छोड़ दो बस्स। यह चाहते परिकम्मावासी।

परंतु वैसा होता नहीं था।

बिवाई बहुत फट गई। अंगुली घुस जाये इतनी बड़ी हो गई। 'बड़ारूई' के दूध से भी कुछ लाभ न हो। फिर मन में आया बिवाईयों में भिलावा नहीं लगाना ऐसा कोई नियम परिक्रमावासियों के लिये नहीं था।

एक छोटासा गाँव। दोपहर कोई दुकानदार दाता खोजते हुए निकला। दो एक भिलवा दे दे ऐसा।

एक बिलकुल छोटी दुकान दिखी उसे भिलवा का प्रयोजन बताया। उसने ड़िब्बे खोज दो तीन भिलवे खोजे पर बिना पैसे वह भिलवे न दे।

अब उसको पैसे कहाँ दूँ। चिंता में पड़ा खड़ा था। एक मियाँ सामने आकर खड़े हो गये। मुझे देखते ही कड़ी आवाज में पूछा

"क्यों बे क्या कर रहा है?"

"कर रहा हूँ? कुछ भी नहीं।"

"अच्छा बड़ा [illegible] मुर्दा मालूम होता है। साले आया कहाँ से?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"परक्रम्मावासी हूँ।"

"हाँ।· तब सामान कहाँ है? खड़िया थाली लोटा।"

"है नहीं।"

"तब फिर तू कैसी परिकम्मा कर रहा है रे? चल चौकी पर चल।"

गरदन पकड़ी और ले चले चौकीपर। भोपाली पुलिस था। माने अब भोपाल स्टेट से जा रहे थे। रास्ते में वह जिसे तिसे बताता

"देखा साले को। कहता है कि परिकम्मा कर रहा हूँ। सामान-वामान कुछ भी नहीं। साला उचक्का है। कहीं चोरी-ओरी करके भागा है। सूरत देखो न? सालेको मारने को भी जी नहीं करता। साला एक थप्पड़ में मर जायेगा। लेकिन झूठ बोलता है।"

मैं परिकम्मावासी हूँ यह उसे किस तरह बताऊँ यह समझ में नहीं आ रहा था। वह दृष्टि सृष्टि वादी होगा। बाप दिखा नहीं तो श्राद्ध कर। उसका भी एक तरह से ठीक ही था। वह भी भरोसा किस बात पर करता।

गले में कुछ एक मणियों की माला थी। उतना ही एक परमार्थ मार्ग का चिह्न था। वह दिखाया तो वह बोला

"ऐसे ऊँट के लेंडे रस्से में पिरोकर तो कोई भी पहन लेता है।"

चौकी में पहुँचे। वहाँ एक कायस्थ मुंशी थे। उन्होंने पूछा-

"कहाँ से लाये इस बन्दर को पकड़कर?"

"बाजार से।"

"किसी का कुछ उठाया क्या?"

"सूरत देखो उठानेवाले की। अरे ये क्या चोरी करेगा। हाँ बस किसी की चवन्नी, अठन्नी। हाँ देखूँ जिस्मपर क्या-क्या निशानियाँ हैं, लिख लो जी।"

देह के सारी निशानियों को लिखा गया। नाक का तिल। माथेपर चोट, बाँये हाथ पर के तीन-तीन तिल। बाँये कलाई पर काटे जाने का चिह्न। फटा-फटा शरीर, पैर। लंबी नाक गड्ढे में गई हुई आँखें। आखिर में उसने कहा

"मनहूस हुलिया।"

इतना होते करते मुंशीजी की निगाह मेरे बगल में दबे ग्रंथ पर पड़ी। उसने पूछा

"क्यों बे पुस्तक किसकी है? कहाँ से लाया उठाके?"

"जी मेरी अपनी है।"

"आहाः मियाँ पुस्तक भी रखते है। क्या चोरी करने के तरीके छपे हैं इसमें क्या देखूँ?"

मैंने उसके हाथ में भाष्य रख दिया। उसने खोला। देखा चकित बोला-

"अरे ये तो गीता दिख पड़ती है।"

"जी हाँ गीता भाष्य है।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"पढ़ सकता है?"

"लाइये पढ़ के बताऊँ।"

भाष्य लिया और पढ़ना शुरु किया। आश्चर्य से वह टुकुर-टुकुर देखने लगा। धृतराष्ट्र उवाच कर्मक्षेत्रे यहाँ तक पहुँचा फिर ग्रंथ बंद किया। आँखे बंद कर पहला अध्याय सुनात चला गया।

कायस्थ मुंशी उठा बोला

"आये कहाँ से महात्मा कहाँ के हो?"

"पुणें के करीब आलंदी है।"

"परिकम्मा कर रहे हो तब सामान क्यों नहीं रखा।"

गुस्से में था बोला

"भोपाल रियासत का कानून थोड़े ही है कि बिना खड़िया के किसी ने परिक्रमा नहीं करना।"

उसने मेरे दोनों हाथ पकड़े, बोला -

"माफ कीजियेगा। मियाँ का भी कोई दोस नहीं हैं। वह आपको जाने पहचाने कैसे?"

फिर भिलवा मिले। बहुत सारे। बड़े आग्रह से घर ले गया। खिलाया पिलाया। बच्चों को बुलाकर सबसे मुझे नमस्कार करवाया।

सिक्का खरा हो तो भी पारखी उसे परखे तो बात बने।

इधर चार पाँच दिन से कुछ चमत्कारी भावनाएँ उठ रही थीं। पैर चल ही रहे थे। रेवा के किनारे के ढ़ाल पर चलते-चलते वे ऐसे हो गये थे कि शायद समतल पर चल ही न पाये।

दिनभर चलता जितना खींच पाता। शाम थक नर्मदा माई के गोद में घुस पड़ता। स्नान से श्रम परिहार हो जाता। कोई आकर पूछताछ करता। भोजन कराता। किसी मंदिर के ओटले पर बैठ रात को ध्यान करता। वहीं सो जाता। भोर उठ फिर प्रदक्षिणा व्रत शुरु। उसमें खंड़ नहीं था।

लेकिन एक प्रबल इच्छा अंदर से बाहर फूट पड़ना चाहती थी।

वज्रपात या ऐसे ही किसी नाम के एक विधि के बारे में कहीं पढ़ा था। जीवन जिसने भोग लिया है वह व्यक्ति वह विधि कर सकता है। एक छोटासा होम। उसमें सारे संबंधो की आहुति ड़ालनी। यज्ञोपवीत भी उसमें ड़ालना।

किसी एक तीर्थ पर ऊँची कगार है। श्रीवर्धन पास के हरेश्वर में या कहीं। एक स्थान गंगा पर भी है। एक हिमालय में भी है।

सब पाश से मुक्त होकर वहाँ से शरीर झोंक देना आत्महत्या का दोष लगता नहीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

फिर से जन्म भी लेना नहीं पड़ता। आवाजाही छूट जाती है।

नर्मदा का यह इतना विराट रुप फैला हुआ है। चारों ओर। उसे न अंत न पार। कभी वह अंधियारे की चादर ओढ़े। तो कभी सुनहरे प्रभा से लखलखता। कभी धूप से जल-जल जाता। कभी संध्या को एक अफूट उदासीनता से ढंका रहता। इसमें से एक भी रुप गौर टिका नहीं रहता। ज्ञानेश्वर ने कहा

क्षण पूर्व का जो अंग
पुराना होकर वेग से
छोड़ दृष्टि जाये
नवैया रुपा

उस ईश्वरीय दृष्टी जैसा वह अपरंपार है ध्यान में भी समाता नहीं। फिर यह क्या बुरा है शरीर विसर्जित करने को ऐसा दूसरा स्थान मिलेगा नहीं।

जीवन में तृप्ति है क्या?

अतृप्ती भी नहीं है। खूब देखा। भला भी देखा। साधू देखे। सन्त देखे। सत्पुरुष देखे। राजनीतिज्ञ देखे। वीर देखे। करतबगार देखे। वैसे ही अन्याय और अत्याचार भी देखे। पतन के अंतिम ब्रिन्दु तक जाकर लौटा। सन्मार्गपर चला। मन अस्थिर है। जाये नहीं वहाँ जाता है देखे नहीं वहाँ देखने छटपटाता है। करे नहीं उसकी चिन्ता करता है। उसे भी रास्ते पर लाने का प्रयास किया। सफलता मिली, नहीं मिली यह बात अलग। प्रयास लेकिन अवश्य किया।

जीवन में कहीं भी मायापाश बंधे नहीं। घरवालों ने भी कोई आशा नहीं रक्खी है। यह एक पैसा भी कमाने वाला नहीं इस सम्बन्ध में उन्हें कोई शंका नहीं है। उस तरफ से मुक्त हूँ।

कोई मेरे लिये कोर भिगोने वाला नहीं। आँसू बहाने की बात तो बहुत दूर। किसी का जिया-हिया मेरी याद में पड़ने वाला नहीं। मेरा शव किसी के हाथ लगा तो कोई उसे पहचान न पायेगा। इतना ही कहेगा कोई फक्कड़ था मर गया बेचारा। बस इतना ही।

अतः यदि देह स्वेच्छा से मरणाधीन करना है तो इससे उत्तम समय दूसरा नहीं होगा।

कह दूँ-मित्रों बहुत आनंद रहा। बस हम ठहरे जाते हैं। आप बढ़ो। सारे शुभ संकेत आप के लिए अर्पण।

ज्ञानदेव कह सुखी किया देवा
पाद पदम पासे रखो निरंतर

मैं भी ऐसा ही कहूँ क्या हर्ज है। उस ब्रावनकस की श्रेष्ठता अपने राख के ढ़ेले से नहीं। पर ज्ञानदेव निश्चित ही नाराज नहीं होंगे।

ऐसा बार-बार सोचता रहा। एक बार पानी में उतरा भी। फिर लौट आया।

दूसरी बार एक पत्थर पेट से पकड़ डुबकी लगाई।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

फिर उसे वैसा ही छोड़ ऊपर निकल आया।

किसके लिए क्या कहूँ आया अवश्य।

एक दिन पहले रामपुराघाट पर मुकाम था।

हिसाब लगाया हरणी संगम यहाँ से अठारह मील दूर है। शरीर का रोना तो हमेशा का ही है। अब उसका क्या करना। उठा और रेवास्तोत्र पाठ करते तडातड चलने लगा। पैर अपना काम करते रहे आँखें चहूँ ओर निरखती रही।

दोनो तरफ सेमर, चिरौंजी, बीजकली का अच्छा का जंगल। ड़र लगे इतना घना नहीं। कोई वन चमेली पेड़ पर चढ़ अपने हाथ पाँव दूसरे पेड़ तक उन बंधूओं की जैसे भरत भेट करवाती हुई।

नर्मदा तीर पर से कितने ही चलते हैं। राह केवल परिक्रमा वासियों की पैतृक सम्पत्ति तो नहीं। गाँव खेड़े के ग्रामीण भी इसी रास्ते का उपयोग करते हैं। कोई लाड़ो कन्या ड़ोली में बैठ पहिली बार सासरे जा रही होती। उसके साथ में कोई बहिना-सखी। भली भारी मूँछें कल्ले रखाये कोई भाला लिये साथ में न हो ऐसी कसम तो ली नहीं जा सकती। राह वैसी भी संकरी। भोई उस रास्ते डोली लिये अच्छी तरह चल भी न पाये। फिर भी वे हुंकार भरते डोली का भार वहन करते इसी रास्ते आवाजाही करते। मैया का नीला नितल जल निरंतर दृष्टि के सामने रहता ही।

कैसा होता है यह कोई मिले कोई बिछुड़े कोई हो कोई न हो रेवामाई अपनी बह रही है। गाँव के बाद गाँव पीछे पड़ते जाते हैं तब भी।

मैया तीर के किनारे के उन गाँवों के मिट्टी के घरों में इतनी चमत्कारी समानता है कि किसी एक गाँव का नाम छिनकर दूसरे गाँव को चिपका दिया तो भी पाच पचास घरों के वे दोनों गाँव कोई शिकायत नहीं करेंगे। बहुत हुआ तो कहेंगे चलो एकसार जीवन में कुछ बदलाव तो आया। मनोरंजन ही होगा उनका उससे।

दिन बीता। संगम पर आ खड़ा हुआ। घुटने से भी उपर तक पैर मिट्टी सने थे। पहिले मैया जल में पत्थर पर बैठ हाथ पैर चकाचक धोये।

धोते-धोते ध्यान शरीर के अति दुबलेपन की ओर गया। बड़ा विचित्र लगा। बाईस तेईस का मैं रोज ये दुबले हाथ और पैर देख रहा हूँ। कितनी ही बार चोट चपेट खाये पैर। कांटो से छिले। ठंडक से फटे। धूल की कितनी ही पर्तें चढ़ी। घुटनों तक कितने ही जखमों के चिह्न।

पंजे मेरे छोटे। उनके उस जनानीपर के कारण कितनों के बोल सहे। वे किसी को दिखे नहीं इसलिये उन्हें ढ़ांक रखने की चेष्टा की। मारे लाज डूबा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बहुत बचपन में भी देह पर सिकुड़ने थी। ताजगी ऐसी कभी थी ही नहीं। बिलकुल सुदामजी। पिताजी तो पापी पितर ही कहा करते रहे। फिर उसमें पंजे छोटे किसी कन्या जैसे।

यह दुर्बल मरीयल शरीर लिये घूमना चालू है। मन को समझाया। कि मरीयल है वही ठीक है दौड़ने भागने में सरल। फालतू में भारी बोझ ढोने को कोई काम नहीं।

"ब्रह्मचारी जी आपके पैर कितने छुटके हैं।"

दचक कर आवाज की तरफ देखा। कोई एक मेरे फटे चिरे पंजो को निहार कौतुक से हंस रही थी।

वेश परिक्रमावासी ही था। एक सफेद मैली साड़ी सांवरी मुद्रा कोई बड़ी ध्यान में रह जाये ऐसी नहीं। देह भी मुट्टीभर। आँखों में समा जाये ऐसी नहीं।

ये ऐसी भी मेरे छुटके पंजों का मजाक बनाये। गुस्सा आ गया थोड़ा बोला -

"देखिये माई आपके पैर भी बहुत बड़े नहीं कहे जा सकते। अगर होते तो मेरे आपको देता आपके मैं ले लेता।

झूठा विस्मय दिखाते उसने दोनो हथेली मुँहपर रखी। और कहा

"मैया री मैया रूठ गये सायत।"

उसी स्वर में बोला

"आपने आत ही रुठवानेकी ही की थी। जो भी हो आखिर भगवान ने छोटे ही दिये हैं, मैं क्या करूँ? बताइये - करूँ भी क्या? कुछ उपाय थोड़े ही है।"

और वह हँस पड़ी। हँसी क्या? सारा दिन सुंगधित हो गया। ऐसी मंजुल हंसी कभी देखी सुनी नहीं थी। उसकी तरफ देखता रहा विस्मय से। हँसी और बोली

"अरे भाई परिक्रमावासी हो। फक्कड़ों ने इतना क्रोध नहीं करना। पहले भी एक बार देखा था तभी तुम्हारे छोटे पैर देखकर अचरज हुआ था। फटे हुए देखकर हिरदा पसीजा भी। अब अकेले में भेंट हुई तब कह ड़ाला। माफी माँगती हूँ भाई।"

पिघल गया बोला -

"मैंने ये थोड़े ही कहा है कि माफी माँगो। लेकिन पहले देखा था कहाँ पर?

"हरे राम लिखकर थोड़ेही रक्खा हैं मैंने कि कहाँ पर देखा था।"

आग्रह से कहा

"बात यों टाली नहीं।"

फिर से हँसते बोली

"केवल नन्हें पैर के कारण तुम्हारी ओर ध्यान गया ऐसा नहीं।"

"फिर।"

"आपका संस्कृत उच्चारण। महाराजजी कह रहे थे। पानी से भरे पतेली पर चोट करो वैसा स्वर है। एक-एक अलग-अलग बीन लो। ऐसे स्वच्छ उच्चार हैं आपके।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"पर सुने कहाँ थे?"

"फिर वही। कब और कहाँ भेट होती है। यह स्मरण में भी तो रहे। हाँ! पर आप एक मंदिर के ओटले पर बैठे थे पैर हिलाते, आँखें बंद किये। कर रहे थे स्तोत्र पठन। मेरा हाथ दबाये महाराजजी ने आपका स्वर और कहने का ढंग दोनों की तरफ मेरा ध्यान खींचा था। पर वह रहने दीजिये। यह तो बताईये आप आये कहाँ से।

"रामपुरा घाट।"

अचरज से फिर मुँह ढांपे बोली

"बापरे बाप वह पंधरह-बीस मील पर है।"

सही हिसाब बताया - "अठारह मील।"

"खाना-पीना।"

इस बार हँसने की बारी मेरी थी। मेरा हँसना लेकिन उसे चुभा होगा। आग्रह से पैर बढ़ाते बोली।"चलिये तो जल्दी उठिये। पंजो पर अभिषेक करते न बैठिये। रसोई तैयार हैं। पांत बैठी भी हो स्याद। चलिए! चलिए!"

"लेकिन कहाँ?"

"संगम पर के मंदिर में कुर्मी परिक्रम्मावासी की परिक्रमा समाप्त हुई है। आज उसने कडाही समारंभ किया हैं।"

भूक तो बहुत लगी थी। पेट में बड़ा भारी खालीपन जान पड़ रहा था। सुबह मैया का दूध पीकर निकला था। दिन भर भी पीता ही रहा था। प्यास लगती तब, भूक लगती तब। फिर भी वह शुद्ध दूध पूरा नहीं पड़ रहा था। शायद आंते सूख रही थी।

कभी-कभी लगता उन्हें बाहर निकाल लूँ। एकतारी की तार निकाल फेंक उसकी जगह उन्हें कस लूँ। खूँटी कसूँ और भूख का गाना गाऊँ।

"चलो न क्या देख रहा हो?"

परिक्रमा के रास्ते पर यह अच्छा होता है परिचय सहज हो जाता है। प्रारंभ के खींचा तानी की जरुरत नहीं रहती। औपचारिकता के कृत्रिम बंधन भी नहीं होते।

उसने चलो कहने पर फिर बहुत संकोच नहीं किया। चुपचाप उठा और चल पड़ा उसके पीछे-पीछे।

कुर्मी माने कोई शास्त्रपुनित, विश्ववंदनीय भूदेव नहीं। वह भी बेचारी पिटी-पिटती एक जाति। वैसे कुर्मी के यहाँ कोई खाता नहीं।

पर उसमें भी एक रास्ता है। भोजन नहीं चलता माने कच्ची रसोई नहीं चलती। दालभात नहीं चलता। हलवा पूड़ी ऐसी पक्की रसोई हो तो कोई हर्ज नहीं। केवल उस रसोईपर मंत्र जल का छिड़काव किया कि सब पवित्र।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

देखा तो मंदिर बाहर लिपी जगह में नाना पंथ और नाना जमात के परिक्रमावासी पांत में बैठे थे। रसोई कुर्मी ने बनाई थी फिर भी अलग पांत कर बैठने से ब्राह्मण का सन्मान हो जाता था।

अतिरथी महारथी पालथी लगाये बैठे थे। भरी पूरी दाढ़ी मूँछें जटा। उनकी श्रेष्ठता उनके देह पर निकाली चित्रावली से जानी जा रही थी। वस्त्र मैले थे फिर भी उनके त्रिपुण्ड, नाम तिलक, चक्रांकन, भस्म लेपन जैसी कलाकारी में कहीं त्रुटी नहीं थी।

एकाएक दचक गया! ऐसा क्रोध अपेक्षित नहीं था।

"पूछता हूँ कि थी कहाँ अबतक? शाम हो गई तब से कहीं गायब हो गई क्या कोई मायकेवाला मिला था क्या? या कोई घड़ियाल निकल आया मैया से? निगल लिया था उसने।"

उसने जीभ काटी और केवल मेरी ओर इशारा किया।

मुझे देखकर महाराजजी का चढ़ा स्वर कुछ उतरा।

"अच्छा फक्कड़ मिले थे।"

माने मैं निरुपद्रवी एकदम। मुझ से कैसा भी ड़र नहीं। वैसा डर है मायके के आदमियों से या है तो नर्मदा मैया के घड़ियाल से।

ठीक निरख कर देखा। महराजजी और उसके रंगरुप में और वय में कहीं कोई साम्य नहीं था। वह ऐसी मुट्ठीभर देह की तो महराजजी अच्छा ऊँचा, घडंग, काला कलूटा सामने से दाँत विहीन, देह से इकहरा। देखते ही समझ गया गाँजे के अतिसेवन से होठ विवर्ण हो गये हैं।

मैं महराजजी की दृष्टि से पांत योग्य था। मेरे शुद्ध संस्कृत उच्चार उन्होंने सुने थे। उन्होंने मुझे पांत में जगह दिला दी। वह भी पांत में बैठी पर कहाँ ये नहीं देख सका।

जिस कुर्मी का वह कड़ाही प्रसाद था वह बेचारा बड़ी नम्रता से बाजू में हाथ जोड़े खड़ा था। दूर से ही वह आग्रह कर रहा था। उसने पकायी रसोई में किसी तरह की खोट नहीं थी। केवल वह स्वयं पंगत में घूमते आग्रह नहीं कर सकता था।

सभी ने भरपेट खाया। झूठ क्यों कहूँ मैंने भी डांटकर खाया। कितने ही दिनों बाद ऐसा स्वादिष्ट अन्न का लाभ हुआ था। इसलिये अफरा लगने तक खाया। कुर्मी को आशीर्वाद देते उसके प्रति शुभकामना व्यक्त करते सभी श्रेष्ठ और कनिष्ठों ने जरा भी कोर क़सर न रखते खाया। मेरे सामने एक श्रेष्ठ परिक्रमावासी भोजन कर रहा था। आशीर्वाद दिया जा सके इस पवित्र हेतु से उसने अपने सिल्वर के भगोने में दाबकर हलुवा भर लिया था।

ऐसा उत्तम भोजन हुआ। सब लोगों ने मिलकर मैया की आरती गाई। उसमें भी दूर रहकर यथाशक्ति सहयोग दिया। महराजजी ने कहा सबसे -

"ये फक्कड़ मिले थे।"

माने मैं निरुपद्रवी एकदम। मुझ से कैसा भी ड़र नहीं। वैसा ड़र है मायके के आदमियों

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

से या है तो नर्मदा मैया के घड़ियाल से।

ठीक निरख कर देखा। महराजजी और उसके रंगरुप में और वय में कहीं कोई साम्य नहीं था। वह ऐसी मुट्ठीभर देह की तो महराजजी अच्छा ऊँचा, घडंग, काला कलूटा सामने से दाँत विहीन, देह से इकहरा। देखते ही समझ गया गाँजे के अतिसेवन से होठ विवर्ण हो गये हैं।

मैं महराजजी की दृष्टि से पांत योग्य था। मेरे शुद्ध संस्कृत उच्चार उन्होंने सुने थे। उन्होंने मुझे पांत में जगह दिला दी। वह भी पांत में बैठी पर कहाँ ये नहीं देख सका।

जिस कुर्मी का वह कड़ाही प्रसाद था वह बेचारा बड़ी नम्रता से बाजू में हाथ जोड़े खड़ा था। दूर से ही वह आग्रह कर रहा था। उसने पकायी रसोई में किसी तरह की खोट नहीं थी। केवल वह स्वयं पंगत में घूमते आग्रह नहीं कर सकता था।

सभी ने भरपेट खाया। झूठ क्यों कहूँ मैंने भी डांटकर खाया। कितने ही दिनों बाद ऐसा स्वादिष्ट अन्न का लाभ हुआ था। इसलिये अफरा लगाने तक खाया। कुर्मी को आशीर्वाद देते उसके प्रति शुभकामना व्यक्त करते सभी श्रेष्ठ और कनिष्ठों ने जरा भी कोर कसर न रखते खाया। मेरे सामने एक श्रेष्ठ परिक्रमवासी भोजन कर रहा था। आशीर्वाद दिया जा सके इस पवित्र हेतु से उसने अपने सिल्वर के भगोने में दाबकर हलुवा भर लिया था।

ऐसा उत्तम भोजन हुआ। सब लोगों ने मिलकर मैया की आरती गाई। उसमें भी दूर रहकर यथाशक्ति सहयोग दिया। महराजजी ने कहा सबसे—

"ये फक्कड़ संस्कृत श्लोक बहुत सुंदर गाते हैं"

दो चार स्तोत्र पढ़े। स्तोत्र पाठ कहते भी जंभाई आ रही थी। कठिनाई से उनको दबाये रखा। उनका आते रहना सहज था। लेकिन स्तोत्रपाठ समाप्त होते ही मंदिर के सामने शुरु हो रहे सत्संग में शामिल न होकर उठ गया।

हरणी नदी किसी बहू की तरह सकुचाते हुए रेवा मैया के गले पड़ रही थी। उसके पात्र में कुछ जगह साफ करके वही पड़ा रहने की इच्छा थी पर पत्थर बहुत। फिर उस मन्दिर के सामने खुले में थोड़ा साफ-साफ करके बिछावन ड़ाला और उसपर थकीमादी देह ड़ाल दी।

सत्संग में गाये जा रहे भजन सुनाई पड़ रहे थे। स्वर के सम्बन्ध में बात करने की आवश्यकता ही नहीं थी। शब्दों के जोड़-तोड़ को सुन भी बहुत दुख हो रहा था। फिर भी देह ड़ालने के बाद तत्काल नींद आ गई यह मानना पड़ेगा।

ऐ! ये! क्या? मीरा स्वयं आकर गा रही है? वही दर्द वही व्यथा

प्रभूजी थे कहाँ नेहड़ा लगाये
छोड़याँ म्हाँ बिस्वास सँगाती
प्रेम की बाती जलाय
बिरह समंदमां छांड गया ह्यो
नेहकी नाव चलाय

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मीराँ के प्रभु कभु रे मिलोगे
थें बिण रह्याँ ण जाय॥

तड़ाक उठ बैठा और बिछावन की चिंता किये बिना मंदिर के सामने जा खड़ा हुआ। एक फफक रहे लालटेन के कालीख भरी काँच से आते प्रकाश में वह बीचोबीच बैठा गा रही थी। एक हाथ में एकतारा और दूसरे में करताल।

कैसा सब एकाकार हो गया था। कैसे बताऊँ। जैसे गाय के दूध में कल दही और परसों का मक्खन एक रस हो वैसा। अलगपन जान पड़ता था यह कहने की अपेक्षा वह जान न पड़ता था यह अधिक ठीक था। किस के लिये क्या वह भर कहना कठिन था। वाणी में रमा कवित्व, उसमें रसिकत्व ओर उस रसिकत्व को परतत्व का स्पर्श हुआ है ऐसी गत हो गई थी। ओहो मैं तो भींग-भींग गया।

समझ पड़ा महराजजी ने ढ़ोलकी पर धीमा ठेका पकड़ा था। इतना धीमा इतना तरल कि गायक को पैरों तले गलिचा बिछा हुआ लगे। वैसा ही सुख हो। दुमपड़ ऐसा घुमता रहा। बिरह समुन्दर की गहराई उस गहरे घूम से सच्ची जान पड़ी।

दूर तक ऐसे वैसे बैठे साधु संतों पर भी कड़ाही प्रसाद का प्रभाव हुआ ही था। उनमें से बहुत वही लंबे आड़े हो गये थे। उन साधू संतों के पवित्र शरीर अक्षरशः लतियाते और उसके कारण उनके मुख से झरते आशीर्वाद का स्वीकार करते हुए उस साधु सभा में घुस पड़ा और ठीक सामने जाकर बैठ गया।

उसने मेरी ओर देखा मुस्कराई सी लगी। और फिर वह बिराणी समाप्त होते ही दूसरी बिराणी शुरु की।

म्हार घर आवौ सुंदर स्याम
तुम आया बिण सुप कही मेरे
पीरी परी जैसे पान

अंतिम शब्द से ध्रुपद के स्याम पर वह ऐसे होले से उतरी कि जैसे कोई पंछी पंख बंद कर उतर रहा हो। अहा ऽ हा ऽ कहते मुझे होश नहीं रहा। महराजजी मेरे बहुत पास बैठे थे। ठेका संभालते हुए मेरे कान से लग उनने पूछा—

"इतनी देर कहाँ छिपे थे फक्कड़।"

चुपचाप दोनों कान पकड़े और फिर भाव समुद्र में डुबकी लगाई। सुनता रहा।

देखो तुम्हारे आये बिना मुझे सुख नहीं लगने वाला देखो ना कैसी पीली प़ड़ गयी।हूँ अरे श्याम सुन्दर मेरे घर आवोना।

मेरे आसा और न स्वामी।
एक तिहारी ध्यान

तुम्हारे सिवाय अन्यत्र मेरी आस जायेगी भी तो कहाँ? एक तुम्हारे रुप पर सारा चित्त

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

अटका हुआ है।

मीरा के प्रभु बेग मिलो अब
राखो जी मेरो मान

अजी आवो भी जल्दी कब से खड़ी हूँ। बहू बिटिया मेरा मजाक करेंगी मेरा मान रखना तुम्हारे हाथ में है।

नेत्र बंद किये गा रही थी। उस मद्धिम प्रकाश में मुद्रा में मुद्रा तो साफ दिख भी नहीं रही थी। स्वर जान पड़ता था वह हमारे बीच का यहाँ का नहीं था उसे दैवी स्पर्श हो गया था। एक मरीयल लड़की के कण्ठ से जो कुछ अमानवीय बाहर आ रहा था उसकी कोई तुलना नहीं थी।

आँसू बहाते-बहाते आँखें थक गई।

वह रुक गई। उठा। पादस्पर्श करने गया। वह रोकने लगी। माना नहीं। बोला—

"तुम्हें नमस्कार थोड़े ही कर रहा हूँ। नमस्कृति तो है उस चिरवियोगिनी के चरण कमलों में।"

उच्छवास लिये वह बोली "ये तो सब महराजजी की कृपा है उन्हीं की सिखाई हुई दो एक चीजें गा लेती हूँ।"

महराजजी उठे। उन्हें शायद गांजे की याद आ गई थी। अस्वस्थता से बोले। "चलती हो कि।"

उसने उदासता से कहा

"ये अभी आई। आप चलिये।"

मेरा चलना भूत भागने जैसा। पैर में कांटा घुसा। पक गया। ये भी अच्छा ही हुआ अन्यथा बिन मूर्ति के इस मन्दिर में चार दिन रहना न होता। ऐसा पड़ा न रहता तो उसकी फिर भेंट होनेवाली कहाँ थी।

मंदिर का बाबाजी भला आदमी था। जनमभर तीरथ करता रहा। बुढ़ा हो जाने पर भी हौसला बुलंद था। मुझ से कैलाश यात्रा की पूछताछ कर रहा था।

उतनी वे यात्रा करने की बड़ी इच्छा रही है। भगवान के अधीन है फिर भी उमंग, तो बार-बार उठती है कि कैलाश के रास्ते चल पडूँ।

मेरा पका पैर देखकर उसने मुझे चारपाँच दिन ठहरा लिया।

मेरी अल्पस्वल्प पंडिताई उसे समझ न पड़ती थी। उसका पंडिताई पर विश्वास भी नहीं था। वह था कट्टर कर्मवादी। उसका कहना शास्त्र पठण सब बेकार है। हरिकृपा से मिला देह है वह उसी की सेवा में समर्पित करे। उसके तीर्थों की यात्रा करें। वह विश्वाकार है इसलिये दीन दुखियों की जितनी बने उतनी सेवा करे और उसका नामस्मरण करते पुकार आते ही शरीर त्याग दे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उसने पैर पर पुलटिस बांधी और क्या-क्या किया। दूसरे दिन ही पका पैर बह निकला। उसे साफ कर गाय के घी में हल्दी मिला उसने बांधी। उसकी सेवा का ही फल था कि पांचवे दिन चल फिर सकने का भरोसा आ गया।

काम कुछ नहीं था। बाबा खिलाय वह खाना और दिनभर पैर सहलाते मटरगश्ती करना। तीसरे प्रहर उठा और मैया के पात्र में एक बड़े से पत्थर पर जा बैठा।

हम अधिकतर तीर से नदी दर्शन करते है। नदी के पात्र से गाँव कम ही देखा जाता है। कितना भला दिखता है सारे प्रवाह ऊँचाई से पात्र की ओर आते हैं।

अकेली दुकेली महिला मैयापर स्नान के लिये आ रही थी। कपड़ा धोती सुखाने ड़ालती कंकड़ खपरिया से देह रगड़ती सब आराम से। मैं पत्थर पर बैठा था। वैसे गांववालों को कितना हौसला होता है। पूछताछ का। कौन कहाँ का। कितने ही प्रश्न। पर मैया किनारे के इन देहातियों के मन की सारी शंकाये जैसे निरस्त हो गई हों। किसी ने मेरी तरफ ढूंककर भी नहीं देखा।

अपने-अपने कपड़े सुखा पहन ठीकठाक होकर लोग गाँव की ओर चल दिये। मैं पत्थर पर बैठा था। उठा। एक पैर घसीटते-घसीटते मंदिर की ओर चला। निश्चय हो गया कि कल चल दूँ तो कोई खास परेशानी नहीं होगी।

मन्दिर पहुँचा तो पत्थर के खंबे से टिका महराजजी देखा। सामान उधर ही रखा। उदास निगाह महराजजी अस्वस्थ दिखा। अकेला था। मीरा कहीं दिखी नहीं।

आगे बढ़ा। हर नर्मदे किया। बुदबुदाये। शिष्टाचार वश हर नर्मदे। मेरा कुतूहल रोके न रुका। धृष्टता से पूछा

"अकेले गई कहाँ?"

उत्तर मिला अनपेक्षित बेरुखे स्वर से

"भाड़ में।"

एकदम ठंडा गया। आगे बोलने का प्रश्न ही नहीं था। बाबाजी मंदिर के पीछे गाय के पास खड़ा था। वहाँ तक जाकर पूछा ये "महात्मा क्या अकेले आये?"

"नहीं तो माई थी।"

"गई कहाँ?"

"आते ही गाँव में गई है। सायत इन्होंने भेजा है।" बहुत देर राह देखनी न पड़ी। थकी हुई वह गाँव से लौटी। आते ही एकतारा सामान के पास रखती महराजजी के पास बैठी पैर दाबते बोली—

"कितना ढूँढ़ना पड़ा कोई मकई ज्वार थोड़े ही है जो कहीं भी मिल जायेगी।"

फिर उसने कमरे में खोंसी पुड़िया निकाली और भूखा जैसे झपटे वैसे महराजजी ने वह पुड़िया हथिया ली। महराजजी का चेहरा उजियार हो गया। बोले—

"थक गई क्या?"

उसने उच्छवास छोड़ा और उसकी नजर से नजर भिड़ाये चुप बैठी रही। चार दो

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

क्षणबाद बोली—

"अब जाऊँ नहाने?"

पुड़िया की तैयारी में महराजजी लग गया था बोला

"हाँ हाँ मजे में खूब नहाओ।"

कुरजी से उसने साड़ी चोली निकाली। लोटा देकर मंदिर से बाहर निकलते हुए नर्मदापर चल दी।

बहुत देर अस्वस्थता से मंदिर के पीछे ही बैठा रहा। फिर उछलकर जरा फुर्ती से नर्मदापर चल दिया। देखा तो स्नान कर साड़ी उसने सुखाने फैला दी थी। साड़ी सूखने के इंतजार में यूँ ही खुले बाल मैया को निहारती वह बैठी थी।

दोनों हाथ कमरपर रख उसके पीछे खड़े होते कहा—

"हर नर्मदे कहने की अनुज्ञा है क्या?"

चमक कर उसने मेरी ओर देखा। एकदम उसकी मुद्रा खिल गई बोली—

"कैसे हैं? कब आये? कहाँ रुके? आप तो बहुत चलते हैं।"

पैर दिखाते बोला

"वह हमारा चलना, उसे नजर लगी किसीकी । कांटा घुस गया।"

शरारती हँसी में बोली

"मेरी नहीं लगी अच्छा नजर। देखूँ।"

नकारते बोला

"ये क्या हरि के कमल सदृश्य तलवे हैं जिसका जिसके उसके सामने प्रदर्शन करुँ।"

"अच्छा जी मत दिखाओ पर यहाँ बैठी हूँ यह कैसे जाना?"

"जान लिया अपने ज्ञात से।"

"झूठ।"

"भूत भविष्य जाननेवाले किसी के शक्ति के प्रति ऐसा अविश्वास व्यक्त करना अच्छा नहीं।"

बालकों सी उत्सुकता से भर आकर वह बोली—

"सच तुम जान लेते हो भविष्य?"

"देखो कोई प्रश्न पूछकर।"

एकाएक गंभीर हो गई बोली—

"बताईये तब, मैं कब मरुँगी?"

चमक गया। जबरन मुस्कराते बोला—

"भविष्य सच हो गया तो क्या करेंगी-हलवा पूड़ी खिलायेंगी।"

"जरुर खिलाऊँगी।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"पर वह हलवा पूड़ी वसूल करने तुम्हारे पीछे-पीछे मुझे भी परलोक आना पड़ेगा।" तीखेपन से बोली

"माने नरक में।"

विषय बदलते हुए बोला—

"मुझे नर्क में जाने की जल्दी नहीं है अभी, छोड़ो कोई गीत सुनाओ।"

चुप बैठ रही। कुछ देर बाद मैंने ही कहा

"यहाँ एकतारा करताल नहीं है पर उसके बिना भी तुम्हारे स्वर का गीत मुझे पसंद आयेगा ही।"

जल प्रवाह की ओर देख रही थी वैसी ही मौन बनी रही। छेड़ते हुए बोला, "ठीक है। गांजा प्राप्त करने बाजार में इसके उसके सामने गाओगी मेरे लिए गाना?"

मुड़कर मेरी तरफ देखा उसने, उस नजर में तीर लगे पंछी की पीड़ा थी।

दिन ढ़लने को था। नर्मदा तीर पर उधर दो औरते घड़े माँज रही थी। उन्हें छोड़ इतना बड़ा वह रेवा किनारा बिलकुल खाली था।

उसने गीत एकाएक शुरु किया

लागी सोही जाणे
कठण लगणदी पीर
बिपत पडयाँ कोई निकट न आवे
सुख में सबको सीर
बाहरि घाव कछु नहीं दीसे
रोम रोम दी परी
जनि मीराँ गिरधर के ऊपर
सदके करूँ सरीर॥

वह धुंधलका समंय। यह ऐसा आर्त गीत। उसका वह सुवर्ण बाण सा मधु में भींगा स्वर, हृदय के गहराई तक पहुँच गया। गीत समाप्त होने के बाद भी वह बैठी रही मैं भी।

अंधियारा घिरने लगा था इसलिए उठा—

यूँ ही इच्छा थी कौन कहाँ की पूछने की। पड़ोस के घर में ढूँकने की अनिवार इच्छा रहती ही है। पर अब बेकार के प्रश्न पूछ उस देवदत्त स्वर का अपमान नहीं करुँगा। स्वर किसका? उसके मुरली का। शब्द किस के मीरा के। इतना काफी था। महाराष्ट्र का एक बनिया-तुकाराम। उसने कहा है

आपणा लागे काज वाण्याघरी गूळ
त्याचे जातिकळ काय कीजे

आवश्यकता है बनिये के यहाँ के गुड़ की। उसके जातिकुल की पूछताछ क्यों करना।

"कल सुबह निकल पड़ेगी आप। मैं भी। मैं भूतहा चलता हूँ। वह भूत जनम से पीछे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लगा है। अब कभी भेट होगी या नहीं मुझे ज्ञात नहीं। लेकिन यह करुणा से भींगा स्वर सुनकर मन भरा है वह तृप्ति जन्मभर चखता रहूँगा।"

उसे वही अकेली छोड़ मंदिर की ओर चल दिया।

भेड़ाघाट कितना सुंदर पर उसकी ओर देखने को समय नहीं मिला। प्राप्त कर्तव्य दूसरा ही था। वहाँ एक खंडहर से मंदिर के एक परिक्रमा वासी ने रोक रखा।

उसे मिला तब उसकी प्राणज्योत बुझने में ही थी। कदाचित उसकी तिल्ली बढ़ गई थी। बुखार से गरमा गरमा काया सूख चुकी थी। साफ थी उसकी दृष्टि। उससे अधिक साफ थी वाणी कुछ मंद लेकिन साफ। रुक-रुक कर सांस चल रही थी।

मैं दौड़कर एक वैदू को ले आया। बड़ी मिन्नतें कर। परंतु उसने मना कर दिया दवाई लेने से। मंद स्वर में बोला—

"मैया के गोद में जीवन समाप्त हो रहा है। होने दो। अब दवा के कष्ट न दो।"

उसके पास बैठा रहा। तीसरे दिन संकेत कर वह कहने लगा कि मुझे मैया के तीर पर ले चलो। एक परिक्रमावासी फक्कड़ को पकड़ा। उसकी सहायता से वह हड्डियों की गठडी मैया के तीरपर जाकर रखी। वहाँ उसने बड़े कष्ट से करवट ली। हाथ सिरहाने लेकर मैया के किनारे के हरे जल को देखता रहा।

धूप चढ़ आयी और उसकी मुंडी झुक गई। शिखर गिरा। फक्कड़ श्वांस छोड़ बोला "क्या देख क्या रहे हो गुसांई। कुछ व्यवस्था करो। या तो गड्ढा करके गाड़ दो या फिर मैया के पानी में बहा दो।"

उसे वही शव के पास बिठाया। गाँव के बनिया के पास गया। उसी के दुकान में परिक्रमा वासियों को दाल आटा मिला करता था। भला आदमी था। उठा चार छह को बुलाया। दो चार मेरे साथ शवतक आये। उनमें से ही एक शायद चौधरी था शव देखा और बोला—

"फूँक दो और क्या?"

मरियल बैल जुती गाड़ी लक्कड़ लेकर आयी। रचते, रखते शाम हो गई। शव चितापर रखते दिया बत्ती का समय हो गया। प्रश्न था अग्नि कौन दे। मेरे सिवाय कौन देता। अग्नि दी और कलाई को ओठो से छुवा।

शव अधजला वैसे ही काम काजी उठ गये। खाली थे हम दोनों। हमें कहीं जाना नहीं था। फिर शुरु किया कठोपनिषद का पाठ खुले अच्छे स्वर में

अग्निर्यथैको भुवनं प्रविष्टो
रुप रपं प्रतिरपो बभूव
एकस्तथा सर्वभूतान्तरत्मा
रुप रप प्रतिरुपो बहिश्च॥

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानाम्
एको बहुनां यो विदधति कामान्
तमात्मस्थं ये ऽ नुपश्यन्ति धीरा
तेषां शान्ति : शाश्वति नेतरेषाम् ॥

मैया के किनारे से आती पगडंडी पास ही थी। षष्ठी सप्तमी का चन्द्र होगा। ध्यान गया, ऐसा लगा कोई दो खड़े हैं। कुछ ही क्षण में वे पास आये। रुक गया। महराजजी का स्वर सुनाई दिया।

"रुको नहीं भई चलने दो। पाठ सुनने आये हैं।"

उपनिषाद समाप्त हुआ और उच्छास छोड़ वह बोली

"कैसी विमल वाणी है!"

महराजजी बोला

"बहुत सुंदर। देखो पाठ में भी एक लय है यह आदमी जरुर संगीत जानता होगा।"

"अभी आ पहुँचे हैं। ठरहने का प्रबन्ध कहाँ सो देखना है। कल यहीं ठहरने का विचार है। अच्छा स्थान है। आप का क्या है। ठहरेंगे या आगे भागेंगे। आपके पीछे तो भाई अच्छा भूत लगा है।" 'अरे हाँ अग्नि किसे दिया?'

सब बताया तब श्वास रोके बोली

"न जाने कौन था? ब्रह्मचारीजी के भागमें था बिचारे को अग्नि देना।"

मेरी तरफ देखकर बोली

"भोजन का प्रबन्ध कहाँ हुआ था?"

क्षीण मुस्करा जलते शव की ओर संकेत कर कहा

"अब तो आज कोई इच्छा नहीं है।"

जोर देकर बोली

"क्यों भाई कोई मर जाय तो क्या भोजन नहीं करना चाहिये।"

मुंडी हिलाते कहा

"नहीं जो कुछ देखा है सुबह से।"

"अच्छा कल।"

"कल की कल सोची जायेगी।"

राख इकट्ठा करनी थी दूसरे दिन भी निकलना न हो सका। वे दोनों कहाँ ठहरे थे कौन जाने? सबसे निपटा तब तक धूप तेज हो गई थी। परिक्रमावासी फक्कड़ कहीं से अन्न ले आया। दो कौर खाये और एक पेड़ के नीचे ड़ला रहा। दिनभर लगता रहा खोज खबर लूँ पर थक गया था उतना उद्यम नहो सका।

शाम को नर्मदा पर जाकर बैठा। लग रहा था वह आयेगी। आयी पर बहुत देर से। सारा नर्मदा किनारा खाली हो गया था। नित्य नियम के सायं स्नान वाले स्नान कर जप

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

करते तीर पर बैठे थे और वह आयी।

उठ सामने गया। देख मेरी ओर आते। मुद्रापर छायी उदासी छिपाते बोली

"कहाँ छिपे रहे दिनभर?"

"खूब! यह सवाल तो आपही से पूछा जा सकता है।"

"वाह जी मैं तो दिनभर भोजन बनाकर आपकी बाट जोहती रही। सोचिये तो। आपको ढूँढ़ते हुए गांवभर घूमना क्या मुझे शोभा देता?"

यह तो सच था। लगा कि रात के भोजन के लिए पूछेगी पर वह चुप रही। जैसे किसी में खोई हुई हो फिर एकदम बोली।

"जरा भर रुक सकेंगे-मैं नहा लूँ।"

"हाँ हाँ जरुर।"

वह नहा ली। गीली साड़ी कंधे पर लिये मेरे पास आयी-बोली अगर सावन की पूनम होती तो—

"उसे रुका देख मैंने पूछा

"क्या करती?"

"कुछ नहीं आपको राखी बांधती।"

मन पर का एक बोझा उतर गया। दो तीन बार खुली सांस लेकर बोला

"महाराजजी का क्या?"

वेदना छिपाती वह बोली

"शाम को चिलम बाद वे घंटे दो घंटे बेसुध पड़े रहते हैं।" अब इसपर क्या बोलता-पूछता। चुप रह गया।

कुछ देर बाद वही बोली

"क्यों जी आप कितना चल लेते हो एक दिन में?"

"कुछ तय थोड़े ही रहता है। बारह पंधरह बीस मील भी।"

कुतुहल से उसने पूछा। "थकते नहीं।"

मुस्कुराया और चुप रहा। वह बड़े उत्साह से बोली

"स्कूल में दौड़ के सारे इनाम मैं ही लूट ले जाती थी। आप कैसे चलते हो वह देखना है एक बार चलेंगे मुझे लेकर।" चमककर पूछा

"क्या?"

"क्यों इतने चमकने को क्या हुआ? आपके साथ तो मुझ कुछ भी ड़र नहीं।"

"वह तो ठीक है पर महराजजी।"

उदासीन से बोली

"उनका क्या? आना हो तो चले आयेंगे नहीं तो बैठेंगे गांजा पीने।" इसपर बोलना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ही रुक गया। पर वही जोर देकर बोली—

"फिर चलेंगे कल!"

"कल ही!"

"क्यों?"

"नहीं ऐसा कुछ भी नहीं।"

कल भोर ही मैं पगडंडी पर आ जाऊँगी। आप मेरे लिए ठहरना मैं आते ही हम भाइ बहन चल पड़ेंगे कैसा?

बड़ी मुश्किल से फंसा बोल निकले "तो फिर?"

उसका आग्रह लेकिन पक्का था बोली—

"हाँ कल ही। बीस मील चलेंगे। भोर ही निकलेंगे। सब सोते हीरहते हैं तब ही। पक्की बात। आऊँगी। अच्छा कल बड़ी भोर।"

तेज कदम वह जाने लगी। एक बार लगा दौड़कर जाकर उससे कहूँ। "नहीं, नहीं वह ठीक नहीं। वह नहीं होगा। महराजजी मेरा खून कर देंगे। मुझे अभी नहीं मरना।"

लेकिन उठा नहीं। हिला नहीं। वहाँ जमा बैठा रहा।

रातभर नींद न आई। विचारों के तारांगण घूमते रहे। नहीं, नहीं यह कभी नहीं। इससे तो जहर खाना सरल है। पर बड़ी भोर ही उठा और पगडंडी पर जाकर खड़ा हो गया।

वहाँ कोई नहीं था। दूरतक नजर दौड़ाई फिर भी नहीं। एक बार तो दूर तक गया और लौट आया। धीरे-धीरे दिखने लगा था। अकेले दूकेले पक्रिमावासी उठ जाने लगे लेकिन वे सारे फक्कड़ थे। माई किसी के साथ नहीं थी।

क्या करुँ। कदम भी रुके थे।

सूरज हाथ भर उपर उठ आया और मैं अपना खड़ा। निकलना चाहिये था पर नहीं निकला आखिर लौट आया। और सारे मंदिर खोजने लगा। एक बार मैया पर भी हो आया। फिर वापस। गाँव में गया। गाँव के बीचोबीच दो तीन मन्दिर उसमें से एक खूब बड़ा। चारो ओर दालान। उसमें गया।

पिछले दालान में महराजजी चिलीम फूँकता बैठा था। और पड़ोस में वह सोयी थी। चादर ओढ़े। इतने गर्मी में। कुछ बात समझ न पड़ी वही ठिठका रहा। उनके अग्निदृष्टि को देखते बात करने का साहस भी नहीं हुआ। लौट पड़ा।

एक बार सोचा देर से सही चल पड़े।

लेकिन फिर रह गया। शाम नर्मदा पर भेट होने की आशा में।

अंधियार गया फिर भी तकते बैठा रहा और वह आयी। मुझे देखते ही अस्फुट शब्दों

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

में उसने आवाज दी— "ब्रह्मचारीजी।"

लगा। पास जा। तडातड सुनाऊँ। पास तो पहुँचा पर उसका रुप देख उस अंधियारे में कुछ सुनाने का ढाढ़स न हुआ।

विषाद की मूर्ति थी। मुंडी नीचे किये खड़ी।

पहिले वही बोली—

"मुझे मालूम था तुम आज जाओगे नहीं।"

स्वर संयत रखते हुए कहा

"और चला ही जाता तो।"

"हाँ वह भी सच है। क्षमा करे और क्या कहूँ अब।" फिर बड़े प्रयास से बोली।

"उस दिन पूछा था कि कौन कहाँ की वह पूछने की जिज्ञासा थी।"

उसे रोकते हुए बोला— "पर अब वह मेरे मन में नहीं है। बिलकुल नहीं।"

"पर मुझे कहना ही पड़ेगा। नहीं तो माता मैया मुझे क्षमा नहीं करेगी।"

लगा कि कहूँ तो फिर नर्मदा के प्रवाह को जाकर कहे। पर जिज्ञासा जागृत जो थी।

"कौन कहाँ की यह तो कहती नहीं उसकी अब आवश्यकता भी नहीं। खाते पीते घर की मैं कन्या। महाराजजी मुझे संगीत सिखाने आते थे उनका गाना आपने सुना नहीं। गांजा पी पीकर उन्होंने अपने गले का कबाड़ा कर लिया पर आज भी मन लगाकर गाये तो जंगल के जानवर दौड़ आयेंगे सुनने।"

"फिदा हो गठ और एक दिन हाथ पकड़ भाग निकले। वे कितने बड़े मैं कितनी छोटी। मरे पिता बराबर के। पर मोह के उस भंवर में कुछ होश नहीं था। एक बात तय कि उनके स्वरशक्ति की मैं मनसे प्रेमी हूँ। आज उनके उस स्वर की छाया रह गई है। तब भी।"

"मेरा गाया गाना सुन आप मुग्ध हो गये उनके संगीत का सौवाँ हिस्सा भी मेरे गले उतरा नहीं है। इससे कल्पना करो।"

"ब्रह्मचारीजी उनकी पत्नी बिचारी देवी थी उसे भरे घर से मैंने उन्हें उजाड़ा। पहले कुछ दिन वे भी मोह सक्त रहे।"

"पर आखिर यह शरीर है। वही हाथ पैर वही सीना वही सारे अवयव, एक का जैसा वैसा दूसरे का। कवि कहते हैं स्त्री का बदन कमल। होठों में अमृत। नहीं चिपचिपी थूक के सिवाय कुछ भी नहीं। वह भी नाना रोग जंतुओं से भरी।"

"जल्दी ही उनके सामने सारी स्थिति आ गई पर तब दूसरी गति नहीं थी दोनों को। चुभती स्थिति भुलाने उन्होंने गांजा पकड़ा। वह भूत सिर बैठाया। ब्रह्मचारीजी झूठ नहीं मैंने भी गांजा पीकर देखा।"

"परिक्रमा शुरु की। कोई यहाँ पूछता नहीं। पूछने पर कुछ भी कह देती हूँ। कभी वह मेरे चाचा तो कभी मौसा हो जाते हैं।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"गांजे के नशे में चार दो घंटे वे सब कुछ भूल सकते हैं पर मैं, मैं क्या करुँ?"

अंधियारे में भी जाना कि उसका स्वर काँप रहा है। फिर भी वह कहती रही।

"गांजा न मिले तो परेशान करते हैं। पीटते-पाटते है। वह लाने, न जाने लायक जगह जाना पड़ता है। मुँह बिचकाना पड़ता है। कभी-कभी मन विषभरा हो जाता है। कल शाम को. . . . . ." और वह रुक गई। कड़ाई से बोली "नहीं वह कहने लायक नहीं है। इसलिए मैंने आपसे कहा था मुझे साथ ले लो। लेकिन फिर समझ पडी कि अब इसमें से छुटकारा नहीं है। इससे बाहर मैं पड़ ही नहीं सकती।"

"पिता खोज रहे हैं। कभी ना कभी हम पकड़े जायेंगे। फिर कचहरी में मुझे कहना पड़ेगा।"

"मैं अपराधी हूँ मैंने ही इनको उकसाया। भागने के लिए। अन्यथा वह दिव्य स्वर वह अद्‌भुत स्वरयंत्र उसे गिट्टी फोड़नी पड़ेगी।"

"ब्रह्मचारीजी।"

अब वह रोने को थी। रुँधे गले से बोली

"क्षमा कीजिए ब्रह्मचारीजी क्षमा आप करें मुझे।" इतना कहते धीरे-धीरे वह कगार चढ़ अंधियारे में विलीन हो गई।

महाराष्ट्र के संत शिरोमणी रामदास स्वामी ने कहा है

चूहे कहते मेरा घर
चीटी कहती मेरा घर

हम सझमते रहे हैं कि भूमि हमारे लिए है। हम इसके स्वामी। मालिक। मन में आये तब बेचूँ, रहन रखूँ, कबजा लें, दे फिर उससे वापस लें।

यात्रा में यह समझ में आया, कि नहीं मेरे दोस्त यह सच नहीं हैं। वह तो सबके लिये है और किसी के लिए भी नहीं है। वह सर्व तत्र स्वतंत्र है। मुट्ठीभर ऊँचाई का आदमी क्यों इसका स्वामी बन सीने में मिट्टी लगाय? कौन कहाँ का आदमी। उसे कौन पूछता है। जनमभर बड़े गरब से धरित्री पति बन जयपट्ट विभूषित आदमी प्राण पखेरू उड़ जाने के बाद इसी की गोद में आराम करने आता है। ज्ञानेश्वर माउली ने धरित्री की क्षमा वर्णन की है—

जैसी की क्षमाशीलता
पृथ्वी के स्वभाव की

ये ऐसी क्षमाशील की इसका पति कहलाते जिस-जिस ने अपनी मूँछों में घी लगाया उसे भी जगह देती है।

स्नान से निपट तुंबा पानी से भर फिर पगडंडी पर लौट रहा था। अचानक कगार की ओर ध्यान गया। सफेद बालु मिट्टी और बटैया की मिश्रित वह ऊँची कगार थी। नर्मदा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

का पात्र संभालने दीवार की तरह बनी हुई ऊँची।

देखा तो एक हाथ कगार से लटक रहा था। हाथ माने ठीक हाथ ही नहीं। हाथ की हड्डी थी। पंजा, उसमें दो अंगुलियाँ थी। बाकी खो चुकी थी। कदाचित नर्मदाजल अपने साथ बहा ले गया होगा।

कुतुहल हुआ। वहाँ पास जाकर खड़ा हो गया। आश्चर्य कर रहा था। बीस बाईस हाथ गहरा शव गड़ा हुआ था। हाँ शव। नीचे के हिस्से में पांव की हड्डिया दिख रहीं थी। तो उपर थी, मुंडी दिखती थी। यह शव इतने गहरे किसने गाड़ा। बीस बाईस हाथ गड्ढा किसने किया होगा?

देखता रहा सूक्ष्मता से। और देखा वह शव जिस स्तर में है वह स्तर दोनो ओर दूर तक गया साफ दिखाई दे रहा था। उसपर पंधरह सोलह हाथ मोटा लाल मिट्टी का स्तर था बिलकुल उपर तक गया हुआ। नीचे के स्तर में बटैयाँ थी उपर केवल मिट्टी थी।

एक बार कहीं एक पुराने अखबार का टुकड़ा मिला था। उसे उठाया झाडा और पढ़ा। नदी का नाम जहाँ छपा था वह भाग फट गया था। जो था उसपर उस नदीतीर पर हजार वर्ष पहले फली फूली संस्कृति के सम्बन्ध में बहुत कुछ था।

उनकी आश्चर्य में ड़ालती शिल्पकला, मृदृभांड़, अलंकार, शस्त्र, जीवन पद्धति शव गाड़ने की रीत।

फिर कभी नदी में बड़ी बाढ़ आई चारो दिशाओं में पानी ही पानी हो गया। मीलों लंबा क्षेत्र बाढ़ के नीचे आ गया और पूरी संस्कृति बाढ़ से बहकर आई मिट्टी के नीचे दब गई।

उपर सात आठ हाथ मिट्टी चढ़ गई एक मनुष्य समूह को पेट में रख नदी बड़ी लीनता से बहने लगी। मानों बहुत निष्पाप गरीब हो। और फिर नदी किनारा हरा हो गया वनस्पति वृक्ष सब कुछ जस का तस हो गया।

और फिर एक नया मानव समूह तीर पर रहने आया उसने जगह बाँट ली। ये मेरी वह तेरी। फिर उसके लिए झगड़ा। लड़ाई, मारपीट, खून।

बेचारा उसे क्या मालूम कि उसके पैर तले दस बीस हाथ पर ही कितने ही पृथ्वीपति गले में गला ड़ाले मिट्टी के नीचे गड़े हुए हैं।

सच देखा जाये तो सारा वन प्रांतर वास्तव में मानव अन्य प्राणियों का घर। आदमी ही वहाँ बाहर से आया हुआ। पराया। वे प्राणी बेचारे बोल नहीं पाते इसलिए। अगर वे बोल पाते तो उन्होंने निश्चित ही आदमी को टोका होता। तू यहाँ कैसे आया क्यों आया? तेरा यहाँ क्या काम रे।

एक तेंदू पेड़ तले छाया में दोपहर की धूप से बचते बैठा था। नजर के सामने यहाँ से वहाँ तक नर्मदाजल फैला था। और फैली थी तपती बालु। किनारे कुछ झाड़ी सी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उस झाड़ी से मोटी पूँछ का एक सियार बाहर आया। पानी की तरफ देखते झाड़ी के किनारे पूँछ दबाये खड़ा रहा। मेरी ओर उसका ध्यान आया। उसे बेवक्त प्यास लग आयी थी शायद। वह पिछले पैरों पर बैठता फिर से उठ वहीं इधर-उधर करता। गरम रेत में पैर रखने का साहस वह शायद जुटा नहीं पा रहा था।

अंत में उसने निर्णय लिया। तड़ातड़ दौड़ते वह पानी तक पहुँचा। वहाँ पानी में खड़ा रहा। जीभ से चपर-चपर भरपेट पानी पिया। फिर पानी में बैठा। बाहर आकर उसने अपनी देह फड़फड़ायी चारो ओर बूँदे उड़ी और फिर वह दौड़ अपने स्थानपर पहुँच गया।

और क्या आश्चर्य और एक सियार उस झाड़ी के पास आकर खड़ा था कदाचित वह सियारी होगी। यह भीगा सियार उसके पास आकर खड़ा हुआ। थूथनी से थूथनी लगा वे कुछ बतियाये।

"बालू बहुत गरम नहीं है।"

वह ऊँ-ऊँ करते बोली

"पर पैर तो जलते ही होंगे।"

"मैं भी तो हो आया।"

"तेरा ठीक है।"

"प्यास लगी हो तो चुपचाप जाकर पानी पी आवो।"

बड़े मजे से उन दोनोका कृतकलह देख रहा था। इतने में मेरे नीचे दबा तेंदू पत्ता चरमराया। दोनो ने चौकन्ने हो मेरी ओर देखा। और दाँत दिखाते दोनों ही झाड़ी के पीछे चले गय। प्यास बुझाने के उनके अभियान में दखल करने के लिए उन्होंने निश्चित ही गालियाँ दी होंगी।

पर कैसी होंगी उनकी गालियाँ?

परिक्रमा में कितनों से ही मिलना होता। "मैया मेरा बच्चा जी जाये तो मैं परिक्रमा करूँ!" वाले। वे सारे नियमों का पालन करते। श्रद्धा से बड़े नियम से परिक्रमा करते। परिक्रमा जान सासत का काम। कष्ट की जिसे आदत नहीं वह बेचारा फिर भी चलता रहता। वचन निबाहने।

कितनी ही माई निराधार होते ही मैया की परिक्रमा शुरु कर देती। चलते चलते जो होना हो, हो। गिर जाये शरीर तो गिर जाये। उसका उपयोग भी क्या। पुण्य मार्ग पर पड़ा तो और क्या चाहिये।

किसी-किसी की पुरानी आदतें होती हैं वह छूटती नहीं। नियम से परिक्रमा कर रही एक माई खैनी के लिए इसके उसके आगे हाथ फैलाये रहती देखी।

घर गृहस्थी के जंजाल से उब परिक्रमा का रास्ता चल पड़ते लोग लुगाई। जितना चला जा सके उतना चलना। फिर जहाँ कहीं सदावर्त हो वहाँ से अन्न लेकर निर्वाह करना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कोई कपड़ा वपड़ा मिल जाये वह ले लेना और जीना। एक जीव के लिए लगता ही कितना है निभ जाती।

कोई श्रेष्ठ साधक भी टकराता। नियमों का पक्का। परिक्रमा निहेंतुक होते हुए भी एक भी नियम भंग न होने देने में दक्ष।

गाँव नाम भूल गया। शाम को वह मिला था देखते ही मुग्ध हो गया।

वैसा कोई विशेष नहीं था उसमें। एक लुंगी, कमंडलू, कंधेपर कामरी बगल में एक छोटा ग्रंथ। अंटसंट बढ़े केश।

पर मुद्रापर विलक्षण सौम्य भाव। देखते ही दृष्टि अटक गई। नर्मदा तीर पर कमंडलू से पानी लेकर वह नहा रहा था। निष्ठावान परिक्रमावासी की यह स्पष्ट पहचान थी।

स्नान से निपट किनारे पर बैठ उसने अर्ध्यदान किया। फिर बार-बार मैया को साष्टांग प्रणिपात करते रहा। तलवे उसके भी फटे थे। नमस्कार समाप्त होने के बाद लंगड़ते वह किनारे से लगे मंदिर की ओर चला।

बढ़कर मिला कहा "हर नर्मदे।"

धीमा मुस्कराते वह बोला

"नर्मदे हर, कहो भाई कैसे हैं?"

"माँ की दया से भला चंगा हूँ आप।"

"बस उसी की क्रिपा।"

"पैर इतने फटे हैं दवाई क्यों नहीं लगाते?"

उसने नर्मदा की ओर हाथ जोड़ते कहा

"मैया की इच्छा नहीं।"

चकित बोला मैं

"दवाखाने जाने के लिए नहीं कह रहा मैं पर पेड़ो का दूध क्यों नहीं लगाते वे तो मैया के तीर पर ही उग आते हैं।"

फिर से आकाश की ओर हाथ जोड़ते बोला

"उसकी इच्छा हमारे करने से क्या होता?"

कुछ जिद्द से उसके पीछे-पीछे चलता रहा।

"गुसांई जी यह तो उसपर सरासर अन्याय है।"

"कैसा?"

"उसने पैर फाड़े यह तो सच। पर दूध के पेड़ भी उसीने बनाये।"

"अब क्या वह स्वयं आकाश से उतर तुम्हारे तलवे की भिवाई में दूध भरे।"

"राम! राम! मुझ जैसे अति तुच्छ के लिए उससे इतने कष्ट क्यों कराते हो।"

"शरीर को दुख तो होता है।"

ठहरकर वह मेरी तरफ देखने लगा फिर मुस्कुराकर बोला

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"नहीं होता।"

"ऐसा हो ही कैसे सकता है?"

"मैया का स्मरण करते रहे सारी वेदना दूर होती है।"

विश्वास न हुआ। मन में आया कि वह किसी संत का वचन ढ़ाल की तरह आगे कर रहा है मैंने कहा

"ऐसे दस बीस वचन मुझे भी याद हैं।"

उसने बड़े आग्रह से कहा

"राम! राम! परिक्रमावासी में ऐसी अश्रद्धा नहीं होनी चाहिये।"

"गाली भी दे लेते हैं।"

"क्षमा करें। गाली देने का मेरा हेतु नहीं। इतना ही कहना है कि उसपर श्रद्धा रखनी होगी।"

दुष्टता से पूछा

"आपकी है।"

फिर से दोनो हाथ जोड़ उसने कहा

"मैया पर विश्वास करें तो वह हमेशा साथ रहती है।"

"वही तो पूछ रहा हूँ आपके हमेश साथ है वह।"

श्रद्धा से विलगित होते वह बोला

"तुच्छ अतितुच्छ मैं मैया का चरण रज का भी कण हूँ केवल" और वह चुपा गया।

उसके श्रद्धा का प्रत्यय लेकिन उसी रात आया।

दोनो एक ही धर्मशाला में ठहरे। पड़ोस के किसान के यहाँ की पूडी मैं पा आया था। दोनों ही एक भुक्त। वह दिन में पका खाता। मैं रात को किसी की पुडी पाता।

धर्मशाला में एक क्षीण जलता दीया। उसके प्रकाश में दोनो ध्यानस्थ। आँखें मुँदे बैठा जरुर पर ध्यान सब उसकी ओर था वह क्या कर रहा है देखने।

वह अविचल बैठा था। पाषाण मूर्ति जैसा। केवल आती जाती साँस सजीवता की पहचान थी।

मुझे जभाँई सताने लगी। मुँह न खोलते उसे दबाता रहा।

कुछ देर बाद वह कुछ हिला। कितनी देर। क्षणभर! उसकी मुद्रा पर वेदना। मैंने उस क्षीण प्रकाश में भी देखी। उसके बाद प्रयास पूर्वक वह ध्यान से एकरूप हो गया।

आधे घंटे बाद उसका ध्यान समाप्त हुआ। धीरे से जांघ के नीचे हाथ ड़ाल कुछ पकड़ा चिमटी में फिर उठ उसे बाहर फेंक आया।

आश्चर्य से मैंने पूछा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"क्या था?"

"ऊँ कुछ नहीं।"

"फिर भी कुछ न कुछ तो होगा ही।"

"शायद बिच्छु होगा मैया के तट में बसा करते हैं।"

"हरे काट तो नहीं खाया।"

"थोड़ासा।"

दौड़ मैं दीप उठा लाया। देखा तो जांघ को सताठ दस जगह बिच्छू ने डस लिया था। जांघ पर व्रण थे। मैं कांप गया पूछा

"कबसे काट रहा था।"

क्षीण मुस्कराकर वह बोला

"ऊँ : अभी-अभी कुछ आधा घण्टा हुआ होगा।"

क्षुब्ध होकर पूछा

"तभी क्यों नहीं कहा।"

"क्या करते?"

"मारता।"

दाँये हाथ से दोनो गालों को स्पर्श करते बोला

"राम राम मैया के तीरपर रहने वाला जीव वह उसका पुत्र, उसे मार ड़ालने की कल्पना भी मैं नहीं कर सकता।"

"फिर क्या सहन करते रहना उसका डसना?"

मुस्कराकर वह बोला

"कह तो दिया।"

"क्या?"

मैया के नामस्मरण से सहन करने की शक्ति आ जाती है। थोड़ी देर बाद वह शांत सो गया। मुझे नींद न आई बिच्छू के ड़र से।

वैसे नर्मदा किनारे की पगडंडी पर आदमी के सिवाय दूसरे पदचिह्न दिखते नहीं। नार्मदी गाँवों के आने जाने के रास्ते दो गाँव के बीच से जाते। जानकर नर्मदा किनारे से कौन जाता?

यह वहाँ के जनपद की रीत होने से जब लगातार घोडे के पदचिह्न दिखे तब अचंबा हुआ।

पैर इधर अधिक कष्ट दे रहे थे। पेट में आहुति रात में ही पड़ती यह तो करीब-करीब तय था। दिनभर गर्मी से लडते शरीर चलता रखने बहुत सारा पानी पेट में संग्रह करना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पड़ता।

पानी माने जीवन। बिना अन्न एक तरह से प्राण धारणा बनाये रखना सरल है पर पानी न हो तो आदमी एक दिन भी ठहर नहीं सकता। फिर भी 'अति सर्वत्र वर्जयेत' कहा ही गया है।

प्रमाण बाहर सेवन करने पर तो औषधि भी हानिकर हो जायेगी। सुबह से पानी का जोर रहता उसमें भूतहा चाल। पेट में पानी डुबक-डुबक बजता। अंदर से अंतडिया अन्न मांगती मैं उन्हें पानी देता।

सप्तधातुओं को अन्न की आवश्यकता रहती उसके पर्याय में दिये जाते जल को वे अस्वीकार करते फिर इसलिए केवल आवश्यक उतना ही पानी पीता।पानी की रुचि घटने लगी। पहिले जैसा बड़ी रुचि से पानी न पी पाता।

इससे गति भी पहले जैसी नहीं रही। उकता जाता। सोचा मैया की इस तरह रोज परीक्षा लेने की क्या जरुरत? कहीं किसी दरवाजे खड़े रहे और कहो परिक्रमावासी हूँ भोजन करना है तो कुछ बिगड़ने वाला नहीं है।

परिक्रमा का मुख्य साधन जो शरीर उसकी ऐसी फरफट करने से होगा यह कि एक दिन वह गिरेगा, जबाब दे जायेगा।

एक मन यह कहता, देगा दगा तो दे। किसी हेतु से परिक्रमा शुरु की है ऐसा तो नहीं। अंतकरण शुद्धि के लिए यह कर रहा हूँ, इससे अलग कैसा भी प्रयोजन इस सत्कर्म के पीछे नहीं है। अतः अगर वह पूरा न भी हुआ तो कुछ बिगड़ने वाला नहीं।

लेकिन स्मरण हो आती ज्ञानेश्वरी-गीता का छटा अध्याय।

नात्यश्नतस्तुयोगी ऽस्ति न चैकान्तमनश्नतः
न चाति स्वप्नशीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन

माउली ने लिखी ओवी भरभर कर नेत्रों के सामने आ जाती

अथवा हट से बांध
बंदी करे क्षुधा तृषा
आहार तोडे
मारकर
बंद करे नींद के रास्ते हटानंद से नाचे
शरीर जैसे न हो उसका
फिर योग किसका

जो आग्रह के कारागृह में भूख प्यास को बंदी बनाता है। भूख को मार-मार आहार तोड़ता है। नींद का नाम भी नहीं लेता केवल दुराग्रह का झंडा खड़ा किये रहता है उसका शरीर ही उसके अधीन नहीं रहता फिर वह योग का नाम भी कैसे ले?

सारांश यह कि देह राखना चाहिये वह हाथ से निकल जाये यह ठीक नहीं।

ओर घोडे के पदचिह्न का रहस्य समझ में आ गया। ऐसा है यह।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

एक बढ़िया छुटवा घोडा उसके गले में उसकी अगाडी पीछाडी वह भी बढ़िया। चौडी जीन। उसपर दोनो बाजू में थैलियाँ बंधी हुई वह भी ठस भरी हुई। अगले हिस्से में तोते का पिंजडा, जीन पर दो वर्ष का बच्चा। जीन पक्की पकड़ बैठा हुआ। घोडे का लगाम पकड़ एक सफेद वस्त्र पहिने माई चल रही है पीछे महन्त।कंघी किये बालों का टोपा सरपर बाँधे हुए। कुल मिलाकर चित्र ऐसा जैसे कोई सवारी जा रही है।

सब काम होले से। जल्दबाजी कहीं भी नहीं।

"नर्मदे हर!"

मेरी तरफ घूरते हुए महंत ने कहा

"हर नर्मदे क्यों फक्कड परिक्रमा कर रहे हो क्या?"

"जी हाँ आप भी शायद!"

"हाँ परिक्रमावासी हूँ।"

अचंबे से पूछा

"तब ये घोडा-ओडा।"

महंत एकदम उखड़कर बोले

"हाँ, हाँ घोडा पाला है। चारे के दाम तुम्हे थोड़े ही खरचने पड़ते हैं।"

"नहीं जी मेरी कोई आपत्ति नहीं है। घुडवा बढ़िया हैं।"

माई ने पीछे मुडकर देखा। उसके माथेपर गोपीचन्दन का टीका।

वह बोली

"नाराज क्यों होते हो?"

महन्त बोले

"न होऊँ तो क्या करुँ जो आता है वही पूछता है घोडा किसलिए पाला है। जैसे इनके ही गाँठ. . . .।"

माई मुझे निहारती बोली

"बच्चे परिक्रमा कर रहे हो।"

"हाँ माई।"

"अरे फिर कुरजी उरजी।"

"नहीं रखता।"

"फिर भोजन का क्या करते हो?"

"किसी ने खिला दिया तो______।"

चकित हो माई बोली

"दैय्यारी! सदावर्त में जाकर दाल आटा नहीं लाते।"

मैंने केवल मुंडी हिलाई और आगे बढ़ माई के साथ चलने लगा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

करुण होकर वह बोली

"ऐसा नहीं करना चाहिये बेटे। जनलोक सद्भावना से सदावर्त खोलते हैं उसमें क्या क्या मिलता है। आटा दाल रामरस एक दो मिरची यह तो सभी जगह मिलती है अरे कहीं कहीं तो कौंडीभर घी भी देते हैं बेचारे। ईश्वर उनका भला करें। तो उनका ऐसा अनादर नहीं करना चाहिये। पाप लगता है।"

बड़े मजे के थे उसके तर्क मेरे लिये

पाप पुण्य की व्याख्यायें भी काफी पकी हुई।

मैंने कहा

"उनके सदावर्त की चिंता हम किसलिए करे माई हम अपना हित सोचे।"

"वही तो मै कहती हूँ। क्या उमर है तुम्हारी बेटे?"

"ठीक से याद नहीं पर होगी कोई बीस बाईस।"

"दैयारी सूरत से देखे कोई पंधरह सोलह के लगते हो क्यों जी?"

"क्यों जी? घोडे के पीछे चल रहे थे उदासीन।" उन्होंने कोई उत्तर न दिया। माई ने ही कहा

"बच्चे परमार्थ करना सरल नहीं है। उसके लिए देह मजबूत चाहिये। भरपेट खानापीना चाहिये किसी बात की कसर नहीं करनी चाहिये। अरे लोग क्या वैसे ही थोड़ी दान पुण्य करते हैं। अपने किये पाप के प्रायश्चित रुप में दान धर्म करते है। उनके पाप जल जाने में सहयोग देना यह भी पुण्य कर्म ही है। हमारा ही देखो सुनो।"

"सुन रहा हूँ कहते चलिये।"

अभी तक आठ परिक्रमा हो गई। यह नौवी चल रही है

अचंभे से मैंने पूछा - "नौवी?"

"क्यों जी नौवी ही है ना। हाँ नौवी ही है। तो रास्ते में जो भी जो कुछ देता है वह-वह हम ले लेते हैं। किसी ने आटा दिया आटा। दाल दी दाल। खजूर दिया खजूर बहुत बोझ हो जाता था उसको ढोना कठिन होता था। तो मैया ने घुडवा दिला दिया। देखो क्या नाम था उस गाँव का वहाँ का मुखिया नहीं रहा। उसके लड़के ने बाप का घोडा दान देना चाहा। हम चट आगे हो गये। हम माने गुसांई जी। घोडा लिया। लोगों ने निंदा की पर लोगो को निंदा करने को क्या लगता है? मजबूत जीभ केवल। वह सबके पास होती है। सब बोझा ढोने थोड़े ही आते हैं। पर उस भले आदमी ने केवल घोडा नहीं दिया।"

"फिर?"

"अजी घोडा, उसकी जीन, लगाम, अगाडी पिछाडी सब-सब दिया। अब उसके पिता को स्वर्ग में यह सब मिल जायेगा।"

तर्क बराबर था। मुंडी हिलानी पड़ी। एक बार ऐसा लगा कि उसे वह कहानी कहूँ-

पितृतर्पण कर रहे व्यक्ति को चार्वाक ने पूछा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"यह पानी तुम हाथ से किसलिए नीचे गिरा रहे हो?"

"मेरे पित्तरों को मिले इसलिए।"

"वे कहाँ है?"

"स्वर्ग में।"

"स्वर्ग कहाँ हैं?"

"खूप दूर आकाश में।"

चार्वाक उसी के पास खड़ा हो दोनो हाथ से किनारे पर पानी उड़ाने लगा। तर्पण करनेवाले ने पूछा

"ये क्या कर रहे हो जी?"

"मेरे खेत में पानी पहुँचा रहा हूँ।"

अचंभे से तर्पक ने पूछा

"खेत कहाँ हैं?"

"यही पास है एक कोसपर।"

पर मैंने वह कहानी कही नहीं। माई के पल्ले न पड़ती वह पूछती आगे क्या हुआ? जिसका कोई जबाब नहीं होता। दूसरे मेरे तर्क से अंधश्रद्धा के बुर्ज की एक ईट भी ढ़ीली न होती

दोपहर के मुकाम की जगह आ गई। मैं आगे बढ़ रहा था माईने आग्रह से रोक लिया बोली

"बच्चे रह जाओ दो चार दिन हमारे साथ। मुन्ने को थोड़ा बहला दिया करना बस। तुम्हारे हिस्से का सदावर्त ले आया करेंगे।"

"हमारा भी तो लाते ही हैं। मैं बनाकर खिलाऊँगी भरपेट खाना। जरा हालत सुधर भी जायेगी।"

जीनपर बंधी बालटी उसने खोल ली मुझे बोली

"जाते क्या बच्चे पानी लाने मैया का। सच में तो उसे दूध कहना चाहिये पर जाने दो, संभालकर लाना नहीं तो फैलाते आओगे।"

बच्चा चला पानी लेने। तबतक माई ने कुरजी खोली चमकते माँजे पतेली, तवा, परात, थाली, फुकनी, करछुल, चिमटा, ढकनी, डेकची, चम्मच छोटे बड़े सब-सब था। किसी बात की कमी न थी। पूछा

"ये सब सदावर्त में मिलता है?"

बड़ी-बड़ी आँखें दिखाते माई बोली

"देखो तो! सदावर्त में कैसे मिलेगा?"

"फिर!"

"मोल लिया।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"नहीं मोल लेने दाम वह कहाँ से आये?"

"क्या है बच्चे यहाँ बहुत सी चीजे बढ़ती रहती हैं धोतियाँ, साडियाँ, चद्दरें हम सब लेते रहते हैं। अधिकार से। फिर आवश्यक उतना रख लेते हैं बाकी बेच देते हैं।लेते हैं लोग उन्हें क्या? अनायास दरवाजे तक आया हुआ। वैसे ऐसी चीजे उन्हें भी कहाँ से मिलती हैं। स्वार्थ, परमार्थ दोनो।"

"माने गाँजा भी मिलता है सदावर्त में।"

दयार्द्र हो मेरी तरफ देखते माई बोली

"तुम सदावर्त लेते नहीं तुम्हे मालूम नहीं। गांजा नहीं मिलता। टका खर्च कर लेना पड़ता है।"

मुन्ने को मुझे सौंप दोनो मैयापर नहाने गये। घंटे भर बाद लौटे। कितने ही प्रयास किये पर रोता मुन्ना चुप न हुआ। आकर उसे गोद में लेते माई ने कहा

"तुम जैसे सीकिया आदमी के पास मेरा राजाबेटा जाते ही रोता है।" फिर ईंधन इकट्ठा किया। गोबर और लकड़ी। रसोई में मदद की। भरपेट खाया। भरपेट ही। बरतन माँज लाया। पेड़ की शाखा पर माई ने झूला टांगा। मेरे हाथ में डोरी देते बोली

"जरा झुलाते रहना। थोड़ा लेट लूँ। गुसांई जी आप भी इस साया में पड़ रहो तनिक।"

दोनों ढेर सोये दो घंटे तक। राजाबेटा को झुलाता और घोडे की रखवारी करता रहा।

माई उठी तब उसे कहा

"सम्हारो अपना राजा बेटा और घुडवा।"

आश्चर्य से उसने पूछा

"अरे कहाँ चले?"

"हर नर्मदे।"

"अरे रहनेवाले थे ना!"

उत्तर नहीं दिया। चल पड़ा। पीछे सुना माई कह रही थी "अरे बेटे अगले मुकाम पर कोई एक कम्बल बांटता है तुम्हें तो कुछ नहीं चाहिये लेकर हमें दे फिर जाते।"

शाम को मुकाम पर पहुँचा तब पैर में दर्द था। जंगल शुरु हो गया था। और एक बड़ा कांटा घुस गया था पैर में। तुरंत निकाल फेंका फिर भी चुभन थी, दर्द था। उसे सेंक लेना था। मैया के तीर एक आगी जल रही थी वहाँ पहुँचा। कोई पक्रिमावासी पक्कड थाली औंधाये फुकनी से रोटी बेल रहा था। बेलन भी, फुकनी भी। दोहरा लाभ। उसकी चतुराई देखी। पूछा

"हर नर्मदे! क्या थोड़ी आग मिलेगी?"

"नर्मदे हर! क्यों नहीं मिलेगी? बाबा जरुर मिलेगी।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उसने जलता कंडा बाहर निकाल दिया। उसे सामने रख उसपर पैर पकड़ते बोला।

कहावत हैं न आम के आम गुठलियों के दाम

"क्या मतलब?"

"यह बाँस का टुकडा बेलना भी और. . . . . ।"

बड़ी उदासीनता से फक्कड ने कहा

"अब ये सामान यहीं छोड़कर आगे बढ़ना होगा।"

"क्यों?"

"मालूम नहीं भील बस्ती शुरु हो रही है।"

भील बस्ती के विषय में सुना तो बहुत था। कहते हैं वे सारा सामान छीन लेते हैं। परिक्रमावासियों के पास होता ही क्या है। एक कुरगी उसमे नमक आटा किसी दाता ने दी हुई कांबरी, चद्दर, दो चार बरतन, पहिनने के वस्त्र पर इसमें से एक भी छोड़ते नहीं। सब कुछ लूटकर एक लंगोटी पर सबको बस्ती के बाहर कर देते हैं। चुपचाप दिया तो ठीक नहीं तो प्रतिकार करने पर सामान तो लूटते ही हैं मारपीट भी करते हैं।

फक्कड़ ने कहा

"कहाँ-कहाँ क्या-क्या मिला था। होशंगाबाद में वहाँ के नगरसेठ ने यह ब्लांकिट दिया था इतने दिन सिरपर ढोया। अब वह उन साले भीलों को देना पड़ेगा।"

वह मेरी तरफ देखता रहा और एकाएक बोला

"अरे आपके पास तो कुछ भी नहीं है।"

मैंने कहा

"ऐसे कैसे कहते हैं। यह तुंबा, यह ग्रंथ, यह फटी कांबरी, लंगोटी।"

निषेध सूचक मुंडी हिलाते वह बोला

"नहीं जी ये सब उन्हें नहीं चाहिये। वह तुम्हारी फटी कांबरी सौ छेद हैं उसमें, वह लंगोटी। उसका क्या झंडा बनाकर लगायेंगे झोपडे पर।"

लंगोटी का झंडा बताने की उसकी कल्पना पर मुझे हँसी आ गई। उसे दबाते मैंने कहा।

"जाने भी दो। भीलों को देना न हो तो फिर यही किसी को दान कर ड़ालो।"

एकदम फक्क्ड बोला

"किसे दूँ-तुम लोगे?"

इस समय खुलकर हँसा। डूबती नाव के चूँहे नाव का माल बाट देने की उदारता दिखायें वैसा ही।

दूसरे दिन सुबह ही यह समझ में आ गया कि भील बस्ती के पास आते ही सभी परिक्रमावासी ऐसे ही उदार हो जाते हैं। जो पाँच सात फक्कड मिले वे अपने-अपने संग्रह के सम्बन्ध में ऐसे ही उदासीन हो गये थे। एक उनमें नगुरु भी था। उसने अपना सामान

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दो चार मुकाम पहिले ही बेच डाला था। सारे रकम की एक पोटली बनाई थी। पैर को फोडा हुआ हो और उसपर पुलटिस बाँधी हो वैसी वह पोटरी उसने पैर से बाँधी थी। उपर गीली मिट्टी थोपी थी उसपर चिंधियाँ बांधी थी।

उदासीन हो रहे फक्कडों को उसने कहा

जादृसी सीतला देवी तादृसं खर वाहनं

"मतलब।" - किसी ने पूछा

"अरे मतलब काहे का? अब खूब लंगडाता हुआ चलूँगा। ससुरे मेरे पास आवेंगे ही नहीं भीलवाडा पार करने के बाद फिर से सब कुछ खरीद लूँगा।"

सारे हारे से हो गये। दो एक ने उसका अनुकरण करने का क्षीण प्रयास भी किया उसने उन्हें नीचा दिखाते कहा

"असल तो असल नकल तो नकल।"

आगे भीलबस्ती पार कर जाने के बाद ज्ञात हुआ कि ससुरे उससे भी अधिक चतुर निकले।

उन्होंने वह झूठा फोडा फोड रकम तो छीन ही ली परंतु ऐसा फंसाने की कोशिश की इसलिए खूब पिटाई भी की।

दो चार ने मेरी तारीफ की। उसी में से एक ने मुझे हितोपदेश किया था।

"कोई दाता दे रहा हो तो मना न करना चाहिये।"

"गरज न हो तब भी।"

"ब्रह्मचारीजी आप तो बुद्धु के बुद्धु ही रहे। अरे तुम्हें आवश्यकता नहीं यह तो ठीक। पर हमें तो चाहिये है हमें दे दिया करो। पर कम से कम किसी दाता को लग रहे पुण्य पर पत्थर तो मत मारा करो। राम-राम ये मामूली बातें सिखानी भी पड़ती हैं। कहीं।"

वही फक्कड भील बस्ती के इधर मिले तो देखते ही बोले

"सुदामजी आप अच्छे रहे बोझा भी ढोया नहीं और अब चिंता भी नहीं किसी चीज की।"

मैया का पात्र यहाँ मैदानों की अपेक्षा संकरा है। यहाँ उसे पत्थर पहाड़ काटते बहना पड़ता है। पात्र में गोल मटोल बटैयाँ। बहुत-बहुत। कैसे-कैसे उनके रुप देखते ही रहने की इच्छा होती रही। उन गोल बटैयों को हलका हरापन कुछ ऐसा था कि लगे देखते ही रहें।

पर इस रुप पर मैया ने वैसा ही बुरखा लिया हुआ था। दो तरफ का जंगल उतना ही घना था। एक भला भारी बर्हिगोल चक्कर। परिक्रमावासी उस घुमाव का वह जंगल टालते। वह उतना प्रदेश मैया की साथ-संगत छोड़ वे सीधे निकल जाते और चारपाँच मील के बाद किनारे के पास आते। मैं भी उसी रास्तेसे निकला था। पर थोड़ा चलकर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जाने के बाद फिर पीछे लौट आया।

मैया का साथ छूटना ठीक नहीं लगा। यह एक पर इससे भी बड़ी बात थी वनमोह। जंगल के घनेपन ने खींचा था। घना भी कैसा कह नहीं सकता। भालू के जैसे बाल। भेडपर जैसे उन वैसा गहन।

पेड़ से पेड़ भिडा था। घुसा था। एक दूसरे को धकेल रहा था। नयों को उगने के लिए बढ़ने के लिए जगह नहीं थी। वे बड़े पेड़ों पर ही उग आ रहे थे। घास और छोटी वनस्पति तो वही उगती हरियाती, सूखती फिर अंकुराती। फिर नई फूट नया विस्तार। जंगल में बगीचे सजे।

तली में सालों साल की पत्तियाँ जमी थी। सड़ सड़ मिट्टी हो रही उसमें हजारो लाखो कृमिकीटकों का राज। मेरे पैरों रखते ही मेरे पैरो पर चढ़ आये। झटक ड़ाले तो पागलों जैसे यहाँ-वहाँ दौड़ने कूदने लड़ने लगे। नर्मदा मैया की तरफ से खुला था इसलिए ठीक नहीं तो उस घने अरण्य में प्रकाश भी न पहुँचता।

बड़ी कठिनाई से रास्ता काटता चल रहा था। जानता था मैया की कगार सीधी कटी हुई है। कटाव से सटकर पानी कल्लोल करता बह रहा है। पैर अगर चूका तो जल समाधी सहज मिल जायेगी।

रास्ता इसी घने वन से खोजना था। फिर वैसा ही घुसता चलता चला। एक दो बार शरीर का पानी होकर धार सीधी पैरों तक चली गई। पैर जैसे नीचे किसी रस्सीपर पड़ा था बच गया। मैया ने बचा लिया। वह बिना फुस्स किये सरसराता निकल गया।

अचानक जाना कि बेंतवन में मैं हूँ।

कितने बड़े बेंत। दोनों पंजों की पकड़ में भी न आ सकते। तल से निकली फूट आगे निकल एक दूसरे में फंसी हुई। उसका पिंजडा बना। अबतक सीधे खड़े पेड़ो से रास्ता निकालना फिर भी सरल था पर बेंत के इस पिंजडों मे से निकलना संभव ही नहीं था।

पर मैं बढ़ता रहा पूरी शक्ति लगाये। सारी देह कट फट गई। माई का प्रवाह दाहिने हाथ था उसका मोह छोड़ा न जा रहा था। हाथ में तुंबा और पुस्तक थी उसे संभालना। बड़ी ही मुश्किल हो गई। कंधे पर रखा कंबल तो तार तार हो गया।

जाने कैसे सारा जोर लगाकर उसमें से बाहर आया। थोड़ी खुली जगह थी वहाँ तक। आगे फिर वैसा ही पिंजडा जंगल था। थका था बुरी तरह से। वहीं जमीन पर लेट गया। दोनो हाथ सिरहाने ले लिये। हाँपना सिराने लगा। सीने की उड़ती पसलियाँ सामान्य करनी थी। दिन झुक गया था। हवा थी ही नहीं जैसे अबतक। पर मंद हवा चलने लगी। सुख हुआ। वह मन्द पवन शरीर को सहलाते निकलने लगी। और एक झपकी लग गई।

जगा और तडाक् उठ बैठा वेणु कौन बजा रहा है?

इस गहनवन में तो कहीं आदमी की गंध भी नहीं। और फिर ये इतने वेणु वादक कहाँ से आ गये। हवा जोर से चलने लगी। और कोई वाद्य वृंद सातों सूर फूँक रहा हो वैसे स्वर आने लगे। दचक कर चारों ओर देखा। पर कोई कोई न दिखा। स्वर आते

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

रहे।

चिल्ला उठा। अरे भई कौन है? कौन बजा रहा हैं बंसी? कोई नहीं। कोई भी नहीं। आश्चर्य कोई कैसे नहीं?

बौरा गया। यह तो मानना ही पड़ेगा। वह तो पास से बहती मैया का आसरा था। नहीं तो क्या कुछ हो जाता।

हवा एकदम बंद हो गई। और वीणा वादन भी बंद हो गया।

अरे यह क्या? तुंबा पुस्तक वहीं छोड़ा और फिर वेणुवन में घुस गया वहाँ जाकर उन मोटे बेतों को देखने लगा। एक तर्क के वशीभूत होकर, तर्क ठीक था। बड़े-बड़े भौरों ने उन मोटे-मोटे बेतों को उपर से छेद-छेद अंदर से पोले कर रखे थे। उसमें हवा घुसती थी और ऐसा स्वर निकल रहा था। बेतवन का वह मुरलीवादन। उस लीलाधर की नित्य क्रीडा थी। इस समय मैं उसे जान गया। फिर हवा चली। जो-जो हवा जोर करती उन असंख्यात स्वरवाद्यों से नाना सूर निकलते। खर्ज से तारस्वरतक। सारे सप्तक बजने लगते।

एक बार यह स्वरलीला ज्ञात हुई और फिर जो आनंद हुआ उसका क्या वर्णन करें? बेतवन में ही बैठा रहा। हवा की राह देखता स्वरवाद्य तैयार थे। आवश्यकता थी फूँकने की। कुछ देर हलका-हलका पवन बहता भी रहा फिर वह बंद हो गया। जो स्वरमेल मैं सुनने को आतुर था वह सुनाई न दिया। राह तकते थक गया और फिर उस अद्‌भुत स्वरलीला पर आश्चर्य करता अपनी राह खोजते चल पड़ा।

कमर से एक पुरानी धोती लपेटी। छाती के ऊँचाईयों को एक चिंदी से ढँके। सिरपर बेतरतीब बाल, पेट बड़ा भारी मटका ऐसी एक भीलनी का दर्शन रेवा मैया पर ही हुआ।

पैर पानी में लटकाये एक चट्टानपर बैठा था। स्नान कर लिया था। लंगोटी सूख रही थी। बेतवन में राह खोजते देह पर जो घाव लगे थे उसपर दवाई कर रहा था। औषधि माने वैद्य ने बताया लेप नहीं कगार की मिट्टी वह पानी में भिगोकर घावपर लगाई थी। धूप में उसे सुखा रहा था। उससे भी पर बड़ा सुख था।

भीलनी आई। गगरी पर यूँही हाथ फेरा एक बार खंगारी फिर उसे एक तरफ रख वह पैर रगड़ने बैठ गई। पास ही में मै। केवल एक लंगोटी लगाये। देह पर मिट्टी थापते बैठा था। उसकी दखल भी उसने नहीं ली। पेर रगड़ लिये वह उठी। गगरी पानी से भर रेत में पैर धसाते वह चली गई। उस काले पैरो में पड़े रांगे के पैजन उतने केवल धूप में चमकते रहे।

मानूँ या न मानूँ तो भी वह एक तरह से अवमान ही था मेरा। अध्ययन, पांडित्य छोड़ दूँ तो भी मानवता। उसे पूछना चाहिये था कि ये इतने घाव कैसे हुए। एक शब्द से भी पूछताछ नहीं की।

गुस्सा आ गया। एक बार फिर पानी में उतर देह खंगार ली। फिर लंगोटी तुंबा ग्रंथ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

सबकुछ उठा लिया। वह गायब हो गई थी उस रास्ते से निकला। आखिर भील भी तो आदमी ही हैं। कोई नरभक्षक नहीं। काटकर नहीं खाते।

कगार चढ़ गया। देखा किनारे से लगी वनराई में दस बीस झोपडे थे। सीधे उस रास्ते चढ़ा। झोपडों के पास ही एक घना गोल पेड़ था। वहाँ पहुँचा तलकी मिट्टी थोड़ी साफ थी। सामान लगाया और पदमासन लगाये बैठ गया। आँखे अधखुली रखी कोई सोचे योगिराज ध्यान में बैठे हैं। ब्रह्म साक्षात्कार होने ही वाला है।

अधखुली आँखो से देख रहा था। भील बस्ती। वे चारों ओर इकट्ठा होना जरूरी हैं।

बहुत देर नहीं लगी। पदमासन फलप्रद हो गया। पांच सात नंगे उघाडे छोरे मुझे देख चारो ओर इकट्ठे हो गये। बिलकुल पास नहीं आये। दूर से देखते रहे सब। उनके साथ एक कुत्ता। वह साला इतना विनयशील नहीं था। मेरे पास आया। सूँघकर देखा फिर थोड़ा पीछे हो भूँकने लगा। बच्चे हंसने लगे।

फिर भी आसन न छोड़ा। वैसा ही जानबूझकर बैठा रहा। एक छोकरे ने कुत्ते को भगाया वह पीछे हो गया पर भूँकता ही रहा। हाथ में तीर कमान लिये आधी उमर का चपटे नाक का एक भील झोपडी से निकला और शोरगुल सुन इस दिशा की ओर ही आया। दूर से उसने छोरों को आवाज दी।

"का है?"

पास आने पर उसने देखा। कुछ भी नहीं एक लंगोटी बहाद्दर उघाटा जटाधारी पेड़ के नीचे पदमासन लगाये बैठा है। सामने था एक तुंबा और एक ग्रंथ।

भीलवाडे की उस बस्ती के लिये यह आश्चर्य ही था। तब तक का अनुभव ऐसा कि परिक्रमावासी साधू बैरागी भीलवाडे के पास आते ही डर से काँपने लगते और ये तीर कमान वाले सामने आते ही जो कुछ पास होता वह चुपके से उतार रख देते। और जान बची लाखो पाये यह सोच कर तय रास्ते से भीलवाडा के बाहर चले जाते।

और इस जटायु नंगे ने तो सीधे भीलबस्ती पर ही आक्रमाण किया था। दूवरा खरगोश शेर की माँद के सामने खम ठोककर खड़ा हो ऐसी बात हो गई थी।

वह भील आया और मुझसे थोड़ी दूरपर बैठ गया। उकडूँ। मेरी तरफ एक नजर देखने लगा। धूप में काले पड़े और अंगुली अंगुली हजामत बढ़े उसके चेहरेपर बड़ा आश्चर्य समाया था।

उसके पीठ से वे उघाडे नंगे बच्चे आकर सट गये। उनपर वह एक बार झल्लाया भी। और फिर उसने मेरी ओर दृष्टि गड़ाई कुछ देर बाद थोड़ा आगे सरक उसने ग्रंथ हाथ में लिया उसे खोला और फिर बंद कर जस का तस रख दिया। मैं यह सब देख रहा था। पर उसे मना करने 'का धीरज न हुआ।

उसके पीछे पीछे वैसे ही चार दो तगडे जवान मेरे पास आये। तब आसन तोड़ने की जरुरत थी। जिसके लिऐ यह नाटक रचा वह साध्य हो गया था। मन में आया कि इस सबको आश्चर्य का एक झटका और दिया जाये।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

पदमासन छोड़ा और एक क्षण की भी देर किये बिना वहाँ के वहाँ शीर्षासन कर उलटा खड़ा हो गया।

वे सारे भील आश्चर्य के समुन्दर में चोटी तक डूब गये। कितना आश्चर्य। अपने जैसा ही एक आदमी सीधा अपना उलटा खड़ा रहे न हिलते न डुलते माने क्या?

उन सबकी लाल आँखे एकटक मुझे निरखती रही। मैं अकेला उन सबका विषय बन गया।

कुछ देर बाद धीरे से बिना कोई गडबड किये शीर्षासन उतार दिया और ग्रंथ खोल पढ़ने बैठ गया। मैं टालने योग्य व्यक्ति नहीं हूँ यह उनकी समझ में आ गया था।

अब दौड़कर जाकर छोरे एक बुड्ढे को बुला लाये। वह आते ही छोरे एक तरफ हो गये। जवानों ने भी थोड़ा पीछे हट उसको जगह दी। पहिना हुआ संवारते वह भी उकड़ूँ बैठ गया। कंधे पर रखा धनुष्य निकाल उसने आडा सामने रख लिया। फिर बाण के छोर से मेरे ग्रंथ की ओर संकेत करते उसने मुझसे पूछा

"जे का है?"

मुस्कराते हुए उत्तर दिया।

"जे भगवान की पुस्तक है।"

"जामें क्या लिख्खा है।"

"जामें भगवान की बातें लिखी हैं देखोगे?"

ग्रंथ उसके सामने किया उसने एक बार उलट पुलट देखा फिर उसे मुझे लौटाते हुए वह बोला

"पढ़ना जानते हो!"

"हाँ!"

"पढ़ो!"

गीता भाष्य उठाया खोला जो पृष्ठ सामने आया उसे पढ़ना चालू किया।

अभीतक मेरे सामने जों जवान इकट्ठा हुए थे उनसें ये बुड्ढा अलग था। उन्हें मेरे लिये कुतुहल था। उसमें से एक ने मेरे ग्रंथ को हाथ लगाया था पर उसके आगे कुछ करने का साहस उसने नहीं दिखाया था। यह वृद्ध उनका मुखिया होना चाहिये। कान में पहिनी बाली भी यही बताती थी। सिर पर एक चिंधी बांधी हुई थी। बदन में कुछ पहना नहीं था फिर भी छातीपर गुदे गुदने को देख मैं उसका अनादर नहीं कर सकता था।

लेकिन उसका व्यवहार कोई डर लगे ऐसा नहीं था। उसमें भी अपने धडाधड पंडिताई से वह कुछ हबका था। पृष्ठ दो पृष्ठ पढ़ ठहर गया एक बार मुखिया की मुद्रा देखी वहाँ से पहला जोश बुझ गया था [illegible] जाग गई थी जिज्ञासा। वह मेरा पढ़ना मुँह खोल सुन रहा था।

ठहर गया। वह बोला

"[illegible]?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"नहीं तो अभी बहुत है।"

"जाका मतलब का है?"

हाथ आकाश की ओर उठाते हुए कहा

"मतलब मतलब बहुत ऊँचा है सभी बताना कठिन है लेकिन भगवान की बातें हैं।"

बड़े आश्चर्य से उसने पूछा "अच्छा कहाँ पढ़ लिया?"

"गुरु के घर खूब मेहनत करके।"

गुरुमाने क्या यह उसके समझ में नहीं आया। कैसे समझाऊँ समझ में नहीं आ रहा था। आखिर में कहा

"गुरु माने बड़ा पण्डित। पण्डितों का मुखिया।"

अब उसकी समझ में आ गया ऐसा लगा उसने मुंडी हिलाई।

मैंने आगे कहा-

"आसान थोड़े ही है। बहुत मेहनत करनी पड़ती है। भले सबेरे उठना। मुखिया की सेवा करना। काम धाम करना। पढ़ाया सौ-सौ बार रटना। तब कहीं जाकर थोड़ा सा आता है।"

मुँह पर हाथ रख वह सुनता रहा फिर उसने कहा

"और ये उलटा खड़ा होना।"

अब मैं शेर था। उठा। थोड़ी जमीन साफ की और एक के बाद दूसरे आसन झड़ी लगा करने लगा। पदमासन, उत्थित पदमासन, तोलासन, सर्वांगासन, गरुडासन, हलासन, मयूरासन।

आश्चर्य से वे देखते रहे। मुँह में अंगुली ही नहीं ड़ाली। ठहरने के बाद सब की ओर देखा मैं जीता था। फिर जगह पर बैठ गया। इस समय पीछे सरक उन सबोंने मुझे जगह दी। हाथ से घुटने बाँधते हुए कहा

"अच्छा एक बताओगे?"

"पूछो।"

"तुम लोग परिक्रमावासियों का सामान क्यों छीन लेते हो?"

धीरज कर पूछ तो लिया। अंदर थोड़ी बहुत धुकपुक भी थी पर तीर चल गया था। मुंडी हिलाते हुए मुखिया ने कहा-

"आज ही थोड़ी ले रहे हैं। वह तो हमारा पिढ़ी दर पिढ़ी पुश्तैनी हक है।"

"किस बात का?"

"हम मैया के पुत्र वह हमारा इन्तजाम इस तरह करती है।"

"माने दूसरों को लूटकर।"

"लूटते नहीं! ऐसी गालियाँ न दो।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"छीन लेने का दूसरा अर्थ क्या होता है?

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"हम जो उनसे लेते हैं वह भी उनका अपना कहाँ होता है? वह भी किसी-किसी से इकट्ठा किया हुआ ही होता है। मैया हमारे लिए उनके साथ भेजती है।" बार-बार वह लूटने का आरोप अस्वीकारता रहा।

"मैया तुम्हारे लिये भेजती है ना फिर मेरे साथ यह तुंबा और पुस्तक भेजी है वह लो यह लंगोटी भी लो।"

मुँह में मारते हुए मुखिया बोला-

"राम-राम ये क्या कहते हो? हम क्या आदमी नहीं पहचानते।"

"वह मुझे मालूम नहीं। पर दरवाजे पर आये मेहमान के खानेपीने की पूछताछ न करने का रिवाज आपका है शायद।"

आश्चर्य से उसने पूछा

"मतलब?"

"यही कि दोपहर टल गई है देख रहे हो कि कबका तुम्हारी बस्ती आसरे बैठा हूँ। न जाने कहाँ-कहाँ की बातें पूछ रहे हो बस इतना ही न पूछा कि भई तुम खा पी चुके या नहीं।"

उसने कहा

"आप तो हमें लूटेरा कह रहे हो हमारे घर का आप पाओगे?"

"लुटेरों को क्या रीती रिवाज नहीं होते?"

मुंडी हिलाते हुए मुखिया ने कहा

"हम जो खाते हैं वह आप नहीं खा सकते।"

"क्यों?"

गुस्से में वह बोला "मुँह उठाकर लुटेरे कहना सरल है। पर हम क्या खाकर जीवन निर्वाह करते हैं इसकी पूछताछ कभी सियानों ने की है। कंद मूल जंगल के बेर आंवला चिरौंजी और यह सब नहीं मिलता तो हाथ में लग जाये वह पंछी।"

एकाएक मेरी तरफ देख उसने पूछा

"कौवा खायेंगे? भूनने पर बहुत अच्छा लगता है।"

साश्चर्य मैंने पूछा

"कौवे खाते हो।"

दीर्घ श्वास छोड़ते हुए वह बोला

"भूख के समय जो मिल जाये वह पंछी। चील उल्लू भी। भूख को सब चलता है।"

तब तक उघाडी नंगी बड़े-बड़े पेटवाली बच्चियाँ जमा हो गई थीं उनके कमर पर बैठे वैसे ही छोटे बच्चे। हाथ के बाण से उनकी ओर संकेत करते हुए मुखिया बोला

"इन लड़कियों के पेट बड़े हो गये हैं। आप हंस रहे हो।"

मैंने वह आरोप अस्वीकार किया। जोश से वह बोलता रहा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"आप चाहे न हँसते होंगे पर शहर के सियाने हंसते हैं। एक बार एक गोरा भक्क साहब शहर से चार सियानों को लेकर आया था वह हँस रहा था।"

"फिर?"

"उस गोरे साहब ने पूछा इनके पेट क्योंकर लटक आये हैं।"

"तुमने क्या कहा?"

"मालूम नहीं।" क्या बताया। फिर उसने पूछा खाते क्या हो। फिर हम खाते हैं वे कंद मूल उनके सामने लाकर रख दिया। उसमें से एक कंद को लेकर एक शहरवाले ने दाँत से थोड़ा काटा।

"तो फिर?"

"फिर क्या? कुछ नहीं दिनभर उसका मुँह टेढ़ा ही रहा। रास्तेभर वह थूँकता और गालियाँ देता रहा।"

"क्यों?"

"अरे वह कंद कडवे जहर रहते हैं। वे चारचार दिन आग में गाड के रखने पड़ते हैं। तब उनकी कड़वाहट कम होती है। ऐसा होता है हमारा खाना। ये भी पेटभर मिलता ही है ऐसा नहीं। फिर ये लड़कियाँ औंधी पड़ी रहती हैं। ऐसा पड़ा रहने से. . . . . .।"

"कहिये-कहिये भूख की परेशानी नहीं होती।"

ठगासा बैठा रहा। मुखिया भी। कुछ देर बाद उसने कहा।" ऐसे घने जंगल में रहना एक बालिश्त जमीन पैदा करने के लिए नहीं। फिर जिंदा रहना हो तो जो कुछ हाथ पड़े उसे खाना होगा बाँस के अंकुर, आंवला, हर्र के पत्ते जो मिले वह।"

मुंडी हिलाते हुए कहा

"अब नहीं कहूँगा।"

"आप अकेले नहीं कहेंगे पर दूसरो का क्या?"

"मेरी आवाज जहाँ तक जायेगी वहाँ तक कहूँगा कि ये लूटेरे नहीं है।"

मुखिया चुप बैठा रहा

कुछ देर बाद मैंने ही कहा

"मुखिया जी वे कंद कहाँ है लाइये तो ।"

घूमकर उसने पूछा

"काहे के लिये?"

"फिर खाऊँ क्या?"

मुंडी हिलाते हुए उसने कहा

"ना बाबा जोगी हैं। भगवान के भक्त हैं। सब हमसे ड़रते हैं। आप सीधे हमारे बस्ती में आकर बैठ गये। निरंकारी हैं आपके पास ओढ़न बिछावन भी नहीं है। आप हमारे मेहमान हैं। आपकी खातिरदारी करनी ही होगी।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मुखिया उठा बस्ती की ओर गया। कुछ ही देर में वह एक लोटा लिये आया।

झोपडे के पास दस बीस मकई के पौधे जम गये थे उसका आटा है नमक के दो ढ़ेले हैं मिरची हैं। परंतु पकाओगे काहे में आपके पास तो कुछ भी नहीं हैं।

उसने फिर एक छोरे को दौड़ाया वह बस्ती से एक कांसे की थाली लेकर आया। मुखिया ने पूछा

"चलेगी न यह थाली?"

साश्चर्य पूछा "क्यों न चलने को क्या हो गया?"

"इसलिए कि यह एक परिक्रमावासी फक्कड़ की है लूटका माल है।" दौड़कर एक छोरे ने कंडे लाये। दूसरे ने आग। जगरा लगाया। और बने जैसे उस मकई के आटे के रोट बनाये। पांच सात हो गये वे इतने मुझे क्या करने थे कुछ मुखिया को पकड़ा दिये। उसने वह परशादी बस्ती में भेज दी।

भोजन किया। शाम हो गई थी। वही झाड़ जगह साफ की आसन लगाया उन्हें समझ सके ऐसी भाषा में एकलव्य और व्याध की कथा सुनाई। अंधियारा हो गया। चार दो जवान मेरे पास ही सोये। मुखिया ने उठते हुए कहा

जोगी महाराज कल के दिन रहिये-

"एक शर्त पर!"

"बोलिये?"

"आप तीर चलाना दिखायेंगे तो।"

मुस्कराकर मुखिया ने कहा

"तीर कमान हम मजे के लिए थोड़े ही रखते हैं। वह तो हमारा जीवन साथी है। भाई जान है। इस भयावने जंगल में भील किसके सहारे जीता है। तीर कमान के। पर आप हमारे तीर कमाल की कमाल देख भी नहीं सकते।"

"क्यों?"

"आप तो आँखे बंद कर लेंगे। तीर सीने में घुसते ही पंछि और पशु की जो फडफड होती है वह कैसे देख सकते हैं आप।"

क्षणभर रुक मुखिया ने कहा

"हम तीर कमान मनमौज में भी नहीं चलाते। हमें भी दया माया है। कोई सुअरी अपने बच्चों को पिलाते खड़ी है। उसे देखकर हाथ के कमान से तीर छूटता नहीं। पर फिर भूखी पत्नी बच्चों का औंधा सोये रहना याद आता है फिर तीर छूटता है। वह सीधे सुअरी के मुंडी में घुस जाता है। वह गिरती पड़ती है। बच्चों को कुछ समझता नहीं। वे थन निचुडते ही रहते हैं। वैसे सुअर बहुत टेढ़ा जानवर है। एक तीर से मरता नहीं दो तीन कभी कभी तो पाँच भी मारने पड़ते हैं। तब कही जाकर वह गिरता है।"

"फिर क्या करते हैं आप उसका?"

मुस्कराकर मुखिया ने कहा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"पूजापानी नहीं करते। पेट की आग में सब स्वाहा कर डालते हैं।" मैंने मुँह फेर लिया। मुखिया ने कहा

"ये लो अभी तो शिकार की बात कह रहा हूँ तो आपने मुँह टेडामेडा कर लिया फिर आप शिकार देखोगे कैसे?"

"मुझे शिकार करना नहीं केवल तीर चलाना दिखाइये।"

"ठीक है आपके सामने शिकार नहीं करेंगे अब सो जाओ आप।"

दूसरे दिन मुखिया अपने झोपडे में ले गया। उसकी दो पत्नियाँ थी। पेट लटकी हुई। छोरे-छोरी देखे। उसके घर परिक्रमावासियों के पास के चार छह बरतन थे। मैंने पूछा इतरने सारे बरतन भांडे छिन लेते हो उसका क्या करते हो?

उसने कहा

"मैं अकेला ही मैया का पूत थोड़े ही हूँ। सारा भीलवाडा उसकी संतान है। सबको बाँटना पड़ता है। उसमें मैं मुखिया ठहरा। पहले सब बाद में मैं।"

उसने गुड की इली और पानी दिया।

"तीर कमान का खेल देखने इस छोकरे के साथ आप चलिये मैं आता हूँ" उसने कहा

उसका लड़का और मैं जंगल गया। साथ में दो चार छोरे और थे।

घने जंगल में थोड़ी खुलावट थी वहाँ आनेपर छोकरे के पास की कमान लेकर देखी। वह पके बाँस की बनायी हुओ थी। छीलकर बढ़ियाँ बनाया हुआ बांस। दोनो तरफ छोर पर तांत फसाने के लिए खाँचे। तांत भी बाँस के पीठ की थी। सुअर की चरबी लगाकर मुलायम बनाई हुई। खाँच में फँसाने के लिए कोशा की बटी डोर।

ऐसी वह मजबूत कमान थी। मुझसे झुकाते न बनी। मुखिया के छोरे को कहा तो बात ही बात में उसने चार छह बार तांत लगाई छोड़ी।

तीर बेंत के थे। सिरा लोहे का था। उसे भी कोशा की डोरी से ही बांधा था पीछे चील और पंछियों के पर।

हाथ में कमान ली और उसपर बाण लगा उसे छोड़ने का प्रयास किया। पर अमुक एक योद्धा ने धनुष्य पर साकपुंख तीर रखकर वह आकर्ण खींचा ऐसी बडबड करना अलग बात है और प्रत्यक्ष धनुष्य बाण को चलाना अलग बात है। मैंने छोड़ा हुआ तीर कठिनाई से दसपाँच हाथ दूर गया होगा। छोरे मुँह भर हँसने लगे।

उन्होंने निशान लगाकर बताये आम पर लगी कैरी गिरायी। हर्र थी वह गिराई। दौड़ते आकर पेड़ के तने में तीर घुसा दिये। लेटकर उलटी ओर निशाने साधे।

कल मैंने किये आसन देखते उन्होंने आश्चर्य व्यक्त किया था। आज मुँह में अंगुली ड़ालने की बारी मेरी थी।

तबतक मुखिया आ गया। वह अपने साथ एक जवान को लाया था। छोरों ने उसकी आँखें बांधी फिर एक लड़के ने दूर के एक पेड़ पर डंडा बजाया। जवान ने अनुमान से उस आवाज का वेध लिया और तान रखा तीर छोड दिया वह वहीं जाकर घुस गया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मुखिया ने आम की तरफ देखा अंगुली से दिखाते हुए बोला वह सिरा दिख रहा है वहाँ अमिया लगी हैं कौन सी गिराये? मैंने कहा इसमें क्या? यह निशान तो लड़के भी लगा लेंगे।

मुखिया ने कहा आप कहो तो सही

मैंने जानबूझकर सिरपर की मुश्किल अमिया बताई। मुखिया ने एक छोरे को इशारा किया वह बंदर की तरह उपर चढ़ गया और उसने वह ड़ाजी जोर-जोर से हिलाना चालू किया। अमियाँ इधर-उधर जोर-जोर से हिलने लगी।

जवान ने निशाना साधा और वही अमिया उतनी मुश्किल से नीचे गिराई।

आश्चर्य से मैंने मुखिया की ओर देखा वह आकाश की तरफ देख रहा था मैंने भी उपर देखा।

एक बाज एक पंछी के पीछे लगा था वह पंछी जान बचाने उड़ रहा था एक क्षण में मुखिया ने तीर धनुष्य पर रखा सूँ करते तीर आकाश में गया और बाज को लेकर नीचे धरती पर आ गया। तीर लगा वह बाज चोंच खोल बंद कर रहा था। उसके रक्त से नीचे की जमीन लाल हो गई।

दूसरे दिन सुबह रास्ते पर खड़ा हो गया। मुखिया ने एक जवान साथ में दिया बोला।

"यह आपको भीलवाडा के बाहर कर देगा। हमारी याद रखना परिक्रमावासियों से आटा नमक हम लेते हैं वो आगे भी लेते रहेंगे पर हमें बदनाम न करना जी।" मुस्कराकर कहा "नहीं करुँगा।"

"दो रात आप हमारे बस्तीपर रहे अब आप हमारे बिरादर हो गये।"

सबको राम-राम कर निकला। लंगोटीधारी भीलों से दिल लग गया था।

बेत वन की झाड़ियाँ में अभेद पिंजडे रहते हैं जहाँ, वहाँ मुरली के सुर भी निकलते हैं जिया हरनेवाले।

इधर देह मानो धराशायी हो रही है।

अमरकंटक के इधर ही गला ऐसा जग्कड गया कि भूमि पर साफ गिर ही गया था। तब से कुछ न कुछ बीमारी बेड़ी बन पैर में पड़ी है।

शरीर और मन इसी में युद्ध शुरु हो गया था मानो। सारा शरीर समरांगण हो गया है। क्षत विक्षत हो गया है। लड़ाई के कितने ही चिह्न उसपर पड़ गये हैं।

रात दिन हमारा छिड़ा है युद्ध
अंदर बाहर का जग और मन

तुकाराम बाबा ने अपनी बात ऐसी कही है उससे मेरे द्वन्द की तुलना बिलकुल हो नहीं सकती। वैसी तुलना की भी कैसे जा सकती है।

फिर भी मेरे जी भर का एक महाभारत शुरु है मेरी देह में।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

काम है, क्रोध है, दंभ है अन्य विकारों का भी हल्लागुल्ला है ही। और यह जीर्ण शरीर वह सब सहन कर रहा है। उसके साथ रोग के थपेडे भी उसपर बज रहे हैं।

तिल्ली बढ़ गई है। पसलियों के नीचे अंदर दर्द होता है फिर भी रोज जितना चल सकता चलता ही था। बिलकुल चला न जाए तो पेट को हाथ से दबाये पड़ा रहता हूँ। कष्ट अंदर ही अंदर सहते।

कोई दादाबाबा आता है रोग ग्रसित देखकर भोजन लाकर देता है। खा लेता हूँ। रात वहाँ पड़ा रहता हूँ। सुबह अच्छा होते ही फिर चल पड़ता हूँ। किसी की बहुत सहानुभूति भी अच्छी नहीं लगती।

चांदोद पास आ गया था। देह में बुखार जड़ जमाये था। दिनभर तलखी होती। चातुर्मास सामने है। कहीं अच्छी जगह पड़ा रहूँ। जहाँ कम से कम मधुकरी तो मिले। गुजरात समृद्ध है। चांदोद में कुछ घर महाराष्ट्रवासियों के है। घर एक बार छोड़ देने के बाद महाराष्ट्री और मालवी में क्या भेद? पर मधुकरी में कच्ची रसोई वे ही परसते हैं।

वहीं रेवातीर पर बहुत मंदिर। एक मंदिर के सामने दालान। वहीं आसन जमाया। कितने ही और परिक्रमावासी वहीं पड़े हैं। अपने-अपने सामान सहित भजन पूजन में मस्त।

बरसात शुरु हो गई है। हर दिन भोर बुखार उतर जाता। वैसा घसीटते नर्मदा तक जाता। पानी में देह भिगोने। पर बहुत सुख मिलता। मैयापर घाट हैं। उसपर बैठ-बैठ एक-एक सीढी करते उपर आ जाता। हर सीढीपर कमंडलू आगे सरकाता जाता और अंत में बिछावन पर आकर पड़ रहता। मेघाच्छादित आकाश देखते-देखते।

बारह बज जाने के बाद धीरे-धीरे दो चार घर जाता। बुखार से जलती मुद्रा देख माँ बहने भीगी करुणा से झोली में अन्न ड़ाल देती। वह लेकर मुकाम पर आता। जो कुछ खाते बनता खाता और हाथ सिरहाने लिए पड़ा रहता।

दोपहर बुखार चढ़ने लगता शामतक खूब चढ़ जाता। सारा शरीर चिता बन जाता। रात के पहिले पहर बुखार फिर उतर जाता।

यहाँ आते ही एक काम किया था। एक दुकानदार से डाक का लिफाफा माँग लिया। काका को बड़ी सी चिट्ठी लिखी। धुलिया का पता लिखा, ठहरा था उस मंदिर का पता लिखा। उस अकेला चालोरे भ्रमण की गाथा लिखी।

ध्यान में बैठने पर मन का नितल होता जाना
किसी दिन अकारण रुलाई फूट पड़ना
यह छोटी डोंगी उस महानौका के पीछे चलती रखना
और हाथ झाड़ अलग होना
पापपुण्य सारा उसे समर्पित किये
आकाश में स्वच्छंद विहार करते पंछी जैसा मुक्त होना

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

और
उसी समय बहुत गंदे कीचड़ में डूबते जाने का अहसास होना
ऐसा उस यात्रा में जो-जो अच्छा लगा काका को लिख दिया
बीमार होने की बात भी एक पंक्ति में लिखी।
आखिर कहा

अब चाहे जो कुछ भी हा जाते स्वस्थ चित्त से भविष्य का सामना कर रहा हूँ। मैया को यह शरीर अपनी गोद में ले लेना हो तो वैसा हो जाये मुझे कुछ भी आपत्ति नहीं।

बुखार के उस तपन में कैसे-कैसे आभास होते। एक का दूसरे से मेल नहीं। उसी को पकड़ स्मृति जाग उठती पुरानी बातें सामने आती। आँखें भर जाती बिना बात।

धुधंला ऐसा नागपुर
फिर स्वतंत्रता का तेजस्वी आन्दोलन
उसके बाद जीवन की दुर्दशा याद आती
कुत्ते का पिल्ला जिसके लिए अंतडियाँ लानी पड़ती।
यूनाइटेड पिक्चर्स लिमिटेड
वहाँ एक कामांध के बली पड़ा यह देह
छी : छी : स्वयं की घिन आने लगती
याद आता है नाशिक का गंगा घाट
अकोला वह ढोरों के पीछे-पीछे जाना
गाड़गे बाबा अब वह कहाँ होंगे
वह कीर्तनों के लिए जमा होता जन समुदाय
बहुत स्नेहशील परभणी के लोग
उन्हें क्या मालूम कि उनका स्नेह भाजन यहाँ रेवातीर मरणोन्मुख पड़ा है।

कभी कोई भला आदमी आता। माथेपर हाथ रखता। जलते ही हाथ पीछे खीच लेता। पूछताछ करता। मैं होश बेहोश। क्या जबाब देता कौन जाने? पड़ोसी परिक्रमावासी कहता

कोई मैया के दरका जीव है बहुत बीमार है
अरे तब कोई दवावबा?
लो। मैया के दूध से बढ़कर अच्छी दवा और हो ही क्या सकती है।
खानापीना
माँगकर लाता है कहीं से
वह निकल जाता मुझे अकेले को बुखार से द्वन्द्व करते छोड़

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

फिर से स्मरण जंजीर जुड़ा जाती एक-एक कड़ी बीच में कोई टूटी हुई भी।

ऊँचाई से नीचे अतल गहराई में छलांगता फेनभरा मैया का प्रवाह धुवाँधार

धावडी कुंड वहाँ भी गर्जना करते नीचे के प्रचण्ड तसले में कूदती नर्मदा

शूलपानी का भयकारी जंगल

ओंकार मण्डलेश्वरम्

सहस्त्र धारा। एकम सतधारा: सहस्त्रधा वदन्ति

होशंगाबाद का रेल पुल

और भड़ोच के स्थापत्यशास्त्र का आश्चर्य

अकेले-अकेले ने निहारे कितने-कितने सूर्यास्त अपने चण्ड प्रचण्ड तेज का संकोच करते पश्चिम वाहिनी रेवा पात्र में डुबकी लगाता सूर्य बिंब

छुरी से काटी जा सके ऐसी-ऐसी काली रातें। दशदिशा घेरकर शेष रहा अंधियारा।

चमकता पीला। आँखों से टकटका निहारता पांच दस हाथ दूर से व्याघ्रराज

मठ त्याग कर गंगातीर निकल जाते युवा महन्त

एकाएक याद आता नर्मदा पंचाग। परिक्रमा का कायदाकानू कहता ग्रंथ।

घना जंगल, रमणीय घोर झाडीका मार्ग, पर्वतों का मार्ग, घोर जंगल कठिन मार्ग गुफा बेहिडो का जंगल, ड़रावनी झाडी, सुंदर वन प्रदेश, जंगल ओर पर्वत में से जाता मार्ग।

क्या यह सब पार किया अकेले ने मैंने

मैया तेरी कृपा। तेरी ही। तूने चीटी से मेरुपर्वत पार कराया।

नर्मदे हर! हर नर्मदे।

और फिर घनाधक़्कार मानो किसी ने सारी बत्तिया बुझा दी।

कभी लगता बहन माई होती तो। बचपन की मेरी सर्वस्व। मेरी यह हालत वह जान भर पाती हवा में से उड़ती वह यहाँ आकर उतरती। दवा दारु करती। एक भी प्रयास छोड़ा न होता। फिर कहा होता-हो गया बाबा। मैंने अपना कर्तव्य किया। तू चंगा हो गया। मैं चली। तू भी जहाँ चाहे वहाँ जा।

जंजीर की यह कड़ी टूट नीचे गिर जाती। कुछ देरतक घन गहरा अंधकार डर लगता। कहीं मैं इसके तली में न पहुँच जाऊँ। आधार आधार। भयग्रस्त नजर से आधार खोजता। इधर उधर दो हाथ दिख जाते। नाजुक मुलायम। भ्रम होता वे मेरा माथा सहला रहे हैं सारी व्यथा सोख रहे हैं।

वे ही दो हाथ सहारा दे बैठा रहे हैं। मुँह के पास खीर की कटोरी पकड़े हैं फिर पानी से कुल्ला करा रहे हैं। होले से सुला रहे हैं। चादर ओढ़ना उढ़ा रहे हैं। गले तक थपकी दे रहे हैं होले।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उसी आश्रम में रहता तो कलिकाल का भी ड़र नहीं था। पर केवल हाथ और उसका स्पर्श स्मरणता है आगे और स्मरण खींच नहीं पड़ रहा।

फिर बेहोशी और एक स्वर-

भैया उठिये ना दवा नहीं लोगे क्या?

चारो ओर अंधियारा आकाश मेघों से ड़टा भरा। मैया के प्रवाह की गंभीर घूँ-घूँ। केवल उतनी ही सुन पड़ रही है।

फिर यह जीवनदाता स्वर कौन बोला

ओह जैसा सबेरा हो गया। सारे स्मरण कण जहाँ-वहाँ बैठ गये एक पूरा दृश्य सामने है।

रेवातीर ही। कगारपर एक मंदिर। शिखर आकाश में चमकता। उतरते सूर्य प्रकाश में सायंकालीन आरती शुरु है

जग के कारन दुरित निवारन
तुम सुख के कर्ता
प्रभु तुम दुख के हर्ता
जय जगदीश हरे

आठ दस मुंडित सिर लड़के। देहपर अंगोछे लिये सधेस्वर से आरती गा रहे हैं। ठाकुरजी की मूर्ती के सामने खड़ी कोई आरती फिरा रही हैं सफेद साड़ी में।

आरती पूरी हो जाती है वह हमारी ओर घूमती है

ज्योत जैसे जले वैसी मुद्रा। शांत स्थिर भाल पर चंदन का टीका। लंबी नाक। यशोदा। यशोदा।

कुछ नहीं। कुछ भी नहीं।

इतना ही कि मैं बहुत अस्वस्थ हूँ। बहुत-बहुत। मेरी देखभाल करनेवाला कोई नहीं।

करवट ली और पड़ा रहा।

उसने पुकारा तो था कंपे कंपते स्वर में। मन्दिर घंटास्वर में। भैया सुनो तो

क्षणभर कदम अटक गये। दूसरे क्षण बुदबुदाया—

नहीं यशोदा अब लौट तुझे छोटा नहीं करुँगा।

उस भोर की धूसर बेला में रेवा तीर की पगडंडी पर निष्ठुर होकर निकल आया था।

तब, अब अपनी यह असाहय स्थिति उसतक पहुँचा कर कोई लाभ नहीं।

अुच्छवास एक भारी। गरम जलाता जलता आँसू गरम।

पोंछ लेता हूँ

बरसा फिर चालू हैं

छिपर से टप-टप-टप बूँदें गिर ही रही हैं। धाराओं से होकर कुछ दिखता नहीं। मैया

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

के मटमैले प्रवाह की ध्वनि बढ़ती। घाट की सीढ़ियाँ चढ़ मटीला पानी उपर आ रहा है।

रेवादर्शन की आस अनिवार हो उठती है। उठता हूँ। घिसते घसीटते धर्मशाला के बाहर आता हूँ। बरखा चालू है। कठिनाई से एक-एक कदम चलते एक ऊँची जगह जा बैठा।

कितना प्रचण्ड प्रवाह। मैया का पात्र अमर्याद जल सम्पत्ति संभालता दौड़ रहा है। कैसे उबाल कैसे भौंरे और उसमें से बह आता और क्या क्या.......

घुमड़ती बरखा भींगता अकेला घाटपर बैठा हूँ। कुड़कुडाता बुखार से रोज़ ही। जलते देह को बूँद-बूँद सुख दे रही।

पर वह सुख सहन करने की ताकत कहाँ मरेसे देह में। कंपकंपी हो उठती है। उठता हूँ धीरे धीरे लौट पानी झाड वैसा ही पड़ रहता हूँ

"अरे भई कोई डंडेकार है क्या इधर?"

पहिले कुछ समझ नहीं पड़ा। फिर उठ बैठा। देखा. तो ड़ाकिया। "हाँ भई मैं हूँ"

"लो तुम्हारी चिट्ठी है"

काका का पत्र। लिफाफा ले खोलता हूँ। आँखे मजमून पर से घूमती हैं।

चिरंजीव सत्प्रेमी गोपाल नीलकंठ दांडेकर यांस श्रीधर पाठक यांचा कृतानेक शुभ आशीर्वाद।

पत्र अभी मिला

हृदय प्रेमानंद से भर गया

अगला कुछ पढ़ न पाया। आँसूओं के परदे पीछे छिप गया सारा।

एक मराठी सज्जन के दरवाजे खड़ा हो गया।

"कौन है?"

"मैं एक परिक्रमावासी।"

"क्या चाहिये?"

"कुछ नहीं यहाँ एक माह से बीमार हूँ आज मेरे गुरुजी का पत्र आया। देखें।"

चिट्ठी देखी पढ़ी साश्चर्य पूछा

"श्रीधर पाठक याने पाठकशास्त्री महामहोपाध्याय?"

"हाँ वे ही।"

"आप उनके विद्यार्थी!"

"हाँ।"

"महिनेभर से यहाँ हैं बीमार।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"हाँ।"

"और हमें नहीं बताया?"

रोज आपके यहाँ से मधुकरी माँग ले जाता रहा।

सब पूछताछ की अंदर जाकर पूछा

"अजी ये रोज मधुकरी को आते थे यह आपने मुझे कहा नहीं-"

घर से बोली

"मुझे क्या पता कितने ही आते हैं वैसे ये।"

एक दिन ठहरा लिया। खाना खिलाया स्टेशन तक आये बड़वाह का टिकट निकाल दिया पांच रुपये और दिये

"गाडी छूटते-छूटते बोले पहुँचने पर चिट्ठी लिखियेगा।"

इतना किया पर पता देने भूल गये

यह ऐसा ऋण कितनो का स्मरण किस-किस का रहे।

बड़वाह रेल स्टेशन पर उतरा। मंडलेश्वर जानेवाली मोटर सामने ही खड़ी थी। उसमें बैठा। धूल उड़ाती मोटर मंडलेश्वर की ओर दौड़ने लगी।

मण्डलेश्वर और महेश्वर परिक्रमा में दोनों देखे थे। धुंधले याद भी थे साफ स्मरण था मैया के तीर पर का लाल रंग से रंगा बहुत प्रशस्त राममंदिर।

"मण्डलेश्वर सफरी उतर पड़ो।"

उतर पड़ा। जज्ज साहब का मकान खोजते चल पड़ा। उसके पीछे का नया मकान मिल गया। चारों ओर से उतरते खपरेल का घर। सामने छोटी सी बगिया। बगिया का दरवाजा खोल अंदर गया। दरवाजे के सामने खड़ा हो गया।

सामने ही एक आसन पर एक योगिनी बैठी थी। माने भस्मी की पुतरी। ढ़लती आयु आँखों पर चष्मा! पूछा-

"यहाँ काका हैं - श्रीधर शास्त्री पाठक।"

योगिनी ने मेरी तरफ देखा। प्रसन्नता से मुस्करा उठी। तुरन्त बगल के कमरे की ओर जाते हुए कहा

"काका ये आये दिखते हैं दाण्डेकर। आइये! बाहर ही क्यों खड़े हैं।"

दोपहर का विश्राम कर रहे काका फटाफट बाहर आ गये।

वही वह सौम्य गोल मुंडित मुद्रा। वही वे ममताभरे नेत्र। गले में वही नेपाल से खास मंगवाई रुद्राक्षमाला। वही वह किंचित स्थूल शरीर। केवल एक भगवा वस्त्र पहिने काका देखे और दौड़ जाकर गिर पड़ा।

मुझे उठा थपीयाते बहुत देर मौन खड़े रहे फिर बोले

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"कितना खराब हो गया है रे। अब यहाँ ठीक हो जाओगे।"

उस छोटे घर में जैसे बड़ी गडबड हो गई।

आठ दस दिन सुख संवाद में गये। क्या क्या मैं उन्हें सुनाता रहा। काका और योगिनीमाई के साथ ही उपासनी नामके एक सज्जन थे। उदार स्वभाव, स्नेहशील, परोपकारी गृहस्थ।

दोनों समय माई के हाथ का पथ्य का भोजन करता। डाक्टर की दवाई भी लेता।सच में तो नियमित भोजन ही मेरे प्रकृति की औषधि थी।

मण्डलेश्वर में रेवातीरपर दत्त मंदिर। परम पूज्य वासुदेवान्द सरस्वती के पदधुली से पवित्र हुआ। शान्ति से हरिचिन्तन में और दत्त उपासना में काल क्रमण करनेवाले सुजन। दत्तमंदिर के पुजारी देशपांडे, महन्त केलकर मण्डलेश्वर के बूढे जागीरदार।

एक और व्यक्तित्व वहाँ परिचित हो गया। रघुनाथ दुर्गाराम जोशी 'रामदासी'। मूलतः बेलगांव खानापूर के। अपने परिवार सहित मण्डलेश्वर में वास्तव्य किये हुए।

रामदासी होने से रामदास के श्लोक गाते वे भिक्षाटन करते। आदमी बहुगुणी, वक्ता, कवि, कीर्तनकार दूसरे की मदद करने हमेशा सिद्ध। किसी को केसरी पढ़ सुनायेंगे, किसी को श्लोको के अर्थ समझायेंगे, किसी के लड़के को संध्योपासना सिखाते। गणेशउत्सव के लिए नाटक भी लिख देंगे। समय पर।

ऐसे ये लोग माई के कुटी में इकट्ठा होते। नाना तरह की तात्विक चर्चा करते। समय बहुत आनंद से व्यतीत होने लगा।

ठीक हो जाते ही दो निर्णय लिये। एक तो नियम से मधुकरी माँगना और प्रस्थानत्रयी के दो ग्रंथ ब्रह्मसूत्र और दशोपनिपदं काका से पढ़ना।

मैं कह रहा था काका से 'शांकरभाष्य भी तुरन्त पढ़ लें' पर काका ने कहा

तुझे आचार्यमत मालूम करना है या उपनिपद क्या कहते हैं यह जानना है?

बात समझ में नहीं आई। काका से मैंने पूछा

उपनिपाद और आचार्य दोनों के प्रतिपादन में कुछ अलग दिशा सूचित होती है क्या?

काका मुस्कराये, बोले

"देख लड़के मैं आचार्य की चरणधूली का एक रजकण। आचार्य इतना तर्कपटू तत्वज्ञ और निर्भय तत्ववेत्ता दूसरा नहीं हुआ। उन्हें माहध्वात दिवाकर कहते हैं। परन्तु फिर भी उन्हें सारे मतामतोंकी खिचडी में अपना अद्वैत मत आग्रहपूर्वक प्रतिपादन करना ही था।"

बात समझ में आई कुछ

"हाँ लेकिन फिर 'उपनिषद'?"

"हाँ उपनिपद के रचयिता ऋषि बंधन मुक्त थे। उन्हें जो तीव्रता से अनुभव हुआ वह उन्होंने कहा।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"माने सर्वत्र अद्वैत का उद्घोष उपनिषदों ने नहीं किया।"

"उन्हें जिसका स्फुरण हुआ वह उन्होंने कहा।"

"लेकिन अद्वैत!"

एक उपनिषद वाक्य है सुनो

द्वासुपर्णा सजुया सखाय
समानं वृक्षं परिषस्वजाते
तयोरन्य : पिप्पल : स्वादवत्य
नश्नन् अन्योऽ भिचाकशीति ॥

"यहाँ दो पक्ष स्पष्ट रुप से वर्णित हैं अब इसे अद्वैतपर कैसे मानेंगे?"

"आचार्य ने क्या कहा?"

"वे वादपटु थे। उन्होंने यहाँ भी अद्वैत कोही प्रतिपादित किया।"

"लेकिन फिर मैं क्या करुँ?"

"तू केवल उपनिषद पढ़।"

दूसरे दिन से ऐतरेयोपनिषद का पाठ प्रारंभ किया।

आप्पा जोशी वकील, माई के कुटी से बहुत दूर रहते थे। उनका घर गाँव के बाहर कोर्ट के पास था। पर वहाँ से वे हरदिन उपनिषद सुनने सोले (रेशम की धोती) में माई के कुटी में आते। आप्पा बलिवडेकर, फणसे वकील, उपासनी मैं माई रामदासी इतने लोग पाठ के लिये बैठते।

काका वेदान्तशास्त्र के ज्ञाता। उन्हें ग्रंथ पढ़ना न पड़ता था। हम सब ग्रंथ लेकर बैठते। काका बिना ग्रंथ लिये।

एक जगह गर्भोत्पत्ति का विषय आया।

पुरूषे हवा अयमादितो गर्भो भवति।

चैतन्य पुरूष में गर्भरुप में रहता है। वह उसका स्त्री में सिंचन करता हैं। और वह उसे धारण करती है। वह चैतन्य का प्रथम जन्म। हम अपने सपाटे से पढ़ते गये। काका रुक गये। आँखें बंद करते हुए मुस्कराते बोले

स्त्रियों को उपनिषद अध्ययन का अधिकार था इसका ठोस प्रमाण यहाँ मिलता है।

आश्चर्य से हम सब देखने लगे काका ने कहा

वहाँ नीचे टीप दी हुई है वह पढ़े

अप्रकामन्तु गर्भिण्य :।

प्रश्नार्थक मुद्रा में काका की ओर देखने लगा। वे बोले यहाँ यह चाहा गया है कि जो गर्भवती स्त्रियाँ हो वे उठकर चली जायं। गर्भसंभव का विचार हो रहा इसलिये। वे लौट आयें ऐसा भी उल्लेख है। यदि उपनिषद काल में स्त्रियाँ चर्चा में उपस्थित न होती रहती तो इस तरह का उल्लेख किसलिये किया जाता?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ऐतरेयोपनिषद के अंत में बड़े मजे का विषय है

कोयमात्मेति वयं उपास्महे

ऐसा प्रश्न है। हम आत्मा कहकर जिसकी उपासना करते हैं वह कौन हैं।

उत्तर में कहा गया है-

यत्किंचेदं प्राणिजंगमं च पतत्रि यच्च स्थावरम्। सर्व
तत् प्रज्ञानेत्रं। प्रज्ञाने प्रतिष्ठितं। प्रज्ञानेत्रा लोक :
प्रज्ञा प्रतिष्ठा। प्रज्ञानं ब्रह्म।

यह जो कुछ भी है स्थावर, जंगम, उड़ता और स्थिर वह सब प्रज्ञान रुपी ब्रह्मा की सत्ता में चलनेवाला है।

फिर वे रुके क्षणभर आँखे बंद कर बैठे फिर सारा आवेश रोक कर बोले

कहाँ अस्पृस्यता? कहाँ है स्पर्शास्पर्श? कहाँ हैं? उच्चनीच भेद। वह सब तो ब्रह्ममय है कौन चाण्डाल और कौन ब्राह्मण? ब्रह्म के पास कोई भेदभाव नहीं।

किसी ने साहस कर कहा

परमार्थ में नहीं होगा - व्यवहार में होगा।

व्यवहार में भी नहीं। ब्रह्म के पास परमार्थ भी नहीं और व्यवहार भी नहीं। वहाँ एक ही निरंजन अवस्था है। शब्द के पार।

मण्डलेश्वर इंदौर राज्य का गांव अर्थात जिला केन्द्र। इंदौर होलकर की रियासत। मण्डलेश्वर में जिले की कचहरी होने से जज, वकील, बाबू आदि अनेक मराठी परिवार मण्डलेश्वर आये। बस गये।

इस कारण मधुकरी का प्रश्न सरल था। पांच सात घर की मधुकरी भरपेट हो जाती। इसके सिवाय निरंतर कही न कहीं हव्यकव्य होता ही रहता। फिर वहाँ से अवश्य भोजन के लिए निमंत्रण आता। काका का मण्डलेश्वर पर विशेष प्रेम। मैं काका का विद्यार्थी केवल जडमूढ़ भी नहीं। उनसे वेदान्त पढ़नेवाला इसलिए भोजन को बुलाये जाते ब्राह्मणों में मेरा नाम पहिला दूसरा ही होता।

आप्पा जोशी सरल स्वभाव के सुजन सत्शील आदमी। संगीत का बड़ा दर्दी। इंदौर की ओर कोई खाँ साहब गाने के कार्यक्रम के लिये आये तो पूरे इन्दौर राज्य का दौरा होता। ऐरू में मण्डलेश्वर में दो एक दिन का उनका मुकाम होता ही था। ठहरना भी आप्पा जोशी के यहाँ। आप्पा का बड़ा लड़का हारमोनियम मास्टर था। तो तीसरे नंबर का लड़का तबला बढ़िया बजा लेता था। इस कारण घर में मैफीलें होती ही रहती। आप्पा के घर को लोग मालवा म्यूझिक सेन्टर ही कहते। आप्पा मेरे गुरु बंधु। इसलिए उनके यहाँ जाना आना बढ़ा। मैफिलों में बैठने लगा। गणपति उत्सव की तैयारी आप्पा के घर ही होती। काव्य रचना से लेकर जो कुछ बन पड़ता करता रहता।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मण्डलेश्वर का पुस्तकालय अच्छा समृद्ध। ग्रंथपाल परिचित हो गये। वहाँ से पुस्तकें लाता। कभी काका को पढ़के सुनाता। चर्चा करता। व्याख्यान प्रतियोगिता के प्रतियोगी आते कहते व्याख्यान लिखवा दीजिये।

मधुकरी मांगना। काका के पास वेदान्त पढ़ना। बाकी रहा समय इस तरह के नाना कार्यों में पंख लगा उड़ जाने लगा।

काका के साथ उनका कमंडलू और भस्म का गोला लेकर रोज शाम नर्मदा किनारे संध्योपासना के लिए जाता। मण्डलेश्वर में रेवा का पात्र खूप चौडा है। पात्र में बहुत चट्टाने। उन चट्टानों पर हम बैठते। कितने ही विषय पर काका बोलते रहते मैं बीच बीच में प्रश्न करता जाता।

महाराष्ट्र में पंडितों के दो पंथ हैं। सनातनी और परिवर्तनवादी। परिवर्तन वादी पंथ के काका अग्रणी। उन्होंने धर्मचर्चा के कई सत्रों में अपने पांडित्य से धाक जमाई। गांधीजी ने हरिजनों के प्रश्न पर इक्कीस दिन का प्रायोपेशन आगाखॉ पेलेस में किया था। उन तीन सप्ताहों में बहुत श्रम करके काका ने अस्पृशता का शास्त्रार्थ नामक ग्रंथ की रचना की।

देवयात्रा विवाहेपु यज्ञप्रकशोपुच
उत्सवेपुच सर्वेपु स्पृष्टास्पृष्टिर्न विद्यते।

यह प्राचीन स्मृति वचन उन्होंने पुनर्जीवित किया।

गत कई दिनों से उनके मन में एक नया विषय घूम रहा था। भारतशासन ने हिन्दूधर्मविषयक कानून में संशोधन करने के लिए राव कमेटी नियुक्त की थी।

श्री राव धुलिया में चार दिन रह काका की महत्वपूर्ण गवाही लेकर गये थे।

एक दिन शाम को हमेशा की तरह हम दोनो नर्मदा किनारे बैठे थे। निवान्त नर्मदातीर। गाँव के शोर शराबे से दूर। काका ने स्तोत्र पाठ निपटाया। मैंने संध्योपासना के बाद महिम्न पाठ किया।

एकाएक काका बोले

"अरे गोपाल मनुस्मृति कैसे लिखी गई?"

ना समझ पड़ने से मैं उनकी ओर देखता ही रहा। काका ही फिर बोल पड़े। एकाग्र चिंतन करते मनु के पास जाकर ऋषियों ने उसे मानव धर्म का रहस्य पूछा। उत्तर में मनु नें उन्हें स्मृति बतलाई।

"एक प्रश्न?"

"पूछो।"

"मनु वर्ण से ब्राह्मण था क्या?"

मुस्कुराकर काका ने कहा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"बहुतो को वैसा भ्रम है परन्तु वह ठीक नहीं है वह क्षत्रिय था।" फिर वे चुप बैठ गये। कुछ देर बाद बोले—

"मनुस्मृति के आचारधर्म कालबाह्य हो गये इसलिए फिर आंगिरस, वृद्धहारित, देवल नारद आदि स्मृतिकारों ने फिर नये आचार धर्म प्रसृत किये। सिंध प्रदेश में धर्मांतरितों का विकट प्रश्न उठ आया। इसलिए देवल ऋषि ने शुद्धि प्रकरण का अंतर्भाव किया।"

"परसों जब राव मिलकर गये तब से फिर से एक नयी स्मृति लिख आचारधर्म ग्रथित करने की इच्छा बलवती हो रही है।"

परम उत्साह से कहा -

"लिखिये ना काका। आपके इतना बड़ा धर्मशास्त्र का अधिकारी व्यक्ति दूसरा कौन होगा?"

"एक शर्त है।"

"कौन सी?"

"मैं कहता जाऊँगा तुम उसे लिखना।"

शरीर रोमांचित हो उठा परम आनंद से।

दूसरे दिन से नये स्मृति की चर्चा शुरु हो गयी। मधुकरी का समय छोड़ हम उसी एक विषय की चर्चा करने लगे।

काका ने स्मृति का नाम शिवस्मृति सोचा था

स्पृश्यास्पृश्य विचार, विधवा विवाह, वर्णाख्यसंस्कार, ऐसे नाना विषय उसमें ग्रथित करने का उनका संकल्प था।

देव मंदिर में सबको प्रवेश। मूर्ति की पवित्रता बनाये रखने के लिए स्पर्श सहित मूर्तिदर्शन की सबको मनाही।

एक विशिष्ट आयुमर्यादा के बाद स्त्री पुरूष दोनों को विवाह की मनाई। विधवाओं को पुनर्विवाह करने की अनुमति या

नष्टे मृते प्रव्रजिते क्लीबे च पतिते पतौ
पंचत्स्वापत्सु नारीणां पतिरन्यो विधीयते

इस श्लोक की मर्यादा के बाहर भी पुनर्विवाह का विचार।

कन्या उपनयन की प्रस्थापना।

ब्रह्म वादिनीनां उपनयन अग्नीधनं वेदाध्ययनं स्वगृहेच
भैक्ष चर्या इति
सद्यो वधूनां उपनयनं कृत्वा विवाह : कार्य इति

पूर्व ऋषियों के उपरोक्त वचन का पूर्णरूपेण पालन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उपनयन जैसा सबके लिए वर्णाख्य संस्कार

जन्मना जाये शूद्रः

यह सब के लिए लागू करना। आठ वर्ष की आयु में पंचवर्ण निश्चित किया करें बालक की अभिरुचि परख कर। इससे शूद्र का लड़का भी ब्राह्मण हो सकेगा और ब्राह्मण का निर्बुद्ध पुत्र शूद्र गिना जायेगा

इस तरह के अनेक विषय

इस तरह लेखन के लिए बैठक जमी। मैं लिखता गया। एक स्मृति लिखने का सौभाग्य मुझे मिला।

वह स्मृति काका ने नागपुर के विद्वान रत्न के. ल. दफ़्तरी के यहाँ भेजी। परीक्षण के लिये। आगे उसका क्या हुवा मुझे ज्ञात नहीं।

आप्पा जोशी, मैं, काका के बीच होती चर्चा में से एक कल्पना निकली। हरिकीर्तन पाठशाला चलाने की। आप्पा के घरमें। मैं उसका हेडमास्टर। आप्पा के दोनो लड़के संगीत शिक्षक। आसन, गीता, कुछ संस्कृत, कुछ स्तोत्र पाठ ऐसी प्राथमिक सिद्धता करवा लेना।फिर कीर्तन लिखवाकर छात्रों से याद करवाना ऐसी एक योजना बनी।

एक दिन काका की उपस्थिति में पाठशाला प्रारंभ हुई और काका दो एक माह के लिए धुलिया चले गये।

आप्पा जोशी के कहने पर मैं अपना मुकाम उनके घर ले गया।

आप्पा के चार लड़के। ऐसे ही और तीन चार। सातआठ लड़कों से पाठशाला प्रारंभ की । भोर उठना। स्नानादि आन्हिक से निपटना तब तक लड़के आ जाते। गाड़गे बाबा के यहाँ था तब आसनों की विद्या सीखी थी। शरीर बहुत लचीला नहीं है मेरा। फिर भी बहुत आसन मैं कर लेता। वे आसन लड़को को सिखाना, करवा लेना। इसके बाद गीता अध्ययन स्तोत्र पठन सुबह इतना ही हो पाता।

दोपहर को मेरे ही लिखे कीर्तन और उसके गीत लड़कों से तैयार करवाने का कार्य होता। आप्पा की एक लड़की सिंधू। उसकी धारणा शक्ति प्रखर। उससे दो तीन कीर्तन याद करवा लिये। दूसरे लड़को ने भी एक-एक कीर्तन याद किया।

पुस्तकालय से इतिहास पुस्तकें लाता उन्हें पढ़ उसमें से आकर्षक ऐतिहासिक प्रसंग चुनना उसपर कीर्तन रचना करना चालू रहता। ऐसे सारे उपक्रमों में दिन बढ़िया कट रहे थे।

आप्पा की पत्नी ताई शीतल स्वभाव की साध्वी स्त्री। उनकी बनाई रसोई का स्वाद अभी भी जैसे जीभ पर है। कभी उनका पकाया खाता। पहचान स्नेह में बदल गई ऐसे छह आठ घर और सबके यहाँ जाना आना चर्चा करना विविध कार्यक्रम बनाना। पार लगाना। आस पड़ोस के स्थान पर जाना वहीं खाना-पीना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

कितनी ही बार महेश्वर गया। अहिल्याबाई की वह प्यारी राजधानी। चारो ओर से खूब देखी। माण्डवगढ नामका छत्तीस मील परिसर का ऐतिहासिक किला। मण्डलेश्वर से पच्चीस तीस मील पर बाजबहादुर रुपमती की प्रेम कहानी का साक्ष्यी स्थान। कितनी ही बार साथियों के साथ उसपर पैरतोड़ की। नर्मदा पर एक गाँव कसरावद। वहाँ उत्खनन कार्य हुवा था। कितनी ही बार वहाँ गया। वहाँ की भारी मिट्टी की ईंटे पीठपर ढोकर लाया

कालक्रमण ऐसा मजे का।

काका फिर से लौट आये।

उनके आते ही उनसे ब्रह्मसूत्र के पाठ लेना शुरु किया।

शांकर वेदान्त के प्रथम चार सूत्र हैं। और उन्हीं में सारा शांकर वेदान्त पूरी तरह से प्रकट हो गया है। वे चार सूत्र हैं अथातो ब्रह्म जिज्ञासा - जन्माद्यस्य यतः - शास्त्रयोनित्वात और तत्तुसमन्वयात। इन चार सूक्तों को आचार्य ने जैसे धुनक कर तार-तार अलग कर दिया है। तर्क, बुद्धिमत्ता, प्रत्युपन्नमति। नाना शास्त्रों में गहरी गति इत्यादि का चतुःसूत्रों के भाष्य में चरमोत्कर्ष हुआ है।

उसी के साथ काका सार्वजनिक रुप से दत्त मंदिर में कठोपनिषद पढ़ने लगे। वह उपनिषद उन्हें बहुत प्रिय, यमराज ने नचिकेता जैसे लड़के के साथ आत्मज्ञान की चर्चा की होने से सारा कुछ एकदम सरलता से कहा गया है उसमें। भरपूर दृष्टान्त देकर।

अग्निर्यथैको भुवनं प्रविष्टो
रुपं रुपं प्रतिरुपो बभूव
एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा
रुपं रुपं प्रतिरुपो बहिश्च ॥

ऐसे सहज सुंदर ललित वर्णनों से कठोपनिषद भरा हुआ है।

इस तरह व्यस्तता में गुजरने दिनों में ही एक नये उपक्रम की कल्पना उदय हुई।

रावेरखेडी नामका नर्मदातीर पर का एक छोटासा गाँव। मंण्डलेश्वर से करीब पैतीस चालीस मील पर। उत्तर की ओर अभियान में निकले पेशवा बाजीराव प्रथम उस गाँव में आकर बीमार पड़ गये। छोटीसी बीमारी के बाद उनका वहाँ निधन हो गया। रेवातीर पर उनकी समाधी बनी हैं। इंदौर राज्य की ओर से उनकी पुण्य तिथि पर शायद नवंबरमे समाधि पर अभिषेक आदि होता था।उस वर्ष पुण्यतिथि के अवसर पर डॉ. मुंजे रावेरखेडी आनेवाले थे।

कीर्तन पाठशाला में यह बात निश्चित की गई कि प्रतिवर्ष इस अवसर पर उपस्थित होकर कीर्तन किया जायेगा।

सिंधू जोशी इसके लिये सर्वथा योग्य थी ही। उनकी बढ़िया आवाजी और संगीत में दखल होने से भी उससे रानी लक्ष्मीबाई की कथा पर कीर्तन तैयार करा लिया। उसी के

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दोनो भाई संगतकार भी हो गये।

पुण्यतिथि के पहिले दिन एक नाव में बैठकर हम दस बीस लोग सारे सामान आदि सहित रावेरखेडी चले। रातभर यात्रा की। दूसरे दिन मुकाम पर पहूँचे।

रावेरखेडी परिक्रमा में देखा था। परन्तु उतने ध्यान से नहीं। गाँव में कुछ भी और देखने लायक नहीं। नर्मदा तीर पर बाजीराव की समाधि माने एक तुलसी वृदांवन उदासा। इतना सिरमौर योद्धा भारत का। छत्रपति शिवाजी के बाद हिंदवी स्वराज्य जिसका लक्ष्य रहा ऐसा भारत में दूसरा व्यक्ति न हुआ। पर उसकी समाधि के पास न दिया न फूल माला। साल में एक बार पुण्यतिथि के अवसर पर चार आदमी इकट्ठा होते यही बड़ी बात। सालभर परिक्रमावासी फक्कडों के सिवाय दिया लगाने को वहाँ कोई नहीं।

उस दिन डॉ मुंजे लंबे समय बाद देखे। दाढी के बाल सफेद हो गये थे। उतना परिवर्तन छोड़ और किसी तरह की कमी उनमें नहीं आई थी। सिंधू ने कीर्तन किया। निर्भयता से।डॉ. मुंजे भी प्रसन्न हो गये। योजना और उसके लिये किया हुआ उहापोह सार्थक हो गया।

ऐसे ही और दो मेरे छात्रों के घरके पुरूष बहुत नियमशील, व्रती, सदाचरणी। उन घरों में इस कारण से मैं जाता रहता। दोनों घरों से मुझे स्नेह मिला। परन्तु सबसे अधिक आवभगत करती रामदासी ज़ोशी की घरवाली।

दुर्भाग्य से उनका लड़का जीवित न बचा। चार या पाँच लड़कियाँ। लड़कियों को बड़े अनुशासन से निष्ठा से बढ़ाया। अच्छे संस्कार किये।सारी गृहस्थी भिक्षा पर चलती। फिर भी रामदासी पति जो ले आते उसको बना पका सबको खिलाती। शरीर स्वास्थ ढ़ीला ढ़ाला। परन्तु मन पक्का। पति के साथ उसी बल पर दौड़ती रही जीवन संग्राम में।पति में प्रापंचिकता और परमार्थ वृत्ति का मजेदार संगम। भिक्षा माँगकर वे घर लाते जरुर पर मन में रहता घरबार छोड़ छाड़ हिमालय निकल जाने का विचार। अच्छी बुद्धि थी रामदासी की। ढंग से शिक्षा पायी होती तो सफल वकील, प्रोफेसर जरुर हो जाते। परन्तु हुए रामदासी। गले में झोली लटकाये भिक्षां देही करनेवाले। ऐसे पतिराज के साथ गृहस्थी करना माने हमेशा तार पर चलने जैसा परन्तु निभा ले गयी।

बहुत मजेदार जोड़ा। भाभीको रामदासी श्रीमंत कहते। माने -श्रीमंत आज झोली अच्छी भरी है दावत कर ड़ालो। ये दावत माने केवल दाल का पानी और रोटी मत परसना उसके साथ गुड भी होना।

मेरे लिये इस घर का दरवाजा हमेशा खुला। मधुकरी जाने की इच्छा न रहती तो उनके घर चला जाता। आज भोजन यहीं पाऊँगा। यह कहता निर्विकार हो और मैं अकेला भी नहीं मेरे साथ और एक मेरा मित्र। एखाद कोई परिक्रमावासी भी भोजन पर हो तो कोई आश्चर्य नहीं। रामदासी नबाब थे। दिन दो दिन बाद हमेशा ही वे घर आकर पत्नी से कहते श्रीमंत आज भोजन को दो अतिथि और हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

भाभी ने वैसे कभी किसी बात की शिकायत नहीं की। पर कभी-कभी वे मेरे सामने अपना मन खुला करती। पति की नबाबी को लेकर।

मैं कहता

"फिर क्या है ? नोटिस दे दो। ऐसा ही करते कराते रहोगे तो मायके चली जाऊँगी।

भाभी कान पकडती, गाल पर मार लेती कहती

भाईजी। पति एक स्त्री के लिए कितना बड़ा अलंकार होता है तुम न जान सके हो। औरत जात होते तो मालूम होता। जिसका हाथ पकड़ घर की देहरी लांघी वही जीवन का सबकुछ। जैसा राखे वैसा ही रहे। उन्हें भी तो सब समझता ही है। बीमार रहती हूँ। ये स्वयं जाकर नर्मदा से पानी लाते हैं। भोर उठ चूल्हा सुलगाते हैं। मैं बिना चाय किसी काम की नहीं यह उन्हें मालूम। चाय बना पिलाते हैं। ऐसा क्या-क्या करते हैं मेरे लिये। फिर भी ये जो नबाबी है यह बहुत अखर जाती है। बच्चियों के लिये कुछ इधर उधर बचा बुचु रखूँ तो कुछ भी रह नहीं पाता। इनकी इस नबाबी से। कुछ भी उठाकर किसी को भी दे देते हैं।

ये ऐसा प्रपंच चलाती नबाब की पत्नी मेरा बड़ा आसरा थी।

लगने लगा था कि अब सारा जीवन यहाँ रेवा के किनारे मधुकरी माँगते बीतेगा।

अदृष्ट की योजना कुछ और ही होती है। वह समझ में नहीं आती। एक दिन खांडवा से कोई तेज तर्रार सुंदर वाकपटु युवक आया। नाम था गोखले। किस की पहचान से आया याद नहीं। उसने रात को पाच पचास आदमी इकट्ठा किये। मैं भी पहुँचा जानने की उत्सुकता से।

गोखले ने सबसे पहिले परिचय कर लिया। हर व्यक्ति अपना परिचय कहता। नाम, व्यवसाय, आदि प्रारंभ की ये बात हो जाने पर वह बतियाने लगा।

अपने देश के सम्बन्ध में। उसका विस्तार, प्रान्तभेद, भाषा भेद अलग-अलग आचार विचार पंथ गरीबी अमीरी आदि उपर की ऐसी भिन्नता होते हुए भी अंदर से एकता का एक मजबूत धागा दिखता है। उन सब की मातृभूमि एक। धर्म एक। संस्कारों में एकता। उत्तर के बदरीविशाल। दक्षिण की कन्याकुमारी। पूरब की जगन्नाथ पुरी। पश्चिम की द्वारका उन तीर्थस्थानों के सम्बन्ध में इन अलग-अलग भाषा बोलनेवाले प्रचंड समाज के मन में श्रद्धा। रामायण महाभारत ग्रंथ के प्रति इन सबके मन में आदर श्रद्धा।

इन सारे समान सूत्रवालों को इकट्ठा करना संगठित करना। इतने साल तक विदेशी लोग राज्य कर गये। ये समाज बटा हुआ था इसलिए। अंग्रेज आये उन्होंने यहाँ अपना शासन स्थापित किया वह भी हमारी फूट के कारण ही।

अंग्रजों से देश को मुक्त करने के प्रयास चल रहे हैं। उग्र संघर्ष चल रहा है। परन्तु

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इस संघर्ष के पहिले समाज का जो एक संगठित रुप खड़ा होना चाहिये वह कहीं दिखता नहीं। आपत्ति आती है तो उतनी देर के लिए प्रतिकार शक्ति जाग जाती है। आपत्ति टल जाने के बाद फिर से एक दूसरे का सिर फोडने हम लग जाते हैं।

यह वृत्ति समाप्त होनी चाहिये। हम एक दूसरे के कुछ लगते हैं यह भावना परिपुष्ट होनी चाहिये। इस देश में मुगलों के साथ पठान आये। इरानी आये तुरानी आये उन्होंने यहाँ की प्रजा का जबरन धर्मान्तरण किया। अभी वह प्रश्न बड़े विकराल रुप में हमारे सामने खड़ा दिखता है। पर उसका उत्तर भी हिन्दुओं के संगठित होने में ही छिपा है।

ना भय देत काहु को ना भय मानत आप

हम एक जुट रहें एक मुँह से बोले एक मन से चले तो ये अन्यधर्मीय भी हमसे अच्छा बर्ताव करने लगे। जिओ हिम्मत से बहादुरी से और दूसरों को भी जीने दो।

ऐसा सारा आशय उस युवक ने हम सब के सामने रखा। ये सब पहिले भी सुना था। औरंगाबाद की जेल में। पर उसके साथ कुछ आग्रह भी जुड़े थे। वह तब इतना शुद्ध न लगा था। इतना स्वस्थ नहीं था। ऐसा सीना ठोक भविष्य के सामने जानेवाला नहीं था।

यह विचार पद्धति निर्दोष लगी। इसके लिए रोज एक घंटा एक स्थानपर इकट्ठा होने में भी कुछ गडबड न लगा। दूसरे दिन पांच पचीस लोग एक जगह इकट्ठा हुए। कोई खेला कोई गप्पें करता रहा। कोई चर्चा। एक घंटे बाद प्रार्थना हुई

नमस्ते सदा वत्सले मातृभूमे
त्वया हिन्दुभूमे सुखं वर्धितोहम

प्रार्थना भी पसंद आ गई। मातृभूमी का स्तोत्र लगी।

रोज इकट्ठा होने लगे। मैं खाली। कीर्तन पाठशाला के बाद मेरे पीछे कोई जंजाल नहीं। इसलिए वह नहीं आया क्यों नहीं आया यह देखने का काम मुझे सौंपा गया। करने लगा। अच्छा लगा। एक धंदा मिला।

पंधरह दिन बाद गोखले बोले

"बाबा साहेब आपटे मण्डलेश्वर आ रहे हैं।"

"बाबा साहेब कौन?"

"इस संगठन कार्य के लिए जीवन समर्पित किये हुए एक चिंतक ब्रह्मचारी।"

बाबा साहेब आपटे आये। मुझे पास बैठाया बतियाये ऐसा लगा कि जीवन में कुछ नयी चेतना प्रविष्ट हो रही है।

मेरा पूर्व जीवन जाना बहुत ही सहानुभूति से फिर बोले

"यहाँ क्या करते हैं?"

"कीर्तन पाठशाला चलाता हूँ।"

"माने क्या?"

विवरण सुनाया तो बोले

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"बहुत सुंदर यह तो एक तरह से हमारे ही काम का छोटा रुप है।"

"बहुत खाली समय रहता होगा।"

"हाँ"

"उस समय में क्या करते हैं।"

"पहिले कुछ भी नहीं करता था अब घर घर जाता हूँ लोगों को इकट्ठा करता हूँ।"

"बहुत अच्छा करते हैं। आप ऐसा क्यों नहीं करते?"

"कैसा?"

"इंदौर में दीपावली शिक्षा वर्ग आयोजित हो रहा है वहाँ अलग-अलग खेल, लाठी आदि सिखलायी जायेगी। वहीं पर संगठन का भी विचार अधिक विस्तार से होगा। आप आओ वहाँ।"

मैंने अपने वेष की तरफ देख - बोला

"ऐसा एक पंचा पहना हुआ मैं वहाँ खप सकूँगा?"

"उसे फिर देखेंगे, आयेंगे क्या यह बताइये।"

एकदम बोल गया

"आऊँगा।"

इंदौर के आठ दिन के वर्ग में जीवन सारा ही बदल गया। कितने ही सालों बाद खाकी हाफ पैंट पहनी। यह छोटा अधूरा वस्त्र मुझे बिलकुल पसंद न था। परन्तु और कोई रास्ता नहीं था। क्योंकि वह गणवेश था। हाफपैंट, शर्ट और काली टोपी।

करीबन पचास लोग वर्ग के लिये आये थे। वर्ग रामबाग के एक मैदानपर लगा था। भोर से ही शारीरिक शिक्षण शुरु हो जाता। पीटी, दंड, योगचाप, शूल, खड्ग छुरिका कुल मिलाकर किसी भी व्यायामशाला में जो कुछ सिखाया जाता है वही यहाँ सिखाया गया। व्यायाम शालाा में व्यक्तिगत पटुता पर जोर दिया जाता है तो यहाँ सांघिकता पर। पूरी टोली अनुश्शासन में किस तरह खड़ी हो। सिर ऊँचाकर कैसे चले एक साथ कदम ताल मिलाते चले, ये सबसे कराया जाता।

फिर होता नाश्ता। उसके बाद दस बजे बौद्धिक वर्ग होता। संघ की स्थापना, संघ विचार, कार्य पद्धति, समाज समस्या की ओर देखने का दृष्टिकोण। देश में अलग अलग चल रहे स्वतंत्रता संघर्ष। उनके सफलता, असफलता की मीमांसा। आदि अनेक प्रश्नों पर इन बौद्धिकों में चर्चा होती।

दोपहर भोजन। भोजन बाद एक घंटा आराम। फिर होती बैठकें। जहाँ से ये स्वयंसेवक आये वहाँ की स्थानिक समस्यायें। अन्य दिक्कतें आदि का विचार किया जाता। शाम को खेल खेले या सिखाये जाते। राज भोजन बाद परस्पर परिचय आदि। सारा दिन ऐसा कार्यक्रमों से भरा होता।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हर एक स्वयंसेवक की अपनी असुविधा, व्यक्तिगत गुणदोष या अन्य कारणों से उपजी, पर विशेष ध्यान दिया जाता। इन्हीं सब कारणों से यहाँ जिन-जिन से परिचय हुआ वह प्रगाढ़ होता गया।

ये सारे लड़के सुशिक्षित थे। बापू सरदेसाई एमएससी था। बाबा देशमुख, हिरालाल शर्मा, बीए थे। मोरेश्वर सखाराम गर्दे बीए के बाद एलएलबी कर रहे थे। मोरेश्वर जिसे हम सब केवल मोरु ही कहते बिलकुल गोलमटोल था। दूसरी उसकी खास बात उसकी मूछें थी। नाक के ठीक नीचे की जगह छोड़ उसे मूँछे थी। इसका कारण पूछने पर वह इसका उत्तर बड़ी मजेदारी से देता था। बड़ी संजीदगी से वह कहता कि हिटलर से जो लड़ाई अभी चल रही है उसका कारण उसके द्वारा चुराई गई मेरी मूँछे ही हैं।

मोरू तरल बुद्धि का लड़का था। शतरंज में कालेज का वह चैम्पियन था। कालेज विद्यार्थी संघ का वह सचिव था। हँसी मजाक तो उसके नस-नस में भरा था।

मोरू और उसके पिता तोफखाना गली में रहते थे। मोरु के विनोदी स्वभाव का बीज उसके पिता की देन था। वे पेंशनर थे।

रसोई मोरू के पिता ही बनाते। पुत्र की राह तकते बैठते। मोरोपंत कहाँ गये पूछने पर कहते

"अरे वो वलीवर्द हैं महादेव का। माने समझेना। शुद्ध हिन्दी में जिसे सांड कहते हैं वह। अब आप जैसे संस्कृतवालों के आगे सांड कहने से ड़रता हूँ।"

"वह गया होगा कहीं चरने। उसका क्या शतरंज है, कैरम है, ताश हैं। यह लड़का प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण कैसे होता है यह एक बड़ा आश्चर्य हैं।"

मोरू बाप का बड़ा लाडला था। वह माँ विहीन लड़का बाहर तो बहुत समझदारी से पेश आता पर बाप के पास आते ही जैसे बौरा जाता। रसोई में बाप कुछ पकाये और यह कुछ और ही माँग करें ऐसा चलता था। कभी कहता रबडी खाऊँगा कभी भजिये बनाइये। पर बाप भी उसके पूरे लाड रखता।

मोरु नामवर वकील होने योग्य था। डटकर पैसा कमाता तब परन्तु संघकार्य में जीवन समर्पित कर दिया। विवाह नहीं किया। ऐसे कितने ही थे जिन्होंने अपने अमूल्य जीवन इस कार्य के लिए समर्पित किये। धन, प्रतिष्ठा, सम्मान, लौकिकता की ओर पीठ मोड़ी। ऊँचे दर्जे की अपनी बुद्धिमत्ता केवल इसी कार्य में लगाई। प्रसिद्धि प्रकाश में कभी आये नहीं।

स्त्री सुख से मन मोडे रखना दुष्कर कार्य है। बड़े-बड़े नाही नाहीं करते विवाह कर बैठते हैं। मामूली अकल और योग्यता का आदमी भी जबतक विवाह न हो तबतक कुंठित रहता है।

संघ के बहुत उत्तम कार्यकर्ता पास से देखे हैं। शरीरक्षमता तगडी, बुद्धि तरल, घर से भी अच्छे, उच्च शिक्षा विभूपित, ध्येयनिष्ठा बेजोड ऐसे।

इन सबों ने लोकेषणा का त्याग किया। थोड़ा भी प्रयास करते तो सस्ती लोकप्रियता सहज पा लेते। पर वह रास्ता त्याग, बत्ती की तरह जलते रहे। विवाहबद्ध होकर गृहस्थी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

सुख भोगना भी मन में नहीं लाये। जिन्होंने यह उत्कट आदर्श इन कार्यकर्ताओं के सामने रखा वे डाक्टर हेडगेवार उनके सम्बन्ध में एक कवि ने कहा है

अमर हिन्दुत्व की इस नींव में चुपचाप सो जाना
यही हैं आज का वीरों का विजेता गेरुवा बाना

उस डाक्टर के पदचिह्नों पर चलते वे जीवन भर जलते रहे। ज्ञानेश्वरी महाराज के

"अलौकिक न होवे लोगो के प्रति।"

इस कथन का पालन एक व्रत की तरह करते रहे।

इन व्रती कार्यकर्ताओं के इस जीवन निष्ठा ने मुझे मोह लिया। अब यही पंथ, यही गति, यही मति यह निश्चित कर ड़ाला।

अबतक पतवार विहीन नाव की तरह जीवन निरुद्देश्य भटक रहा था। किसी ने कैसा भी अच्छा काम सुझाया कि करने लगा। लोग कहते

"ये देखो कितना अच्छा काम है। आप जैसों को करने के लिये। जो कहीं भी फंसे अटके नहीं है वे ही ऐसा काम कर सकते हैं। अब हमें तो समय मिलता ही नहीं आप जानते ही हैं अन्यथा. . . .।"

परन्तु अब जीवन को एक निश्चित दिशा मिली ऐसा लगा। इस महाप्रवास में झोंक देने का संकल्प बना।

मण्डलेश्वर लौटा तो बदला हुआ। पहिले जैसा नहीं। जीवन ही बदल गया था।

मण्डलेश्वर में शाखा शुरु हो गयी थी। वही कार्य अधिक प्रयास से चालू किया। शिक्षित बस्ती अधिकतर कचहरी और दफ्तरों के कारण आयी हुई। सरकारी नोकर सब होशियार।

मन से चाहे संघ कार्य से अनुकूल पर संभलकर चलने वाले। इसलिए शाखा पर प्रौढों की उपस्थिति नगण्य। लड़के आते उन्हीं को खेल सिखाना, रोज शाखा पर लाना। कहानियाँ कहना।

यहाँ मैं पंचा पहन घूमा था। दोपहर लोगों के यहाँ मधुकरी मांगी थी। लोगों के मन मे मेरी पहचान वेदान्त के एक छात्र रुप में। वही लड़का अब हाफपैंट, शर्ट, टोपी, चमडे का पट्टा लगा शाखा लेने लगा। लोकदृष्टि में यह अजनबी चीज थी।

काका धुलिया गये थे। कीर्तनपाठशाला बंद थी। अब केवल संघ का काम इतना ही लक्ष्य था। अप्पा के यहाँ भोजन करता और शामतक संघ कार्य में लगा रहता।

काका को पत्र लिख इस नवीनता की जानकारी दी। उनका पत्र आया।

तू विचार कर सकता है। अच्छे-बुरे का। जो कुछ करना है वह सोच समझकर करना। आदमी प्रमाथी न होवे। संघ कार्य अगर निष्ठा से करने लगे हो तो मुझे खुशी ही है।

दो महिने बाद की ही बात। इंदौर से एक संघ कार्यकर्ता आये। एक बैठक में वे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बोले

"संघ कार्य के विस्तार के लिए जीवन अर्पण करना चाहते प्रचारकों की आवश्यकता है।"

भोर उठा, उनसे कहा

"जहाँ आवश्यकता हो वहाँ जाने के लिये मैं तैयार हूँ।"

मण्डलेश्वर के संघ कार्य की व्यवस्था लगा दी। देना-लेना चुकाया । इस गाँव से नाता जुड़ गया था। मधुसंचय वाले फूल के प्रति मधुमक्खी का जैसा मन वैसी मेरी गत हो गई थी। मेरे सरीखे निष्कांचन, निस्पृह की दृष्टि से यह ठीक था या नहीं यह समझ में नहीं आ रहा था।

रोटी तोड़ते वैसे सारे स्नेहबंध तोड़े । एक दिन सुबह मोटर में बैठा। मित्र स्टेन्डपर आये थे। उनसे कहा

"मेरी आप सबको राम राम।"

मोटर आगे बढ़ ली।

इंदौर राज्य में कन्नोद नामक जिला केन्द्र। उसके चारो ओर नर्मदातीर पर नेमावर, खातेगाँव, कांटाफोड ऐसे अच्छे बड़े गाँव। कन्नोद में संघ का कार्य शुरू हो गया था। इंदौर के एक स्वयंसेवक दामूअण्णा कोठारी पी. डब्लू डी में ओवरसियर थे के द्वारा। परन्तु एक पूरे समय के कार्यकर्ता की आवश्यकता थी। मुझें कन्नोद का जिला प्रचारक नियुक्त किया गया था।

कन्नोद एक अच्छा गाँव था, अच्छासा बाजार। सोनार, बढ़ई, दर्जी ऐसे सारे कारागीर वहाँ थे। ग्वालों की संख्या अधिक। उनका एक मोहल्ला ही था। भैंसे खेतों में चराना। भैसोंपर से लड़ना। झगड़ना। लाठियाँ चलाना। डटकर दूध पीना। डंड पेलना। यह उनका जीवन। मैं आया और शाखा का काम जोर से शुरु हुआ।

शाम को सरकारी नौकर घर लौटते उनके यहाँ जाकर बातें करना, "लड़के क्या करते हैं शाम को!" यह पूछना। सभी शिकायत करते वो तो उधम करते फिरते हैं शाम को। फिर उन्हें शाखा पर भेजने के लिए कहना। वे आते हैं या नहीं यह देखना। शाखा पर उन्हें देशभक्ति के गीत सिखाना

यह सुंदर देश हमारा।
जहाँ पहुँच अनजान क्षितिजका
होता कूल किनारा।
मातृभूमि के ऐसे उत्तम गीत
जय जय भारत माता
तेरा बाहर भी घर जैसा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रहा प्यार ही पाता
ऊँचा हृदय हिमालय तेरा
उसमें कितना दर्द भरा
फिर भी आग दबाकर अपनी
रखता है वह हमें हरा
सौ सोतों से फूट फूट कर
पानी टूटा आता।

शहीदों के द्वारा फांसी के तख्ते पर चढ़ने के पूर्व स्वयं लिखे गीत

दिन खून का हमारे प्यारों न भूल जाना
खुशियों में अपनी हमपर आँसू बहाते जाना

कन्नोद में हिन्दी पुस्तकों का अच्छा पुस्तकालय था। वहाँ से देशभक्ति पर पुस्तकें ले आता। शिवाजी, प्रताप, गोविदसिंह पढ़ता। स्वयंसेवकों से पढ़वाता। उन्हें देशभक्ति की कथाएँ सुनाता।

एक दिन स्वयं भी कुछ पंक्तियाँ यूँ ही कागज पर उतारी

दुखसे भरे दिनोंको प्यारों न भूल जाना
लंबी कराल रातें जो दर्दसे भरी थी
कैसी बिती जहाँपर सुखका न था निशाना
रजपूत रानियों की धधकी हुई चिता से
जलता हुआ वतन का अबतक बुझा न सीना
राणा प्रताप के दिन वनवास में कटे थे
उनसे उजल रहा है बिगड़ा हुआ जमाना
क्या वे प्रसंग सारे दिलसे निकल गये हैं
या उनको भूलनेका करते हैं हम बहाना

एकाएक ही सारी पंक्तियाँ नहीं सूझी। पहिले तीन चार सूझी फिर रेंगते और सूझती रही। समझ में आया कि देश भक्तिपर गीत गाते, गवाते, रटते-रटाते कुछ कवित्व गुण अपने में भी आ गये हैं। भाषा, शब्द सम्पन्नता की दृष्टि से ये हेटा ही गीत है परन्तु आशय स्पष्ट करने में समर्थ है।

ग्वालों, अहीरों का एक नेता था काला भरेपूरे देह का, बड़ी-बड़ी मूँछोंवाला। उसका नाम भूरादादा। सायं शाखा पर बच्चों को लाठी आदि सिखाया करता मैं। वह बड़े उत्सुकता से देखता। मैंने उसे दो चार बार देखा। किसी ने बताया कि ये अहीरों के उस्ताद हैं।

एक दिन सीधे अहीर बस्ती में चला गया। भूरादादा के दरवाजे जाकर खड़ा हो गया। उसकी भारी देह पत्नी भैंस धो रही थी। उसने पूछा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"का है?"

"दादा हैं।"

अंदर देख उसने हँकारा

"कोई छोरा आयो है जी।"

दादा अंदर से आये। लुंगी पहने। उघाडे। मुझे देखते ही स्नेह से हाथ पकड़ आंगन की खाट पर बैठाया। दूध पिलाया। मैं अपना परिचय देते हुए बोला

"मैं अपने संघ का।"

"हाँ मालूम हैं।"

कुछ नहीं केवल परिचय कर लेने के लिए आया था। खूप बातें हुई। इधर लड़के कितने बिगड़ गये हैं। यह बातें। पहिले कैसा था। हमारे उस्ताद तो हमें मानों तलवार की धार पर चलाते आदि। मन में सोचा हो गया काम

उठते-उठते मैंने कहा

"दादा यहाँ आपके मोहल्ले में कोई शाखा क्यों नही चलाते?"

दादा ने कहा दिनभर लड़के भैंसों के पीछे रहते हैं। शाम को दूध निकालने, बेचने का काम रहता है। मैंने कहा

"फिर रात्रि शाखा शुरु करें।"

दादा को यह बात पट गई।

दूसरे दिन से अहीरों के मोहल्ले के एक मैदान पर रात्रि शाखा शुरु हुई। ऊँचे पूरे देह के ग्वाले शाखा पर आने लगे। स्वयं भूरादादा डंडा लेकर पंक्ति में खड़े रहने लगे। सबको फिर आना ही पड़ता। वे सब मल्ल थे पर लाठी में उन्हें कुछ भी नहीं आता था। मैं भी मामूली ही जानता था। पर पांच पच्चीस लोगों की टोली को लाठी के चार दो हाथ सिखलाने लायक मुझे आता था। मैं सिखाता-ऐसा नहीं, देखो सब की लाठी एक साथ चलनी चाहिये। यहाँ एक के काम को महत्त्व नहीं। सांघिक काम कैसा होता है यह महत्त्व का है। सबको सबके साथ काम करना है। सब लोग एक साथ वार करें। पांच पचास लाठियों का एक साथ गूँजता फरफर आवाज भूरा बाबा को प्रसन्न कर देता वे कहते

"ये हुई बात।"

दामूअण्णा कोठारी के यहाँ भोजन करना और उन्हीं के घर से लगे कमरे में रहना। दिन रात स्वयंसेवक आते रहते। लोगों के पास बहुत समय रहता। उद्योग नहीं रहते। मेरे पास लेकिन हजार काम थे। गीत खोजना या रचना, उन्हें याद करना, याद करवा लेना ही एक बड़ा काम था। कहानियाँ खोजना कहना। लड़कों को लेकर गाँव के बाहर की बावड़ी पर जाना उन्हें तैरना सिखाना। कोई उसमें इमली तोड़ने गया तो उसे मना करना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बिना पूछे नहीं लेना, यह उन्हें सिखाना। तलवार के मेरे सीखे हुए हाथ उन्हें सिखाना। दिखाना।

इन सब कारणों से लड़कों का एक हुजूम ही मेरे साथ रहता। वे सोचते यह मरीयल आदमी इतना सारा करता है और हमसे केवल शाखा पर आने को कहता है। पैसा या कुछ माँगता नहीं, लेता भी नहीं।

कांटा फोड, नेमावर, खातेगाँव में भी संघ का कार्य शुरू हो गया था। इसके उसके प्रयासों से।

उन शाखाओं की तरफ ध्यान देते रहना यह मेरा काम था। चार दो स्वयंसेवकों को लेकर वहाँ जाता। वहाँ जाकर शाखा लेना। रात चांदनी में स्वयंसेवकों को लेकर चर्चा करना। संगठन के अभाव में इस देश पर कैसे-कैसे संकट आये यह बताना। सामूहिक शक्ति के आगे राक्षसी शक्ति भी कैसे फिकी पड़ जाती है यह बताना।

नेमावर नर्मदा का नाभिस्थान। शाखा का काम वहाँ देखने जाता तो नर्मदा पर अवश्य जाता। उसके दर्शनों में सब कुछ भूल जाता। घंटो किनारे बैठा रहता। पुरानी बातें याद आतीं। दोस्तों को परिक्रमा की बातें बताता।

शाखा पर लड़के कबड्डी खेलते। कभी-कभी वे मुझे भी कहते। जोर देते। फिर मैं भी कबड्डी खेलता। मरियला सा होने से पकडाई में नहीं आता। एकाध को मार के ही आता।

एक बार लेकिन सबों ने मिलकर कुछ सोचा। मुझे पकड़ने की ठानी। मुझे पता नहीं कुछ। वे सब मोटे भरी बोरी थे। मैं कबड्डी कहता पाले में घुसा। उन्होंने मुझे अंदर तक आने दिया और फिर घेर लिया। मैं छूट भागने की कोशिश करने लगा तो सब के सब जैसे कोई दीवार गिरे मुझपर गिर पड़े। मैं नीचे और वे सातआठ मुझपर एक से एक भारी।

घुटने की कटोरी सरक गई। चक्कर आ गया। दर्द के मारे कराह गया। उठना संभव ही नहीं रहा। ये सब देखा तो उन सबकी सिट्टी पिट्टी गुम हो गई। दौड़ भाग की फिर उन्होंने। भूरादादा को वे बुला लाये। लड़कों पर नाराज होते उसने घुटने की मालिश की। चार छह दिन उठने से मना किया। रोज आकर वह मालिश कर जाता।

तब से कबड्डी बंद हो गई। लेकिन संघकार्य की दृष्टि से वह पड़ रहना लाभ का रहा। जाने कितने ही लोग मिलने आये। उनसे बातें करते एक शिक्षण वर्ग आयोजित करने की योजना बनाई।

कन्नोद में एक जीनिंग फैक्टरी थी। उसके परिसर में वर्ग लेने क़ी बात पक्की हुई। इंदौर को पत्र लिखा। तुरन्त स्वीकृति आयी। रात्रि सायं और प्रभात शाखा से बीस स्वयंसेवक चुने।

योगचाप, लाठी, खड्ग ये सब अभ्यासक्रम में सम्मिलित किये। इंदौर का एक द्वितीय

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वर्ग प्रशिक्षित विद्यार्थी था। उसकी सहायता से योजना बनाई। दण्ड और योगचाप का जिम्मा उसने लिया। खड्ग बौद्धिक और अन्य मेरी तरफ।

लेझीम कन्नोद शाखा के पास थे। खड्ग नहीं थे। बीस खड्ग इंदौर से मँगायी जानी थी। उधर लाने की जगह मोल लेने की ही योजना बनी। लोहे के ऐसे खड्ग की कीमत दो रुपये नग पड़ रही थी।

झीणाजी नामका एक स्वयंसेवक बड़ा चलता पुर्जा। उसे पूरे गाँव की जानकारी। मेरे कमरे पर रोज शाम को आता। खड्गों की चिंता में मुझे बोला

"भाई साहब नकली तलवारे क्यों मँगा रहे हैं?"

"तब!"

"असली का उपयोग नहीं किया जा सकता।"

बीस असली तलवारें कहाँ से लायें। परन्तु उसने पता बताया।

"यहाँ एक बापजी रहते हैं। राजपूत हैं। उनके बाड़े में तलघर हैं और उसमें तलवारों का ढेर है।"

"तुम्हें क्या पता?"

"मैंने देखी हैं ना।"

"हमें कैसे मिल सकती हैं?"

"चलिये देखें। आदमी अफीमची है। लग गई गोली तो लग ही गई।"

एक सुबह झीणाजी और मैं दोनो बापजी के बाड़े में पहुँचे। दीवार से घिरा बड़ा आंगन। अंदर ढोर ढंगर और चरवाहों की भीड़। एक खटिया पर आधी उमर के बापजी बैठे हुए।

ये बड़ी मूँछें। गुडगुडी से भकाभक धुवाँ निकल रहा। मुँह भी उनका इससे साफ दिखाई नहीं पड़ रहा।

झीणाजी बाप के सामने खड़ा हो गया। बोला

"जे रामजी की बापजी!"

उसने हूँ किया। उसने आगे कहा

"जे हैं मास्टरजी। तलवार और भाला और लट्ठ बहुत खूबी से चलाते हैं।"

बापजी ने केवल मेरी ओर देखा।मैं नमस्कार कर हिन्दू संगठन कितना जरुरी है यह समझाने लगा। वे धुवाँ छोड़ते रहे। आँखे बंद किये।

झीणाजी ने मेरा पैर दबाकर संकेत किया। मैं चुप हो गया। झीणाजी ने आगे बढ़कर कहा

"बापजी आपणें ह्यां तलवारें हैं न पुराणी।"

अब बापजी बोले

"हाँ है पुराना कूड़ा कचरा।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"ये मोल लेना चाहते ?"

"क्या भाव ?"

मैं कुछ बोलना ही चाहता था तो झीणाजी ने फिर पैर दबाया बोला

"हर तलवार को माँजना मूँजना पड़ेगा। चार आने दे क्या तलवार के।"

"छह आने उठाओ सारा लाट।" धुवाँ छोड़ते बापजी बोले।

नकली तलवार दो रुपये में और असली छह आने में

झीणाजी और मैं तलघर में उतरा। तीस पैंतीस तलवारें वहाँ थी। पैसे गिने तलवारें लिये हम कमरे पर आ गये। माँजना रगड़ना चालू किया। तेलपानी दिया। चार दो तलवारें नामांकित थी। चार दो रद्दी निकली।

अच्छी तलवारें लेकर एक जानकार लोहार के यहाँ गये। उससे सारी बात कहीं उसने मान ली। मुठिया से पत्ती निकाल पत्ती और मुठिया को रगड साफकर उसने पत्ती को मामूली धार भी कर दी। फिर चपडी लाख मँगवाकर मुठिया में पत्ती जड़ दी। चार दो दिन उसमें गये।

मैं उन तलवारों को देखता रहा सोचता भी रहा कितने और किसके गले पर ये चली हुई होंगी।

वर्ग बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हो गया। आठ दिन चुटकी से गुजर गये। एक छोटी सी दुर्घटना भी हुई। एक अच्छी तलवार हाथ में लेकर उसके बारे में बता रहा था। ये पत्ती, ये नाल, ये पीठ, ये धार, ये मूठिया, यह नोंक और ये. . . . . . यह

तलवार सामने वाले के पेट में कैंसे भोंकी जाती है यह फिर सिखाने लगा। आदत नहीं थी। मैंने कम से कम कुछ ही सही नकली तलवार हाथ में पकडी भी थी परन्तु वे बीस स्वयंसेवक वे तो एकदम कोरे थे। कढ़ई में करछुल चलाते वैसा वे तलवार खोसने लगे। उसमें से एक की नकल करने लगा। बायाँ पैर घुटने से उपर उठाया आगे बढ़ा तलवार की खोस गलत कैसी है यह दिखाने लगा तो उसका नोक सीधे मेरे घुटने में घुस गया। खून की धार बह निकली।

दौड़ धूप हुई। मलम पट्टी हुई। स्वयंसेवक कहने लगे। मुझे विश्राम करना चाहिये। पर मैंने मना कर दिया। कार्यक्रम वैसे ही चालू रहे। उस मेरे जिद का कुछ एक परिणाम होना ही था।

वर्ग हो गया। वहाँ तैयार हुए शिक्षक अलग-अलग शाखा पर काम करने लगे। एक ही शाखा पर बंधा न रह मैं हर एक शाखा पर ध्यान देने के लिए आजाद हो गया।

एक सायं शाखा पर खड़ा था। लड़के खेल रहे थे। इतने में एक लड़का दौड़ते आया। कान से लगकर बोला-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"गुल्लू आ रहा है।

गुल्लू एक सिरदर्द था। बढ़ई जाति का यह आवारा लड़का अपनी माँ का अकेला था बाप नहीं था। माँ मेहनत करती और अपने लाडले को खिलाती-पिलाती। छोरा बड़ा तगडा, ठिंगना और बड़ा ऊधमी। उसके मारे सारा मोहल्ला त्रस्त था। किसी की बगिया में घुस जाना फलफूल तोड़ना मारपीट करना। शाखा में आनेवाले लड़कों को पकड़ना पीटना उसके साथ कैसा बर्ताव मैं करुँ यह समझ में नहीं आता था।

वह आया और लड़के कबड्डी खेल रहे थे उसमें घुस गया। मैं पास ही जाकर खड़ा हो गया। वह खेल में मर गया फिर भी खेलता ही रहा।

आँखें तरेरते मैंने कहा

"नामर्द हो क्या गुल्लु। मर्दों जैसा खेलो।"

मेरा भाग्य अच्छा कि उसने सुना। बाहर आकर बैठ गया। उधर का एक साथी मर गया तो मैंने उसे उठाया। उठा। खेला और चला गया।

ध्वज प्रणाम नहीं, कुछ नहीं।

अंत में स्वयंसेवक मुझे कहने लगे

"देखिये हम तो कहते रहे।"

उनसे कहा-चिंता न करो। कल वह फिर आयेगा। वह आया। उस समय बच्चे कुछ खेल रहे थे। मैं उसके पास गया। कंधे पर हाथ रखकर पूछा-

"अकेले आये गुल्लू?"

"हाँ!"

"अपनी गली के छोरों को क्यों नहीं लाते?"

"अभी लाऊँ!"

"ना ना भाई लेकिन कल ले आना।"

दूसरे दिन वह और बच्चों को साथ लाया। वे सब चाहे जैसे बरतने लगे। मैंने उन्हें डांटा तो सीधे हो गये। बीच में से ही जाने लगे। मैंने डपटकर कहा-बगैर प्रार्थना किये नहीं जाना। सभी खड़े रहे, गुल्लू भी।

धीरे-धीरे वह शाखा पर आने लगा। बीच में ही एकाध दिन ऊधम करता, फिर भी सीधा हो गया। मेरे कमरे पर आता। मेरे कमरे के खूँटियों पर टंगी तलवारें, योगचाप वेत्रचर्म यह सब उसको पसंद आने लगा। एक दिन बड़ी जिज्ञासा से जैसा किसी गुप्त धन के सम्बन्ध में पूछ रहा हो वैसा पूछने लगा-

"मास्टरजी, एक पूछूँ क्या?"

"पूछो।"

"हाँ हाँ।"

"क्या तलवार से सचमुच आप का पैर कट गया था?"

"नहीं रे लोगबाग यूँ ही बातें बनाते हैं।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लेकिन घाव दिखाने का आग्रह वह करता रहा। मैंने उसे घाव दिखाया। उसपर से हाथ फेरते उसने कहा

"क्या तबभी काम आपने बंद नहीं किया।"

फिर मैंने उसे अस्सी घाव लगे राणा सांगा की कहानी बताई कहा कि "उसके सामने मेरे एक घाव का क्या?"

तब से गुल्लू मेरे छोटे बड़े काम बड़े उत्साह से करने लगा। उसमें एक दोष भी था। वह बीडी पीता था। मैंने बहुत दिन उधर ध्यान नहीं दिया। मेरे सामने नहीं पीता था। पर एक दिन कमरे पर लड़के जमा थे वह भी था मैंने जानबूझकर कहा

"किसके मुँह से बदबू आ रही है। बीड़ी पीकर कौन आया है रे?"

गुल्लू बीड़ी पाता सब जानते थे। फिर भी कोई बोला नहीं। सब चले जाने के बाद बोला

"मास्टरजी बदबू मेरे मुँह से आ रही थी।"

"बीड़ी पीता है रे इतनी सी उमर में?"

"तुम्हारी कसम अब नहीं पीऊँगा!"

"कसम खाओ नहीं गुल्लू और यकायक छोड़ो भी नहीं। आस्ते छोड़ देना समझे।"

एक हफ्ते में उसने बीड़ी छोड़ दी। वैसा उसने मुझे कहा भी।

एक दिन बाजार से जा रहा था। यह किसी लड़के से गप्पे मारता बीड़ी पीता खड़ा था। मुझे देखते ही उसने बीड़ी फेंक दी। मैंने देखा पर कुछ न बोलते मैं आगे बढ़ गया।

रात को दूसरों के साथ कमरे पर वह आया। पीछे बैठा रहा। मैंने तय किया आज इसके उपर धक्का प्रयोग किया जाय। स्वयंसेवक जाने लगे ये भी जाने लगा। मैंने कहा

"गुल्लू तुम नहीं जाओगे।"

वह ठहर गया उसे कहा

"दरवाजा बंद करो। कुण्डी लगा लो।"

उसने कुण्डी लगाई। खूँटी पर वेत्रचर्म की छड़ी रखी थी। वह मैंने उसे ही लाने को कहा। हाथ में छड़ी आते ही मैंने उसे सटासट लगाना चालू किया। मैं उसे क्यों मार रहा हूँ यह उसे ज्ञात था।

हर बार वह वार से बचने का प्रयास करता और कहता

"मास्टरजी अबकी बार नहीं पीऊँगा तुम्हारी कसम।"

पर मैं मारता ही रहा। निर्दयता से। गुल्लू मेरे जैसे छह जनों को भारी था। मन में आता तो वह मेरे हाथ की छड़ी छीन मुझे ही मारता। गला भी दबा देता तो मैं कुछ नहीं कर सकता था। पर वह मेरे हाथ का मार खा रहा था।

आखिर छड़ी फेंक दी। उससे कहा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चले जाओ माँ को दिखाना मार की निशानियाँ। कहना मार क्यों पड़ी। आज से मेरे यहाँ नहीं आना।

चुपचाप वह चला गया। पीटने की आवाज सुन पड़ोसी मेरे पास आये। मैंने गुल्लू को पीटा यह जानने पर बोले

"दाण्डेकरजी यह आपने बुरा किया। वो लड़का बड़ा शैतान है। किसी दिन आपको पकड़ के पीटेगा।"

चुप रहा।

दूसरे दिन रात को गुल्लू फिर से कमरे पर आया। शाखा पर भी आता रहा।

आगे जाकर गुल्लू एक विश्वासपात्र स्वयंसेवक के रुप में कार्यकर्ताओं में जाना जाता रहा।

गरमी में इंदौर में अधिकारी शिक्षण वर्ग आयोजित हुआ। उसके लिए मुझे चुना गया।

इंदौर गया। दीपावली जैसा ही वर्ग था। पर बड़ा। स्वयंसेवकों की संख्या भी अधिक थी। सारे कार्यक्रम वैसे ही।

एक विद्यालय में हम ठहराये गये थे। वहाँ से भोर ही उठ शारीरिक कार्यक्रम के लिये मैदान पर जाना पड़ता। उसके बाद नाश्ता। फिर बौद्धिक। दोपहर भोजन के बाद चर्चा। परस्पर परिचय। शाम को फिर से शाखा के कार्यक्रम। रात को कार्य की समस्याओं पर बैठक में विचार।

मैं सजग था। महात्माजी का अनुयायी था। संघ का तत्वज्ञान एकदम अलग दिशा से समस्याओं पर विचार करने वाला है यह ज्ञात था। वह दिशा अधिक सुस्पष्ट, संघटन की ताकत पर भरोसा करने वाली है इसकी कल्पना थी।

बैठकों में या बौद्धिक वर्गों में इन दोनों सम्प्रदायों के बीच शत्रुता निर्माण होने जैसा कहीं कुछ भी दिखाई न दिया। टीका होती थी। वह होना अपरिहार्य ही था। रास्ते ही अलग थे। पर उस टीका से आग भड़क जाये ऐसे शब्द किसी ने कहे नहीं। कभी बेछूट बातचीत को प्रोत्साहन भी नहीं दिया गया। इसके विपरीत अहिंसा के तत्वज्ञान के सम्बन्ध में मन से सद्भावना रखनेवाले कितने ही स्वयंसेवकों से परिचय बढ़ा।

इस वर्ग में एक विद्वान और कर्तव्य सम्पन्न दिलदार व्यक्ति से परिचय हुआ। वह आगे खूब बढ़ा।

भैय्याजी दाणी उमरेड के एक वकील। खूब खुले दिल दिमाग का व्यक्तित्व। उत्तम वक्ता। वे मालवा प्रांत के प्रांत प्रचारक का कार्य देखते थे। उन्होंने मेरा "कवि" पहचाना। प्रोत्साहन देकर उस कवि से राष्ट्रभाषा में बहुत सी कविताएँ लिखवा ली।

उन गीतों के कारण मैं एक हिन्दी कवि के रूप में जाना जाने लगा। मेरा एक गीत उन्हें विशेष प्रिय था।वे मुझे बार-बार उसे कहने के लिए कहते।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ले नमस्ते ओ उपेक्षित
मान्यवर हे वंद्य नरवर शुक्रके तारे महात्मन
हे तपस्वी हे गुरो हे मानधन हे पुण्यपावन
स्मरण कर तेरा निराशा हो गई है खण्डखण्डित
धवल यश का गान तेरे क्या करे वाणी बिचारी
शतशतध्नीनाद होगा उग्रसा रोमांचकारी
विश्व यश तेरा सुनेगा शान्त नभ होगा निनादित

उसी वर्ग में संघ के परमपूजनीय नेता के दर्शन हुए। उनका अमोघ, गंगाप्रवाह जैसा व्याख्यान सुनने को मिला। सुस्पष्ट विचार प्रणाली, निर्भय प्रगटन दूरतक का विचार करने की शक्ति कार्य को अंगीकार करने की समर्पितता।

ऐसा वह पुण्य पुरूष बहुत पास से देखने को मिला।

एक दिन प्रचारकों की बैठक थी। स्वयं गुरुजी ने ली थी। भैय्याजी उपस्थित थे। उन्होंने मेरे कवित्व का परिचय करा दिया। गुरुजी ने बहुत स्नेह से पूछताछ की। मुझसे दो एक गीत सुने।

धन्य-धन्य हो गया मैं।

कन्नोद लौटा तो एक समस्या मुँह बाँये खड़ी थी। समस्या भी मजेदार।

कन्नोद में मुसलमानों की बड़ी बस्ती थी। भोपाल से कोई दो मुसलमान कन्नोद आये। मसजिद में रहने लगे। गुप्त बैठकें होने लगी। रात में कंधेपर फावडे लिए जुलूस निकाला जाने लगा। गाँव का वातावरण तंग हो गया।

उन्हें पकड़ने के लिए इंदौर से पुलिस अधिकारी आये। वे दोनों मसजिद में छुप गये। अंदर से सांकलें चढ़ा ली।

अंत में रात को पुलिस अधिकारियों ने हमारे भूरादादा को बुलाया। बातचीत हुई। सातआठ लोग मसजिद की दीवारों पर से चढ़ अंदर कूद गये। पिस्तौलें लेकर। आगे भूरा। दोनों को कैद किया गया। पकड़कर ले गये।

मुसलमान बौरा गये। वे अहीर लोगों से खौफ खाते थे। फिर भी वे भूरादादा से मिले बोले

“दादा ये आपने बड़ा बुरा किया।”

“क्या?”

“हमारी मसजिद में मय जूतों के कूद पड़े।”

“तब तुमने बागियों को अंदर छिपाया क्योंकर?”

“लेकिन आपने अच्छा काम नहीं किया। ठीक है। हमारा भी कोई दिन आ ही जायेगा।”

CC-0.Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गाँव का वातावरण और अधिक तंग हो गया।

मैं रात बेरात गाँव में घूमता रहता। घूमना ही पड़ता लोगों से मिलने का समय वही। दिनभर वे अपने-अपने धंधों में लगे हुए।

भूरादादा मेरे पास आकर बोले

"मास्टरजी आप रात को अकेले घूमा नहीं करो।"

"क्यों ?"

"आपकी जान को खतरा है।"

रात को घूमना कितना जरुरी है यह मैंने भूरादादा को समझाया कहा अगर मैं खतरे से ड़रकर घर में बैठा रहा तब तो मुझे कन्नोद छोड़ना ही पड़ेगा। खतरा तो हर समय अपने साथ चला करता है दादा। नर्मदापरिक्रमा करता रहा सो क्या खतरे से खाली थी ?

उस दिन से दादा ने जैसे एक नियम ही बना लिया। वे रात में मेरे साथ ही बने रहते। गाँव भर के काम हो जाने के बाद जब मैं अपने कमरे पर लौटता तब वे मुझसे कहते

"मास्टरजी अब मुझे आज्ञा दो।"

और फिर घर जाते।

मुसलमानों का दिन भी आया।

मोहर्रम। गाँव का वातावरण तंग था ही। इंदौर से एक डी. वाय. एस. पी. कन्नोद आया। संयोग से वह मुसलमान था। अब मुसलमानों का दिमाग चढ़ जाना ही था। ताजियों के रास्ते एक राम मंदिर था गाँव के बाहर। चारों ओर कोट और अंदर बड़ा सा आंगन। बीच में मन्दिर। ताजिये सीराने ले जाते समय मन्दिर के इधर ही घंटे दो घंटे ठहरा करते। शाम को उठते और फिर अपने-अपने रास्ते निकल जाते।

मुसलमान खुल्लम खुल्ला कहने लगे

हमारा अफसर आ गया है। अब राम मन्दिर सम्हालो। मसजिद में कूद पड़े थे उसका बदला चुकायेंगे।

ताजिये निकलने के पहिले दिन मेरे कमरे पर लोगों की भीड़ इकट्ठा हो गई। गाँव के प्रतिष्ठित, नेता, भूरादादा सब मैं लौटकर देखूँ तो अंदर जाने की जगह ही नहीं। आते ही पूछा-

"क्यों भाई लोगों, क्या बात है ?"

एक चतुर बोले

"बातें तो बहुत है दाण्डेकरजी, आप पहले बिराजिये। कुछ गंभीर विषय है।"

मेरे बैठते ही सब बोलने लगे। सबको शांत किया तब एक व्यक्ति ने मुसलमानों की

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

धमकी की बातें विस्तार से कही और बोला

बताईये अब संघको क्या करना चाहिये।

मैंने बड़े शांति से कहा

"संघ कुछ नहीं करेगा। संगठन इस विषय में दखल नहीं देता।"

मेरा वह उत्तर सुन वे सब आश्चर्य में पड़ गये। कुछ क्षण बाद नेताजी बोले

"दाण्डेकरजी आप हम लोगों का मजाक कर रहे हैं।"

"मजाक क्यों करुँगा भाई! मजाक नहीं कर रहा हूँ। इन घटनाओं में हस्तक्षेप करना संघ का रिवाज नहीं है।"

चुप रहे सब। फिर वे गुस्सा हो गये। मुझे डरपोक, भगोड़ा क्या-क्या कहने लगे। बड़ी डींग हाका करते थे वक्त आया तो पूँछ दबाली। यह भी कहा। फिर नेताजी बोले

"चलो जी कल से संघ बंद कर दिया जायेगा।"

मैंने फिर कहा

"देखिए भाई साहब आप बिना कारण क्षुब्ध हो उठे हैं।"

"संघका काम बंद करना आपके वश की बात नहीं है। वो तो चलता ही रहेगा। और एक बात। आप मुझसे पूछने आये कि संघ क्या करेगा।" मैंने कहा संघ कुछ नहीं करेगा।

उठते वह बोले

"बस। बहुत हुआ अब तो हमी को कुछ करना पड़ेगा।"

मैंने मुस्कराकर कहा

"वाहजी तब फिर ये बात पहले ही क्यों नहीं कही।"

"अच्छा सुनिये आपने यह नहीं पूछा कि आप क्या करेंगे?"

"आप क्या करेंगे आपमें कुछ करने का साहस ही नहीं है।"

"बिलकुल सही। मामूली आदमी हूँ। लेकिन एक बात सुनिये।"

"कल दोपहर मैं मेरा लठ लेकर राममन्दिर में जाऊँगा। अगर मुसलमान मन्दिर में घुसेंगे ही तो उन्हें पहले मेरी लाश पर पैर धरना होगा।"

वातावरण एकदम बदल गया। भूरादादा बोले

"दाण्डेकरजी आप अकेले नहीं जायेंगे। आपके साथ मैं हूँगा!"

बोला - "बहुत अच्छा।"

दूसरे दिन भोजन किया। और ग्यारह बजे के करीब अपना लठ लेकर राम मन्दिर की ओर निकला। मैं चल पड़ा हूँ यह समझते ही अहीरों की बड़ी भारी टोली तलवारें, भाले और क्या-क्या लेकर पीछे चल पड़ी। राम मन्दिर में मैं आया। वे सब जवान भी आ गये और नेताजी भी। मन्दिर परिसर भर गया भूरादादा ने पूछा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"कहिये दाण्डेकरजी अब क्या करना है?"

मैंने कहा

"मैं आदेश दूँ और आप पालन करें तो यह कोई शाखा तो हैं नहीं।"

"ऐसा क्यों कहते हैं। आप आदेश दो वहीं हमारा खून गिरेगा।"

"ऐसा ही है तो मैं जैसा कहूँ वैसा करियेगा। पहले तो अपने-अपने शस्त्र रामजी के आगे रख दो। और सब मैदान में जाकर कबड्डी खेलो। खूप हल्लागुल्ला करो। हँसो गाओ। मैं और भूरा मन्दिर के दरवाजे में बैठते हैं। हम जब तक न कहे कोई दरवाजे की ओर नहीं आयेगा।"

सब ने बात मानी मेरी। कबड्डी शुरु हो गई कुछ संघ गीत भी गाने लगे।

हम दोनों ठोडी के नीचे हाथ रख रास्ते की ओर निहारते बैठे रहे।

दो बजे मुसलमान इकट्ठा हुए। उन्होंने ताजिये उठाये। खूब नाचे। दूला दूला कर हल्ला किया। चारों ओर से पुलिस थी डी. वाय. एस. पी. खुद्द।

छड़ी घुमाते वह मन्दिर के पास आया। ड़पटकर बोला

"ये सब शोर कैसा है?"

बोला मैं-

"कुछ नहीं अहाते में खेलकूद चल रही हैं।"

वह समझदार था। लौट गया। मुसलमान नाचे कूदे उसने कुछ संकेत किया और सब ताजिये लेकर अपने-अपने रास्ते निकल गये। थोड़ी देर में रास्ता खाली हो गया।

भूरादादा ने कुझे कसकर भींच लिया।

महिने दो महिने ही हुए कि इन्दौर से पत्र आया।

आप को उज्जैन के पास आगर जाकर काम देखना है तुरन्त निकलिये।

कन्नोदवासियों को ज्ञात हुआ। वे बिदाई समारोह करना चाहते थे। एक दिन तय हुआ।

उसके पहिले ही मैंने कन्नोद छोड़ दिया।

आगर एक बहुत सुंदर गाँव। उज्जैन के उत्तर में करीब चालीस मील दूर। उज्जैन से आगर को नैरो गेज लाईन जाती है। वह इत्तीसी गाड़ी उसकी तरफ देखकर हँसी आती।

आगर के पास में एक बढ़िया तालाब। उसके तीर पर कई मन्दिर। वन। गाँव की मिट्टी लाल। आगर से ढ़ाई तीन मील दूर महादेव का एक प्रसिद्ध स्थान बैजनाथ। हर शिवरात्री को वहाँ यात्रा। मेला।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आगर में शिंदे सरकार की छावनी थी। घुड़सवार फौज वहाँ थी। आगर और बैजनाथ इसके बीच में एक विस्तृत मैदान। उस मैदान में बीच-बीच में घुड़सवारी का अभ्यास होता।

उस समय बहुत सस्ताई थी। आगर में वह विशेष। गोभी का फूल बड़ा भारी आने डेढ़ में मिल जाता। दो आने की घी की पूड़ी इतनी आती कि अकेला खा नहीं सकता था। मूंग रुपये के चार पाँच सेर और दूध दो तीन आने सेर था।

मोगरे के फूलों के गजरे हाथ में पहन, भांग छान शाम को गांव के रास्तों में घूमना युवकों का खास शौक था।

उस गाँव जा पहुँचा मैं। संघ कार्य से परिचित चार छह लोग वहाँ थे। उसमें से एक बापूलाला कालूराम कपड़े के व्यौपारी। उनके घर के पीछे एक छोटासा कमरा। वहाँ थैला पटका और तुरन्त ही काम के लिये बाहर निकला।

लोगों के यहाँ जाना। नमस्कार करना। अपना परिचय देना। संघ के काम के लिये यहाँ आया हूँ यह कहना। संघकार्य का महत्व समझाना। आप स्वयं शाखा पर आयें और लड़कों को भेजे ऐसा कहना आग्रह से। एक की पहचान से दूसरा घर। दूसरे की पहचान से तीसरा घर।

प्रज्वालितो दीप इवप्रदीपात्।

ऐसा काम शुरु हुआ और प्रथमग्रासे मक्षिकापातः

वे सन बयालीस के दिन थे। ग्वालियर राज्य के बाहर अंग्रेजी मुलूक में उग्र आंदोलन शुरु था। उसका क्षीण प्रभाव आगर में भी पड़ा। पुलिस थाने में किसी क्रांतिकारी ने एक बम फेंका। वह फटा। सबेरे जल्दी ही। आना जाना चालू होने के पहिले। चारों ओर तहलका मच गया। पुलिस सतर्क हो गई। खोज बीन चालू हो गई। और अचानक उन्हें खबर लगी की दाण्डेकर नामका एक नवागत गाँव में आया हुआ है।

उज्जैन आगर की तरफ दाण्डेकर इस नाम के पीछे एक इतिहास था। मेरे चाचा सद्गुरु स्वयंप्रकाश आत्मा इस तरफ रहे हुए। वे जब उज्जैन में थे तभी उन्हें पकड़ने के लिये अंग्रेजी सरकार का सम्मन ग्वालियर राज्य की ओर भेजा गया था। उन्होंने खुद आगर में कुछ लड़कों को बम का प्रशिक्षण दिया जाने की पुलिस दफ्तर में नोंद थी। वह सूत्र पकड़ पुलिस खोज चालू हुई। इस कांड के पीछे मेरा ही हाथ होना चाहिये ऐसी शंका पुलिस को हुई।

काम की योजना तय करता बापूराम कालूराम की दुकान पर ही बैठा था। मुझे खोजते हुए खुपिया पुलिस अधिकारी वहाँ आ धमके। नमस्कार चमत्कार हुआ। और वहीं मेरी तहकीकात शुरु हो गई।

मेरे आगर में आने का प्रयोजन मैंने उन्हें बताया। उसे संघकार्य से थोड़ा परिचय भी था। परन्तु मेरा पूर्व इतिहास उन्हें चाहिये. था।

"जी आप यहाँ आने से पहले रहा कहाँ करते थे?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

"कन्नोद।"

"वो कहाँ पर है?"

"इंदौर रियासत में।"

"वहाँ पर क्या किया करते थे?"

"यही संघका कार्य।"

"जरा विस्तार से समझाइये।"

फिर उसे संघकार्य का स्वरूप समझा कर बताया। वह महात्मा संतुष्ट नहीं हुआ।

"अच्छा उसके पहिले कहाँ थे?"

"मण्डलेश्वर।"

"वहाँ क्या काम?"

"गुरुदेव के पास अध्ययन करता रहा।"

"उसके पहिले।"

"नर्मदा परिक्रमा।"

"परिक्रमा का मतलब?"

उसे परिक्रमा का मतलब समझाकर बताया। पर उसका समाधान नहीं होता था। जो कुछ मैंने कहा उससे बमका संबंध कहीं जुड़ नहीं पा रहा था। आखिर में मैंने उसकी परेशानी समझी कहा-

"आप पूछताछ क्यों कर रहे हैं सो मैं समझा। लेकिन विश्वास कीजिये मैं परमार्थ मार्ग का राही हूँ। यों छिपकर बम आदि फोड़ना मैं पसंद नहीं करता। जो करना है सो खुले करुँगा छिपाऊँगा नहीं।"

वह उठ कर चला गया। परन्तु उसने मेरे पीछे खुपिया पुलिस का चक्कर लगा दिया। मैं कहाँ जाता हूँ? क्या करता हूँ? किससे बात करता हूँ? हर बात पर पुलिस निगरानी शुरु हो गई। लोग मुझसे बोलना न चाहे। कोई मुझसे मिलना न चाहे।

क्या करुँ यह समझ में नहीं आये। चार घनिष्ट परिचय के घर थे वहीं जाकर बैठता इसके सिवाय कोई काम न होने पाये। दिन ऐसे ही जाने लगे।

राममन्दिर में एकादशी के दिन भजन कीर्तन होता था। एक उपाय सूझा। एक एकादशी को रातको वहाँ गीता पर प्रवचन रखवाया। सी. आय. डी. इन्सपेक्टर भी वहाँ सुनने को आया।

इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यमिधीयते
एवं यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विद् : ॥

यह श्लोक लेकर उसपर शांकर तत्वज्ञान का ऐसा फैलाव किया जैसे कि किसी को घने जंगल में ले जाकर पीटा जाये। सब चकित हो गये। यह मरियल इतना गहरा होगा यह उनको सुनने के बाद भी विश्वास न हो ऐसी स्थिति। सब पैरों पड़े। इन्सपेक्टर भी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

पड़ा।

दूसरे दिन से मेरे पीछे का पुलिस चक्र बंद हुआ।

हमारी केन्द्रशाखा उज्जैन। वह शाखा कंगाल। काम खूप बढ़ रहा था। पर उसके लिये जरुरी धन का भारी अभाव था। संघ का लोगों से निधि इकट्ठा करने का रिवाज नहीं। हर साल स्वयंसेवक ध्वज के सामने गुरुदक्षिणा के रुप में जो अर्पण करें उसी में से सब खर्च चलता रहता। वह धन ऐसा कितना हो सकता है।

हम प्रचारकों को करीबन दस रुपया महिना मिलता था। उसी में हमारा भोजन, अन्य खर्च, प्रवास खर्च सबकुछ करना। मेरे जिम्मे आगर जिला। उसमें तनोडिया, सोयत, सुसनेर ये गाँव। इन गावों में हप्ते में एक बार जाना जरुरी। बड़ी आफत थी। केवल मेरी नहीं हर जिला प्रचारक की। परन्तु सबने वह समय निभा लिया। शिकायत किसी ने नहीं की।

हर प्रचारक यह जानता था कि ये समाज कार्य है। देशधर्म का कार्य है। माने मेरा स्वयं का। किसी को यह करना ही है और वह मैं कर रहा हूँ। यह किसी पर उपकार नहीं है। मुझे यह स्वधर्म मानकर ही करना है।

फिर यह सब उस दस रुपये में बैठाना। जिले में घूमते समय अधिकतर पैदल ही घूमना। बहुत ही जरुरी हुआ तो पैसे खर्च करना और इसके लिये आधे रुपये अलग रखना। बाकी रहे पाँच रुपये में से भोजन और अन्य खर्च। सस्ताई थी। फिरभी कमरे पर रसोई बनाने को कभी समय नहीं रहता। देर हो जाती फिर हलवाई के यहाँ से पूड़ी भाजी लाकर खानी। उसमें दो एक रुपये खर्च हो जाते।

एक और कि कंगाली बाहर दिखनी नहीं चाहिये। मूछों पर घी लगाकर लोगों में घूमना चाहिये। ऐसा सारा संभालते दम निकला जाता कभी-कभी।

इसपर उपाय किया। एक रुपये के मूँग लाकर रखे। कमरा बंद कर लेना। मुट्ठीभर मूँग पकाना। नमक मिर्च ड़ालना। और उसका भोग लगाना। भोजन हो जाने के बाद ड़कार देते पेटभर हाथ फेरते बाहर आना। किसी ने पूछा तो कहना आज पूडी जरा कच्ची रह गई थी।

लेकिन एक दिन यह नाटक खुल गया। खाने पीने की हालत खराब है यह बापूलाल के ध्यान में आ चुका था। कमरा उनके ही घर के पीछे था। उन्होंने बात की जाँच करने की ठानी।

बहुत भूख लगी थी। सांकल चढ़ा मूँग खाते बैठा था। दरवाजे की सांकल बजने लगी। कौन है?

"मैं बापूलाल!"

"ठहरिये खाना खा रहा हूँ।"

"अरे खुशबू तो यहाँ तक आ रही है क्या बनाया है?"

"अपना यही रोटी भटे की सब्जी और- . . . .।"

"बहुत जरुरी काम है दरवाजा खोलिये।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

क्या करता। वे तो सांकल बजाते ही जा रहे थे। इधर-उधर ढाँक-ढूँक रखा और दरवाजा खोला। बापूलाल जी सीधे चूल्हे तक गये।

"देखूँ रोटी कैसी बनाई है?"

"रोटी वह तो खतम हो गई। चुका गई।"

"अरे तवा, बेलना चकला कहाँ हैं?"

"अरे आप भी हर चीज का जबाब क्या माँगते हैं। पुलिस हैं?" क्या वे बहुत व्यथित हो गये। मेरी तरफ देखने लगे। मैं मानों अपराधी होऊँ मुंडी नीचे किये रहा। बापूलालजी बोले एक वचन दीजिये

"कहिये!"

"मेरा घर आपका ही घर है ऐसा मानिए। और निःसंकोच जब चोह तब मेरे घर आकर भोजन किया करियक।"

"करुँगा।"

इस जिले में आने के बाद से तबीयत पर बोझ अधिक बढ़ गया। खाने-पीने का तो कोई समय ही न रहा। बहुत बार तो वह मिलता ही नहीं। केवल चना खाके दिन निकालना पड़ता।

तनोड़िया गाँव आगर से करीबन बारह मील दूर। पैदल जाना बहुत कष्टकर होने लगा तब सायकल से जाना तय किया। सायकल पर बैठना आधा-अधूरा कन्नोद में सीखा था। परन्तु कोई आदमी या पशु सामने आते ही घबड़ा जाता। ऐसा लगता कि अब मैं उसी पर जाकर गिर पडूँगा। इसलिये सामने से कोई भी आता दिखते ही मैं उतर जाता। पायड़ल पर से मैं बैठ नहीं पाता था। कहीं कोई पत्थर खोजना पड़ता। ऐसी सारी फजीहत थी।

तनोडिया एक जहागीर का गाँव था। वहाँ का जहागीर बड़ा सुजन उमदा आदमी। शाखा का काम हो जाने के बाद मैं उसके पास गप्पे हाँकने चला जाता था। वे अच्छे शिकारी थे। श्रेष्ठ तलवारें, अच्छी बंदुकें उनके पास बहुत थी। शिकार कथाओं का तो पूछना ही क्या? भंडार भरपूर था। उनके तबेले में तेज गति दौड़ने वाले घोडे थे। एक बार उन घोडों में से एक घोडा मुझे भी दिया। पर उसके खाने पीने के हाल मेरे जैसे ही होने लगे तब मैंने उसे वापस कर दिया।

तनोड़िया से आगर को वापस आ रहा था। दस बारह मील का रस्ता साइकल से पार कर रहा था। रास्ता निर्मनुष्य। तनोड़िया से निकलते समय मित्र कह रहे थे भोजन कर के जाइये। परन्तु आगरमें कुछ थोड़ा काम था इसलिये भरी दोपहरी में ही निकल पड़ा। रास्तें में चढ़ाई भी बहुत थी।

अचानक सीने में दर्द हो उठा। पहले दुखता था वहीं। पायड़ल मारना कठिन हो

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

गया। वही उतरना पड़ा। खड़ा भी रह ना पाऊँ। साइकल फेंक दी और गिट्टी के एक ढेर पर धूप में ही औंधा पड़ा रहा। मरणप्राय दर्द हो रहा था। ऐसा लगा कि समय आ गया है। सारा शरीर पसीना-पसीना हा गया।

पास में कोई झाडी पेड़ नहीं। दूर तक फैली गिट्टी की सड़क। उसके पाससे जानेवाली रेल लाईन।

कितनी देर वैसा पड़ा था मालूम नहीं। अति वेदना से कुछ बेहोशी भी आ गई शायद वेदना कुछ कम हुई तब उठा। उठना भी जरुरी ही था। कितनी देर तक उस तपती धूप में मैं पड़ा रह सकता था। साइकल उठाई तो वह जैसे गरम तवा। उपर तो बैठा ही न जाये। हाथ से पकड़ चलने लगा। जाने किस तरह। लड़खड़ाता। आधा मील चला हूँगा एक पेड़ लगा। उसके नीचे लद्द से बैठ गया। जब कुछ आराम लगा तब उठ धीरे-धीरे चल आगर पहुँचा। पैर घसीटते।

गाँव में पहुँचते-पहुँचते यह तय कर लिया कि बात किसी को भी कहनी नहीं।

सुसनेर और सोसत ऐसे दो गाँव आगर से अंदर थे। दोनों जगह शाखा का काम शुरु हो गया था। बार-बार वहाँ जाना पड़ता।

शाखा की व्यवस्था लगा दी थी। एक कार्यवाह एक मुख्य शिक्षक जरुरी उतने गटनायक। यह सारी व्यवस्था ठीक चल रही है या नहीं यह देखना पड़ता। बहुत बार झगड़े पैदा होते। मनमुटाव हो जाते। कार्यवाह शाखा पर आना ही बंद कर देते। पहिले दिन जो शाखा अच्छी चलती देखी थी दूसरे दिन वहाँ पर कोई महिला कंडे थापते मिल जाती। बात करें तो कोई जबाब नहीं। फिर पहले से सारी बातें करनी पड़ती। फिर से नया कार्यवाह नया मुख्य शिक्षक नये स्वयंसेवक।

इन शाखा पर दिये वचन को निभाने के लिये बड़ा ही जागरुक रहना पड़ता। चाहे कुछ भी हो जाये पर तय किये दिन वहाँ पहुँचना ही होता।

एक बार सुसनेर में एक उत्सव की योजना की गई। मैंने कहा समय पर जरुर उपस्थित हो जाऊँगा।

आगर से सुसनेर मोटर सर्विस दिन में एक बार थी। शाम को चार बजे। वह रात को सुसनेर ठहरी रहती। दूसरे दिन उत्सव था। एक दिन पहले निकलना जरुरी था। पर काम में फंसा रहा मोटर निकल गई। बहुत कोशिश के बाद भी।

कल तक पहुँचना जरुरी था। रास्ता उतार चढ़ाव का। सारा झाड़ी जंगल। करीबन चालीस मील। सायकल ली और वह रास्ते में पंक्चर हो गई तो। इसलिये पैदल ही जाना तय किया। लाठी उठाई और चल दिया।

शाम साढ़े छह तक करीबन नौ दस मील चला गया। सारा रास्ता निर्मनुष्य। अंधियारा होने लगा। बस्ती का कहीं नाम नहीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अचानक ऐसा लगा कि मेरे पीछे-पीछे कोई दो चलते आ रहे हैं। थोड़ा धीरे चलने लगा। दोनो तेज-तेज रास्ता काटते मेरे ही रास्ते आगे बढ़ रहे थे। पास आते ही मैंने उनको उनके वेश पर से पहचान लिया। वे ऊँटोंके राजस्थानी चरवाहे थे। बड़े भारी साफे पहने हुए। कुर्ते, दुटांगी छोटी धोतियाँ। बगल में थैलियाँ। उसमें ऊँट की उन भरी हुई। उसमें से थोड़ी थोड़ी निकाल हाथ के तलुवे पर वे सूत कात रहे थे। उसी बगल में भले ऊँचे, तेल पीये लठ थे।

वे पास आते ही मैंने कहा

"जै रामजीकी।"

"जै रामजीकी कहाँ जाई रह्या हो?"

"जी सुसनेर जाना है।"

"सुसनेर बड़ी अबेर होगी।"

बातचीत चालू हो गई। मेरा अनुमान बराबर था। वे दोनों राजस्थानी चरवाहे ही थे। अपना ऊँटों का पड़ाव छोड़ आगे किसी काम से जा रहे थे।

रात का समय। मैं अकेला। स्थान विजन। कोई आदमी नहीं कि कोई नहीं। ऐसे में कल्पना शक्ति के घोडे दौड़ने लगे। ठग और पेंढारी लोगों के किस्से पढ़े थे। वे दिमाग में दौड़ने लगे। कुछ थोड़ी गप मारने की सोची।

मैं कहाँ का क्या? यह उन्होंने पूछा। मन में जो आया वह कहा। मै 'पंड़त'। आगर में अखाड़ा है। पचास चेले हैं। उनका मैं मास्टर। लाठी तलवार भाला ये सब वहाँ सिखाता हूँ। दिखने में मरीयल हूँ पर लाठी हाथ में ले लूँ तो पाचपचास को भारी। दोनो हाथ में तलवारें लेकर मैदान में आ जाऊँ तो घमघम हवा काटता हूँ। सौ दो सौ की भीड़ काट कर पार निकल जाना मामूली काम। आदि-आदि

अंधियार था इसलिये दिखा नहीं पर उन दोनों की आँखे जरुर चौंधिया गई होंगी। उनके स्वर में तुरन्त आदरभाव आ गया।

बोले

"अब क्या रातभर अकेले ही चलते जाओगे?"

"फिर क्या। ड़र किस बात का है। लाठी साथ में है। भोर सुसनेर।"

"नहीं लेकिन हम कह रहे हैं यहाँ से मील एक भर पर हमारा एक पड़ाव है। वहाँ हमारा एक दोस्तदार है। वहाँ रात निकाल हम गरीबों की मेहमानदारी स्वीकार करते तो-"

"नहीं-नहीं भाई मुझे भोर ही पहुँचना हैं।"

"चलिये भी। चाँदनी उगते ही हम आपको लाकर सड़क पर छोड़ जायेंगे।"

"अब आप कहते ही हो तो चलो।"

तीनों ने सड़क छोड़ी। और जंगल लतियाते अंधेरे में उनके दोस्तदारों को खोजते हुए निकलें बहुत देर बाद दो चार अलाव जलते दिखने लगे। उस अनुमान से आगे बढ़ते ऐसा लगा कि हवा में कोई बड़ी बड़ी साँसे छोड़ रहा है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तुरन्त ही मालूम हुआ वे ऊँट थे। नाक दबा सांस ले छोड़ रहे थे। ठोकरें खाते गिरते पड़ते पड़ाव के पास पहुँचे। पास ही में एक गाँव था। और उसके आसरे से वहाँ यह पड़ाव पड़ा था। सौ डेढ़ सौ ऊँट थे। गायभैंस को चरने के लिये छोटी जगह पूरी हो जाती है। ऊँटोंके लिये बड़ा परिसर लगता है। खास कर कंटीले झाडीनुमा पेड़ चाहिये। इन पेड़ों के सिरे ऊँटो को बड़े अच्छे लगते हैं। ये मुलायम होते हैं इसलिये उनके काटे भी कष्टकर नहीं होते। वैसे कांटे छोड़ हरियाली खाने का कौशल्य ऊँटो को होता है।

इन ऊँटों के बीच में एक धुनी। एक खटिया, एक छोटासा झोपडा वही दारु पीकर मस्त हुआ उसका दोस्तदार बैठा हुआ था। स्वागत हुआ। उन दोनों ने मेरा परिचय कर दिया। उसमें और नमक मिर्च लगाकर। उसकी दारु शायद कुछ उतर गई।

वह कहने लगा। देवता मेरे घर आये। अब भोग चढ़ाने के सिवाय मैं उनको सोने नहीं दूँगा। गरीब के घर में मकई का आटा है अभी दूध निकाल कर लाता हूँ। अपने हाथ का पानी भी देवता को मैं पिलाऊँगा नहीं। वे कलसा लेकर चलें। यहीं पास में कुवाँ हैं। पानी ले आयें। मकई की रोटी बनाये। दूध रोटी का भोग भगवान को लगावें। हमें भी थोड़ी-थोड़ी परशादी देवें। फिर भोजन कर विश्राम करें।

वह सब करना पड़ा। दूध वह कहाँ से लायेगा यह प्रश्न था। मटका हाथ में लेकर वह एक ऊँटनी के पास गया। एक घुटने पर दूसरा पैर रखा। बीच में मटका धरा। खड़े खड़े ही दूध निकालने लगा। देखते-देखते मटका भर गया।

दूध का स्वाद लेकर देखा। वह थोड़ा कसैला था। दूध और मक्के की रोटी खाई। प्राचीनों के बहादुरी की कहानियाँ बढ़ा चढ़ा कर उन्हें बताई। खटिया पर सो गया। वे तीनों धुनी के पास सोये। मटके में थोड़ी दारु थी तीनों ने थोड़ा थोड़ा आचमन उसका लिया।

बहुत देर तक वे थूकते बडबड कर रहे थे।

चांदनी उगते ही उठा। जजमान भी जग गया। हाथ मुँह धोया-बोला चलता हूँ।

"दूध बिना पीये। हरे राम। मेहमान की खातिरदारी बिना किये मेहमान को जाने दूँ तो नरक में जाऊँ महराज।"

"परन्तु इतने भोर दूध।"

"अपने को किसी बिराने देस थोड़े ही जाना है। ऊँटनी तो अपने दरवाजे ही खड़ी है।"

फिर वह ऊँटनी के पास गया मटका भर दूध निकाल कर लाया।

रात को आपने पेटभर खायाही नहीं। अब आप यह सारा दूध पी जाईये।

बाप रे बाप! उतना दूध पी गया होता तो तुरन्त ही दस्त चालू हो जाते। फिर क्या करुँ। पलाश के पत्ते का दोना बनाया। उसमें मटके में से दूध ड़ालता रहा। उसमें दो दो धाराएँ। बारीक वाली मुँह में और मोटी वाली नीचे भूमि पर। दूसरा उपाय ही नहीं था। शराबी जजमान के आग्रह से अपने को बचाना था। अंधेरे में दूध भूमि पर गिर अभिषेक करता रहा पर उसे कुछ समझा नहीं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

उसी सुसनेर के अगले उत्सव के समय का प्रसंग

शाखा बढ़ रही थी। स्वयंसेवक दंड चलाने में माहिर हो गये थे। उनका उत्साह बढ़ता चढ़ता था। दशहरे का उत्सव था शायद। वह विशेष जोरदार ढंग से करने की योजना बनाई । वहाँ भी एक जीनिंग फैक्टरी थी। कपास इकट्ठा होने लग गया था। उसी के बाहर बड़ा मैदान था। वहाँ उत्सव करना। पहिले दंड की कवायत, फिर पीटी, नमस्कार फिर गीत और बौद्धिक। ऐसा कार्यक्रम बनाया।

चार दो दिन पहले ही सुसनेर पहुँचा। सारा विवरण तैयार किया। आगर से पचास स्वयंसेवक आनेवाले थे। उनके खाने रहने की व्यवस्था करना। ऐसा सारा दिन बीत जाता। फिर रात को जीनिंग फैक्टरी में चार दो स्वयंसेवकों के साथ मुकाम के लिये जाना। कपास के ढ़ेर में घुस जाना। बिछाने ओढ़ने की कोई जरुरत नहीं।

उत्सव के दिन भोर ही आगर के स्वयंसेवक चार छह बैलगाड़ियों में आये। रात की जंगल की यात्रा। इसलिये सुरक्षा दृष्टि से तलवार, भाला, सब साथ लाये थे वे। एक स्वयंसेवक तो बंदूक भी लाया था।

मेहमान स्वयंसेवक आते ही बड़े उत्साह का वातावरण बन गया। मैदान झाड़ा गया। उसपर पानी ड़ाला। ध्वज दंड खड़ा किया। रांगोली और तोरण ही बाकी रह गये थे। वह भी मैंने रोके इसलिये।

सुबह पूरे गाँव को निमंत्रण दिया गया। आगर के स्वयंसेवक हाथ में लाठी तलवार लेकर टुकडी-टुकडी में गाँव में घूमने लगे। मैं सुबह से मैदान पर ही था। डाक्टर हेड़गेवार, छत्रपति शिवाजी, राणा प्रताप के चित्र ध्वजदंड के पास लगाये। उसके आगे धूपबत्ती फूल मालाएँ सब-सब तैयार था। जो मुँह से कहता वह आ जाता।

अचानक तीन बजे के समय एक पुलिस का आदमी मैदान पर आया। उसने पूछा

"तुम्हारा लीड़र कौन हैं?"

आगे बढ़कर पूछा - "क्या हैं भाई?"

"थानेदार साहब ने फर्माया है।"

मेरे चारों ओर पचास स्वयंसेवक एकदम इकट्ठा हो गये। बुलाया था तो जाना ही था। स्वयंसेवक कहने लगे हम भी चलते हैं। मैंने उन्हें समझाया इतनी भीड़ लेकर जाने की ज़रुरत नहीं है।

मैं और पुलिस दोनों को सारा गाँव देखने लगा। वातावरण तंग हो गया। बाजार में से पुलिस के पीछे मैं थाने पहुँचा। वहाँ देखा तो बम कांड में आगर में जिस पुलिस सबइन्स्पेक्टर से साबका पड़ा था वह मुसलमान व्यक्ति। मेरी तरफ देखकर बोला

"अच्छा आप हैं यहाँ पर भी।"

"जी हाँ हूँ और रहूँगा।"

"बताइये आज ये सब हंगामा क्यों मचा रखा हैं?"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

"हंगामा ? मतलब ?"

"आज है क्या ?"

"विजयादशमी उत्सव है।"

"विजयादशमी मतलब दशहरा।"

"जी हाँ।"

"सो तो अभी आठ दस दिन आगे है।"

"अपनी सहूलियत से आजही मनाया जा रहा है।"

"लेकिन उसके लिए आठदस गाड़ियाँ भरकर गुंडे मंगाये। तलवारें, बंदूकें, भाले लेकर।"

"देखिये साहब, रात का सफर वीराना मुल्क। फिर गवालियर रियासत में इन हथियारों पर पाबंदी भी नहीं है।"

और एक बात। आठ दस गाड़ियाँ भरके गुंडे नहीं आये। वे सभी सभ्य घरवाले स्वयंसेवक हैं। सो भी आठदस गाड़ियाँ नहीं। चार गाड़ियाँ हैं। आगर के हैं आप सभी को जानते हैं।

थोड़ी देर रुककर वह बोला

"देखिये आपका उत्सव नहीं होगा।"

मैं आश्चर्य में पड़ गया। बोला

"ये आप क्या फरमा रहे हैं।"

"मैं पाबंदी लगा रहा हूँ।"

स्वयं को जहाँ तक बने ठंडा रखते हुए बोला

"देखिये साहब रियासत गवालियर है। भोपाल नहीं हैं। ये वो रियासत हैं जहाँ पर अन्याय नहीं होता। उत्सव तो होकर रहेगा। आप पाबंदी नहीं लगा सकते।"

गुस्से में वह मेरे तरफ देखने लगा।

"मतलब !"

उठते हुए बोला

"मतलब यही कि उत्सव होगा।"

"आप जानते मैं कौन हूँ?"

"जी हाँ।"

"मैं कहता हूँ कि बिना इजाजत उत्सव नहीं होगा।"

तब तक थाने के बाहर सौ सवासौ स्वयं सेवक जमा हो गये थे।

उनको देखकर ही वह पाबंदी से उतरकर इजाजत तक आ गया था मैंने कहा

"किसकी इजाजत लेनी होगी।"

"तहसीलदार साहब की।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

किसी ने कहा

"तहसीलदार साहब यहाँ नहीं हैं गाँव गये है।"

सब इन्स्पेक्टरने तब कहा

"आप मुझे ही लिखें। इजाजत मैं दूँगा।"

एक कागज लिया। उसपर घसीटा

श्री पुलिस सबइन्स्पेक्टर साहब

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघकी ओर से यहाँ विजयादशमी का महोत्सव मनाया जा रहा है। प्रार्थना है कि आप उत्सव में पधारकर उपकृत करें।

भवदीय

गोपाल नीलकंठ दांडेकर

उसने पढ़ कर उस पर लिखा

"मैं इजाजत देता हूँ।"

अब वह भी किसी बंधन में नहीं और मैं भी नहीं।

उत्सव जोर-शोर से सम्पन्न हुआ।

आगर से दोन तीन स्वयंसेवक सायकल लेकर आये थे। बंसीलाल नामक एक स्वयंसेवक की साइकिल किराये पर देने की दुकान थी। उसको कहा

"देखो बन्सी। आज का दिन यहाँ रहो। दो सायकिलें रख लो। कल सुबह उठकर हम दोनों आगर जायेंगे।"

सायकिले लेकर रखीं। और स्वयंसेवकों को बैलगाड़ी से रवाना कर दिया।

विरोध की पर्वा न करते हुए उत्सव कर दिखाया इसलिये सभी बहुत खुश थे। रात को बहुत सारे स्वयंसेवक जमा हुए। बातचीत होती रही। सोने को खूब देर हो गई। भोर जल्दी उठकर मैं और बन्सी सायकल से चल पड़े।

दो चार दिन बहुत मेहनत पड़ी थी। पसलियों के नीचे दर्द हो उठता था। पर मैं उस दर्द की तरफ ध्यान ही नहीं देता था।

ग्यारह बजे तक आगर पहुँचने का भरोसा था। बातचीत न करते तेजी से हम सायकिलें चलाये जा रहे थे। दस बारह मील गये होंगे और अचानक मेरे सीने में दर्द हो उठा। बहुत तेज। उतरना ही पड़ा। सायकिल एक तरफ फेंक दी और वहीं औंधा गिर पड़ा।

बन्सी मेरे आगे था। कुछ देर बाद उसके समझ में आ गया कि मास्टरजी नहीं है। वह वापस आया। मेरे पास आकर पूछने लगा

"क्या हुआ दाण्डेकरजी?"

बड़ी कठिनाई से बोला- "बड़ी तकलीफ है।"

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उसने मेरा सिर गोदी में लिया। फिर पूछा-

"पहिली बार हुआ है क्या?"

"ना कई बार हुआ।"

"तब बताया क्यों नहीं? दवा क्यों नहीं ली।"

कुछ भी बोलने की स्थिति में था ही नहीं। बन्सी ने मुझे ड़बल सीट लिया। दूसरे हाथ से मेरी साइकिल पकड़ी और इस तरह वह मुझे आगर में ले आया।

आगर में पहुँचते ही मेरे बीमारी की खबर सब जगह फैल गई।

आगर का दशहरे का उत्सव भी जोरदार ढंग से सम्पन्न हुआ। तलाव के किनारे मैदान था। पीछे एक टेकरी उस टेकरी पीछे एक गड्ढा। गड्ढे में बैठा आदमी टेकरी से दिखाई नहीं देता था।

सब स्वयंसेवकों को इकट्ठा कर एक मजेदार कार्यक्रम आयोजित किया उसके विषय में सबको मौन रहना था।

उत्सव सायं छह बजे हुआ। नागरिक बड़ी संख्या में आये थे। कवायत हुई। गीत हुए। मेरा बौद्धिक था। दशहरे का अर्थ समझाया। एक तरफ बोल रहा था दूसरी ओर अंधियारा होने की राह देख रहा था।

पूरा अंधेरा हो गया। सारे तरुण दो टुकड़ियों में बट टेकरी के पीछे गड्ढे की ओर चले ग़ये। सब आश्चर्य करते देखते रहे।

एक सीटी हुई। सबने देखा टेकरी के माथे पर ध्वज लेकर पच्चीस एक लड़के खड़े हैं। उनके हाथों में दंड हैं। दो चार के हाथों में मशाले हैं। उन पच्चीस लोगो ने रणगर्जना की।

दूसरी सीटी बजी। गड्ढे में से प्रकाश दिखने लगा। देखा लोगों ने मशाल के प्रकाश में एक दूसरी टोली गड्ढे में से निकलकर ऊपर खड़े वीरों पर हमला करने दौड़ रही है। फिर घनघोर युद्ध हुआ। लाठियों पर लाठियाँ बजने लगीं। शोर गुल से सारा मैदान भर गया।

और तीसरी सीटी हुई। लंबी। रुक रुक कर

लड़ाई ठहर गई। दोनों दल आपस में बातचीत करने लगे।

मेरी बीमारी चिंताजनक हैं यह सोचकर उज्जैन शाखा ने मुझे इंदौर भेज दिया। वहाँ डाक्टर मुले ने मेरी जांच पड़ताल की। रक्त, सीना, पसलियाँ, थूक, सब-सब देखा।

फेफड़ों को कुछ नहीं हुआ। पर अतिशय अनियमित खानेपीने के कारण शरीर का

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

 Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संतुलन बिगड़ गया हैं। बहुत नियम से खाना पीना और नींद यही वास्तव में दवाई है। फिर भी उन्होंने कुछ दवाइयाँ लिख कर दी।

सारे का मतलब साफ था। मैं कार्य के उपयुक्त नहीं रह गया था। गुरुजी ने स्वयं देखा। बोले कहीं रहो कार्य पर श्रद्धा रहे।

एक घायल सैनिक के रुप में छावनी की ओर जा रहा हूँ। गाड़ी में बैठा हूँ तो आँखों के सामने कितने ही चित्र क्षणभर के लिये दिख गायब हो रहे हैं।

तेरह का था जब घर से भागा था। आज तीस का हो गया हूँ। सतरह साल भागता रहा। गिरा। फिर उठकर लड़खड़ाता चलता रहा। न थकते। न हारते।

पग-पग चलते यहाँ तक आया
उपर बड़ की शीतल छाया
सांवरी परछाई देखी रेखी
कहता हूँ गा लूँ कोई गाना
किसी समय का अकेलेपनका
अकेला रहूँ भीड़ न करो
छप्पर तले मुझे बैठने दो

देखी अमावस रातें कितनी ही
स्मशान से दौड़ती ज्योति
उसी प्रकाश में आसन लगा
किया चिन्तन किस किस का
कितने सुस्मिताओं की शरमाई हँसी
कितने संकल्पो के कितने गर्भ गीत
आसमान से गिरते तारे
हुडदंग मचाती दीवानी हवा
मन में गहरते याद आती
क्षण एक स्मृति से फूलने दो
छप्पर तले मुझे बैठने दो-
कितने अर्जुनों की कितनी जयगाथा
मूँदे कान सुनी हुई हैं
कितने बालाओं की जोहार चिता
बंद आँखों देखी है
गणित हल करती लीलावती
क्षण विस्मय से ठहरा हूँ
मातृभूमि के लाड़ले बेटे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जब फांसी गये कई कई
भावना विवश वध स्तंभ को
पकड़ लटका हूँ यूँ ही
चूमें हैं उनके पदचिह्न
देखा ध्यान से उनका पदपथ
चल न पाया तब छोड़ा
मुझे मुझपर रुठने दो
छप्पर तले मुझे बैठने दो

देखे कितने ही उतरते कोठियाँ
उनके लिये बिछाने पड़े गलीचे
उपर कितनी है मसली कलियाँ
वहाँ तक मेरा हाथ न पहुँचे
उनके नयन का बूँद न पोछा
विरक्ती के क्षण उन्हें चाहिये
चाहूँ गाना ज्ञानदेव की ओवी
एक ओठ में ओवी एक में गाली
ऐसा मैं शर्मिला गँवार दीवाना
किसी के स्पर्श से थरथर कांपता
पेट के भूख से बिलाता
पाप के पंक में मुझे धसने दो
छप्पर तले मुझे बैठने दो

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रख्यात मराठी साहित्यकार गो. नी. दांडेकर ने अपने बहु आयामी लेखन से मराठी साहित्य की असीम सेवा की है। उन्होंने पाँच ऐतिहासिक उपन्यास लिखकर महाराष्ट्र के शिव-काल को विलक्षण जीवन्त रुप में साकार किया है। ज्ञानेश्वर, तुकाराम, रामदास जैसे महान सन्तों की जीवनियों को उपन्यास के माध्यम से प्रस्तुत कर उन्होंने मनुष्य की ऊर्ध्वगामी शक्ति के मूर्त रूप को उभारा है। मराठी की अनेक बोलियों का प्रयोग कर महाराष्ट्र की ग्रामीण जनता की प्रकृति और स्थिति को प्रस्तुत किया है। कभी पौराणिक वातावरण की चेतना को उन्होंने पकड़ा है तो कभी सामाजिक जीवन की व्यथा को वाणी दी। अनेक नाटक, ललित निबंध, कहानियाँ लिखकर उन्होंने मराठी वाङ्मय को समृद्ध किया है। भारतीय संस्कृति, भारतीय जनमानस और भारतीय स्त्री के तेजस्वी रूपों को अभिव्यक्ति देकर दांडेकरजी ने महाराष्ट्र के किशोरों, युवकों, वयस्कों—सभी में अस्मिता जगाने का प्रयास किया है।

ज्ञातव्य हो कि दांडेकरजी को विधिवत् अध्ययन की सीढ़ियाँ चढ़ने का भाग्य नहीं मिला। फिर भी ऐसा विलक्षण, प्रतिभा – समृद्ध लेखन उन्होंने कैसे किया? इस प्रश्न का उत्तर उन्होंने अपने 'कुण्या एकाची भ्रमणगाथा' और 'स्मरणगाथा' इन दो ग्रंथों के माध्यम से स्वयं ही दिया है।

लीक से हटकर जीवन जीनेवाले आवारा परंतु महान जीवन मूल्योंसे प्रतिबद्ध व्यक्ति की यह स्मरण शृंखला है, सृष्टि को आत्मसात करने के इरादे से चल पड़े विलक्षण मेधावी व्यक्ति की गाथा है। एक अभावग्रस्त ब्राह्मण परिवार का लड़का अपनी आंतरिक ऊर्ध्वगामी प्रवृत्तियों के तक़ाज़ों पर राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लेने के लिए घर से निकल भागता है और आंदोलन के मंद पड़ जाने पर जीवन की ऊबड़खाबड़ भूमि पर हिचकोले खाता हुआ जीने को बाध्य हो जाता है। जीवन की नियतिगामी राहों पर भटकने को विवश होते हुए भी हर बार आंतरिक आत्मशक्ति के बल पर अपने अस्तित्व और स्वत्व को बचाता है। विरक्ति के बहाने अपने शरीर को भयानक पीड़ा देता है, नर्मदा परिक्रमा करते समय आसक्ति और विरक्ति के द्वन्द्व में डूबता उतरता है।

ACADEMI
E Rs. 120-00

Smarangatha (Hindi) Rs. 9
ISBN 81-7201-094 -X

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant